आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता

ISSN-2319 9318
UGC Approved 62759

हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव

संपादक मंडल

अध्यक्ष

प्राचार्य डॉ. एम. रफिक सरखवास

उपाध्यक्ष

डॉ. शकील अहमद
उपप्राचार्य, कला शाखा

डॉ.आफताब अन्वर शेख
उपप्राचार्य, वाणिज्य शाखा

प्रा.इकबाल शेख
समन्वयक, विज्ञान शाखा

कार्यकारी संपादक

डॉ. शेख मोहम्मद शाकिर

डॉ. बाबा शेख

सदस्य

प्रा. रूकसाना शेख

प्रा. इम्तियाज आगा

डॉ.मो. सलिम मनियार

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.

At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vaidyawarta@gmail.com

All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors

हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

❖ **Publisher :**

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
Limbaganesh, Dist. Beed (Maharashtra)
Pin-431126, vidyawarta@gmail.com

❖ **Printed by :**

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
Limbaganesh, Dist. Beed, Pin-431126

❖ **Page design & Cover :**

Shaikh Jahurodden

❖ **Edition: July 2017**

ISSN 2319 9318
UGC Approvel ; 62759

❖ **Price : 500/ -**

Indexed

International Multilingual Research Journal Vidyawarta Jr.No.62759 UGC Approved Refereed Journal

IMPACT 4.014 iijif FACTOR

Govt. of India,
Trade Marks Registry
Regd. No. 2611690

Note : The Views expressed in the published articles,Research Papers etc. are their writers own. 'Printing Area' dose not take any libility regarding appoval/disapproval by any university, institute,academic body and others. The agreement of the Editor, Editorial Board or Publicaton is not necessary. Disputes, If any shall be decided by the court at **Beed** (Maharashtra, India)

http://www.printingarea.blogspot.com

B.P.T. Act 1950, at Reg. No. B-339 (Bom.)
I.T.Certificate No. 80-G/964
786
☎ H.O. : 2309 1221 / 2309 4389
E-mail : akihomumbai@yahoo.com ● Fax : 2301 0931

YATEEMKHANA & MADRASA
ANJUMAN KHAIRUL ISLAM

DEDICATED TO THE CAUSE OF ORPHANS & EDUCATION

यतीमखाना आणि मदरसा अंजुमन खैरुल ईस्लाम یتیم خانہ و مدرسہ انجمن خیر الاسلام

Registered Office : Baitul Aman Co-op. Hsg. Soc. Ltd., First Floor, 2, Maulana Azad Road, Nagpada, Mumbai - 400 008.

माननीय संस्था अध्यक्ष महोदय का संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि यतीमखाना और मदरसा अंजुमन खैरूल इस्लाम पूना कॉलेज ऑफ आर्टस्, साइन्स व कॉमर्स द्वारा 04 जनवरी 2017 को **हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव** विषय पर संगोष्ठी संपन्न हुई। इस संगोष्ठी में प्रस्तुत शोधालेख ऑनलाईन पत्रिका में प्रकाशित होने जा रहे है।

पत्रिका में प्रकाशित होनेवाले शोधालेख अध्यापकों एवं शोध छात्रों के लिए अपने विचारों का आदान–प्रदान करने के लिए उपयुक्त होगे।

यतीमखाना और मदरसा अंजुमन खैरूल इस्लाम ट्रस्ट, मुंबई की ओर से मैं इस प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएँ अभिव्यक्त करता हूँ।

ज़ैनुद्दीन ठाकुर

अध्यक्ष,
यतीमखाना और मदरसा अंजुमन खैरूल इस्लाम ट्रस्ट,
मुंबई

B.P.T. Act 1950, at Reg. No. B-339 (Bom.)
I.T.Certificate No. 80-G/964

786

H.O. : 2309 1221 / 2309 4389
E-mail : akihomumbai@yahoo.com ● Fax : 2301 0931

YATEEMKHANA & MADRASA ANJUMAN KHAIRUL ISLAM

DEDICATED TO THE CAUSE OF ORPHANS & EDUCATION

यतीमखाना आणि मदरसा अंजुमन खैरुल इस्लाम يتيم خانه و مدرسه انجمن خير الاسلام

Registered Office : Baitul Aman Co-op. Hsg. Soc. Ltd., First Floor, 2, Maulana Azad Road, Nagpada, Mumbai - 400 008.

माननीय संस्था महासचिव महोदय का संदेश

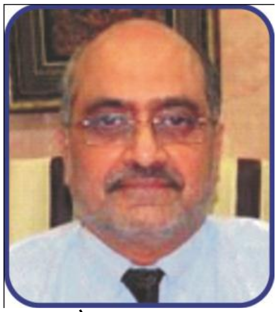

यतीमखाना और मदरसा अंजुमन खैरूल इस्लाम पूना कॉलेज ऑफ आर्टस्, साइन्स व कॉमर्स द्वारा 04 जनवरी 2017 को **हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव** विषय पर संगोष्ठी संपन्न हुई। मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हो रही है कि इस संगोष्ठी में पढे गए शोधालेख ऑनलाईन पत्रिका में प्रकाशित होने जा रहे है।

इस ऑन लाईन पत्रिका के लिए मैं अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ और उम्मीद करता हूँ कि यह पत्रिका हिंदी अध्यापकों एवं छात्रों के लिए उपयुक्त सिद्ध होगी।

हानी फरीद

महासचिव
यतीमखाना और मदरसा अंजुमन खैरूल इस्लाम ट्रस्ट,
मुंबई

Anjuman Khairul Islam's
POONA COLLEGE OF ARTS, SCIENCE AND COMMERCE
(Affiliated to Savitribai Phule Pune University: ID No. PU/PN/ASC/023/1970)
K.B. Hidayatullah Road, Camp, Pune - 411001. Maharashtra, India
Tel.: +91-20-26454240 / 26446319. Fax: +91-20-26453707
Email : principal@akipoonacollege.ac.in Website:www.akipoonacollege.ac.in

प्राचार्य महोदय का मंतव्य

हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव इस विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन सफल रहा। राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव वर्तमान समय की नितांत आवश्यकता है। देश और उसके नागरिकों की उन्नति हेतु देश में सांप्रदायिक सद्भाव का होना बेहद जरूरी होता है। इसी प्रकार राष्ट्र की प्रगति हेतु उसकी एकता बनाए रखना अनिवार्य होता है। इन विषयों से संबंधित हिंदी साहित्य में जो लेखन हुआ है उसपर आलेख प्रस्तोताओं ने चिंतन मनन कर के उचित निष्कर्ष निकाले है जो इस ग्रंथ में प्रस्तुत किए जा रहे है। इन आलेखों को पढकर उसपर चिंतन मनन हुआ तो ये इस ग्रंथ की उपलब्धी होगी।

संगोष्ठी में उपस्थित सभी विद्वान तथा प्रतिभागियों एवं आयोजन समिति के सभी सदस्यों को मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ और उम्मीद करता हूँ की इस पुस्तक से अध्यापक एवं शोधार्थी लाभान्वित होंगे।

डॉ. एम. रफिक सरखवास
प्राचार्य एवं संगोष्ठी अध्यक्ष

अनुक्रमाणिका

अनुक्रम	शोधालेख प्रस्तोता का नाम	विषय	पृष्ठ
1	डॉ. अंजली कायस्था	हिन्दी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	10
2	डॉ. (श्रीमती) अनसूया अग्रवाल	गीति काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव	14
3	शेख आसमा एम.	निदा फाज़ली के काव्य में सांप्रदायिक सौहार्द	17
4	कुमार अश्विन अनिल सुरवाडे	हिंदी काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना	20
5	डॉ. बेबी श्रीमंत खिलारे	रामवृक्ष बेनीपुरी के 'सुभान खाँ' कहानी में चित्रित एकता तथा सांप्रदायिक सदभाव	22
6	दिलशाद अहमद	मंज़ूर एहतेशाम के उपन्यास में अभिव्यक्त राष्ट्रीय 'खा बरगदसू' एकता और सांप्रदायिक सद्भाव	26
7	डॉ.शिल्पा जिवरग, डॉ.रमा दुधमांडे	हिन्दी उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	29
8	डॉ. मधुकर खराटे	दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़लों में साम्प्रदायिक सद्भाव के स्वर	33
9	प्रा. डॉ. एमेकर पी. एन.	मुंबई काण्ड कहानी में व्यक्त सांप्रदायिक सद्भाव	40
10	म. इसमाईल म. हुसेन	छायावादी युग में राष्ट्रीयता	43
11	प्रा. मुजावर जैनु हमिद	सांप्रदायिक सद्भाव और हिंदी उपन्यास	47
12	डॉ. नानासाहेब जावळे	डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	50
13	डॉ. बलवंत जेऊरकर	हिंदी कविता में सांप्रदायिक सद्□व	53
14	डॉ. विनोदकुमार विलासराव वायचळ 'वेदार्य'	हिन्दी चलचित्र विधा में साम्प्रदायिक सद्भाव	56
15	प्रा.डॉ.अनिता वेताळ/अंत्रे	हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	59
16	डॉ.शकिला ज.मुल्ला	हिंदी कहानी साहित्य में सांप्रदायिक सद्भाव का चित्रण	61
17	प्रा. संध्या तायडे	हिन्दी कथा साहित्य में राष्ट्रीयता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	64
18	डॉ॰ कॅप्ट॰ बाबासाहेब माने	'आना इस देश' उपन्यास में निहित राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	66
19	प्रा. डॉ. पूनम त्रिवेदी	साम्प्रदायिक सद्भाव की तलाश : टोपी शुक्ला	70
20	डॉ. विजय महादेव गाडे	तुम बिलकुल हम जैसे निकले !	74
21	डॉ.कान्ता एम्. भाला	प्रगतिवादी काव्यधारा में राष्ट्रीयता एवं साम्प्रदायिकता	78
22	डॉ. बेबी कोलते	हिंदी कथा साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	83

23	डॉ. एस. पी. मिश्र	"गजल साहित्य मे राष्ट्रीय एकता एव साम्प्रदायिक सद्भाव"	86
24	प्रा.चौधरी निलोफर	मोहन राकेश की कहानियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	91
25	प्रा. डॉ. प्रवीणकुमार चौगुले	हिंदी महाकाव्यों में चित्रित सांप्रदायिक सद्भाव	95
26	डॉ. प्रेरणा उबाळे	हिंदी नाटक एवं एकांकी : सांप्रदायिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य में	100
27	प्रा. डॉ. श्रीमती कामिनी बी. तिवारी	राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव – चन्द्रसेन 'विराट' के काव्य के संदर्भ में	103
28	प्रा. डॉ. मनोज नामदेव पाटील	गिरिराजशरण अग्रवाल की ग़ज़लों में अभिव्यक्त साम्प्रदायिक सद्भाव	107
29	डॉ. गिरीष एस. कोळी	डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सांप्रादायिक सद्भाव	110
30	इबरार खान	हिंदी काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	114
31	जयराम गाडेकर	'सत्ती मैया का चौरा' उपन्यास में सांप्रदायिक सद्भाव	117
32	डा.कल्पना गवली	रामधारी सिंह दिनकर की कविताओं में राष्ट्रीय चेतना का स्वर	121
33	प्रा. शिंदे नवनाथ	'कितने पाकिस्तान' में सांप्रदायिक सद्भाव	125
34	डॉ मीना ठाकूर	प्राचीन हिंदी संतकाव्य में साम्प्रदायिक सद्भाव	129
35	तायडे राजाराम बाबुराव	समय की पीड़ा का रचनात्मक स्वर हमारा शहर उस बरस :	131
36	डॉ. रमेश संभाजी कुरे	'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नइ' नाटक में सांप्रदायिक सद्भाव	134
37	डॉ. विजय भास्कर लावणे	भक्तिकालीन काव्य में राष्टीय एकता एव सांप्रदायिक संदभाव	139
38	डॉ. साधना च. भडारी	देश विभाजन पर आधृत कहानियों में राष्ट्रीय एकता तथा सांप्रदायिक सद्भाव का संदेष	142
39	डॉ. साइफुल इस्लाम	प्रेमचंद और साम्प्रदायिक सदभावना	146
40	प्रा. संतोष धोत्रे	'बदला' कहानी में सांप्रदायिक सद्भाव	149
41	सारिका राजाराम कांबळे	प्रदीप सौरभ के 'मुन्नी मोबाइल'उपन्यास में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	152
42	प्रा. डॉ. सुरेखा प्रे. मंत्री	हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	154
43	प्रकाश	राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में कबीर एवं जायसी की भवनाएं	157
44	डॉ तरन्नुम बानो	प्रेमचंद की कहानियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव	160
45	सुश्री शेरे सुप्रिया विजय	राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव एक विचार	163

46	अश्विनी महादेव जाधव	' भारत दुर्दशा ' नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव	166
47	बनजा तालदी	कहानी में अभिव्यक्त साम्प्रदायिकता	168
48	योगेश कुमार सिंह	हिन्दी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	171
49	गीतांजली साहू	हिंदी कविता में सांप्रदायिक सद्भाव	174
50	मिनाक्षी अशोक बनसोडे	हिंदी नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना	178
51	डॉ. नाजिम शेख	धूमिल के काव्य में सांप्रदायिक सद्भाव एवं राष्ट्रीय एकता	182
52	प्रा. सौ. पल्लवी भुपेंद्र पाटील	हिंदी संत साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव	185
53	डॉ. दीपक रामा तुपे	हिंदी उपन्यास और सांप्रदायिक सद्भाव	187
54	सविता मकासरे	'हमारा शहर उस बरस' में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	191
55	डॉ. शाहीन अब्दुल अजीज पटेल	हिंदी कविता में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव	193
56	प्रा.शिकलकर एस.जी.	मैथिलीषरण गुप्तजी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना एवं सामाजिक सद्भावना	195
57	श्रीदेवी बाबुराव बिरादार	गुरुनानक के साहित्य में साम्प्रदायिक सद्भाव	198
58	प्रा.सीताबाई नामदेव पवार	संत रविदास के काव्य में सांप्रदायिक सद्भाव	200
59	सुभाष मारूति कदम	'शरणदाता' एवं 'आवां' में सांप्रदायिक सद्भाव	202
60	सुनीता प्रधान	हिंदी दलित काव्य में राष्ट्रीय एकता	205
61	प्रा.विजय लोहार	हिंदी गज़लों में सांप्रदायिक सद् भाव की अनुगूँज	210
62	डॉ. एमेकर एन.जी.	'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ' नाटक में सांप्रदायिक सद्भाव	215
63	विजय सदामते	'मलबे का मालिक' कहानी में सांप्रदायिकता की समस्या	217
64	डॉ. सविता सिंह	अभ्यासक्रम की कहानियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	220
65	डॉ. शेख मोहम्मद शाकिर	नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में सांप्रदायिक सहिष्णुता	222
66	डॉ. हिमालया सुनील सकट	हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव	224
67	डॉ. बाबा शेख	संत साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	228
68	डॉ. गीता यादव	भीष्म साहनी का ' तमस' उपन्यासः सांप्रदायिकता का ज्वलंत दस्तावेज	230

69	डॉ. कांचन कृष्णा घाडगे	‘जिस लाहौर नई देख्या देख्या जन्म्याई नई’ नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	232
70	डॉ. सुनीता यादव	हिन्दी साहित्य में राश्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	235
71	सहा.प्रा.मधुकर लक्ष्मण डोंगरे	‘ध्रुवस्वामिनी’ नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	238
72	डॉ. माया जाधव	**हिंदी बाल उपन्यास में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव**	241
73	डॉ॰ हरदीप कौर	सतगुरू राम सिंह जी के मानव मूल्य और सांप्रदायिक सद्भावना	243
74	डॉ. वर्षाराणी निवृत्तीराव सहदेव	**आज की हिन्दी कविता में सांप्रदायिक सदभाव**	246
75	डॉ. सुनिता नारायणराव कावळे	व्दिवेदी कृत उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना	250
76	अमृता सिंह	अमृता प्रीतम तथा भीष्म साहनी के उपन्यासों में साम्प्रदायिक सद्भाव	253
77	प्रा. महेश रामचंद्र बनकर	हिंदी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव	255
78	डॉ. के. पद्मा रानी	**राष्ट्रीय एकता के संबंध में गुलाब राय के विचार**	257
79	पाटील भाईदास रघुनाथ	समकालीन कहानी में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना	261
80	डॉ. पिरू आर. गवळी	‘शहर में कर्फ्यू’ उपन्यास में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव	264

1. हिन्दी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. अंजली कायस्था
सहायक प्रोफ़ेसर
दयाल सिंह (सांध्य) महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

राष्ट्रीय एकता का प्रश्न केवल देश के लिए ही उपयोगी नहीं है अपितु देश से इतर जो एक साहित्यिक समाज है उसके लिए भी उपयोगी है। प्रेमचंद की कहानी ने एक नया युग दिया। उनका कहानी संग्रह 'सोज़े वतन' सन् 1907 ई. में प्रकाशित हुआ था। स्वतंत्र भावना से ओत–प्रोत और राष्ट्रीय एकता से ओत–प्रोत इस कहानी संग्रह को अंग्रेज सरकार ने ज़ब्त कर लिया था। सोज़े वतन सन् 1907 ई. में प्रकाशित हुआ था। प्रेमचंद की कहानियों में विषय–वैविध्य दिखाई पड़ता है किसी अन्य कथाकार ने जीवन के इतने बड़े फलक को नहीं समेटा। उनकी कहानियों जीवन से, परिवेश से जुड़ी कहानियाँ हैं। उनकी कहानियों के पात्र हर वर्ग, धर्म, जाति के हैं। यहाँ साम्प्रदायिक सद्भाव दिखाई देता है। 'ईदगाह' कहानी एक ऐसी कहानी है जो साम्प्रदायिक सद्भाव भी व्यक्त करती है। वहीं दूसरी तरफ नमक का दरोगा राष्ट्रीय एकता और फर्ज़ की मिशाल पैदा करता है। यहाँ एक आदर्शवादी और सुधारवादी दृष्टि की ओर संकेत किया गया है। प्रेमचंद ने आज़ादी के लिए जनसंघर्ष करने वाले पात्रों का भी चित्रण किया है। आहुति जुलूस सत्याग्रह समरयात्रा नामक कहानियों में राष्ट्र की एकता और फर्ज़ को दिखाया गया है। सन् 1950 के बाद की कहानियों में विषय और शिल्प दोनों ही दृष्टियों में अंतर आया है। यहाँ कहानी पूर्वाग्रह पर नहीं अपितु पूर्वाग्रह मुक्त है। यहाँ कहानियाँ भोगे हुए यथार्थ से आकर सीधे जुड़ जाती है। पुराने कहानीकारों ने अपनी आँखों पर समाजवादी, नैतिकतावादी रूमानी या मनोविश्लेषणवादी दृष्टिकोण से ही जीवन को देखा था किन्तु नए कहानीकारों ने ऐसा कम किया है। यह कहानीकार सीधे भोगे हुए यथार्थ से जुड़ते दिखाई देते हैं।

मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, अमरकान्त, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा इत्यादि कहानीकारों ने राष्ट्रीय एकता और सम्प्रदायिकता सद्भाव की कहानियों प्रचुर मात्रा में लिखी हैं।

यदि हम थोड़ी सी दूरवर्ती भूमिका में जाएँ तो राष्ट्रीय एकता की मिसाल भारतेन्दु के नाटकों में दिखाई देती है। आधुनिक युग की एक नई उम्मीद वहाँ दिखाई देती है। राष्ट्रीयता यहाँ प्रमख रूप से उभरी हुई दिखाई देती है। राष्ट्रीयता का संदर्भ जातीयता से जुड़ता हुआ दिखाई देता है। राष्ट्रीयता का अर्थ सिर्फ़ बाह्य गुणों के आधार पर देश की छवि निर्मित करने की नहीं है। बल्कि आंतरिक गुणों से देश की छवि निर्मित करने की है। राष्ट्र या जाति जब जीवन से जुड़ी होती है तो ही वह जीवन है। राष्ट्रीयता की दृष्टि से कुछ कृतियाँ जातीय जीवन के ऊपरी स्तरों से ही सम्बद्ध होती है। उसकी विशिष्ट गहराईयों में जाने की क्षमता नहीं रखती हैं। इसके कारण एक प्रमुख समस्या यह उत्पन्न हो जाती है कि हमारे राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप क्या है और उसकी गतिविधि किस दिशा में जा रही है? यह एक समस्या हमारी वास्तविक परिस्थितियों को बहुत दूर तक प्रभावित करती है। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि राष्ट्र केवल सीमाओं और जनसंख्या का नाम नही है। उसके साथ विशिष्ट

परिस्थितियाँ और एक विशिष्ट इतिहास होता है। राष्ट्र एक व्यक्ति के ही समान होता है इसके अनुरूप ही हमारी चेतना में परिवर्तन की संभावनाएँ बनी रहती हैं। जिस देश का इतिहास सौ वर्षों से ही ज़्यादा पुराना हो उसके राष्ट्रीय स्वरूप में परिवर्तन होना तो स्वाभाविक है। जासूसी उपन्यासों के बाद लज्ज़ाराम शर्मा आते हैं जो 'आदर्श हिन्दू' लिखते हैं। यहाँ राष्ट्रीय एकता को सर्वोपरि माना गया है। आदर्श हिन्दू में वह आदर्श राष्ट्र की भी परिकल्पना कर लेते हैं। आदर्श राष्ट्र के साथ–साथ वह साम्प्रदायिक सद्भाव को भी जीवित रखते हैं। इसके उपरान्त उपन्यासों को एक नया प्रचलन दिखाई देता है कि अनुभव द्वारा सीख देना। यहाँ अब अनुभवपरक ज़िन्दगी पर बल दिया जाने लगा। उपन्यास में उपदेशात्मक प्रवृत्ति के कारण कथासूत्र में बाधा पड़ती हुई नज़र आती है। एक सार्थक प्रयास इस दिशा में प्रेमचंद का दिखाई देता है। प्रेमचंद ने कर्मभूमि, रंगभूमि एवं गबन नामक उपन्यासों में स्वाधीनता व राष्ट्रीय आन्दोलन की झलक प्रस्तुत की है। राष्ट्रीयता का उभार यहाँ दिखाई देता है। इन उपन्यासों में गाँधीवादी विचारधारा के साथ–साथ अन्य क्रांतिकारी विचारधारा को भी विश्लेषित किया गया था। उपन्यास में चित्रित उन सभी घटनाओं में स्वाधीनता आन्दोलन का पक्ष दिखाई देता है। मुक्ति, स्वराज और स्वतंत्रता जैसे शब्द उपन्यासों में दिखाई देने लगे थे। झूठा सच, देशद्रोही, दादा कामरेड एवं सिंहावलोकन में आजादी का चित्र दिखाई देने लगा था। इसकी अभिव्यक्ति इनके (उपन्यासकारों) उपन्यासों में दिखाई देने लगा था। अंग्रेज़ों के अत्याचारों से भारतीय युवक किस प्रकार संघर्ष कर रहे थे इसकी भी अभिव्यक्ति उसमें दिखाई देती है।

वस्तुतः यहाँ वह यह कहना चाहते हैं कि सिर्फ़ यह धर्म का प्रश्न नहीं रह गया है। यह तो पूरी राजनीति, समाज व्यवस्था और मनोविज्ञान का प्रश्न है। इन अलग–अलग पहलुओं का विश्लेषण करते हुए चुनौतियों से टकराने की जरूरत है। साम्प्रदायिकता की समस्या इसीलिए उत्पन्न हुई क्योंकि हम एक प्रगतिशील मानवीय समाज बनाने में असफल हुए हैं।

साम्प्रदायिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता को बहुत से नए कहानीकारों एवं उपन्यासकारों ने भी जगह दी है। इन्हीं में से एक कहानीकार एवं उपन्यासकार रमेश उपाध्याय जी हैं। उन्होंने साम्प्रदायिकता की समस्या को 'विध्वंस' के बाद में दर्शाया है। राष्ट्रीयता की समस्या को वह 'हरे फूल की खुशबू' उपन्यास में उठाता है। वह राष्ट्रीयता की संस्कृति को भी विश्लेषित करता है। यह उपन्यास कला जगत से जुड़े बुनियादी सवालों को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भों में उठाता है।

यह कला जगत् पर पूरी ईमानदारी से लिखा गया उपन्यास है जिसमें कला और समाज के आपसी रिश्तों को बहुत ही बारीकी से समझा गया है। कला के समाज और जनता के रिश्तों को लेकर बहुत ही महत्त्वपूर्ण सवाल उठाए गए हैं। उपन्यास एक यथार्थपरक स्थिति में आकर समाप्त हो जाता है। रमणीकलाल आंतरिक मन से चित्त नहीं बनाता फिर भी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में उसके चित्रों की धूम है। वह अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका है। यहाँ सत्यनिष्ठा, स्वाभिमान, आदर्श इत्यादि का कोई मूल्य नहीं रह गया है। इसी प्रकार रमेश उपाध्याय की एक महत्त्वपूर्ण कहानी राष्ट्रीय राजमार्ग है जो समकालीन व्यवस्था से टकराकर राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिकता सद्भाव की नींव रखती है। इसमें संवेदना की स्थिति भी

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राष्ट्र और संवेदना दोनों स्वतंत्र शब्द हैं जिनके मेल से एक महान शक्ति का उद्भव होकर राष्ट्रीय संवेदना का रूप धारण करती हैं जो साहित्य में स्वर और सुद बनकर प्रवाहित होती है। इससे सामान्य जनता में सामूहिक संवेदना का निर्माण होता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इस कारण इसमें सबके साथ मिल जुलकर रहने की स्वाभाविक प्रक्रिया शुरू से ही विद्यमान है। सर्वप्रथम मनुष्य ने परिवार में, कुल में रहना प्रारम्भ किया। इसी सामुदायिक मानसिक भावना ने समाज, राज्य और राष्ट्र को जन्म दिया। जब से राष्ट्र का निर्माण हुआ, राष्ट्रीय संवेदना भी उत्पन्न हुई। इसी संदर्भ में निम्न पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं–

''राष्ट्रीयता अपने राष्ट्र के प्रति वह प्रेमभाव है जिसमें राष्ट्र के प्रभु सत्ता प्राप्त करने, उनकी रक्षा करने तथा उसके गौरव एवं सममान बुद्धि की कामना रहती है। राष्ट्र की सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा विकास की भावना भी इसमें अनुस्यूत है। ... राष्ट्रीयता का अर्थ किसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर निवासित जनसमूह की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना के समन्वित रूप से है।''[1]

राष्ट्रीयता के स्वरूप का बोध होने पर भारतीयों ने अपने देश की राष्ट्रीयता को हीनवस्था में पाया, परिणामस्वरूप अपने देश की धरती के प्रति उसका सोया हुआ अनुराग जाग उठा और साहित्य में जिस उदात्त की जरूरत थी वह आई किन्तु फिर धीरे–धीरे खत्म होते हुए दिखाई दी। आज मानवीय गरिमा को नकार दिया गया है। राष्ट्र दलदल में समा गया है। रमेश उपाध्याय राष्ट्रीयता के संकुचित अर्थ के समर्थक नहीं हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का राष्ट्रीय जीवन नए राष्ट्रीय लक्ष्यों की ओर जमींदारी प्रथा के अंत, पंचवर्षीय योजनाओं, अस्पृश्यता तथा साम्प्रदायिक दंगों की ओर बढ़ता हुआ दिखाई दिया। आज भारतीय राष्ट्र नए विकास की प्रसव पीड़ा की वेदना को भोग रहा है। इस भोग में अनास्था, घुटन, दिखावा, भ्रष्टाचार, स्वार्थपरकता, व्यक्तिवादिता मोहभंग आदि से ग्रस्त होकर व्यक्तित्व के विघटन से ग्रस्त है। एक ओर मनुष्य मान्यताओं के प्रति उद्भूत विद्रोह से ही प्रगति और क्रांतिकारी जीवन के भ्रम में भटक रहा है तो साथ ही दूसरे नए युग के निर्माण की आस्था, विश्वास और उल्लास के साथ पीड़ाओं को भोगता हुआ नए युग को जन्म देने में व्यस्त भी है। रमेश उपाध्याय की कहानी 'स्पंदन' में वैद्य जी वर्तमान देश–प्रेम और जनता के विश्वास को जागृत करते हुए नज़र आते हैं। वह ईसाई मिशनरियों को देश का दुश्मन मानते हैं। इसी प्रकार 'बहाव' कहानी में रमेश उपाध्याय ने विदेशी औरत और हिन्दुस्तानी आदमी का विवाह करवा कर अन्तर्राष्ट्रीय संवेदना को दर्शाया है। जूली के शब्दों में –

''मैं अमरीकी और तुम भारतीय, मैं ईसाई और तुम हिन्दू, मैं गोरी, तुम काले, मैं आध्यात्मिक शान्ति खोजने वाली और तुम सारी दुनिया को शोषण–उत्पीड़न से मुक्त देखने की इच्छा रखने वाले। कहीं कोई मेल है? लेकिन मेरे भाग्य में तुम ही लिखे थे।''[प]

इसी प्रकार साम्प्रदायिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता का संदर्भ कृष्णा सोबती की कहानी सिक्का बदल गया में दिखाई देता है। मोहन राकेश की कहानी 'मलबे का मालिक' तथा अज्ञेय की कहानी 'शरणदाता' में दिखाई देता है। हमारे साहित्यिक समाज में प्रतिभा, शक्ति, साहस और निर्माण क्षमता की कभी नहीं है परनतु इनके प्रयोग का जितना अवसर

उन्हें मिलना चाहिए अब तक नहीं मिल रहा। शायद इसके लिए शासकवर्ग या सत्ता वर्ग ज़िम्मेदार है। राजनीति का इसमें विशेष योगदान है। बहुत से साहित्यों पर शासक वर्ग या सत्ता वर्ग प्रतिबंध लगा देता है जो उचित नहीं है। राजनीति तो राष्ट्रीय जीवन का एक सामान्य अंग है। हमें प्रगतिशील होकर राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए प्रयत्न करना होगा। विघटनकारी प्रवृत्तियों से अपनी और देश की रक्षा करना आज के साहित्यकारों का सबसे बड़ा दायित्व है। मुक्तिबोध, अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी, मोहन राकेश, अमरकांत, कृष्णा सोबती इत्यादि रचनाकारों ने मानवतावाद की ओर निरन्तर अपना कदम बढ़ाया है। मनुष्य के प्रति एक अनुराग उनमें लक्षित होता है। उपन्यास और कहानियों में राष्ट्रीय जीवन की व्यापकता और साम्प्रदायिक सद्भाव की ज़रूरत आज भी बनी हुई है। यह गतिशील राष्ट्रीय चेतना की जरूरत भी है। यह कथा–साहित्य की रूपात्मक या भावात्मक गतिविधि में एक क्रांतिकारी कदम होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

2. रमेश उपाध्याय, अर्थतंत्र तथा अन्य कहानियाँ, पृ. 174.

2.गीति काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव

डॉ. (श्रीमती) अनसूया अग्रवाल
एम. ए., पीएच. डी., डी. लिट्.
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष– हिंदी
शा. म. व. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
महासमुंद 493– 445 (छत्तीसगढ़)

साहित्यकारों ने प्रारंभ से ही राष्ट्रीयता की पवित्र भावना को अपने काव्य और चिंतन–मनन का विषय बनाया है। वास्तविकता यह है कि राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने के लिए जाति विरोधों को दूर कर जातिगत एकता का परिचय देना चाहिए । हर धर्म और जाति के प्रति उदार भाव रखना चाहिए अन्यथा एक ही राष्ट्र के रहवासी अपनी प्रगति के लिए दूसरे को हानि पहुँचाने की चेष्टा करने लगेगा। अतः आवश्यकता है भावात्मक एकता की। गीतों के सृजन ने इसे अभिनव मोड़ दिया और राष्ट्रीय एकता और प्रेरणा के गीत गाये गये। गीतकारों की अभिलाषा थी कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आपस में मिल जुलकर रहें क्योंकि जातियाँ तो मानव निर्मित है; सबसे पहले तो सब परमात्मा के बनाये हुए मानव हैं। एक ही सृष्टिनियंता की संतान हैं। सबकी रगों में एक ही रंग का रक्त बह रहा है। जब रक्त का रंग एक है, सृष्टिकर्ता एक है तो मानव–मानव में भेद क्यों? यही भेद–भाव देश की पराधीनता का मूल कारण है। अतः वर्ण भेद संबंधी विचारों को बढ़ावा देखकर आपस की विषाक्त भावना को हवा नहीं देना चाहिए–

वृथा मत लो भारत का नाम
भारत एक भाव, जिसको पाकर मनुष्य जगता है।
भारत एक जलज, जिस पर जल का न दाग लगता है।। 1

जतिगत् भेद एवं वर्गगत् भेद राष्ट्र की शक्ति का बंटवारा कर देता है; जबकि भारत कहते ही एक ऐसे राष्ट्र का बिंब उभरता है जहाँ सब समभाव और सद्भाव से हंसी–खुशी रहते हों। जहाँ आपस में विद्वेष नहीं, मानव का मानव के प्रति और सभी धर्मो के प्रति आदर हो। समाज की एकता ही राष्ट्र की एकता है। गीतकार समूचे राष्ट्र को एक सूत्र में बांध कर आपसी फूट को खत्म करने की कोशिश करता है–

आओ भाई हम सब मिलकर, ज्योति जलाएँ ज्ञान की।
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र हैं सब संतति भगवान की।।
आज हटा दो मानव–मन से भेद–भाव के नारों को।
आज करो तुम श्रम की इज्जत, छोड़ के मिथ्याचारों को।।
आओ अर्थी आज जलाएँ फूट–फाट अज्ञान की।
आओ भाई हम सब मिलकर, ज्योति जलाएँ ज्ञान की।। 2

भारत एक प्रजातांत्रिक देश है। जहॉ जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए शासन है। किसी जाति या धर्म का नहीं। इसलिए भारत भूमि पर रहने वाले भारतीयों को एक साथ मिलकर रहने की प्रेरणा देते हुए पंत जी कहते हैं–

इन्हें भाव दो!
राष्ट्र वर्ग से निखरे मानव,
जाति–वर्ण के क्षय हों दानव;
नव प्रकाश भव का हो अनुभव,

रहे न मन भौतिक तमसाःवृत्त,

इन्हें भाव दो!! 3

कविवर हरिवंशराय बच्चन भी महसूस करते हैं कि देशवासियों ने अज्ञानतावश जातिभेद को अपनाकर अपना अहित किया है। यदि देशवासी इस तरह विवेकहीनता का परिचय देते रहेंगे तो समाज की शक्ति विभाजित होने लगेगी और इसका लाभ दूसरा देश उठा सकता है—

समस्त देश की बस एक टेक हो,

समस्त छिन्न—भिन्न जाति एक हो;

विमूढ़ता नहीं, जहाँ विवेक हो,

यही प्रभाव/ शब्द शब्द

में भरो।। 4

''त्रिभंगिमा'' में कवि बच्चन भारतवासियों को एक सूत्र में बंधने की प्रेरणा देते हुए आव्हान करते हैं कि सारी जातियां मतभेद भुलाकर साथ रहें। पुरातन की वेदी भारत की एक ही आवाज हो— मानवता! यदि मानवता का स्वर सबसे ऊँचा होगा तो देश में एकता अक्षुण्ण बनी रहेगी, तब देश—देश के अतिथि का जन— गण अपने मन से स्वागत करेंगे—

देश—देश के पाहुन! भारत के जन गण का स्वागत लो।

पूरब की इस परम पुरातन वेदी पर सब साथ मिलो।।

इस पर बसते हिन्दू—मुस्लिम, बौद्ध, जैन, सिख, इसाई—

और पारसी, यहॉ सभी हैं, आपस में भाई—भाई।

भारत कहता मानवता के साँचें में सब लोग ढ़लो।

देश—देश के पाहुन! भारत के जन गण का स्वागत लो।। 5

संकट के समय एकता ही राष्ट्र की सुरक्षा के काम आती है। भारत माता ने जब—जब आवाज लगाई, गीतकारों ने वीरों की शिराओं में बहते रक्त की गति को रवानगी देने ओज और वीरता के गीत गाए हैं ताकि शत्रु की ललकार को अपने लिए चुनौती मानकर; अपनी भारत माँ की रक्षा के लिए हमारे जाँबाज़ सिपाही राष्ट्रीय सीमाओं की सुरक्षा में अपना सर्वस्व होम कर दें। एक तिरंगी ध्वजा के नीचे एकत्रित होकर सब यह स्वीकार करते हैं कि धर्म से भी बड़ा हमारा देश है—

एक ध्वजा के नीचे आकर जन गण मंगल गान जगा है,

आज एकता की देवी के अधरों पर वरदान जगा है;

आल्हा—ऊदल को समझाने दिल्ली पति चौहान जगा है,

सादिक के मस्तिष्क हुमायूं, कर्णवती का ज्ञान जगा है;

मजहब से भी बड़ा वतन है, यह सच्चा ईमान जगा है;

सिक्खों की तलवार जगी है, शास्त्री का सम्मान जगा है।

भारतीयों की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक जागृति ने देशवासियों में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न की है। राष्ट्र रक्षा के लिए उन्हें जागरूक किया है। ''भारत राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में बहुत अंशों तक सफल रहा है। लड़खड़ाया अवश्य पर टूटा नहीं। एक उभरती भारतीय संस्कृति की विविधता के मोतियों को एक सूत्र में पिरोये रखा है। उसने परंपरा का पोषण किया है और वांछित परिवर्तन का स्वागत। उसके सीमांतों पर द्वारपाल सजग हैं जो अभीसिप्त का सत्कार करते हैं और अवांछित का तिरस्कार।'' 6

राष्ट्र में एकता होगी तो साम्प्रदायिक दंगे नहीं होंगे। जब तक हिन्दू मुसलमान का भेदभाव दूर नहीं होगा राष्ट्र पर संकट के बादल घिरते रहेंगे। याद कीजिए भारत की स्वतंत्रता के साथ ही जिन्ना के पाकिस्तान बनाने के प्रस्ताव से ही राष्ट्र की अखंडता नष्ट हो गई। हिन्दू–मुस्लिम आपस में जंग करने लगे और स्वतंत्रता संग्राम जाति संग्राम में तब्दील हो गई। आजादी को हम महसूस भी नहीं कर पाये थे और पाकिस्तान अलग बना। जाने कितने हिंदू मुसलमान इस दंगे में मारे गए। जब जब युद्ध होता है; बेकसूर जिंदगियों का बलिदान हो जाता है। काश्मीर की समस्या उत्पन्न होने का कारण भी पाक विभाजन ही है। चीन का हौसला भी बढ़ा हुआ है। राष्ट्रीय एकता की भावना को ठेस पहुंची और गीतकार गा उठा–

किसको बापू की नहीं आ नहीं आज याद?
किसके मन में है आज नहीं जागा विषाद?
जिसके सबसे ज्यादा श्रम यत्नों से आई–
आजादी, उसको ही खा बैठा है फसाद;
जिसके शिकार हैं दोनों हिन्दू–मुसलमान।
आजादी का दिन मना रहा है हिन्दोस्तान।। 7

इसी विभाजन के कारण हमने अपने राष्ट्र पिता बापू को खो दिया पर लोग सचेत न हुए। इतनी बड़ी क्षति के बाद भी आज अनेक संप्रदाय पनप रहे हैं। हर प्रांत अपनी भाषा, जाति और राज्य को स्वतंत्र रखने की कल्पना करता है। मिशनरी अलग अपनी सत्ता कायम करना चाहती हैं। जिस तरह पाकिस्तान बना उसी तरह काश्मीर को अलग करना चाहते हैं। भीतर ही भीतर इस विष की जड़ें पनप रही हैं। बाहर से देखने पर विषाद की कालिमा धुली–पूछी नजर आती है।

एक ही देश में अनेक धर्म के लोग रहते हैं। यह जरूरी नहीं कि एक राष्ट्र में एक ही धर्म के समर्थक हों। अतः विभिन्न संप्रदाय अपने–अपने धर्म की उन्नति करते हुए अन्य धर्मो की रक्षा करें, मान करें, उसका उपहास न उड़ाये तो ही देश की उन्नति होगी। अन्यथा द्वेष भावना राष्ट्र की उन्नति में बाधक सिद्ध होगा। आवश्यकता है सांप्रदायिक भेद–भाव को भुलाकर एकता के गीत गाने की। हम सिर्फ यह याद रखें कि हम भारतवासी हैं– हिंदू या मुसलमान नहीं। जातिगत् बैर–भाव को भुलाकर संप्रदायवाद का दमन कर राष्ट्र सुरक्षा के लिए पूरी ईमानदारी से संकल्प लेंगे तो ही भारत के सुनहरे भविष्य की कल्पना साकार हो सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ–

1. शांति लोकः रामधारी सिंह दिनकर, पृ. 24
2. गीतिकाव्य में राष्ट्रीय भावना– उषा मृणलिनी पृ. 89, सुशील प्रकाशन– अजमेर,
3. वीणा– सुमित्रानंदन पंत, प्र. सं. 1958
4. धार के इधर– उधर, डॉ. बच्चन, पृ. सं. 69
5. त्रिभंगिमा, डॉ. बच्चन, प्र. सं. 1961
6. रचना– पृ. 15, म. प्र. शासन, उ. शि. वि. एवं म. प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, नव. दिस. 2001
7. धार के इधर– उधर; डॉ. बच्चन, पृ. 78, प्र. सं. 1950

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

3. निदा फाज़ली के काव्य में सांप्रदायिक सौहार्द

शेख आसमा एम.
शोधार्थी, हिंदी विभाग
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

सन 1947 भारत अंग्रेजों की गुलामी से आजाद हो गया किंतु स्वर्णिम अक्षरों में लिखे भारतीय इतिहास में एक अध्याय ऐसा जुड़ गया जिसे लाखों निष्पाप भारतीयों के रक्त से लिखा गया |पाकिस्तान का जन्म ऐसे इतिहास का आरंभ था जिसकी कल्पना भी किसी ने नहीं की थी |विभाजन ने हिंदुस्तान को भारत – पाक इन जमिनी टुकडों में नहीं बल्कि यहाँ रहनेवाले इंसानों, उनकी भाषा, संस्कृति एवं मानवीय संवेदनाओं का भी बंटवारा कर दिया |अंग्रेजों ने जिस साम्प्रदायिकता के बीज बोए थे उसने अपनी जड़े मजबूत कर ली| इस घटना ने कई पीढ़ियों को प्रभवित किया |

समाज में फैली साम्प्रदायिकता की दीमक को अपने साहित्य द्वारा मिटाने का प्रयास अनेक साहित्यकारों ने किया, उनमें एक नाम निदा फाज़ली है |निदा साहब ने विभाजन पूर्व के साम्प्रदायिक सौहार्द एवं उसके बाद पनपते विद्वेष को देखा भी और सहा भी |समाज में व्याप्त इस बुराई के खिलाफ निदा एक आवाज़ बनकर बेबाकी के साथ बोले –

‘कोई हिंदू, कोई मुस्लिम, कोई इसाई है,
सबने इन्सान न बनने की कसम खायी हैं |’

विभाजन के पश्चात निदा साहब का परिवार पाकिस्तान चला गया लेकिन निदा भारत में ही रुक गए |उनका मानना था कि जगह का बदला जाना किसी मसले का हल नहीं है - ‘एक ही धरती हम सबका घर जितना तेरा उतना मेरा |’ वे लोगों की सोच बदलना चाहते थे |आपने हिंदू– मुस्लिम को एकता के धागे में पिरोने की कोशिश की | निदा साहब मनुष्य द्वारा मनुष्यों के बीच खड़ी की गई साम्प्रदायिकता की दीवार को गिराकर मनुष्यता की विजय देखना चाहते थे| निदा फाज़ली ने हमेशा मनुष्य के भीतर, सृष्टि के कण- कण में बसे खुदा की तलाश की -

‘मंदिर, मस्जिदों की दुनिया में मुझको पहचानते कहाँ है लोग,
मैं मजदूर के पसीने में,
मैं ही बरसात के महीने में |’

‘निदा फाज़ली की एक विशेषता यह भी है कि वह हिंदू- मुस्लिम एकता के बहुत बड़े पैरोकार है | अर्थात् ‘बा मुसलमाँ अल्ला –अल्लाह, बा ब्राहमण राम- राम’ उनका मनपसंद अमल है |’ इन दोनों को आपस में लड़ाने वाले धर्म के ठेकेदारों, स्वार्थी राजनेताओं को निदा साहब ने अपनी ही अनोखी शैली में उत्तर दिया है –

‘ये शेखो- बिरहमन हमें अच्छे नहीं लगते |
हम जितने है ये उतने भी सच्चे नहीं लगते ||’

निदा चाहते थे की सोए हुए समाज को जगाया जाए | धर्म, जाति के नाम पर होनेवाली लूट को रोका जाए वरना और कई पीढियाँ बर्बाद हो जाएगी | वे जानते थे की सामान्य जनता तो मुट्ठी भर लीडरों के हाथों की कठपुतलियाँ है| उस जनता की आँखों पर बंधी धर्म की पट्टी को हटाकर सच्चाई दिखाना चाहते थे –

‘मुट्ठी भर लोगों के हाथों में लाखों की तकदीरें हैं,

जुदा जुदा है धर्म, इलाके एकसी लेकिन जंजीरे है,

आज और कल की बात नहीं है सदियों की तारीख यही है |’

निदा साहब को अपनी विद्रोही प्रवृत्ति के कारण कई बार समाज कंटकों, स्वार्थी राजनेताओं, सहकर्मियों तथा समकालीन साहित्यकारों की नाराजगी का सामना करना पड़ा | उन्हें अपनी ही सरजमीं पर शरणार्थी की तरह जीने के लिए विवश कर दिया गया | फिर भी अपनी कलम को झुकने नहीं दिया, उसका सौदा नहीं किया| अपने इस मानवता प्रेम की बहुत बड़ी कींमत उन्हें चुकानी पड़ी | साहित्य के माध्यम से साम्प्रदायिकता को भड़काने वालों, जाति – पाती के नाम पर आम जन को उलझाकर अपना उल्लू सीधा करनेवालों को करारा जवाब दिया | अपनी कविता ‘एक राजनेता के नाम’ में वे लिखते हैं-

‘मुझे मालुम है, चारों तरफ जो तबाही है,

हुकुमत में सियासत के तमाशे की गवाह है,

तुम्हे हिंदू की चाहत है न मुस्लिम से अदावत|’

निदा साहब को इस बात का हमेशा मलाल रहा कि देश की स्वार्थी राजनीति ने धर्म और भाषा को हथियार बनाकर सामान्य जनता को तबाह और बर्बाद कर दिया | निदा साहब ने राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सदभाव को बनाए रखने के लिए कबीर की भाँति धार्मिक रूढी परंपराओं, आडम्बरों का विरोध कर मानव धर्म को श्रेष्ठ माना –

‘चाहे गीता बाचिए या पढ़िए कुरआन |

तेरा मेरा प्यार ही हर पुस्तक का ज्ञान ||’

आधुनिकता के साथ चलते हुए इस शायर ने ‘वसुधैव कुटुम्बकम्’ की भावना को काव्य में प्रत्यक्ष में उतारा जिसकी वर्तमान समाज को नितांत आवश्यकता थी | यथा -

‘मिल जुल के बैठना,

मुल्के खुदा में सारी जमीने हैं एक-सी |’

निदा साहब की लिखी ‘कौमी एकता’, ‘हम्द’, ‘मैं खुदा बन के’, ‘गरज बरस प्यासी धरती पर’, ‘एक राजनेता के नाम’, ‘मुझी में खुदा था’, ‘वृंदावन के कृष्ण’ आदि कविताओं में देश में बढ़ती साम्प्रदायिकता की जड़ो पर सीधे सीधे प्रहार किया | साम्प्रदायिक सौहार्द और राष्ट्रीय एकता से ओत प्रोत

कविताओं के लिए आपके कविता संग्रह 'खोया हुआ सा कुछ' को 1998 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया | आपने साहित्य के माध्यम से केवल इन्सान के दरमियाँ की दूरियों को ही नहीं हिंदी और उर्दू भाषा के बीच के अंतर को भी कम कर दिया |

निष्कर्ष रूप में हम कहेंगे कि अपनी जमीन से उखड़ने के बावजूद फिर उसी में पैर जमाने वाले इस शायरने हिंदू – मुस्लिम के बीच फैलती नफरत को मिटाते हुए राष्ट्रीय एकता तथा साम्प्रदायिक सदभाव का संदेश दिया | देश की बदलती हुई स्थितियों का मंजर हमेशा उनके काव्य में उभरता रहा | निदा साहब की लिखी ग़ज़ल हो या गीत, शेर हो या दोहे, नज्म हो या फिर गद्य साहित्य सभी में समकालीन संदर्भ, सांस्कृतिक भावभूमि, राष्ट्रीय चेतना मानवीय सदाशयता और शोषितों- दलितों की पक्षधरता परिलक्षित होती है |

संदर्भ ग्रंथ:-

1. खोया हुआ सा कुछ- निदा फाज़ली, वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली
2. चेहरे - निदा फाज़ली, वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली
3. निदा फाज़ली- संपा. कन्हैयालाल नंदन, राजपाल एंड सन्स, दिल्ली
4. दीवारों के बीच - निदा फाज़ली, वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली
5. वेबसाइट -www. Bbchindi.com

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

4. हिंदी काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना

कुमार अश्विन अनिल सुरवाडे
एम.ए. हिंदी, प्रथम वर्ष
उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, जलगाँव

भारत को स्वतंत्रता प्राप्त होणे से पहले ही राष्ट्रीय एकता थी । गांधीजी के विचारों से प्रेरित होकर देश को स्वतंत्र प्राप्ति के लिए पूर्ण भारत वर्ष में राष्ट्रीय आंदोलन चलें। उससे राष्ट्र निर्मिति के लिए एकता महत्वपूर्ण है, ये सब जानने और समझने लगे।देश को सद्भाव व राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रप्रेम एवं राष्ट्रीय एकता अबाधित रहे इसलिए काव्यविधा का महत्वपूर्ण योगदान है। काव्य एक ऐसी विधा है, जिससे सब रुबरु है। हिंदी कविताओं मे भी एक सजगता है। समानता, राष्ट्रभक्ति एवं राष्ट्रीय एकता प्रकट होकर राष्ट्र को प्रेरित करती है।

डॉ.कुमार विश्वास सदी के सबसे चहिते और विश्व मे युवकों को प्रेरित करने वाले कवि है। आपका जन्म 10 फरवरी, 1970 में उत्तर प्रदेश में गाजियाबाद जिले के पिलखावा गाव में हुआ। आपने देश विदेशों में भी अपनी कविताओं की जादू फैलाई है। गुगल ने आपको विश्व का चहिता होने के कारण आमंत्रित किया था। हिंदी भाषा और राष्ट्रप्रेम के प्रति आप लिखते हो। आपका राष्ट्रप्रेम अतुलनिय है। डॉ.कुमार विश्वास ने अपने करीअर राजस्थान में प्रवक्ता के रुप में 1994 में शुरु किया। अब तक आप महाविद्यालयों में अध्यापन का कार्य कर रहें हो । इसके साथ ही डॉ. कुमार विश्वास कविता मंच के सबसे व्यस्ततम कवियों में से एक है। उन्होंने अब तक हजारो कवि संमेलनों मे कविता पाठ किया है।

दौलत ना अता करना मौला, शोहरत ना अता करना मौला
बस इतना अता करना चाहे जन्नत ना अता करना मौला
शम्मा–ए–वतन की लौ पर जब कुर्बान पतंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो

बस एक सदा ही सुनें सदा बर्फीली मस्त हवाओं में
बस एक दुआ ही उठे सदा जलते–तपते सेहराओं में
जिते–जी इसका मान रखें
मर कर मर्यादा याद रखें
हम रहे कभी ना रहे मगर
इसकी सज–धज आबाद रहे
जन–मन में उच्छल देष प्रेम का जलधि तिरंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो
गीता का ज्ञान सुने ना सुने, इस धरती का यशगान सुने
हम सबद–कीर्तन सुन ना सके भारत मां का जयगान सुने
परवरदिगार, मै तेरे द्वार
पर ले पुकार ये आया हूँ
चाहे अजान ना सुनें कान

पर जय–जय हिंदुस्तान सुनें
जन–मन में उच्छल देष प्रेम का जलधि तिरंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो
होठों पर गंगा हो, हाथों में तिरंगा हो

इस कविता में कवि यह कहना चाहता है की, दौलत ना मिलें तो चलेगा, नाम शोहरत ना मिले तो चलेगा, परंतु देश सर्वप्रथम होना चाहिए, देश के प्रति ये हमारा दायित्व है। हम भेदभाव न करके देश को प्रथम पद पर रखे। हम रहें या ना रहें, देश का श्रेष्ठत्व अबाधित और अमर रहना चाहिए । हम किसी भी हालाथों मे रहे, चाहे ओ बर्फीली घाटी रहें, हमे डटे रहना है, पर देश का ध्वज तिरंगा हमेशा लहराना चाहिए। चाहे हम गीता, रामायण, महाभारत न पढें, न कीर्तन देखें, न अजान सुनें पर भारत का विजय गान यशगान सुनना, गाना हमारा दायित्व है । इस कविता के माध्यम से हम राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रनिर्मिति और समाज कें प्रति प्रबोधन एवं राष्टीय चेतना दिखाने का प्रयास कर रहे है ।

- **संदर्भग्रंथ :–**

1. डॉ.कुमार विश्वास – काव्यसंग्रह

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

5. रामवृक्ष बेनीपुरी के 'सुभान खाँ ' कहानी में चित्रित एकता तथा सांप्रदायिक सदभाव

डॉ. बेबी श्रीमंत खिलारे
एस. एम जोशी कॉलेज,
हडपसर, पुणे- 28

स्वाधीनता के पूर्व पर्याप्त् मात्रा में एकता थी। अपनी प्राचीन परंपरा ने हमें बाँध रखा था। अंग्रेजो के आगमन के पश्चात भारत दुर्बल बनता गया। कुछ समय के बाद नेताओं तथा समाज सेवकों नें राष्ट्र की दुर्बलता को पहचाना और भारत को जागृत करने का संकल्प किया कुछ नेताओ ने ब्रम्हसमाज तथा आर्यसमाज आदि की स्थापना करके उँचनीच के भेदभाव को मिटाने का प्रयास किया । अनपढ जनता स्वाधीनता जनंतंत्र वाद, सामाजिक उत्क्रांती आदि कुछ भी नही समझ पाती थी। इसलिए शिक्षा के द्वारा समाज का प्रबोधन करने की कोशिश की। बीसवी सदी के प्रारंभ से ही भारत के प्रत्येक राज्यं के अनगिनत सेवकों और नेताओं ने ब्रिटिश शासन को मिटाने के लिए लहू बहाया , प्राणों की आहुति दी। फलत: भारत जाग उठा एकात्मता की भावना जाग उठी। किंतु स्वाधीनता के पश्चात दो-चार साल व्यतीत भी नहीं हुए थे कि भारत के सामने कई समस्याएँ विकराल रुप धारण कर उपस्थित हो गई। ये समस्याएँ भाषानुसार प्रांतरचना के पश्चात और उग्र बनी। वस्तुत: भाषानुसार प्रांतरचना का हेतु उदार तथा जनता को लाभदायी करने के लिए था अपेक्षा यह थी कि भाषानुसार राज्य़ की सीमाएँ निर्धारित होने पर राज्यीय भाषा में शासन का कारोबार चले और उसमें लोग अधिक अधिक मात्रा में सहयोग दे, जनहित अधिक हो किंतु यह उच्चं एवं् उदान्तं हेतु गौण हुआ योजना के कारण अनेक अनिष्ट् विचार तथा भेदभाव निर्मित हुए।

भाषानुसार प्रांत या राज्य रचना के कारण सीमावाद बढे, कई नेता भारत की असली सीमा भूल गए और राज्यों की सीमा ही उनके ध्यान में आने लगी। परिणामत: जनता का मन भी संकुचित हुआ। कौनसा घटक किस राज्य सीमा से सटकर या किस राज्य सीमा में सम्मिलित किया जाए इसके संबंध में मतभेद हुए। लोगों ने बहुत उग्र आंदोलन किए। आंदोलन में हिंसाचार बढे, राष्ट्रं की करोडों की हानी हुई। मन में कटुता का निर्माण हुआ।

ब्रिटिशों की कूटनीति के कारण जातीयता की भावनाओं को प्रोत्साहन मिला। उन्होंने राज्यशासन प्रबंध में जातीय तत्वों के अनुसार कुछ मात्रा में सुविधाएँ पैदा की, जातीय शत्रुता पैदा की बताने की जरुरत नही कि इसका परिणाम क्या हुआ। भारत की एकता स्वप्नवत् रह गई। और उनकी समस्याओं के कारण मन शंकित हुआ और दिल उदास हुआ। समझदार नेताओं का मन विदीर्ण हुआ और वे सोचने लगे कि भारत में समरसता का निर्माण किस प्रकार किया जाए?

अनेक विद्वानो और नेताओं को लगा कि इस विघटन का एक ही उपाय है और वह है राष्ट्रीय एकता। रामवृक्ष बेनीपुरी का युग त्याग और आत्मबलिदान का युग था। यहीं कारण है कि उनके साहित्य का मूल प्रतिपाद्यथी यही रहा है। सुभान खाँ (कहानी) में उन्होंने सुभान खाँ नामक चरित्र को उभारक। स्वतंत्रता आंदोलन की एक घटना का वर्णन किया हैं। धार्मिक विवादों में फँसे हिदू और

मुसलमान इन दो गुटों के बीच हुयी धार्मिक दुश्मनी की दासताँ कहानीकार ने यहाँ प्रस्तुत की हैं। आपस में भाईचारा समाप्त कर एक-दूसरे के ज्ञान के दुश्मन बन बैठे हैं। जहाँ शांती और अमन का राज था, वहीं आज अशांति और हिंसा का साम्राज्य फैला हैं। हिंदुस्थान की सरजमी पर धार्मिक विवादों ने ऐसा कुहराम मचाया हैं कि, यहाँ पशुता भी बर्बर नजर आती है। प्रस्तुत कहानी में लेखक ने इसी घटना का वास्तव चित्र प्रस्तुत किया है।

जब कुछ धार्मिक उत्सव होते हैं, तब समाज के सभी स्तर के लोग एकसाथ इकट्ठे होते हैं। देहातों में अखंड राम - नाम सजाट की प्रथा आज भी हैं। उस समय महाप्रसाद के लिए प्राय: गाँव के सभी लोग इकठ्ठा होते हैं। किंतु समाज में स्थित विविध भेंदों को मिटाने का प्रयास नही होता। जातिंयों एवं् उपजातियों के भेद भी वहाँ नजर आते हैं। जातीयता की विष-वल्ली अपनी जडें गहराई तक पहुॅचा चुकी है। फलत: उसे जड से उखाडना सहज संभव नही हैं। पर कम से कम उसके विस्तार को रोकने के लिएप्रयासकरनाआवश्यक हैं। विभिन्न जातियों-उपजातियों के लोग बार-बार अन्यान्य कारणों से एकत्रित आऐंगे तो पट बात लाभदायक सिध्द होगी। घातक वातावरण को समाप्तं करने के लिए ऐसे कार्यक्रम बडे उपयुक्त होंगे। प्र.द.पुराणिक कहते हैं "शहर में किसी न किसी कारण समाज के विभिन्न स्तर के लोग एकत्रित होते हैं। लेकिन देहातों में छूआ-छूत का भूत भयानक हैं। वहाँ युवकों और विदयालयों की ऊँची कक्षाओं के छात्र-छात्राओं को इन भूतों को भगाना पडेगा।"[1] कई अवसरों पर सामूहिक भोजन आयोजित करने से मन की संकुचित भावना लुप्त हो जाती हैं। प्रस्तुत कहानी में रामवृक्ष बेनीपुरी सुभान खाँ के प्रति अपने अनुभव बताते हैं "ईद बकरीईद को न सुभानदादा हमें भूल सकते थे, न होली-दीवाली को हम उन्हें। होली के दिन नानी अपने हाथों से पूए, खीर, और गोश्त परोसकर सुभानदादा को खिलाती और तब मैं ही अपने हाथों से अबीर लेकर उनकी दाढी में मलता।"[2] इसी प्रकार कई अवसरों पर सुभान खाँ और रामवृक्ष बेनीपुरी इकठ्ठा आते| इतना ही नही।

प्रस्तुत कहानी सांप्रदायिक सौदाई की एक मिसाल हैं। सुभान खाँ एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें बडे-बडे झगडों की पंचायतों में दूर-दूर के हिंदू -मुसलमान पंच मुकर्रर करते थे। वे इमानदार व दयानदार इंसान थे। सुभानदादा का मस्जिद बनाने का अरमान था वे कहा करते थे - " अल्लाह ने चाहा तो मैं एक मस्जिद जरुर बनवाऊँगा| गाँव के ही लायक एक छोटीसी मस्जिद लेकिन बडी ही खुबसुरत।"[3] दादा ने अपनी जिंदगी भर की कला इसमें लगा दी। रामवृक्ष बेनीपुरी के बगीचे में शीशम, सखुए, कटहल आदि के पेड थे इन की लकडियाँ मस्जिद के लिए काम आथी थी। मतलब हिंदू तथा मुस्लिम लोगों के मेहनत से ये मस्जिद बनी थी। रामवृक्ष बेनीपुरी बताते हैं "जिस दिन मस्जिद तैयार हुई थी, सुभानदादाने जबानभर के प्रतिष्ठित लोगों को न्योता दिया था। जुमा का दिन था। जितने मुसलमान थे सबने नमाज पढी थी जितने हिंदू आए थे, उनके सत्कार के लिए दादा ने हिंदू हलवाई रखकर तरह-तरह की मिठायाँ बनवाई थी, पान-इलायची का प्रबंध किया था।"[4] इसी प्रकार सांप्रदायिक सौहार्द स्थापित करने के लिए सुभान खाँ जैसे चरित्रो को कुर्बानी देनी पडती हैं।

सदियों से अपने देश के लोगों के रोम रोम में जातीयता तथा धर्मान्धता व्याप्त है। इन्हीं बातों का निरीक्षण कर ब्रिटिशों ने भारत में जातीय एवं धार्मिक विष - बीज बोए। ये बीज अंकुरित हुए। उनके वृक्ष फूले-फले, उनकी जडे भूमि में गहराई तक पहुँची। आज भी उन वृक्षों की जडे उखाडना असंभव हो गया हैं। यह जातीयता ज्वालामुखी की भाँति निरंतर सुप्तावस्था में होती हैं अवसर पाते ही वह जागृत होती हैं। इसलिए तो जहाँ हिंदू-मुसलमान दिवाली और ईद मिलकर मनाते थे वहीं आज दोनों एक-दुसरों का खू बहाने के लिए तत्परं हो गए हैं सुभान खाँ का गाँव जवार के हिंदू तथा मुसलमान अपनी-अपनी बात पर आडे हुए हैं। मुसलमान सुभान खाँ ने बनायी मस्जिद में गाय की कुर्बानी? नही, ऐसा नही हो सकता " "अगर हुई तो क्या होगी? हमारी नाक कट जाएगी। लोग क्या कहेंगे - इतने हिंदू के रहते गो-माता के गले पर छुरी चली।"[5] यहाँ लोगों के ये समझ में नहीं आता है कि अंग्रेजो ने अपना स्वार्थ पूरा करने के लिए सांप्रदायिकता की रखकर देश को नहस-नहस करने का प्रबंध किया हैं। मगर इस समस्या को सुलझाने के लिए सुभान खाँ जैसे चरित्रों को कुर्बानी देनी बडेगी सुभान खाँ खुद गाय की कुर्बानी का विरोध करते हैं तब एक मुसलमान नौजवान और सुभान खाँ के संवाद हैं, "मैं कहता हूँ, यह मजहब नही हैं। मैं हज से हो आया हूँ कुराण मैंने पढी है। गाय की कुर्बानी लाजिमी नहीं हैं। अरब में लोग दुम्मे और उँट की कुर्बानी अनूमन करते हैं। “नौवजवान बोल उठा” आप बुढे है, आप अब अलग बैठिए, हम काफिरों से समझ लेंगे। "तब सुभानदादा चीख उठे-" कहलू का बेटा जबान सम्हालकर बोल। तू किन्हें काफिर कह रहा है? और मेरे बुढापे पर मतजा मै मस्जिद में चल रहा हूँ। पहले मेरी कुर्बानी ही होगी, तब गाय की कुर्बानी हो सकेगी।"[6] ऐसा कहकर सुभानदादा मस्जिद के दरवाजें की चौखट पर आँखे मुंदकर बैढते हैं। दादा की आँखों से आँसुओं की झडी उनके गाल से होकर दाढी को भिगोती हैं। धीरे -धीरे मस्जिद के नजदिक लोग इकठ्ठा होते हैं और गाय की कुर्बानी का सवाल दादा की धारा में बहकर न जाने कहाँ गुम हो जाता हैं। उन्हे देखकर ऐसा लगता था जैसे उनके रोम -रोम से प्रेम और भाई-चारे का संदेश मिलकर वायु मंडळ को व्याप्तं कर रहा हो।

अंग्रेजों की कूटनीति के कारण धर्म के नाम पर सांप्रदायिकता की नींव रखी गई। जिसमें कई गाँव उजडगये। कई मासूम जिंदगियाँ तबाह हो गई। कई निरपराध बालक, औरते, वृद्धों की बलि चढाई गई। ऐसे दंगो केसेकडो उदाहरण दिए जा सकते है। पर आम जनता इन दंगो की ओर हताश उदास होकर देखती हैं। जनता दंगो की उलटी - सीधी, सही - गलत खबरे सुनती हैं। पर ऐसे कठीण समय पर सुज्ञ नागरिकों को अपने मन के संतुलन को नही खोना चाहिए। संतुलन रखकर दंगों का शिकार न बनकर दंगे के असली कारण ढूँढ निकालने चाहिए। उन कारणों को हटाना चाहिए। तभी ये दंगे हमेशा के लिए मिटाना संभव हैं। इन दंगो के कारण विदयार्थीओं के मन में विकृति निर्माण होती है। उनका दृष्टीकोन भी विकृत हो जाता हैं। शिक्षकों को चाहिए कि इन विकृत दृष्टिकोन को मिटाए। यदि हम छात्रों को यह समझादेंगे कि गत पचास वर्षों में जातीय दंगों के कारण देश की कितनी और किस प्रकार असिम हानी हुई हैं, तो उन्हें जरुर ज्ञात होगा कि यह जातीय विद्वेश की भावना कितनी भयानक और हानिकारक हैं। पुणे, औरंगाबाद, जलगाँव, भिवंडी, अहमदाबाद आदि शहरों में इन दंगो के कारण कितना नुकसान हुआ है

यह बताने की आवश्यकता नही हैं। राष्ट्रीय एकता के कार्ये में युवकों को जातीय विद्वेष की जहरीली भावना से अलग रखने का कार्य शिक्षकों को ही करना है। समाज के नेता एवं् राष्ट्र नेताओं को यह करना नितांत आवश्यक हैं।

वर्तमान युग भोग और हिंसा का हैं। इक्कीसवी सदी के ये दो छोर भारतीय जीवन की दो कथाएँ कहती है। जिसका स्वर् सुभान खॉ रेखाचित्र में लेखक ने मानवीय संवेदना और उच्चतर आदर्शो के साथ -साथ मनुष्य् का वह हिंसक स्वरुप भी अंकित किया हैं जिसके आगे पशुता भी बर्बर दिखाई देती हैं। सामाजिक एकता और अमन के फले -फूले इस देश में मजहबी विवादों ने असामाजिक विसंगतियों को जन्म् दिया। प्रस्तुत रेखाचित्र में रामवृक्ष बेनीपूरी जीने असामाजिक विसंगतियों को स्पष्ट् करते हुए भयंकर अभावों, संघर्षो और कठिनाइयों का चित्र अंकित किया हैं। जहाँ हिंदू -मुसलमान दिवाली और ईद मिलकर मनातें हैं। वही आज दोंनो एक - दूसरों का खून बहाने के लिए तत्पर् हो गये है। इस समस्या कों सुलझानें के लिए सुभान खाँ जैसे चरित्र को कुर्बानियाँ देनी होंगी। जो प्रस्तुत रेखाचित्र में हमें दिखाई देता हैं।

संदर्भ

1. प्र.द.पुराणिक - राष्ट्रीय और भावनात्मक् एकता पृष्ठ -76, प्र.द.पुराणिक प्रतिष्ठान हिंदी माध्यंमिक विदयालय प्रकाशन, पुणे - 37, प्रथम संस्कंरण-1882
2. रामवृक्ष बेनीपुरी - गदय वैभव, पृष्ठं - 44 स्नेहवर्धन प्रकाशन, 863 सदाशिव पेठ, पुणे, प्रथम संस्करणं-1882
3. वही - पृष्ठ - 45
4. वही - पृष्ठ - 45
5. वही - पृष्ठ - 46
6. वही - पृष्ठ - 47

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

6. मंज़ूर एहतेशाम के उपन्यास में अभिव्यक्त राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव 'सूखा बरगद'

दिलशाद अहमद
शोधार्थी हिंदी विभाग
मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी हैदराबाद500032 -

भारतीय संस्कृति इस बात की गवाह है कि इस देश में हिंदू मुस्लिम आपस में मुहब्बत , भाईचारे और राष्ट्रीय भावना से एक साथ रहते आये हैं। लेकिन यहाँ की संस्कृति को कुछ सांप्रदायिक लोगों ने नष्ट करने की कोशिश की। देश विभाजन के पश्चात् भारी संख्या में सांप्रदायिक दंगे हुए। जिस आज़ाद भारत की कल्पना कर राष्ट्रीय एकता की भावना से सभी धर्म के लोग एक साथ स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया। वहीँ स्वतंत्रता पश्चात् एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये। इतना कुछ होने के बाद भी हिन्दूमुस्लिम एकता ख़त्म नहीं हुई-। लेकिन यह हकीकत है कि विभाजन का राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना पर बुरा असर पड़ा।

सूखा बरगद उपन्यास में मंज़ूर एहतेशाम ने एक राजनीति घटना काचित्रण किया है जो वास्तव में किसी नफरत को पैदा कर राष्ट्रीय एकता के सूत्र में हिन्दू और मुसलमान को बांधने में सफल हुई। जो इस प्रकार है" -इंकलाबियों ने मुसलमान सिपाहियों को अपने साथ मिलाने के लिए उनमें यह खबर फैला दी कि अंग्रेज़ों की बन्दूक से चलने वाली कारतूस की पैकिंग सुअर की चर्बी से बनती है और हिन्दुओं में यह कि गाय चर्बी से।[1]" यह वह ऐतिहासिक घटना थी जिसने अंग्रेज़ों के खिलाफ हिन्दू और मुसलमानों को एकत्र किया। लेकिन यह एकता ज़्यादा नहीं चली स्वतंत्रता प्राप्ति तक आतेआते समाप्त होने लगी-। और देश में सांप्रदायिक भावनाएं जन्म लेने लगी। इसका मूल कारण था सत्ता की लालच। कुछ लोगों के इस लालच ने देश को दो टुकड़ों बाँट दिया। परिणाम स्वरुप दो राष्ट्रों का निर्माण हुआ हिंदुस्तान और - पाकिस्तान।

मंज़ूर एहतेशाम ने सांप्रदायिक दंगों पर व्यंग करते हुए सूखा बरगद में लिखा है" -एक मुस्लिम रियासत होने के बावजूद बंटवारे के समय भी यहाँ कभी हिन्दूतनी या -मुस्लिम तना-फसाद नहीं हुआ था-झगड़ा। बुजुर्गों की ज़बान में कहा जाए तो यहाँ हिन्दूभाई -मुसलमान भाई-की तरह रहते थे। ज़्यादा तादाद गरीबों की थीहिन्दू भी और मुसलमान भी -। इसलिए वैसे भी लड़ने के लिए दोनों का एक ही दुश्मन था। बंटवारे के बाद यहाँ पाकिस्तान से आकर बसे सिन्धी और और पंजाबी शरणार्थी भी थे और ऐसे मुसलमान भी जो देश छोड़कर पाकिस्तान जाना नहीं चाहते थे। पुरानी आबादी में ऐसे हिन्दू भी थे और ऐसे मुसलमान भी थे जो नवाब साहब के नाम पर अपना सिर कटवा दें।[2]"

देश विभाजन की वजह से जहाँ बहुत सारे सांप्रदायिक दंगे हुए तथा लोगों में नफरत की मुस्लिम एकता की बहुत सी मिसालें कायम -मय में भी हिन्दूभावना को जन्म दिया और ऐसे स हुईं। सूखा बरगद में विवेक अपने मित्र सुहैल को बताता है कि विभाजन के बाद उसका परिवार भी पाकिस्तान से भारत में आकर बसा।बार छोड़कर सरहद -जब उसके परिवार को अपना घर“ के इस पार आना पड़ा था। कैसे जहाँ उसके माँमुस्लिम में कोई अंतर नहीं -हिन्दू ,प रहते थेबा-था और अगर डैडी के मुसलमान दोस्त अपनी जान जोखिम में न डालते तो उनका जिंद ा बच पाना मुश्किल था।[3]”

सांप्रदायिक सोच पर व्यंग करते हुए मंज़ूर एहतेशाम ने सूखा बरगद में सुहैल के माध्यम से लोगों मेंराष्ट्रीय भावना को बढ़ावा देने का प्रयास किया है सुहैल -लोगों से कहता है“ -यही तुम्हारा मुल्क है और इसी से तुम्हारी किस्मत जुड़ी है। तुम पहले एक इन्सानफिर हिन्दुस्तानी , और उसके बाद मुसलमान हो। [4]”यहाँ देशप्रेम की भावना को व्यक्त करने के लिए सूखा बरगद में अब्दुल हफीज़ खान कहता है किऔर मैं इस मुल्क में किसी मज़बूरी से नहीं रुका -। चाहता तो खुला रास्ता था पाकिस्तान जाने का। मालो असबाब के नाम पर ऐसी कौन सी जागीरें मेरे नाम थी कि पैर पकड़कर जाने से रोकती। लेकिन मैं वहां अजनबियों के बीच क्यों जाता और जाकर क्या करतादा दिन तक चलने वाला नहीं हैयह आपसी नफरत का खेल ज़्या ?। तहज़ीब एक अलग चीज़ है। लेकिन अब इस मज़हब नामी मिटटी में नए पौधों की जड़ें पकड़ने की ताकत नहीं रही।[5]”

लेखक ने यहाँ स्पष्ट रूप से बताया है कि देश विभाजन के पश्चात् देश की जो स्थिति थी और मुसलमान जो शिक्षित थे वे पाकिस्तान जा रहे थे। उनके पास एक नए मुल्क में कुछ करने के अवसर दिख रहे थे। लेकिन अब्दुल वहीद खान इस देश को नहीं छोड़ना चाहता। क्योंकि उसे यहाँ की मिट्टी से प्रेम हैइस देश से प्रेम है ,यहाँ के लोगों से प्रेम है ,। मंज़ूर एहतेशाम ने देश की राष्ट्रीय एकता को बनाये रखने में पत्रकारिता का विशेष महत्त्व मानते हैं। सूखा बरगद में अब्दुल वहीद खान अपनी बेटी रशीदा से कहता है“ -इस मुल्क में अगर अच्छे जर्नलिस्ट हों तो आधे से ज़्यादा मुश्किल हल हो जाये। तुम ही होतुम क ,ल को अगर और कुछ नहीं तो कम से कम इन हिन्दू और मुसलमान को करीब लाने की कोशिश -तालोग दो कहते हैं मैं नहीं मान ’दो कौमो‘ तो कर सकती हो। बगैर जाने एक दुसरे से मोहब्बत कैसे कर सकते हैं।[6]”

पत्रकारिता को लोकतंत्र का चतुर्थ स्तम्भ माना गया है। लेखक ने पत्रकारिता के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए इस बात पर बल दिया है कि हिदू और मुसलमान के बीच की दूरियों को कम करना है तो यह ज़रूरी है कि लोग एक दूसरे को समझें और जाने। तथा इसके लिए पत्रकारिता एक अहम् रोल निभा सकता है।

लेखक ने सूखा बरगद में उर्दू भाषा के माध्यम से राष्ट्रीय एकता को दिखाने का प्रयास किया है। धर्म और भाषा का सीधा कोई संबंध नहीं होता लेकिन कुछ लोगों ने इसे बड़ी

चालाकी से मुसलमानों के साथ जोड़ दिया है। उर्दू भाषा को देवनागरी में लिपियंत्रण करने पर जोर दिया गया जिससे कि लोगों में मतभेद हुए। सूखा बरगद उपन्यास में इस संबंध में“ -देश को एक मिलि जुली तहजीब की ज़रूरत है। एक मिली-जुली भाषा चाहिए जिसे सब अपना समझ सकें। और उसके लिए सबको थोड़ीथोड़ी क़ुरबानी देनी होगी-। उर्दू हमारी मातृ भाषा है लेकिन देवनागरी का विरोध क्योंदेवनागरी में केवल लिपि ही बदलती है ?।[7]”

लेखक मंज़ूर एहतेशाम ने उर्दू और देवनागरी अर्थात उर्दू भाषा का देवनागरी में लिपियंत्रण करने के पक्ष को देश की संस्कृति और राष्ट्रीय एकता में मजबूती के रूप में स्वीकार करते हैं। भाषा का धर्म से कोई संबंध नहीं होता। मुंशी प्रेमचंद पहले उर्दू में लिखते थे और कृष्ण चंदर जो कि उर्दू आलोचना में सबसे बड़ा नाम है। इस उपन्यास में इनका उल्लेख मिलता है।

विजय के पिता सहनी साहब को उर्दू शायरी की किताब भेंट ,खा बरगद में सुहैलसू करता है। उर्दू भाषा की प्रशंसा करते हुए सहनी साहब कहते हैं कि“ -उर्दू शायरीआज हमारी - इस ज़बान की और उस ,क्या खूबियाँ हैं-पढ़ ही नहीं सकतीं कि क्या ,औलादें क्या समझेंगी ज़बान की शायरीको।[8]”

कृष्ण चंदर और शुरुआत में उर्दू में कथा सम्राट , उर्दू साहित्य को रचने वाले रामलाल प्रेमचंद भी लिखते रहे हैं। आज हिंदी पाठकों में मुस्लिम परिवेश की कहानियांमुस्लिम परिवेश , पर आधारित उपन्यास जैसी एक अलग पहचान स्थापित की गयी है। इसी कड़ी में मंज़ूर का सूखा बरगद उपन्यास अपनी अनूठी पहचान बनाये हुए है। निष्कर्षतः हम कह एहतेशाम सकते हैं कि मंज़ूर एहतेशाम ने सूखा बरगद में पत्रकारिताउर्दू भाषा तथा राष्ट्रीय एकता की , भावना से लोगों को करीब लाने का प्रयास किया है। और इस बात से आगाह किया है कि भारत मोहब्बत और ,तथा बहुधार्मिकता वाले देश में बिना आपसी मेलजोल जैसे बहुसांस्कृतिक भाईचारे के राष्ट्र का विकास संभव नहीं है।

सन्दर्भ सूची -

1. सूखा बरगद57 .मंज़ूर एहतेशाम पृष्ठ सं ,

.2वही पृष्ठ सं43 .

.3वही पृष्ठ सं83 .

.4वही पृष्ठ सं83 .

.5वही पृष्ठ सं70 .

.6वही पृष्ठ सं96 .

.7वही पृष्ठ सं88 .

.8वही पृष्ठ सं185 .

7. हिन्दी उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा.डॉ.शिल्पा जिवरग
पंडित जवाहरलाल नेहरू
महाविद्यालय, औरंगाबाद.

प्रा.डॉ.रमा दुधमांडे
डॉ.सौ.आयबीपी महिला
महाविद्यालय, औरंगाबाद.

साहित्य की महत्वपूर्ण विधा उपन्यास को माना जाता है। यह सामाजिक यथार्थ नए मूल्यों, सभ्यता, संस्कृति को अधिक सशक्त ढंग से अभिव्यक्त करने में कारगर साबित हो रहा है। साठोत्तरी उपन्यासों में भी नया मोड आया और साठोत्तर कहानियों – उपन्यासों का दौर चला इसमें आधुनिकतावादी और जनवादी धारा दिखाई देती है। लोकतांत्रिक व्यवस्था के प्रति मोहभंग इस कारण सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा अवाम में तीव्र होती दिखाई देती है। यह साहित्य में परिलक्षित हुआ। इस प्रकार उपन्यास के विन्यास, संरचना में परिवर्तन आया। कुछ उपन्यास में कुछ आधुनिकताबोध की अभिव्यक्ति और संरचना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। कुछ उपन्यास, मानवीय स्थिति, उसकी लाचारी, अभिशप्तता तथा नियति को अनुभूति एवं संवेदना के स्तरपर उजागर करते है। आधुनिकतावादी उपन्यासों के दौर के समानांतर ऐसे उपन्यास भी लिखे जा रहे थे जो जन–जीवन तथा समाज की समस्याओं मूल्यों को लेकर जूझ रहे थे। इन उपन्यासो में सामाजिक आर्थिक तथा राजनितिक समस्याओं को उठाया गया है।

कितने पाकिस्तान एक बडा और नए ढंग का उपन्यास है। उसमें एक जबरदस्त जिरह छिडी है जो हर क धर्मतावादी को हिलाकर रख सकती है। उपन्यास हिंदु, मुसलमान, सिख सबकी तरफ लगातार सवाल खडे करता है कि, मित्रता बडी है या शत्रुता? प्रेम बडा है या घृणा ? यह कब्रिस्तान और शमशानों के बीच जीवन जिरह है।

कमलेश्वर का कितने पाकिस्तान यह उपन्यास भारत–पाकिस्तान के बँटवारे और हिंदू–मुस्लिम संबंधो पर आधारित है। यह उनके मन के भीतर चलनेवाले अंतर्व्दव्द का परिणाम माना जाता है। कमलेश्वर पुराने मुल्यों की जगह नए मूल्यों को स्थापित करनेवाले रचनाकार रहे है। इस उपन्यास ने आज के टूटते मानवीय मूल्यों को संजोने तथा दहशत की जिंदगी में मानवता की खोज की है। कमलेश्वर ने इतिहास की गहराई में जाकर तथ्यात्मक सामग्री एवं तटस्थता और निष्पक्ष रूप से बँटवारे की समस्या का हल ढूंढकर नवमानवता की कल्पना को साकार रूप प्रदान करने का प्रयास किया है।

कितने पाकिस्तान एक ऐसे समय की सच्ची दास्तान है, जब धार्मिक उन्माद ने लाखो हिंदू मुसलमान के खून की नदियाँ बहाई, घर लुटे एवं जलाए, माँ–बहन एवं बहू–बेटियों के आबरू लूटे गए थे, जख्म इतने गहरे थे कि इसे न हिंदू भूल पाए न ही मुसलमान, इतिहास इस बात का गवाह है कि मुगल शासकों ने सत्ता के लालच में अपने परिवार के लोगों को मारा।

कमलेश्वर ने इसे आधार बनाकर पेश किया जिसने भारतीय इतिहास और संस्कृति को एक नया मोड दिया। लेखक ने इतिहास के उस समय का बयान किया है। जहाँ मानवता बार बार कराह रही थी। अत्यंत निर्दयता से मानवता को सूली पर चढा दिया। अंग्रेजो की वृत्ति जो मजहब की नस्ल का बखूबी उपयोग कर नफरत का पाकिस्तान बना। इन्सान की पहचान मजहब के सहारे करने की इच्छा मजबूत हो रही है। जब तक धर्म जाति एवं नस्ल की सर्वोच्चता तथा विश्व शक्ति बनने का नशा नहीं टूटता तब तक दूसरा पाकिस्तान बनने का सिलसिला यूँ चलता रहेगा। लेखक

कहते है जितना जो कुछ टूट गया है। उसे भूल जाए जो बेहतर जो टूटने के बाद बचा है उसे टूटने से बचाए।

उपन्यास में जहाँ कमलेश्वर जी ने विश्व के इतिहास को समझा है वहीं वर्तमान में हो रही विनाश लीला जिसके परिणाम स्वरूप हमारा आनेवाला भविष्य कैसा होगा। अपनी पैनी दृष्टि से देखा है।

कितने पाकिस्तान कमलेश्वर जी की एक विशिष्ट कृति है। इस संबंध में पुष्पपाल सिंह का कथन है कि – "कमलेश्वर जी का उपन्यास कितने पाकिस्तान इतिहास और संस्कृति की इसी गहरी और जरूरी समझ का विराट फलक बनकर आया है। मनुष्य के वर्तमान चिंताओं को पूरे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करता यह उपन्यास न केवल राष्ट्रीय संदर्भो तक ही अपने को सीमित रखता है, अपितु पूरे जहान की राजनीति, सामाजिक ज्वलंत समस्याओं को जूझता, सही में पाठक को ग्लोबल गाँव समाज का सदस्य बना देता है।" यकीनन उनकी रचना यात्रा का एक नया प्रस्थान बिंदू है। कितने पाकिस्तान में एक नयी कथा प्रविधि के साथ साथ बदलते हुये विश्व की सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में मानव जाति के विकास और पतन की दास्तान दर्ज की गई है। इस उपन्यास में बडी तटस्थता व बेबाकि के साथ जीवन के कटु सत्यों का समाज के सामने लाने का प्रयास लेखक द्वारा किया गया है।

युग के संदर्भ में निष्पक्ष चिंतन, आज जो चारों तरफ वैमनस्य है, मनुष्य–मनुष्य का खून पीने को आतुर है, इस चिंतन को आधार बनाकर उपन्यास में चर्चा की गयी है। कभी देश, कभी नफरत, तो कभी सम्प्रदाय तो कभी धर्म के नाम पर जैसे हिंदूवादी संगठनों की धार्मिक कटटरता ने 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद ढहा दी, जिसके परिणाम स्वरूप देश को साम्प्रदायिक दंगे झेलने पडे, इसका उल्लेख उपन्यास में हैं – "तभी दहाड मारकर विश्व हिंदू परिषद और बजरंग दल के नेता दस्तक देने लगे राम जन्म भूमि पर मंदिर बनकर रहेगा.... बल्कि हम कृष्ण जन्म भूमि और काशी विश्वनाथ को भी मुक्त करके रहेंगे। लेखक ने उपन्यास में पतन की ओर ले जानेवाले इन कारणों को ढूँढकर लोगों की आँखे खोलने का प्रयास किया है।"

प्रत्येक धर्म केवल प्रेम का संदेश देता है। फिर क्यों धर्म के नाम पर आज मानव बँट रहा है। इस विघटन के परिणाम स्वरूप ही आज संसार में नये–नये पाकिस्तान बन रहे है। यहाँ पाकिस्तान प्रतीक है, मनुष्य की विकृत मानसिकता का / अलगाववाद / कमलेश्वर जी ने इस उपन्यास के द्वारा लोगों को चेतावनी दी है कि इसे अब रोकना होगा नहीं तो अलगाव मानवता के अस्तित्व को समाप्त कर देगा। वे कहते है कि दो विश्वयुध्द की मार झेलकर मानव अभी भी सावधान नही हुआ है। इसीलिए वह आज भी हत्यारों की दौड में है। अपने विवेक के द्वारा प्रगति का मार्ग न खोजकर विनाश के मार्ग खोज रहा है। कमलेश्वर का मानना है कि, इन सब समस्याओं का समाधान किसी क्रांति द्वारा नहीं हो सकता अपितु शांति द्वारा हो सकता है। इसके लिये आवश्यक है कि आज पुनः बुध्द, कबीर, महात्मा गांधी के विचारों को अपनाने की जरूरत है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है। कमलेश्वर जी ने अतीत के माध्यम से युगीन संदर्भो को अपने उपन्यास में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। यह उपन्यास साहित्य को एक नयी दिशा प्रदान करता है। यह कमलेश्वर द्वारा किया गया एक नवीन प्रयोग है, हिंदी साहित्य में 'कितने पाकिस्तान' यह उपन्यास एक मील का पत्थर है जो आनेवाले लेखकों व समाज को दिशा प्रदान करता है। वह हमारे सम्मुख मानवतावादी एजेंडा रखता है। एक जिरह को पाठक के सामने फैसले के लिए छोड

दिया जाता है। अंत में यही कहा जा सकता है कि हम उस भयावह विभाजन को रोकने में कामयाब नहीं हो पाये पर अब हमें इसे रोकना होगा। चाहे बंटवारा किसप्रकार का हो।

'तमस' विभाजन के समय साम्प्रदायिक दंगो पर आधारित भीष्म साहनी का उपन्यास है। मानवीय घृणा, साम्प्रदायिकता एवं नृशंसता–पशुता की कहानी है।   एक लंबे अंतराल के बाद भी घाव बाहर से तो भर गया है, लेकिन भीतर से यह रिस रहा है। इसलिए भीष्म सहानी ने 'तमस' में भारत विभाजन से पहले उन दृश्यों को सजीव रूप देना चाहता है, जिनमें लूटपाट है, आग की लपटे है, खून खराबा है। शोर–शराबा है, कौमी मजहबी नारे हैं।

तमस की शुरूआत शहर में साम्प्रदायिक दंगा कराने की एक पूर्व नियोजित साजिश से होती है। तसम पांच दिनों की कहानी है, परंतु उन पांच दिनों के पीछे हमें बहुत सारे दिन, बहुत सारे वर्ष और बहुत सारी शताब्दियाँ झाँकती नजर आती है। उपन्यास की शुरूआत हिन्दू मुस्लिम खाई इतनी बढ जाती है कि तर्क, विवेक और इंसानियत निरर्थक हो जाती है। एक तरफ वंदेमातरम और भारत माता की जय तो दूसरी तरफ पाकिस्तान जिन्दाबाद और कायदे आजम जिंदाबाद के नारे लग रहे थे। डिप्टी कलेक्टर रात को साम्प्रदायिक नारे सुनता है। उसकी बीवी दंगा रोकना चाहती है। रिचर्ड सरकारी नीति में फँसा हुआ है। शहर की सबसे मशहूर मण्डी के बीचोबीच आग लगती है और दंगा सुबह गलियों में फैल जाता है। इस उपन्यास में साम्रदायिक हादसे का चित्रण है ही इसके साथ उसके कारणों की जांच पडताल भी की है। हिन्दु मुस्लीम तनाव के बारे में रिचर्ड से बातचीत करते हुए लिजा को बराबर यह अहसास होता है कि मानवीय मूल्यों का कोई महत्व नहीं होता, महत्व सिर्फ शासकीय मूल्यों का होता है।

बख्शी जी लगातार यही महसूस करते है – "फसाद करने वाला भी अंग्रेज, फसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करनेवाला भी अंग्रेज, घरों में बसानेवाला भी अंग्रेज" इस उपन्यास में भीष्म साहनी ने भारत में अंग्रेजी राज की नीति का पूरी इमानदारी के साथ पर्दाफाश किया है। रिचर्ड के कथन से, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है। हम यदि हर घटना के प्रति भावुक होने लगे तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पाएगा", ऐसे रिचर्ड और लीजा के संवादो से ब्रिटिश साम्राज्यवाद की साजिश और साम्प्रदायिक दंगो का कारण स्पष्ट हो जाता है।

'तमस' का सबसे प्रभावशाली पक्ष वह है जिसे देवदत्त, सोहन सिंह और मीरदाद जैसे कार्यकर्ताओं के माध्यम से लेखक उभारना चाहता है। ये तीनों पात्र कथाकार की सैध्दान्तिक मान्यताओं के प्रतीक है, जो घृणा, विद्वेष आणि हिंसा से भरे साम्प्रदायिकता के माहौल में अपना एक अलग नजरिया प्रस्तुत करते है। साम्प्रदायिक लडाई में वर्ग–संघर्ष नहीं होता, बल्कि शोषक, शोषित सब लोग सम्प्रदाय के आधारपर नकली तौर पर विभाजित हो जाते है, यह दिखाने के लिए कथाकार कम्युनिस्टों की असफल कोशिशों का जिक्र करता है। इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता वर्णन है। 'तमस' में भीष्म सहानी जी ने परिस्थितियों में निहित विद्रूप, घृणा, हिंसा को अपनी व्यंगात्मक शैली में प्रस्तुत करता है।

हिन्दी उपन्यास शुरू से ही इस समस्या को मानवीय संवेदना व धर्मनिरपेक्षता के धरातल पर उठाते रहे है और निहित स्वार्थो के लिए इन्सान को बाँटनेवाली ताकतों का जिक्र करते है।

व्यक्तिगत और सामाजिक संबंधो में दरार पैदा करनेवाले मजहब की संकीर्णता का यथार्थ चित्रण हमें दिखाई देता है।

आधुनिक काल में अंग्रेजों ने यही किया / हिंदू मुसलमान के मन में वैमनस्य के बीज बोकर अपने लक्ष्य को पा लिया है। अमृता प्रितम का उपन्यास 'पिंजर' यह बंटवारे की पृष्ठभूमि पर लिखे गये इस उपन्यास में अपने अस्तित्व और सोच पर एक गहरा असर जरूर छोडा है। पिंजर में बंटवारे से पूर्व के हिन्दुस्तान के पंजाब के एक गांव की लडकी पूरों के दुखों की कहानी है, इसके साथ साथ आपको उस समय की राजनैतिक हलचलों के कारण हो रहे घटनाक्रम के प्रभावों से बेचैन कर देता है। अपनी राजनीतिक, महत्वाकांक्षाओ के कारण जमीनों, देशो, समाजों और लोगों में बंटवारे करवाते है।

अमृता प्रितम के उपन्यास में अंत में पूरो एक व्यक्ति से समाष्टि में परिवर्तित हो जाती है। वह मन ही मन सोचती है कि चाहे कोई लडकी हिन्दू हो या मुसलमान जो भी लडकी लौटकर अपने ठिकाने पहुँचती है, समझो की उसी के साथ पुरो की आत्मा भी ठिकाने पहुँच गई। इन्सान की सोच का विकास, बेहतर इन्सान की कल्पना उनके उपन्यास पिंजर में दिखाई देती है।

निष्कर्ष रूप में अमृता प्रितम के साहित्य से भारतीय साहित्य समृध्द हुआ है। पिंजर का कथ्य औरत के इसी खौफ की कथा है। औरत के अकेलेपन की कहानी है जो देश बँटवारे और सांप्रदायिकता की आग में बिना अपनी किसी खता से अपनों से कट गई यह पूरो की कहानी है। क्योंकि पूरो और रशीद के खानदानों में पीढियों से अवादत चली आयी थी।

इस प्रकार कितने पाकिस्तान, तमस, पिंजर जैसे उपन्यासों में लेखको ने राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव की बात कहीं है। धर्म हमेशा मनुष्य को सच्चाई एवं मानवता की राह दिखाता है। पर धर्म के ठेकेदारों ने धर्म की राह को पूरी तरह बदलकर इसका प्रयोग स्वार्थ सिध्दि के लिए किया। यह धर्म सच्चाई एवं मानवता का मार्गदर्शक न होकर कटटरता एवं कुरता का प्रतीक बन गया। भारत जैसे देश का बँटवारा भी धर्म ने ही किया है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

8. दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़लों में साम्प्रदायिक सद्भाव के स्वर

डॉ. मधुकर खराटे
हिंदी विभागाध्यक्ष
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
बोदवड, जि. जलगाँव, महाराष्ट्र – 425310

दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़लकारों ने मात्र अपनी ग़ज़लों में साम्प्रदायिक समस्या, उसके दुष्परिणाम तथा उसके पीछे की राजनीतिक साज़िश का ही चित्रण नहीं किया है, बल्कि उन्होंने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से साम्प्रदायिक सद्भाव के महत्व को भी प्रतिपादित किया है। उन्होंने एकता और सामंजस्य की भावना को भी निरूपित किया है। आपसी मतभेद तथा साम्प्रदायिकता देश के विकास में किस तरह बाधाएँ निर्माण करती है इसकी ओर भी संकेत किया है। इंसानियत, भाईचारा तथा एकता की भावना की वर्तमान युग में कितनी जरूरत है इसे भी इन ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों में रेखांकित किया है।

देश में रहनेवाले हिंदू, मुस्लिम, ईसाई सब भारतीय हैं। सब एक हैं, सबका खून एक–सा है। जो इन लोगों के बीच नफरत पैदा करते हैं, भेदभाव निर्माण करते हैं वे वास्तव में देशद्रोही हैं। हमें इस बात की ओर ध्यान देना जरूरी है कि प्रत्येक धर्म ने हिंसा और नफरत को हेय बताया है। प्रत्येक धर्म मनुष्य को प्रेम और भाईचारे का संदेश देता है। अतः वर्तमान युग में धर्म, सम्प्रदाय, जाति तथा पंथ की दीवारों को तोड़ना अत्यंत आवश्यक है –

हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई सब हिन्दुस्तानी
खून एकसा, नहीं किसी की अलग कहानी
भेदभाव को, नफरत को, जो है फैलाते
हरकत उनकी देशद्रोह की जानी मानी
सब धर्मों ने हेय बताई, खून खराबी
जान समझकर लोग कर रहें, क्यों नादानी
मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे, संदेशा देते
भाईचारा, प्रेम, धर्म की धुरी सयानी
जनम मरण में सभी एक से आते –जाते
जाति पाँति की दीवारें सब है बेमानी 1

ग़ज़लकार की स्पष्ट मान्यता है कि इस तरह से लोगों के बीच साम्प्रदायिकता के बीज बोना ठीक नहीं है। इससे किसी का भी हित नहीं हो सकता। यह तरीका ही गलत है। वे राजनेताओं को आगाह करते हैं कि लोगों में इस तरह की भावनाओं को न भड़काएँ। अगर तुम्हें कोई जंग छेड़नी ही हो तो गरीबी, अभाव, बेकारी आदि के खिलाफ छेड़नी चाहिए। अपनी सत्ता को बचाने के लिए इस तरह की हरकत ठीक नहीं है। ग़ज़लकार यह चाहता है कि देश में सद्भाव बना रहे, एकता बनी रहे। जिससे हमारा देश दिन–प्रतिदिन उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ता रहे। इसीलिए वे राजनेताओं को संबोधित करते हुए अपनी एक ग़ज़ल में कहते हैं –

हिंदू या मुस्लिम के अहसासात को मत छेड़िए
अपनी कुर्सी के लिए ज़ज़्बात को मत छेड़िए
गलतियाँ बाबर की थीं जुम्मन का घर फिर क्यूँ जले
ऐसे नाजुक वक्त में हालात को मत छेड़िए

छेड़िए इक जंग मिल–जुलकर गरीबी के खिलाफ
दोस्त मेरे मज़हबी नग्मात को मत छेड़िए 2

पुरानी बातों को याद करके आपस में लड़ना उचित नहीं है। वर्तमान की स्थितियों को समझना आवश्यक हैं। क्योंकि अतीत में जो कुछ हुआ उसके लिए वर्तमान पीढ़ी तो जिम्मेदार नहीं हो सकती। इस तरह धर्म के नाम पर झगड़ना और खून–खराबा करना कहाँ की बुध्दिमानी है। अतः हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि –

थोड़ा हिन्दू तू भी है थोड़ा मुसलमाँ मैं भी हूँ
यानी इक इन्साँ है तू भी एक इन्साँ मैं भी हूँ
याद करके अपनी वो बरसो पुरानी दुश्मनी
जितना शर्मिन्दा है तू उतना पशेमाँ मैं भी हूँ 3

आपसी मतभेदों के स्थान पर आपस में सद्‌भाव की भावना का होना समाज और देश के लिए जरूरी है। माना कि देश में विविध धर्मों के लोग रहते हैं, किंतु वे हैं तो भारतीय ही। इसलिए हमारे बीच अपनापन निहायत जरूरी है। ग़ज़लकार भी यही चाहता हैं –

अन्दाज इबादत का ऐसा हो तो कैसा हो
मस्जिद में भजन गूँजे मन्दिर से अजाँ निकले 4

समाज में धार्मिक स्थलों को लेकर समय–समय पर विवाद होता रहता है। वास्तव में देखा जाए तो परमात्मा तो कण–कण में बसा होता है। परमेश्वर को केवल धार्मिक स्थानों पर ढूँढना मूर्खता है। वह तो प्रत्येक के दिल में बसा है। इसलिए जरूरी है कि आडंबरों को त्यागकर हमें उसकी सही खोज करनी चाहिए। अतः इन बातों को लेकर लड़ना ठीक नहीं है। एक साथ मिल–जुलकर रहना आवश्यक है। क्योंकि साम्प्रदायिक विवादों से मानवता आहत होती हैं –

मंदिर मस्जिद गिर्जाघर गुरूद्वारों में क्या ढूँढ रहे
दिल–दिल के उस कारीगर का दिल ही ठौर–ठिकाना है
हिंदी–उर्दू, हिंदु – मुस्लिम साथ रहे हैं, साथ रहें
इनको अलगाने का मतलब दिल के घाव बढ़ाना है 5

समाज में व्याप्त नफरत की भावना को समाप्त करना जरुरी है। क्योंकि नफरत की भावना से कुछ भी हासिल नहीं होनेवाला है। अपनेपन से समाज का वातावरण आनंददायी बन जाता है। हिंसा किसी समस्या का समाधान नहीं है। हिंसा को सभी धर्मग्रंथों में निषिध्द माना गया है। मासूमों का बेवजह खून बहाना कहाँ की बहादुरी है। इन सब वाद–विवादों को भूलाकर हमें चाहिए कि देश में स्नेह का वातावरण निर्माण करें। ग़ज़लकार की यही कामना है कि देश में सद्‌भाव का वातावरण निर्माण हो। इसलिए डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा अरूण लिखते हैं –

हाथों में अपने थाम लो अपनत्व की मशाल
अँधियारा नफरतों का हटाना है दोस्तो
पानी नहीं है, खून हुआ आदमी का है
हिंसा के हामियों को बताना है दोस्तो
जिसमें मुहब्बतों की महक थी भरी हुई
वो फूल फिर चमन में खिलाना है दोस्तो 6

धर्म के नाम पर समाज में दंगे–फसाद करना उचित नहीं है। दंगे–फसाद का असर जन–जीवन पर होता है। मारकाट मच जाती है, बाजार लूटे जाते हैं, निरपराध मारे जाते हैं। किसी

की मांग का सिंदूर उजड़ जाता है, तो किसी की आँख का दुलारा छिन जाता है। सार्वजनिक सम्पत्ति का बड़े पैमाने पर नुकसान हो जाता है। निजी वाहन तथा बसों को जलाकर राख कर दिया जाता हैं। इस तरह की धर्मांधता समाज का स्वास्थ्य खराब करती है। इसीलिए ऐसे भटके हुए लोगों को समझाते हुए ग़ज़लकार कहता हैं –

मजहब की शमशीर से मत
काटों इंसा को इंसा से
मसज़िद के नजदीक शिवाला
कल भी था और आज भी है 7

धर्मांधता एवं साम्प्रदायिकता के कारण पागलपन की भावना से पगलाये लोगों की करतूतों का परिणाम सारे शहर को भुगतना पड़ता हैं। कहीं मंदिर बने या मस्जिद क्या फर्क पड़ता है। हमें इसकी चिंता नहीं करनी चाहिए, बल्कि चिंता तो इस बात की करनी चाहिए कि इन्सान और उसकी इन्सानियत बची रहे। क्योंकि हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मानव–धर्म सर्वश्रेष्ठ धर्म है –

आदमी जिन्दा रहे, बन जायें मन्दिर–मस्जिदें
पागलों की सनक को नित भोगता सारा शहर
धर्मान्धता ने ही, जलाये आदमी–इंसानियत
जल गई करूणा–दया, सद्‌भावना चित्कार कर 8

हर धर्म ग्रंथ हमें यही सीख देते हैं कि ईश्वर एक है, जो हम सबका स्वामी हैं। प्रत्येक संत बरसों से यही कहता आया है कि मानव पूजनीय है। इसलिए मानव के प्रति होनेवाला हिंसा भाव निंदनीय है। इस तरह धर्मांध होकर लड़ना हमें शोभा नहीं देता। हमारे जीवन में किस तरह शांति और सद्‌भाव का वातावरण निर्माण होगा इसके बारे में सोचना बेहद जरूरी है–

मालिक है सबका एक हर ग्रंथ कह रहा
धर्मांध हो न लड़ सकें, कुछ बात सोचिए
मानव है वंदनीय, हर संत कह रहा
जीवन में शांति बह सके, कुछ बात सोचिए 9

अमानवीयता और शैतानियत का दौर खत्म होना जरूरी है। देश में अमन का माहौल खुशहाली लाता है। परिणामतः उन्नति के मार्ग प्रशस्त होने लगते हैं। खुशनुमा मौसम से देश और समाज का नूर ही बदल देता है। किंतु इसके लिए आवश्यकता है अपनेपन की, एकता की, सद्‌भाव की और इन्सानियत की। इस इन्सानियत की खुशबू से सारे देश का वातावरण ही महक उठता है। इसी एकता और सद्‌भाव की महत्ता का वर्णन करते हुए ग़ज़लकार आलोक श्रीवास्तव लिखते हैं –

वो दौर दिखा जिसमें इंसान की खुशबू हो
इंसान की साँसों में ईमान की खुशबू हो
पाकीजा अजानों में मीरा के भजन गूँजे
नौ दिन के उपासों में रमजान की खुशबू हो
मस्जिद की फ़िजाओं में महकार जो चंदन की
मंदिर की हवाओं में लोबान की खुशबू हो 10

प्रगति के मार्ग में साम्प्रदायिकता और धर्मांधता की कोई रूकावट नहीं निर्माण होनी चाहिए। नफरत के स्थान पर प्रेम का संदेश हर द्वार पर पहुँचना आवश्यक है। इस दुनिया में कोई भी छोटा

या बड़ा नहीं है, कोई भी कनिष्ठ या श्रेष्ठ नहीं है। हम सब एक है, यह हमें भूलना नहीं चाहिए। ऊँच– नीच की भावना दूरियाँ निर्माण करती हैं –

दीनो–मज़हब का रोड़ा, बाकी रहे न राह में
मस्जिद में हो पुजारी, मंदिर इमाम पहुँचे
छोटा–बड़ा ना कोई, बंदे हैं सब खुदा के
यानी कि मुहब्बत का घर–घर पयाम पहुँचे 11

राष्ट्र का जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान होता हैं। वह सर्वोपरि होता है। उसके सम्मुख धर्म, पंथ, सम्प्रदाय, जाति आदि कुछ भी बड़ा नहीं होता। राष्ट्र–धर्म को निभाना, उसका सम्मान करना प्रत्येक का आद्य कर्तव्य होता है। अतः जिस छत के नीचे, जिसके आश्रय में हम बैठे हो उसी छत को तोड़ना कहाँ की बुध्दिमानी है। प्राकृतिक तत्त्व किसी विशिष्ट के लिए नहीं होते। उनका न कोई मजहब होता है और न कोई प्रांत, वे सबके लिए होते हैं। अतः धर्म और प्रांत के नाम पर लोगों को लड़वाना और अपनी–अपनी घिनौनी राजनीति करना बेहूदा बात है –

घर है ये वतन, घर कोई मज़हब नहीं होता
बैठे हैं जिसकी छाँह में वह छत न तोड़िए
पानी, हवा, ज़मीन, आग किस जिले के हैं
ये प्यार हैं इन्हें न सियासत से जोड़िए 12

चारों ओर अलगाव की भावना पनप रही है। देश में लोग कहीं धर्म, कहीं सम्प्रदाय, कहीं प्रांत, कहीं भाषा के नाम पर लड़ रहे हैं। घृणा और हिंसा की भावना अपने चरम पर हैं। इसलिए आज ये जरूरी हो गया है कि इस नफरत की भावना के खिलाफ एक अभियान चलाया जाए। हम सबको एक होकर इसके खिलाफ आंदोलन करना चाहिए। प्रेम और सद्भाव का परचम फहराना आवश्यक है। एक–दूसरे से ममत्व और सहानुभूति रखना आज के समय की सबसे प्रमुख मांग है। इस बात को गिरिराजशरण अग्रवाल ने कुछ इस तरह अभिव्यक्त किया हैं–

क़ाफिला साथ में ले, हाथ बढ़ा, हाथ बढ़ा
रूत है अलगाव की, आ प्यार का परचम बन जा
अब के महफिल में किसी को भी अकेला मत छोड़
दोस्त इसका तो किसी और का हमदम बन जा 13
फूल की चर्चा करो, गुलजार की चर्चा करो
नफ़रत बढ़ने लगी हैं, प्यार की चर्चा करो 14

साम्प्रदायिकता के परिणामस्वरूप समाज में होनेवाले दंगे–फसाद, खून–खराबा, बरबादी, अमानवीय हत्याएँ, वहशीपन आदि का व्यक्ति के दिलों–दिमाग पर बहुत गहरा असर होता है। वह होश में तो खौफ़ज़दा रहता ही है, किंतु सपनों में भी यह डर उसका पीछा नहीं छोड़ता। वह सपने में भी डरकर बहकी–बहकी बातें करता रहता है, अचानक चौंक कर वह उठ बैठता है। उसकी मानसिक हालत भी बिगड़ने लगती है। इसलिए इस आपसी भेदभाव को भूलकर हमें सभी को गले लगाना चाहिए। ग़ज़लकार किशनस्वरूप इसी बात का संदेश अपनी एक ग़ज़ल में देते हुए फरमाते हैं –

हमेशा ख़्वाब में दंगा, तबाही, खून, वहशत है
मैं सपने में भी डरकर सहमी–सहमी बात करता हूँ
ये हिंदू है, वो मुस्लिम है, ये काफ़िर है, वो दीवाना
सभी से प्यार है मुझको, सभी की बात करता हूँ 15

साम्प्रदायिकता के विषैले वातावरण में रहना किसी को गँवारा नहीं होता। जिस दौर में अहिंसा, घृणा, स्वार्थ आदि का बोलबाला हो, जहाँ लोग, मानवता को भूलकर अमानवीयता भरे कृत्यों को अंजाम दे रहे हो, वहाँ रहना कैसे संभव हो सकता है। जाति और धर्म में बँटकर रहना और जीना भी कोई जीना है। मज़ा तो ज़िन्दगी में तब है, जब हम धर्म और सम्प्रदाय की दीवारों को तोड़कर इन्सान बनकर जीवन व्यतीत करें –

कहीं आँसू, कहीं विष है किसे कैसे पिए कोई
बताओ तो सही इस दौर में कैसे जिए कोई
मुसलमाँ और हिंदू बनके जीना भी है क्या जीना
अगर जीना है तो इंसान कहलाकर जिए कोई 16

चंद्रसेन विराट ने भी अपनी ग़ज़लों के माध्यम से प्रेम और सद्भाव से रहने का संदेश दिया है। उनकी मान्यता है कि समाज में शैतानियत जो नंगा नाच कर रही है, उसे पराजित कर समाज से निकाल बाहर करना चाहिए। उसके स्थान पर प्रेम एवं सद्भाव की स्थापना करना जरूरी है। धर्मांधों को विवेकी दृष्टि देना जरुरी है। मानवधर्म का जयघोष करना आवश्यक है। मारकाट, खून–खराबा आदि के स्थान पर सद्भाव का मंगलगान जरूरी है –

शस्त्र के शैतान को करके पराजित अंततः
फिर प्रतिष्ठित प्रेम का प्रतिमान होना चाहिए
निर्दयी धर्मांधता को दे विवेकी दृष्टियाँ
शुध्द मानवधर्म का अवधान होना चाहिए
मृत्यु की वीभत्सतम शवसाधना के स्थान पर
जीवनोत्सव शुरू, मंगलगान होना चाहिए 17

धर्म के नाम पर उठायी गयी दीवारों के कारण लोगों में द्वेष एवं नफरत की भावना बहुत बढ़ गयी है। व्यक्ति नफरत की भावना में पूरी तरह डूब चुका है। यों एक–दूसरे के बीच फ़र्क करना उचित नहीं है। धार्मिक भेदभाव के परिणामस्वरूप आदमी कहीं खो गया है और इन्सानियत खत्म हो चुकी है। यह समाज के लिए अत्यंत हानिकारक हैं। इस बात पर कटाक्ष करते हुए शेरजंग गर्ग लिखते हैं –

ग़र्क वे हो गए नफ़रत के गली–कूचों में
फ़र्क करते रहे जो उम्र–भर इंसानों में
यह मुसलमान, यह हिंदू, यह इसाई, यह सिख
आदमी खो गया, मजहब के बियाबानों में 18

प्रश्न यह है कि मस्जिद को गिराकर मंदिर का निर्माण करने से क्या देश के सारे मसले हल हो जायेंगे ? आज देश के सामने कई समस्याएँ हैं। जिन्हें सुलझाना बड़ा जरूरी हैं। वेश्या समस्या आज भयंकर रूप धारण कर चुकी है, अबोध बालक मजूरी करने के लिए विवश है। आर्थिक अभाव के कारण कुपोषित बालकों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ रही हैं। इन समस्याओं की ओर ध्यान देना जरूरी है। क्योंकि यह देश की अहम समस्याएँ हैं। मंदिर–मस्जिद के लिए कारसेवा करने के स्थान पर सार्वजनिक हित के कार्यों में सहयोग देना आवश्यक हैं। राजनीतिज्ञों के कार्यों पर और धर्मांध लोगों की हरकतों पर व्यंग्य करते हुए ग़ज़लकार लिखता हैं –

राम के मंदिर से सारे पाप कट जायेंगे क्या ?
बन गया मंदिर तो चकले बंद हो जायेंगे क्या ?
कितने लव–कुश धो रहे हैं आज भी प्लेट–ओ–गिलास

दूध थोड़ा, कुछ खिलौने उनको मिल पायेंगे क्या ?
चीमटा, छापा, तिलक, तिरशूल, गाँजे की चिलम
रहनुमा–ए–मुल्क अब इस भेस में आयेंगे क्या ?
अस्पतालों, और सड़कों, और नहरों के लिये
बोलिये तो कारसेवा आप करवायेंगे क्या ? 19

किसी भी धर्म का पूजा–स्थल पूजनीय होता हैं। फिर वह चाहे मंदिर हो, चाहे मस्जिद, चाहे गिरिजाघर या चाहे गुरूद्वारा यह सब प्रेम के प्रतीक है। पवित्रता और आस्था के यह केंद्र होते हैं। जब यही पवित्र स्थल, पूजनीय स्थल, आस्था के प्रतीक, प्यार का संदेश देनेवाले स्थानों को विवाद का विषय बना दिया जाता है, तो सारा वातावरण दूषित हो जाता है। इस तरह इन्हें विवाद का विषय बनाना उचित नहीं है –

प्यार मंदिर भी है, मस्जिद भी है, गुरूद्वारा भी
प्यार पूजा है इसे खेल बनाते क्यूँ हो 20

मनुष्य का धर्म और सम्प्रदाय के आधार पर बँट जाना देश के लिए अच्छा नहीं हैं। इस तरह के लेबल लगाकर समाज में रहना अत्यंत संकुचित मनोवृत्ति का परिचायक हैं। इस मनोवृत्ति को त्यागकर हमें ऊँचा उठने की आवश्यकता है। आज हमें इंसान बनने की ज्यादा जरूरत हैं। ग़ज़लकार इस इंतजार में है कि वह सुनहरा दिन कब आयेगा जब हम आदमी बनकर जीना आरंभ कर देंगे –

हम मसीही, बौध्द, सिख, हिंदू, मुसलमाँ हो गए
कब वह दिन आएगा, जब हम आदमी हो जाएँगे 21

इस तरह हम देखते है कि हिंदी ग़ज़लकारों ने साम्प्रदायिक सद्‌भाव को अपनी ग़ज़लों में बखूबी अभिव्यक्त किया है। देश और समाज में प्रेम और सद्‌भाव का वातावरण निर्माण हो इसलिए उन्होंने अपनी ग़ज़लों में साम्प्रदायिकता की मानसिकता से बाहर निकलने के लिए लोगों को प्रेरित करने की कोशिश की है। लोगों के बीच नफरत के बीज कौन बो रहा है इसे भी समझाने का प्रयास किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि विवेच्यकालीन ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों में धार्मिक चेतना के स्वरों को अत्यंत प्रामाणिकता से निरूपित किया है। इन ग़ज़लकारों ने धार्मिक विकृतियों और विद्रूपताओं की ओर अपनी पैनी दृष्टि डाली है। साम्प्रदायिकता की समस्या की वजह से देश का वातावरण विषाक्त हो चुका है। समाज में अपनापन, सद्‌भाव, भाईचारा तथा इन्सानियत समाप्त हो चुकी है। लोगों में वहशीपन और शैतानियत सँवार हो गयी है। इन सबके लिए भ्रष्ट और स्वार्थी राजनेता ही जिम्मेदार हैं। इन ग़ज़लकारों ने लोगों के बीच मतभेद और नफरत पैदा करनेवाले असामाजिक तत्त्वों का भी पर्दाफाश किया है। राजनीति हेतु धर्म का किस तरह दुरूपयोग किया जा रहा है, उसे भी चित्रित किया है। विवेच्यकालीन ग़ज़लों में यह तमाम बातें उभरकर सामने आयी हैं। इतना ही नहीं तो इन ग़ज़लकारों ने राजनीतिक षड़यंत्रों से सामान्य आदमी को सचेत करने की कोशिश भी की है।

साम्प्रदायिक समस्या के कारण निर्माण हुई परिस्थितियों के चित्रण के साथ ही इन ग़ज़लकारों ने साम्प्रदायिक सद्‌भाव की आवश्यकता पर भी बल दिया है। साम्प्रदायिक सद्‌भाव को उन्होंने अपनी ग़ज़लों में बखूबी अभिव्यक्त किया है। समाज में प्रेम, मानवता और सद्‌भाव का वातावरण निर्माण करने की उन्होंने पूरी ईमानदारी से कोशिश की है। साम्प्रदायिकता की मानसिकता से ऊपर उठने के लिए उन्होंने आम आदमी को प्रेरित करने का भरसक प्रयास किया है। नफरत के

बीज बोनेवाले असामाजिक तत्त्वों से सावधान रहने का आग्रह भी किया है। निसंदेह विवेच्यकालीन ग़ज़लकारों की ग़ज़लों में धार्मिक विकृतियों और विद्रूपताओं पर जमकर प्रहार करते हुए साम्प्रदायिक सद्भाव पर बल दिया है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. वातावरण खराब हो चला – अवधकिशोर सक्सेना, पृ. 14
2. समय से मुठभेड – अदम गोंड़वी, पृ. 88
3. आसमान से आगे – राजेश रेड्डी, पृ. 66
4. वहीं, पृ. 115
5. वक्त के मंजर – डॉ. ब्रह्मजीत गौतम, पृ. 23
6. बहती नदी हो जाइए – डॉ. योगेंद्रनाथ शर्मा अरूण, पृ. 63
7. ग़ज़ल क्या कहे कोई – शिवकुमार अर्चन, पृ. 65
8. यथार्थ की सिहरन – डॉ. बालगोविन्द द्विवेदी, पृ. 29
9. वहीं, पृ. 69
10. तीसरा ग़ज़ल शतक – सं. शेरजंग गर्ग, पृ. 32
11. गुजरा हूँ जिधर से – तेजपाल सिंह तेज, पृ. 56
12. हँसी ओठ पर आँखे नम है – रामदरश मिश्र, पृ. 72
13. शिकायत न करो तुम – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 93
14. वहीं, पृ. 107
15. बूँद–बूँद सागर मैं – किशनस्वरूप, पृ. 44
16. वहीं, पृ. 59
17. न्याय कर मेरे समय – चंद्रसेन विराट, पृ. 84
18. हिंदी ग़ज़ल शतक – सं. शेरजंग गर्ग, पृ. 106
19. आँखों में कल का सपना है – अमर ज्योति नदीम, पृ. 66
20. आदमी के हक़ में – रामगोपाल भारतीय, पृ. 49
21. ग़ज़ल मैंने छेड़ी – निश्तर ख़ानक़ाही, पृ. 75

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

9.मुंबई काण्ड कहानी में व्यक्त सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा.डॉ. एमेकर पी.एन.
कै.बापुसाहेब पाटील एकंबेकर महाविद्यालय,
हणेगांव ता. देगलूर जि. नांदेड

साहित्य में मनुष्य, समाज, राष्ट्र एवं पूरी दुनिया का विकास होता है, इस बात को भला हम कैसे नजर अंदाज कर सकते है! मनुष्य की प्रेरक शक्तियों को नियोजित कर साहित्य मनुष्य एवं राष्ट्र को निश्चित दिशा उद्देश्य की ओर ले जाने का कार्य करता है। जैसे जैसे समाज में परिवर्तन होता है ठीक उसी प्रकार से साहित्य में भी परिवर्तन होता हुआ दिखाई देता है। आखिर साहित्यकार और उनसे निर्माण साहित्य समाज का ही अंश है।

राष्ट्र विकास एवं उन्नति के लिए साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान होता है। आज मनुष्य में स्वार्थी वृत्ति अधिक मात्रा में देखने को मिल रही है। राष्ट्र हित की बजाए लोग आज अपने जाति, धर्म के बारे में अधिक सोचने लगे हैं। वास्तव में सच तो यह है कि जाति और धर्म से बडा है राष्ट्र हित, लेकिन हम इसको सही तरह से नहीं समझ पा रहे है। हमारा देश विभिन्न जाति और धर्मों से बना हुआ है। जब तक हम सभी लोग एकात्मता की भावना को बढोत्तरी देकर अपने देश हित का विचार नहीं करेंगे तब तक हमारे राष्ट्र का विकास होना असंभव है।

हिंदी साहित्य के महान लेखकों में ओमप्रकाश वाल्मिकी एक बडा नाम है। इन्होंने अपने हिंदी साहित्य के माध्यम से दलित जाति की व्यथा को प्रस्तुत कर सांप्रदायिक सद्भाव को बढोत्तरी देने का काम किया है। इनकी मुंबई काण्ड कहानी इस बात की एक अच्छी मिसाल है। इस कहानी के माध्यम स`लेखक ने जाति से महत्वपूर्ण राष्ट्र हित और मनुष्य हित है, इस बात को प्रस्तुत किया है।

किसी भी प्रकार की घटना हो वह जब तक लेखक के मन को छू नहीं लेती है तब तक उसका रूपांतर साहित्य में नहीं होता है। जैसे मृदुला गर्ग कहती है ''जीवन में जो कुछ घटता है, जो गहराई छूता है, व्यथित करता है, जो नाकाबिले बरदाश्त होता है सभी तो मन के उन गुप्त कोनों में छिपे होते हैं। जहाँ मेरे परिचित लोग सगे संबंधी झाँककर नहीं देख सकते। सबकुछ बिलकुल अकेले झेलती चली जाती हूँ। फोडो की तरह यह अनुभव दुखते टीसते है। धीरे धीरे पकते है और आखिर एक दिन फूट ही जाते है – कहानी, उपन्यास के रू‍प में।''1

मुंबई काण्ड कहानी में दलितों की अस्मिता पर पडी चोट को प्रस्तुत किया गया है। जब डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरजी की मूर्ति को अपमानित किया जाता है तथा उनके समर्थकों पर गोलियाँ चलाई जाती है, तब इस अपमान से बेचैन मानसिकता को नायक सुमेर के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। सुमेर एक दलित व्यक्ति है जो मुंबई काण्ड की घटना से म नही मन चोटिल हुआ है। वह अपनी जाति के इस अपमान को सहन नहीं कर पाता है। उसके ही ऑफिस में काम करनेवाला गुप्ता जो उच्चवर्ण का व्यक्ति है, वह हर बात में सुमेर तथा उसकी बिरादरी का मजाक उडाता रहता है।

ओमप्रकाश वाल्मिकी ने जिस घटना और विचारों को इस कहानी द्वारा प्रस्तुत किया है, उसी प्रकार के जाति स्वार्थ को आज हम वर्तमान युग में देख रहे है। हर एक व्यक्ति अपनी ही

जाति के बारे में सोच रहा है और दूसरों को तुच्छ समझ रहा है। सुमेर अपनी जाति के आदर्श पुरुष डॉ. अम्बेडकर जी के मूर्ति अपमान और दलित भाईयों पर चलाई गई गोलियों की वजह से बेचैन रहता है। सुमेर दोषियों से इसका बदला लेना चाहता है। उसके दिमाग में हर समय प्रतिशोध की भावना रहती है।

कहानी का नायक सुमेर जब अपनी जाति के एक नेता जयराम रवि से मिलता है, तब अपने बिरादरी के आदर्श पुरुष के अपमान के बारे में चर्चा कर दलित भाईयों पर चलाई गई गोलियों के बारे में बात करता है। सुमेर, जयराम रवि से कहता है कि आप लोग इतना कुछ होने पर भी खामोश क्यों है? तब जयराम रवि, सुमेर से कहता है, ''सुमेर जी, मैं थोड़ा जल्दी में हूँ... शाम को आकर बात करूँगा अभी मीटिंग में जाना है। मुख्यमंत्री नगर में आ रही है। रैली करना है। बस उसी के लिए जाना है।''2 जयराम रवि के इन बातों से सुमेर को बहुत क्रोध आता है और वहाँ से वह क्रोध में निकल जाता है।

खुद को दलितों के नेता माननेवाले यह झूठे लोग समय आने पर कैसे दुम दबाकर भागते है इसका वर्णन लेखक ने जयराम रवि के माध्यम से प्रस्तुत किया है। सुमेर इन बातों से डरकर बैठने वालों में से नहीं था, उसके मन में अपनी बिरादरी पर हुए अपमान का बदला लेने की हवा और तेजी से चलने लगी। उसने निश्चय किया कि वह भी सवर्णों के किसी बडे नेता की मूर्ति का अपमान करेगा। सुमेर जिस शहर में रहता था वहाँ पर केवल चार नेताओं की मूर्तियाँ थी। जिसमें डॉ.अम्बेडकर, गांधी, नेहरू और पटेल आदि की मूर्तियाँ थी।

सुमेर गांधी की मूर्ति का अपमान करने की बात मन में ठान लेता है, लेकिन अपमान करे तो किस प्रकार यह बात वह सोचने लगता है। अधिक सोच विचार करने प रवह यह बात मन में ठान लेता है कि गांधी की मूर्ति को जूते की माला पहनाकर उसका अपमान किया जाए। सुमेर के माध्यम से लेखक ने एक अपमानित दलित युवक की मानसिकता को बडे यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है। अपने अपमान का बदला लेने के लिए अपमानित दलित युवक की मानसिकता को बडे यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है।

आज हमारे देश के सामने सबसे बडी समस्या दहशतवाद और धर्मवाद के रूप में उभरकर सामने आती हुई दिखाई देती है। इन दहशतवादी लोगों का कोई मजहब नहीं है, यह केवल इंसानियत के दुश्मन के रूप में अपना काम करते हुए दिखाई देते है। आज जो धर्मवाद की समस्या हमें बहुत सी जगहों पर देखने तथा सुनने को मिल रही है, उसके कारण मनुष्य के भीतर की मानवीयता नष्ट होने का डर सता रहा है। इंसानियत के नाते अगर देखा जाए तो राम मंदिर और बाबरी मस्जिद यह कोई झगडे का कारण नहीं है। कबीर ने कहाँ है ईश्वर एक है और वह इस पृथ्वी के हर कन कन में बसा है, फिर भी हम एक दूसरे के जान के दुश्मन क्यों बन रहे है?

कहानी का नायक सुमेर अपने मन में बदले की भावना को लेकर गांधीजी की मूर्ति का अपमान करना चाहता है। वह जूतों की माला गांधी की मूर्ति को पहनाकर उसका अपमान करने का निश्चय कर लेता है। एक रात वह जूतों की माला लेकर सबसे बचते बचाते हुए गांधी की मूर्ति के पास जाकर छिप जाता है। रात में सब तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। सुमेर के दिमाग में अजीब सी उथल पुथल मची थी। रह रहकर मुंबई में मारे गए अपने बिरादरी के लोगों की चीखें उसे सुनाई

देने लगी थी। सुमेर अपने मन में बदले की भावना को लेकर यह कृत्य करने जा रहा था। ऐसी मानसिकता देश के लिए विनाशकारी ही साबित होगी। देश के लिए हमारे महान नेताओं ने क्या क्या नहीं किया है। देशहित के बारे में महात्मा फुले कहते है ''देश धर्म भेद नहीं रहना चाहिए ह्दय में। बंधु की तरह स्वीकारों सभी को।''3

जब सुमेर गांधीजी की मूर्ति को जूते की माला पहनाने जाता है तब उसके मन में यह विचार आता है ''अरे मैं यह क्या कर रहा हूँ? मुंबई में किसी ने मेरे विश्वास पर चोट की और मैं यहाँ किसी की आस्था पर चोट करने जा रहा हूँ। कुछ गांधी को बापू कहते है कुछ अम्बेडकर को बाबा कहते है और कुछ अम्बेडकर को बाबा कहनेवाले मारे गए, यहाँ बापू वाले मारे जा सकते है। बाबा कहनेवाले पर भी गाज गिर सकती है। जो भी हो मारे तो निर्दोष ही जाएगे।''4 लेखक ने यहाँ सुमेर की सोच के माध्यम से मानवतावादी विचारधारा को प्रस्तुत किया है। सुमेर के मन की प्रतिशोध की भावना का स्थान अब मानवतावादी सोच ने ले लिया है। लेखक इस कहानी के माध्यम से मानवतावादी विचार और सांप्रदायिकता की भावना को समाज के सामने प्रस्तुत करना चाहते है।

सुमेर के मन में अब बदले की भावना धीरे धीरे नष्ट होने लगी थी। वह सोचने लगा ''नहीं... यह रास्ता न बुद्ध का है और न ही अम्बेडकर का।... नहीं, मैं एक गुनाह का बदला दूसरे गुनाह से नहीं लूँगा।'' 5 अगर आज हर एक इंसान मानवतावादी दृष्टिकोण से जीवन जीता तो कितना अच्छा होगा। जिनका कुछ भी कसूर न होते हुए भी बहुत से बेगुनाह लोगों को आज अपने प्राण गवाने पड रहे है। वाल्मिकी जी ने अपनी इस कहानी के माध्यम से पाठकों के मन में सांप्रदायिकता की भावना को निर्माण करने का महत्वपूर्ण काम किया है।

सांप्रदायिकता को केवल कहने और सुनने के लिए ही सीमित रखा जाएगा तो वह उचित नहीं होगा, वास्तव में सांप्रदायिकता की भावना हर एक इंसान में होनी चाहिए। तब कहीं जाकर इस विभिन्नता युक्त देश में राष्ट्रीय एकता की पकड़ और अधिक मजबूत होने में सहायता होगी।

संदर्भ –

1. डॉ. तारा अग्रवाल, मृदुला गर्ग का कथा साहित्य, पृ.29
2. डॉ. अजय टेंगसे, कथानन्द, पृ.105
3. महात्मा फुले, समग्र वाडमय, पृ.472
4. डॉ. अजय टेंगसे, कथानन्द, पृ.106
5. वही, पृ.106

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

10. छायावादी युग में राष्ट्रीयता

म. इसमाईल म. हुसेन
श्रीमती जी. जी. खडसे महाविद्यालय
मुक्ताईनगर, ता. मुक्ताईनगर, जि.
जलगांव

द्विवेदी युग की इतिवृत्तात्मक शैली का विरोध छायावादी युग प्रारंभ होने से पूर्व ही प्रकट होने लगा था। यद्यपि आचार्य द्विवेदी ने स्वयं और उनके समकालीन कवियों ने भारतेन्दु युगीन काव्य को यथा सम्भव परिष्कृत करने का प्रयत्न किया था परन्तु उसका जो परिमार्जित रुप हमें आगे चलकर प्राप्त हुआ उसका श्रेय छायावादी युग के कवियों को ही है। स्वानुभूति और हृदय के कोमल भावों को मुक्तक गीतों द्वारा सर्वप्रथम इसी युग में प्रस्तुत किया गया। धार्मिक कविता की उपासना तथा आत्मसमर्पण की भावना का इस युग में नवीन रुप में विकास हुआ।

छायावादी युग की सामान्यतः दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं – अन्तर्मुखी तथा बहिर्मुखी। अन्तर्मुखी प्रवृत्ति छायावाद एवं रहस्यवाद के रुप में प्रकट हुई तथा बहिर्मुखी प्रवृत्ति राष्ट्र प्रेम की कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त हुई। जनता का जो शोषण हो रहा था उसी के परिणामस्वरुप उसकी हीनावस्था ने देश भक्त कवियों के हृदय को उद्वेलित कर रखा था और उनकी लेखनी से इस संदर्भ में जो उद्‌गार निकले वे हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य की अमूल्य निधि बन गए। कांग्रेस के असहयोग आन्दोलन तथा अहिंसा और सत्य के प्रति श्रध्दा की भावना में देशभक्त कवियों ने योगदान किया और स्वयं अनेक कष्ट तथा यातनाएं सहन कीं। छैल बिहारी दीक्षित 'कण्टक', मुंशी राम शर्मा 'सोम', डॉत्र भगवान दास माहौर, वंशीधर शुक्ल और राम दयाल पाण्डेय इसी कोटि के कवि हैं। इन कवियों की लेखनी से देश प्रेम की जो धारा प्रकट हुई है वह युगों युगों तक बहती रहेगी।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' की इन पंक्तियों में देश के प्रति कैसी हार्दिक मंगलकामना व्यक्त हुई है। कवि ने वन्दना के साथ साथ इतिहास के गौरवपूर्ण पृष्ठों के निर्माताओं की भी स्तुति की है और देश की भौगोलिक सुषणा का भी गायन किया है –

''विमल भूमि जै।
प्रकृति भूमि अंक बसत, जल–निधि नित पद परसत,
हिम गिरी वर मुकुद लसत, धवल भूमि जै। विमल....''

''गंगाधर की तप भमि निराली वन्दे,
अरविंद मुक्ति–जप भूमि निराली वन्दे,
पंजाब केसरी के अत्यन्त दुलारे,
वन्दे बन्दीगृह कर्मवीर के प्यारे।''

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' प्राकृतिक सौंदर्य स्थल और धार्मिक स्थानों पर विचरण करके भी सुख की अनुभूति नहीं प्राप्त कर पाते हैं। उन्हें कारागार की श्रृंखलाओं में ही सुख प्राप्त होता है। कवि के अनुसार –

''बागन में बारिज में बल्लरी में बापिका में,
बौर में बसन्त द्रुम हू के खोज डारयो में।....

वाराणसी धाम, वाम देव जू का नाम दिव्य,
देव सरिधार में न देखि निरधारयो मैं।
विश्व–बीच है न सुख 'उग्र' पै इतै मांहि,
कारागार–श्रृंखलानि–हार में निहारयो मैं।''

''नदी किनारे सड़क न गल्ली द्वारे भरी तलैया,
हुंबै बंधी नींबीन के भीतर अपनी राम मड़ैया।

छायावादी युग के कवियों ने देश की तत्कालीन व्यवस्था, कष्ट और शोषण के करुणा जनक चित्र प्रस्तुत किए हैं। दन कवियों की भाव में सौंदर्य है तथा भावों में व्यंग्य और मार्मिक अभिव्यक्ति है।

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' अपनी व्यंग्यात्मक शैली में अंग्रेजों को 'गोरे भगवान' का सम्बोधन करते हुए कहते हैं की व्यर्थ में ही हम भारतीयों पर कष्ट मत बढ़ाइए। आपके हाथ वैसे ही कलंक से भरे हुए हैं, इनमें अधिक वृध्दि करने से क्या लाभ होगा ? अब इस देश की और अधिक दुख न दें, यही अच्छा है–

''गोरे भगवान कर जोरे पांव तोरे परौं,
भोरे भारे भारतीय भोरे ना भुलाइयो।....
जाते कर आपके कलंक ते भरे हैं तेते,
येते कर अधिक नसेंते सरमाइयो।
दूनो कर–गेह, तीन दूनों कर नेह का,
चार गूनों नूनों घर सूनो न बनाइयो।''

''करुं मां। कैसे तब उध्दार।
किस विधि हो इन वज्र बेड़ियों से तेरा उध्दार।
क्यों न हुआ मैं हाय देश के मन का चालन हार।''

इस युग के कवियों ने, कवियों ने क्या पूरे देश ने एक जुट होकर देश की स्वतंत्रता के लिए कार्य किया। हिन्दू, मुसलमान, सभी एक साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर स्वतंत्रता आन्दोलन में अग्रसर हुए। परिणाम स्वरुप अनमें पार्थक्य की भावना का प्रचार प्रसार नहीं हुआ। सभी भारत माता की संताने हैं अतः सभी को एक साथ देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों की आहुति देनी होगी, इस प्रकार की भावना बलवती रही।

जातीयता का धर्म से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। इस गौरव पूर्ण निधि की श्री छैल बिहारी दीक्षित 'कण्टक' व्याख्या करते हुए कहते हैं कि जो स्वयं कष्टों को सहन करते हुए अपने देश की सेवा करते हैं और जिन्हें अपना कार्य करने में कभी शर्म नहीं अनुभव होती। वे स्वयं अपना अर्पण करते अपना धाम अर्थात् अपने को अमर बना जाते हैं–

''सेवा करते हैं जो सबकी समोद,
गोंद ले क्लेष दुनियां के हर जाते हैं।
करने में कर्म जिन्हें शर्म कभी आती नहीं,
मर्म भरे भाव भव बीच भर जाते हैं।
मर मर अमर बनाते निज नाम धाम,

धर्म की धरोहर धरा पे धर जाते है।''
''हम स्वदेश के, देश हमारा, हम संकल्प लिया है,
मिटा गुलामी, हमस्वदेश के सब दुख हरने वाले।
मर जाएगें मिट जाएंगे प्रण से नहीं हटेंगे,
बढ़कर जग में अपना झण्डा ऊंचा करने वाले।''

इस युग के कवियों ने भारत के मंगलमय भविष्य की कल्पनायें की हैं। कवियों ने गांधी जी की राम–राज्य की कल्पना को साकार करने का पर्याप्त प्रयत्न किया है। देश की वर्तमान दीन दशा से क्षुब्ध होने के कारण छायावादी युग के राष्ट्रीय कवियों ने जहां देशवासियों को ओजस्वी जागरन–गीत दिए वहीं दूसरी ओर सत्याग्रह के प्रभाव से शासन में जो खलबली मच जाती थी, उससे कभी कभी पराधीनता–पाश से मुक्ति की आशायें जागृत होने लगती थीं और स्वाभाविक रुप से कवि कल्पना के संसार में विचरण करने लगते थे। आने वाले समय के प्रति सुन्दर सपने संजोने लगते थे और अपनी इच्छानुसार अपने देश के नव निर्माण का संकेत अपनी रचनाओं के माध्यम से देने लगते थे।

श्री गोपाल सिंह 'नेपाली' नए संसार की कल्पना करते हुए कहते हैं कि इस देश के नवयुवक ही मिलकर नए संसार का सृजन कर सकते हैं। ऐसा संसार जहां प्राचीन रुढ़ियों के संकेत भी शेष न होंगे, व्यक्तिवाद का नाम भी नहीं होगा तथा पतित और पद दलित लोग अपना मस्तक ऊंचा करके जी सकेंगे–

''धुबक बनायेंगे हिल मिल कर एक नया संसार,
तरुण बसायेंगे रच रच कर एक नया संसार।.....
सामाजिक पापों के सर पर चढ़कर बोलेगा अब खतरा,
बोलेगा पतितों दलितों के, गरम लहू का कतरा कतरा।....
वह दिन आने वाला होगा, धूम मचाने वाला होगा,
नए रंग का, नए ढंग का, एक नया संसार।''

श्री छैल बिहारी दीक्षित 'कण्टक' एक नए राष्ट्र के निर्माण का आह्वान करते हुए कहते हैं कि सभी लोगों को साम्यवादी व्यवस्था अपनानी चाहिए। वे देश के शोषित वर्ग से यह अशा रखते हैं कि अब वे जाग कर इस व्यवस्था को अपनायेंगे और इस प्रकार एक नवीन संसार का सृजन करेंगे–

''हुआ फिर आवाह्न घनघोर, चलो सब साम्यवाद की ओर।.....
हो रहा घर घर हा हा कार, मिट रहे हैं पीड़ित परिवार,
मची है चारों ओर पुकार, रचो फिर से नवीन संसार।
लगा कर थोड़ा थोड़ा जोर, चलो सब साम्यवाद की ओर।''

सम्पूर्ण भारतवर्ष को एक दिव्य स्वरुप देने की परम्परा का श्री गणेश वस्तुतः भारतेन्दु युग में ही हो गया था। द्विवेदी युग में यह परम्परा चरमोत्कर्ष पर रही तथा छायावादी युग में उसका परिमार्जित रुप हमारे सामने आता है। छायावादी कवि प्रकृति का उपासक है और प्रकृति को भी उसने सदैव एक चेतन सत्ता के रुप में देखा है इसलिए भारतमाता के दिव्य स्वरुप की कल्पना उसके रुचि एवं संस्कारों के सहज अनुकूल होने के कारण एक अभिनव और आकर्षक स्वरुप में सुगम रही है।

भारत के दिव्य स्वरुप की कल्पना बंकिम चंन्द्र चट्टोपाध्याय के राष्ट्र गीत 'वन्दे मातरम्' में संभवतः सबले पहले दिखाई पड़ी। देश के मुकुट के रुप में हिमाचय, कश्मीर का मनोरम सौंदर्य और

वक्षस्थल पर विन्ध्याचल की मनोहारी पर्वत श्रेणियां। चरणों में लहराता हुआ हिन्द महासागर। देश में बहने वाली नदियां उसकी शोभा में और अधिक श्री वृध्दि करती हैं। भारतेन्दु ने इसकी अनेक वार वन्दना की और इस युग के कवियों ने भारत माता को बार बार मां भवानी की संज्ञा दी। प्रेमघन, प्रताप नारायण मिश्र आदि के अतिरिक्त पं. श्री धर पाठक ने इसकी सुषमा का वर्णन करते हुए वन्दना गीत लिखे और उसके दिव्य स्वरुप को प्रतिष्ठित किया। द्विवेदी युग में स्वयं द्विवेदी जी, पंत्र माधव शुल्क, लोचन प्रसाद पाण्डेय, त्रिशूल, निश्चल, राष्ट्रीय आत्मा आदि ने इसके स्वरुप को भिन्न भिन्न प्रकार से प्रस्तुत किया। इन विभिन्न वर्णनों में प्रत्येक बार उसके दिव्य रुप का आकर्षक बढ़ता ही गया है।

द्विवेदी युग की अपेक्षा इस परम्परा का छायावादी युग में अभाव है।

'मिलिन्द' भारत की दीन दशा से व्याकुल होकर यह कल्पना करते हैं कि मानो भारत माता का सारा श्रृंगार ही विनश्ट हो चुका है। इस श्रृंगार को पुनः पूरा करने के लिए बलिदानियों को फूलों की संज्ञा देता है जिनसे भारत माता को वैजयन्ती माला पहनाई जानी हैं–

''विमल भूमि जै।
प्रकृति भूमि अंक वसत, जल–निधि निद पद परसत,
हिम गिरि वर मुकुट लसत, धवल भूमि जै। विमल भूमि जै।
सिन्धू गंग यमुन सुजल अगनित नित फलत सुफल,
सिक्ख राजपूत सुदल सबल भमि जै। विमल भूमि जै।''

यह छायावादी युग की सबसे प्रमुख प्रवृति है। हिन्दी साहित्य में क्रांति वादी कविता का प्रादुर्भाव यद्यपि द्विवेदी युग के उत्तरार्ध में ही हो गया था परन्तु छाया वादी युग में हसमें पर्याप्त सुधार आ सका। इस प्रवृति का मूल हमारे देशवासियों के जीवन और परिस्थितियों में निहित था। क्रांतिवादी कविता को वायु के आकस्मिक आघात से उठी हुई सामान्य हिलोर कहकर नहीं टाला जा सकता है। ''यह जीवन सागर के उस क्षोभ और अव्यवस्था की लहर है जिसके दर्शन भयंकर आघात के आने पर ही हो पाते हैं। क्रांतिकारी अतिशयोक्ति न होगा। क्रांतिकारी कवि ऐसी सभ्यता का विकास और नई व्यवस्था का जन्म देखना चाहता है जिसमें सारी मानवता दासता, दरिद्रता और अन्धविश्वास के पाश से मुक्त होकर शांति और समता का अनुभव कर सके।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावादी युग के राष्ट्रीय कवियों ने क्रांति का जो मन्त्र फुंका उसके कारण सारा राष्ट्र सजग हुआ ओर ब्रिटिश शासन को समाप्त करने के लिए कटिबध्द हो गया। क्रांति का कोई स्पष्ट भविष्य ये कवि प्रस्तुत नहीं कर सके इसीकारण क्रांतिवादी काव्य अधिक समय तक स्थाई नहीं रह सका फिर भी इसके प्रभाव की उपेक्षा नहीं की जा सकती। प्रभात, राम दयाल पाण्डेय, वंशीधर शुल्क और 'कण्टक' आदि के काव्य में देश के प्रति मर मिटने की उदात्त भावना का समावेश है और इससे जनमानस कितना उध्देलित हुआ होगा, यह सजह ही अनुभव किया जा सकता है।

संदर्भ :–1) हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास, डॉ. के. के. शर्मा

2) क्रांति की झंकारे, 'कण्टक'

3) हिमानी, शान्ति प्रिय द्विवेदी

4) हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधारा के अल्पज्ञात कवि, डॉत्र सुधांशु किशोर मिश्र

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

11. सांप्रदायिक सद्‌भाव और हिंदी उपन्यास

('टोपी शुक्ला' और 'वे वहाँ कैद हैं' के विशेष संदर्भ में)

प्रा. मुजावर जैनु हमिद
सहायक प्राध्यापक
कला, वाणिज्य व विज्ञान
महाविद्‌यालय, उस्मानाबाद
(महाराष्ट्र) 413501

आज के युग में संप्रदाय और सांप्रदायिकता का अर्थ पूर्णतः बदल गया है। सांप्रदायिकता असल में एक सिद्धांत है। सिद्धांत से तात्पर्य है कि– ''एक ऐसे विश्वास तंत्र या एक–दूसरे पर टिकी हुई– धारणाओं का ऐसा जाल जिसके चश्मे से समाज और समाज–नीति को देखा जा सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो सांप्रदायिकता राजनीति और समाज के अलावा उस सिद्धांत के आसपास केंद्रित राजकाज को देखने का एक नजरिया है।''[1] परंतु यह एक प्रकट तथ्य का सरलीकरण करनेवाला बयान समझा जा सकता है किंतु सांप्रदायिकता का असली चेहरा पहचान लिया जाए तो वह एक गंभीर समस्या है। क्योंकि भारतीय समाज कई संप्रदायों में बँटा हुआ है जिनके न सिर्फ हित अलग–अलग हैं बल्कि एक–दूसरे के विरोधी भी है।

सांप्रदायिकता यह शब्द अंग्रेजी के Communalism (कॉम्यूनलिझम) शब्द का हिंदी अनुवाद है। इसका कोशगत अर्थ है– ''ऐसा समाज जो समान तत्वों के आधार पर एकत्र रहता है।''[2] अर्थात एक ऐसा समाज, समुदाय जिनमें आचार–विचार रीति–रिवाज, रहन–सहन, खान–पान, तीज–त्योहार आदि बातों में समानता दिखाई देती है। सांप्रदायिकता एक ऐसी विचारप्रणाली है जिसमें अलग–अलग धर्म माननेवाले समाज, समूह के स्वरूप को उनके धर्म के आधार पर ही स्वतंत्र सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गुट के रूप से देखा जाए तो सांप्रदायिकता का संबंध किसी जाति अथवा समूह, समुदाय की अस्मिता से होता है।

उपर्युक्त तात्विक विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सांप्रदायिकता को धर्म और संस्कृति से जोड़ना अप्रासंगिक है। यह एक ऐसी विचार प्रणाली है जो धर्म या संस्कृति की आड में एक समुदाय को दूसरे समुदाय से अलग करने, उनमें घृणा उत्पन्न करने और सहायता, सांमजस्य को मिटाकर वैमनस्य बढ़ाने का कार्य करती है।

'सद्‌भावना' मूलतः आंतरिक प्रक्रिया है। यह पहले मनुष्य के मन में उदित होती है फिर इसका बाह्य प्रकाशन होता है। 'सद्‌भावना' के चार मूलतत्व माने गये है– भाव, आलंबन, आश्रय और साधन आदि। 'सद्‌भावना' इस शब्द से ही इसका अर्थ इंगित होता है कि, जिसमें भाव या भावना तत्व की प्रधानता हो। इसके अंतर्गत सहानुभूति, संवेदना परोपकारिता, त्याग आदि भाव आते हैं। 'सद्‌भावना' शब्द सद्+भाव इन दो शब्दों के योग से बना है जिसका कोशगत अर्थ है– मन में उत्पन्न होनेवाले अच्छे विचार, भाव आदि। 'सद्‌भावना' सज्जन व्यक्तियों के हृदय में वास करती है इस कारण सज्जनों का हृदय हमेशा अच्छे विचारों से भरा होता है। मानसरोवर खंड 07 के अनुसार 'सद्‌भावना' की परिभाषा इस प्रकार है– ''क्रोध और ग्लानि ने उसकी (गोदावरी) की सद्‌भावनाओं को इस तरह विकृत कर दिया जैसे कोई मैली वस्तु, निर्मल जल को दूषित कर देती है।''[3] इस प्रकार से सद्‌भावना की संकल्पना को समझा जा सकता है।

डॉ. राही मासूम रजा का 'टोपी शुक्ला' यह उपन्यास सन 1968 ई. में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित है। इस उपन्यास में बलभद्र नारायण शुक्ला (टोपी शुक्ला) प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित है। जो इस उपन्यास का नायक है। यह उपन्यास आज के हिंदू–मुस्लिमों के संबंधों को पूरी सच्चाई के साथ हमारे सामने प्रस्तुत करता है। इस उपन्यास में अलीगढ़ विश्वविद्यालय की घटनाओं को केंद्र में रखा गया है। अलीगढ़ विश्वविद्यालय की घटनाओं का चित्रण करके उपन्यासकारने आज के समय में भारत में चलनेवाली राजनीति, जाति प्रथा, धर्म, संप्रदाय की भावना का पर्दाफाश किया है।

डॉ. राही मासुम रजा ने प्रस्तुत उपन्यास में हिंदू–मुस्लिम की समस्या का यथार्थ चित्रण किया है। देशविभाजन के बाद जो सांप्रदायिक दंगे हुए उसका सजीव रूप में चित्रण इस उपन्यास में आया हुआ है। इसमें लगभग बीस–पच्चीस पात्र है परंतु केवल तीन ही महत्वपूर्ण पात्र हैं 1. टोपी शुक्ला, 2. इफ्फन, 3. इफ्फन की पत्नी सकीना। यह सभी पात्र सांप्रदायिकता की भाषा बोलते हैं और सद्भाव बनाने की कोशिश करते हैं।

बलभद्र नारायण शुक्ला उर्फ टोपी शुक्ला यह एक ऐसा पात्र है, "न हिंदू की पहचान है, न मुसलमान की, वह न गाँव का है, न शहर का, उसका व्यक्तित्व दोनों के बीच चलता है।"[4] टोपी शुक्ला उपन्यास का नायक है जो समाज में सांप्रदायिक सद्भाव निर्माण करने के लिए जी जान से कोशिश करता है परंतु अंत में जिंदगी से निराश होकर आत्महत्या करता है। उसकी आत्महत्या के माध्यम से लेखक पाठक को बौद्धिक स्तर पर लाकर खड़ा करने में सफल हो जाता है। यहाँ पर आकर पाठक नायक की आत्महत्या के पीछे के मूल कारण, परिस्थितियों पर सोचने के लिए मजबूर हो जाता है। इफ्फन और टोपी शुक्ला बचपन के दोस्त थे परंतु देशविभाजन के बाद बिछड़े थे फिर 1960 में मिलते है। दोनों में गहरी मित्रता थी। इफ्फन सद्भावना से भरा हुआ पात्र है। टोपी शुक्ला हिंदू होने के बावजूद इफ्फन के घर रहता है, उसकी पत्नी के हाथों से बनाया हुआ खाना खाता है। इससे स्पष्ट होता है कि– इनमें बंधूभाव था। इन दोनों पात्रों के माध्यम से उपन्यासकारने सांप्रदायिक सौहार्द का चरित्रांकन किया है।

भारत–पाक विभाजन के कारण देश में चारों ओर सांप्रदायिक दंगे होने लगे थे, संपूर्ण देश का वातावरण दूषित हो गया था इस संदर्भ में डॉ. राही मासूम रजा ने इन दंगों का वर्णन बड़े मार्मिक शब्दों में किया है। इस उपन्यास के कुछ संवाद है जो सांप्रदायिकता को फैलाने या बढ़ाने के लिए चेतावनी देते हैं। जब टोपी शुक्ला रेल के सफर में एक पंडित जी से भिड जाता है तभी का संवाद देखिए– "हिंदू–मुसलमान का भेद–भाव झूठा है बेटा। पंडित जी ने कहा....मैं हिंदू हूँ परंतु कहीं मुझे एक नौकरी नहीं मिलती क्योंकि मैं मुस्लिम यूनिवर्सिटी में पढ़ता हूँ। मुझे आप अपने साथ नहीं बैठने देते, क्योंकि मैं शेरवानी पहने हुए हूँ और यह तोंदवाले श्रीमान तो मुझे पाकिस्तान भेज दे रहे हैं।...श्रीराम तो भीलनी के झूठें बेर खा ले और आप मुझे अपने पास बैठने भी न दें कि मैं मुसलमान हूँ....।"[5]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि– व्यंग्य प्रधान शैली में लिखा यह उपन्यास आज के हिंदू–मुस्लिम संबंधों को पूरी सच्चाई के साथ प्रस्तुत करते हुए हमारे आज के बुद्धिजीवियों के सामने प्रश्नचिह्न खड़ा कर देता है। समग्रतः इस उपन्यास पर बात करें तो उपन्यास में सद्भावना से कई ज्यादा मात्रा में सांप्रदायिकता दिखाई देती है।

'वे वहाँ कैद हैं' यह प्रियंवद का प्रथम उपन्यास है, जिसे नेशनल पब्लिशिंग हाऊस द्वारा सन 1994 में प्रकाशित किया गया है। इस उपन्यास के निर्माण के पीछे बाबरी मस्जिद के गिराए

जानेवाली घटना कारण रही है। यह उपन्यास सांप्रदायिकता का विरोध करता है इस कारण कई आलोचक इसे सांप्रदायिकता विरोधी रचना भी मानते हैं। भारत में हिंदूओं और मुसलमानों की मूल समस्या क्या है? इसी बात को इस उपन्यास में उजागर किया है। हिंदू मुसलमान दोनों के दोगले व्यवहार को भी प्रियंवद ने पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत उपन्यास में इतिहास के रिटायर्ड प्रोफेसर 'दादू' का घर केंद्र में है। इस उपन्यास के सभी पात्र 'दादू' से संबंधित है। उपन्यास का संपूर्ण कथानक 'दादू' के घर के इर्दगिर्द घूँमता हुआ दिखाई पड़ता है। प्रातु, अविनाश, चिन्मय सभी पात्र लेखक के सांप्रदायिकता विरोध के वाहक बनकर सामने आते हैं। चिन्मय हिंदूत्ववादी संगठन का नेता है, उसी संघटन के लोग चिन्मय पर हमला करते हैं। इस प्रसंग से लेखक ने हिंदूत्ववादी संघटन की असलियत का पर्दाफाश किया है। शहर में हिंदू और मुसलमानों के बीच आए दिन दंगे होते रहते हैं। हिंदू अक्सर कहते हैं, ये हमारा देश है और मुसलमान अपने आप को बादशहा की औलाद मानते हैं। हिंदू पाकिस्तान को गालियाँ बकते हैं तो मुसलमान क्रिकेट में पाकिस्तान की जीत पर मिठाई बाँटते हैं। हिंदू हमेशा मुसलमानों की राष्ट्रभक्ति को संशय की दृष्टि से देखते हैं। इस कारण आए दिन शहर में दंगे, फसाद होते रहते हैं। इनका सजीवता से चित्रण इस उपन्यास में आया हुआ है। 'दादू' और अविनाश के माध्यम से लेखक ने अपने मानवतावादी विचार प्रस्तुत किए है। सांप्रदायिकता के संदर्भ में 'दादू' कहते हैं– ''काल के प्रवाह में सत्ताएँ नष्ट होती हैं। व्यक्ति नष्ट होते हैं....इन अंधेरों में एक ही चीज अक्षत अक्षुण्य रहती है और वह है– मनुष्य की श्रेष्ठता, उसकी गरिमा आस्था और उस आस्था के कभी न क्षरित होने की आशा।''[6] इस प्रकार से यह उपन्यास मनुष्य की गरिमा, आस्था हेतु सामग्री जुटाते लोगों की जीवनगाथा वर्णित करता है।

निष्कर्षतः उक्त उपन्यासों में हिंदू–मुस्लिम इन दो जातियों के बीच सांप्रदायिक सद्भाव की भावना को निर्माण करने का सफल प्रयास किया है। 'टोपी शुक्ला' और 'वे वहाँ कैद हैं' इन उपन्यासों में लेखकों ने राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव की भावना को उजागर किया है। शिल्प की दृष्टि से यह उपन्यास बहुत ही सफल माने जाते हैं।

संदर्भ संकेत –

1. Communalism : Principles of communal organization of society-oxford Advanced Learners Dictionary of current English, page 305
2. सांप्रदायिकता : एक अध्ययन– बिपन चंद्र, अनामिका पब्लिशिंग एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली संस्करण 2011, पृ.10
3. मानव मूल्य–परक शब्दावली का विश्वकोश (पंचम खंड), डॉ. धर्मपाल मैनी– स्वरूप एंड सन्ज प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण प्रथम, पृ.1966
4. टोपी शुक्ला– राही मासूम रजा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2007, पृ.18
5. राही और उनका रचना संसार– संपा. कुँवर पाल सिंह, शिल्पायन प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली संस्करण 2004, पृ.179
6. वे वहाँ कैद हैं– प्रियंवद– नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 1994, पृ.13

12. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. नानासाहेब जावळे
सुभाष बाबुराव कुल महविद्यालय, केडगांव,
ता–दौंड, जि–पुणे.

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल अपने नाटकों द्वारा आम जनता को सत्तांध, स्वार्थांध नेताओं की गंदी चालों से परिचित कराकर एकत्रित होकर संघर्ष की प्रेरणा देते हैं। 'पंच पुरुष' नाटक द्वारा नाटककार जाति–पांति के नाम पर गांव के लोगों में फूट डालनेवाले ठाकुर जैसे नेताओं पर कड़ा प्रहार करते हैं। ठाकुर अज्ञानी, अंधविश्वासी जनता का फायदा उठाकर अवधपुर गांव के लोगों को सवर्ण और शूद्रों में बांटता है। मनुष्य के प्रति स्नेह और श्रद्धा की जगह सांप्रदायिक दंगों की आग में जला डालने के षड्यंत्र रचता है। ठाकुर जमींदारी बरकरार रखने हेतु सुलेमपुर के मुसलमानों को अवधपुर के हिंदुओं के खिलाफ भडकाता है। उपर्युक्त संवादों द्वारा धर्म, जाति, प्रांत, भाषा के नाम पर हो रही राजनीति के प्रति चिंता व्यक्त करते हैं।

'रक्तकमल' नाटक द्वारा नाटककार कहना, चाहते हैं कि आजादी के बावजूद केवल भेदभाव के कारण अब तक आम जनता में अपेक्षित जागरण नहीं हो पाया है। नाटक का नायक कमल यही चिंता व्यक्त करते हुए एक भाषण में कहता है– ''आजादी के बाद हमारे देश को जिस एकता से सूत्र बंधना चाहिए था, वह नहीं बंधा। भाषा के आधार पर अलग–अलग प्रांतों की मांग और अलग–अलग प्रांतों के आधार पर अपनी–अपनी भाषा की बुनियाद। इतनी लंबी गुलामी के बाद बेशकीमती आजादी की हमने इज्जत नहीं की, क्योंकि आजादी के बाद मुल्क में जितना जागरण होना चाहिए था, वह नहीं हो रहा है। लंबी गुलामी की वजह से जर्जरित देश को जहां एकता की डोर में बंधकर पहले इसके पुनः निर्माण की आवश्यकता थी वहां इसे प्रांतीयता, जातिवाद, सांप्रदायिकता, अराष्ट्रीयता के तत्वों ने आ घेरा।''[1] स्पष्ट है, सत्ता केंद्रीत नेताओं ने आम जनता को जाति, धर्म प्रांत के आधार पर हमेशा गुमराह किया परिणामतः देश की अपेक्षित उन्नति नहीं हो सकी।

'एक सत्य हरिश्चंद्र' का नायक लौका धर्म–जाति की राजनीति के खिलाफ जनजागरण करना चाहता है। वह जनता को अपने अधिकारों के प्रति सजग करता है। जब यह बात नेता देवधर से सही नहीं जाति तब वह लोगों को भडकाता है कि शूद्र लौका के सत्य नारायण कथा करने से हिंदू धर्म डूब जाएगा, परिणामतः ब्राह्मण और हरिजनों में दंगा हो जाता है। जिस पर प्रकाश डालते हुए गपोले कहता है– ''हरिजन और ब्राह्मणों में उधर दंगा हो गया है। गांव के गांव जल गए। आग बुझाने के लिए कुएं से पानी नहीं लेने दिया ब्राह्मण ठाकुरों ने। खूब की पिटाई। किसी की नाक काट ली। किसी की आंखें निकाली।''[2] आगे देवधर हिंदू–मुसलमानों के दंगे लगाकर लौका को मरवाना चाहता है। देवधर अपनी राजसत्ता बनाए रखने के लिए जनसेवा का स्वांग रचता है लेकिन उसके आडे आम जनता में जातिवाद का विष बोता है। लौका तो उसकी हीन राजनीति का विरोध करता ही है। लेकिन देवधर के सहयोगी जीतन को भी परंपरा के नाम पर होनेवाले सामाजिक पतन का एहसास हो जाता है। तब देवधर की उँच–नीच की राजनीति का विरोध करते हुए जीतन कहता है– ''अब तक मैं समझता था, जब तक राज्य है तब तक राजनीति रहेगी। पर अब पता चला, जब तक मनुष्य है– छोटा–बड़ा, उँच–नीच तब तक रहेगी यह राजनीति। जिस दिन एक असहाय ने घुटने टेककर आंखों में आँसू भरकर दृश्य से अदृश्य की ओर देखा, उसी दिन जन्म हुआ ईश्वर का

और वहीं से पनपी पहली राजनीति धर्म की। इसी से एक हुआ इंन्द्र, बाकी सब हुए हरिश्चंद्र।''[3] इस प्रकार उँच–नीच का भेद डालकर अपना स्वार्थ, सुविधा, संपत्ति कमाना वर्तमान राजनेताओं का मक्सद बना है, उसे आम जनता जान पाए यही नाटककार का उद्देश्य है।

'गुरु' नाटक प्रांतवाद की राजनीति के दुष्परिणामों को प्रकाशित करता है। गुरू चाणक्य के आदेश पर उनके छात्र अपने परिवेश को जानने हेतु आर्यावर्त की यात्रा करते हैं। तब उन्हें एहसास होता है कि प्रांतीय संघर्ष के कारण लोग दुखी एवं डरे हुए हैं। मानों हर समय विदेशी आक्रमण से वे आतंकित हैं। आर्य चाणक्य के सभी छात्र अनुभव करते हैं 'ब्राह्मण, बौद्ध, जैन, आर्य, अनार्य, राक्षस आदि सभी जाति–धर्म के लोग आपस में संघर्षरत हैं।' परिणामतः यहां की आम जनता अपने आपको असुरक्षित महसूस कर रही है। यही देश के पतन का कारण है। चंद्रगुप्त आपसी सत्ता संघर्ष पर प्रकाश डालते हुए कहता है कि ''मगध पतन के कगार पर है। लिच्छिवि गणराज्य एक–दूसरे से ईर्ष्या की आग में जलते हैं। मल्ल श्रेष्ठ हैं या लिच्छिव, इन प्रश्नों के उत्तर हिंसा–प्रतिहिंसा में ढूंढे जा रहे हैं। शक, यवन, किरात, कांबोज, पारस, वाह्लीक कोई मित्र नहीं है आर्यावर्त का।''[4] नाटक में चित्रित यह स्थिति चंद्रगुप्तकालीन है, इसका यह अर्थ नहीं कि आज परिस्थिति बदल गई है। बिल्कुल नहीं, आज भी नेतागण जाति, धर्म, प्रांत, भाषा के नाम आम जनता को आपस में लडाकर अपने स्वार्थ की रोटियों सेंक रहे हैं। कोई भी दल आम जनता के हित में निर्णय नहीं लेता। अधिकांश नेता पूरे देश का हित न देखकर प्रांतीय राजनीति करते नज़र आते हैं। ऐसे बिखराववादी प्रांतीय राजनीति करनेवालों को एकसूत्र में बांधने की आवश्यकता पर जोर देते हुए नाटककार चाणक्य के माध्यम से कहते हैं– ''यह कैसी भूख है जो पूरे देश का हित न देखकर केवल अपनी क्षुधा देखती है ! पर भारत एक पूरा देश कहां है? एक खंड है मगध! दूसरा है पंचनद, तीसरा है कौशल, चौथा खंड है मालव, और अलग–अलग राज्य हैं लिच्छिवि और मल्ल राजकुमारों के। भारत वर्ष को अभी एक देश एक राष्ट्र होना होगा।''[5] चाणक्य का यह संवाद आज भी लागू होता है। आज भी अनेक नेतागण आम जनता के मन पर यह प्रतिबिंबित करने का प्रयास करते हैं कि उनका प्रांत मात्र उनका देश है। भारत देश से उनका कोई लेना देना नहीं। अन्य प्रांत के लोग हमारे दुश्मन हैं, वे हम पर हावी हो रहे हैं। आदि फूट डालनेवाले विचारों को फैलाकर ये नेता अपनी संकुचित राजनीति का ही परिचय देते हैं। ऐसी प्रांतीय राजनीति को खत्म कर देश केंद्रित राजनीति को बढावा देना नाटककार का उद्देश्य रहा है।

'कुमार संभव है' नाटक आपसी संघर्ष का त्याग करने तथा राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की प्रेरणा देता है। अपने–अपने प्रांत की सुरक्षा हेतु लड़ते समय यहां के राजा–नवाबों में न एकता थी, न उन्हें जनता का भी साथ था। अंग्रेजों द्वारा भारतीयों की हुई हार पर प्रकाश डालते हुए राणा बेनीमाधव खेवट के माध्यम से आम जनता तक संदेश पहुंचाते हैं कि ''हम इसलिए हारे की प्रजा उस तमाम दौलत और शान शौकत से तंग आ चुकी है, जिसे हमने उन्हीं लोगों के खून पसीने और हड्डी पसली से नीचोडा है। दूसरी बात हम कभी एक होकर नहीं लड़े। हम हमेशा अमीर और गरीब, राजा और प्रजा, ऊँच और नीच के टुकडे बनकर एक–जान अंग्रेज से हारते रहे।''[6] नाटक में चित्रित यही स्थिति वर्तमान समाज आज भी अनुभव कर रहा है। अंग्रेजों की तरह आज के नेता भी जनता में फूट डालकर अपनी सत्ता को अधिक मजबूत कर रहे हैं। आम जनता को लुटनेवाली इस व्यवस्था के खिलाफ जनजाकरण करते हुए नाटककार जनमानस में आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान जागृत करते हैं, एक होकर संघर्ष की प्रेरणा देते हैं।

राम की लड़ाई' नाटक राजनीति के कारण निर्माण आपसी बिखराव पर प्रकाश डालता है। सरजू कहते हैं– ''एक धनुष से टूट–टूटकर सबको अलग–अलग आजादी ऐसी आजादी पशु की आजादी है तभी हमें हांकनेवाला एक चरवाह चाहिए। हर पांचवे वर्ष हम वही चरवाह चुनने को मजबूर होते हैं।''[7] नाटककार ऐसी आजादी का विरोध करते हैं जिसमें मनुष्य जाति, वर्ग, संप्रदाय के नाम एक–दूसरे से टूटकर बिखर गया है। राजनेता मनुष्य को पशु समझकर हांक रहे हैं। आम जनता हर पांचवे वर्ष उसी चरवाहे को चुनने के लिए विवश हैं। क्योंकि भ्रष्ट नेताओं ने आज तक ऐसा प्रतिस्पर्धी निर्माण ही नहीं होने दिया, जो जनता की भलाई चाहता है।

'चतुर्भुज राक्षस' नाटक द्वारा डॉ. लाल आम जनता को बहकावे में लानेवाले नेताओं पर कडा प्रहार करते हैं। सुराजी पंडित संन्यस्त जीवन जीते हुए गांव–गांव घुमते हैं। एक गांव में सुराजी एक नेता का भाषण सुनते हैं, जिसमें नेता कहता हैं कि गांव का विकास करो। तब आम जनता को जागृत करते हुए विरोध में सुराजी गांववालों को समझाते हैं कि राजनेताओं द्वारा जिसे गांव कहा जाता है, वह एक जंगल है। जंगल में जानवर रहते हैं, गांव में नामधारी प्राणी रहता है। दोनों के चरित्र और पराक्रम में कोई फर्क नहीं। यही दशा गांव की है। किसी से आज कोई नाता नहीं। अगर है भी जो अपनी जिंदगी को कायम रखने के लिए, एक दूसरे को लूटने खाने में। जब तक समाज नहीं परस्पर सहकार का संबंध नहीं, तब तक गांव एक जंगल है– ब्राह्मण टोला अलग, ठाकुर टोला अलग, शुद्र–हरिजन टोला अलग। और इन टोलों में भी बंटवारा...। अपने गांव लौटकर सुराजी जब नेताई, शाहजी, सहदेव द्वारा आम जनता की लूट अनुभव करते हैं, तब भेदाभेद की राजनीति करनेवाले नेताई के खिलाफ सुराजी कहते हैं– ''तुम्हारी जो राजनीति है, उसकी जो सत्ता है, उसी से गांव टूटे हैं।...जब–जब चुनाव होते हैं, दूर–दूर से पार्टियों के उम्मीदवार आते है। ... गांव के लोग चुनाव का वही विष पिये आपस में लडते हैं– सवर्ण शूद्र गरीब से, गरीब अमीर से हिंदू मुसलमान से...।''[8]

प्रस्तुत नाटक द्वारा डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल आम जनता का शोषण करनेवाले नेता, साहुकार, जमींदार, नौकरशाही को त्रिभुज राक्षस मानते हैं। इन राक्षसों की ये तीन भुजाएं सत्ता, संपत्ति और कूटनीति से ओतप्रोत है। चौथी भुजा है, अज्ञान, गरीबी, पिछडापन, आर्थिक और राजनीति आत्मनिर्भरता का अभाव आदि के कारण आम जनता के मन में निर्मित भय। इसी का फायदा उठाकर त्रिभुज राक्षसरूपी नेतागण सामान्य जनता को जाति, प्रांत, भाषा के नाम बांटते रहते हैं। दुख की बात यह है कि अस्सी प्रतिशत भारत वर्ष को बीस प्रतिशत लोग शुद्र मानते हैं। अर्थात देश की पूरी सत्ता और संपत्ति केवल बीस प्रतिशत लोगों के पास है। फिर प्रश्न उठता है कि भारत वर्ष में कहां है जनता का राज्य? कहां हो रहा है, गांवों का विकास? वास्तव में अस्सी प्रतिशत लोगों में फूट डालकर उनके शोषण द्वारा अपने पोषण को ही विकास कहा जा रहा है।

संदर्भ 1) रक्त कमल – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 53
2) एक सत्य हरिश्चंद्र – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 27
3) एक सत्य हरिश्चंद्र – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 62
4) गुरु – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 7, 8
5) गुरु – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 32
6) कुमार संभव है – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 65
7) राम की लड़ाई – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 66
8) चतुरभुज राक्षस – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृ– 30

13 हिंदी कविता में सांप्रदायिक सद्‌भाव

डॉ. बलवंत जेऊरकर
विलिंग्डन महाविद्यालय, सांगली

'सांप्रदायिकता रोग है, चढता नशा अफीम
पंडित तो वैधै बनौ, मुल्ला बनौ हकीम ।' 1

– अर्जुनलाल कवि

हिंदी कविता समय–समय पर होनेवाली हलचलों को अभिव्यक्त करने में मग्न दिखाई देती है। अपने समय और समाज का अक्स कविता में बराबर दिखाई पडता है। यह हिंदी कविता का निजी स्वभाव है। सन साठ के बाद उभरी मोहभंग और भ्रष्टाचार से आक्रांत राजनीति के रेशे–रेशे को उधेडकर रख देने के साथ–साथ हिंदी कविता अधिक सामाजिक होती गई। राजनीति उसके रोजमर्रा के जीवन का अंग बन गई। राजनीति ने प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को इस प्रकार प्रभावित किया कि 'पर्सनल इज पोलिटिकल' ऐसी स्थिति बन गई । इसी राजनीति ने जब सत्ता हथियाने के लिए सांप्रदायिकता का सहारा लेकर अमानवीय तौर–तरीके अपनाये तब विपक्ष की भूमिका में खडी हिंदी कविता ने इन सब स्थितियों का विरोध करते हुए नैतिक प्रतिरोध किया।

भारत में धर्म एक ऐसी संवेदनशील चीज है कि जिसके खिलाफ की गई बात हमेशा असहनीय हो जाती है और सांप्रदायिक उन्माद इसप्रकार उफनता है कि तनाव फैलने में तनिक भी देर नहीं लगती। अंग्रेजों ने इस नब्ज को पहचाना था। सांप्रदायिकता के बल पर वे फूट डालते रहे। अंग्रेज तो चले गए मगर सांप्रदायिकता यही रह गई। आजकल सांप्रदायिकता का संबंध धर्म से नहीं है तो धर्म के नामपर होनेवाली राजनीति से संबंधित है। वह राजनीति के लोभ–मोह, सत्ता वर्चस्व से वह संबंधित है। अपने ओछे हितों को पूरा करने के लिए व्यापक विनाश के आयोजन की तैयारियाँ शुरू है। हिंदू–मुसलमान इस साजिश को समझ नहीं पाते और जान से हाथ धो बैठते हैं –

'बंदा मस्जिद चाहता, मंदिर चाहे भक्त ।
ना कुछ चाहन हार का, बहे सडक पर रक्त ।।' 2 – अब्दुल बिस्मिल्लाह

आज देश के सामने मंदिर और मस्जिद के सिवा कई समस्याएँ अपना विकराल जबडा फैलाए खडी हैं । आम आदमी को ऐसे प्रश्नों से कुछ लेना–देना नहीं है, वह चैन से अपनी जिंदगी काटना चाहता है –

'मंदिर भी ले लो, मस्जिद भी ले लो,
मगर आदमी के लहू से न खेलो !' 3 – ब्रजमोहन

हिंदी मे कविता में सांप्रदायिकता को लेकर समय–समय पर लिखा गया है । मुक्तिबोध ने बहुत पहले अभिव्यक्ति के खतरे उठाने की बात कही थी तो नागार्जुन की कविता 'तेरी खोपडी के अंदर' में मेरठ दंगे की विभीषिका के भय से मुसलमान रिक्शावाला कल्लू अपने लिए परेम परकास नाम धारण करता है। इस नाम के साथ वह 'हिंदू कवच' धारण करता है। कविता के अंत में वह कवि से कहता है –

'बाबाजी, अब हम चुटैया भी रखेंगे? आठ–दस रोज की
भुखमरी के बाद/हमारे अंदर/य अक्ल फूटी है ।

बाबाजी, रूदराछ के मनके/ अच्छी मजूरी दिला रहे हैं ....। 4

सांप्रदायिक आधार पर बँटते हमारे समाज में आम आदमी की दुरवस्था को कविता में कितने प्रभावपूर्ण तरीके से उतारा गया है। प्रस्तुत कविता ने भविष्य में सांप्रदायिक विरोधी कविता का मार्ग प्रशस्त किया।

सच बात तो यह ह कि अयोध्या में बाबरी मस्जिद के ढह जाने के बाद सांप्रदायिकता विरोधी कविता का सोता फूट पडा। सफदर हाशमी मेमोरियल ट्रस्ट ने सहमत प्रकाशन द्वारा ऐसी सांप्रदायिकता विरोधी कविताओं के संकलनों को प्रकाशित किया है । 1994 में दो संकलन प्रकाशित हुए थे 'यह ऐसा समय है' और 'अपनी जबान' । इन संकलनों का संपादन असद जैदी और विष्णु नागर ने किया था । 'यह ऐसा समय है' संकलन में हिंदी के प्रतिष्ठित 105 कवियों की कविताएँ हैं। यहाँ संकलित रचनाओं को देखने पर ऐसा लगता है कि 'सांप्रदायिक और रचना–विरोधी माहौल में जीने के बावजूद कवियों ने न तो रचना पर से विश्वास खोया है, न धर्मनिरपेक्षता पर से... कवियों की रचनात्मक चिंता गहरी और विकल कर देनेवाली है। वह रस्म–अदाई कतई नहीं है। 5 'अपनी जबान' में प्रकाशित रचनाओं को 'सहमत' ने समाचार पत्रों मे विज्ञापन देकर मंगवाया था । 1992 में हजारों की तादाद में हिंदी और उर्दू के रचनाकारों से रचनाएँ भेजी थी । इस संकलन में सांप्रदायिकता विरोधी गीत, गजल, दोहे, कविताएँ संकलित हैं । 'वैसे भी हिंदी में शायद इसतरह के संकलन ज्यादा नहीं हैं, जिनमें सांप्रदायिकता विरोधी रचनाएँ काव्य–अभिव्यक्ति के विभिन्न लोकप्रिय रूपों में एक साथ मिलती हो । यह संकलन इस अभाव को भी शायद पूरा करता है।' 6 संकलन में हिंदी कवियों के साथ–साथ उर्दू के शीर्षस्थ शायर कैफी आजमी और निदा फाजली के कलाम सम्मिलित हैं । वरिष्ठ कवि अर्जुनलाल कवि ने अपने दोहों में सांप्रदायिकता की भयावह स्थिति को तो स्पष्ट किया है साथ ही इन स्थितियों के कारणों की भी शिनाख्त की है –

'देखे पंडित मौलवी, जग में विष बरताय ।
नेता नहीं कलंक है, भेदभाव ङ्खैलाय ।। 7 – अर्जुनलाल कवि

दिसंबर 2002 में 'सहमत' ने असद जैदी के संपादन में 'दस बरस : हिंदी कविता अयोध्या के बाद' कविता संकलन दो खण्डों में प्रकाशित कराया, जिसमें 110 समकालीन हिंदी कवियों ने बाबरी मस्जिद से लेकर गोधरा नरसंहार तक लिखी कविताओं को संकलित किया गया है । यह संकलन अपने दौर का अहम दस्तावेज है । 'समकालीन हिंदी कविता अपने समय के सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक द्वंद्वों के बीच पनपी और उसमें शामिल रही है – हमारे दौर की बर्बरता और सभ्यता के संघर्ष से वह अछूती नहीं है।' 8

यहाँ तक आते–आते हिंदी कवियों ने सांप्रदायिकता के छद्म को पूरी तरह से पहचान लिया था । उनकी कविताओं में इसी छद्म को तार–तार कर रख दिया गया है । राम की भक्ति के पीछे की राजनीति को कवि हरिश्चंद्र पाण्डे ने इसप्रकार अभिव्यक्त किया है –

'जहाँ सूर्य वहाँ दिवस/ जहाँ राम वहाँ अयोध्या /
कितनी बडी अयोध्या / सौंप गए थे / तुलसी हमें /
कितनी छोटी / रह गई है अयोध्या / मतपेटिका से भी छोटी ।' 9

सांप्रदायिकता के उन्माद में शामिल होने का अर्थ है किसी पागलपन में शरीक होना। राजेश जोशी अपनी विख्यात कविता 'मारे जाएँगे' में एक तर्क को रखते हैं कि –

'जो इस पागलपन में शामिल नहीं होंगे / मारे जाएँगे ।
.... सबसे बडा अपराध है इस समय/ निहत्थे और

निरपराध होना / जो अपराधी नहीं होंगे / मारे जाएँगे ।' 10

इस काल में सांप्रदायिकता विरोधी कविताएँ उर्दू साहित्य में भी लिखी गई । 'चौथा आसमान' साहित्य अकादेमी पुरस्कृत कविता संकलन में मोहम्मद अल्वी की 'अडवाणीजी के नाम' छोटी कविता उल्लेख्य है –

'चलो ये सच है कि ये राम जन्म–भूमि है
मगर ये पाक जमीं हमने भी तो चूमी है
चिराग हमने यहाँ पर जलाये हैं बरसों
हमारे सिज्दे यहाँ जगमगाये हैं बरसों
नमाज पढना बुरा काम हो नही सकता
खफा तो आप, खफा राम हो नहीं सकता।' 11

केवल अपने देश में ही नहीं तो पाकिस्तान में भी सांप्रदायिकता की यही स्थिति है। पाकिस्तान से लौटने के बाद लिखी कविता में शायर निदा फाजली लिखते हैं –

इन्सान में हैवान यहाँ भी है वहाँ भी
अल्लाह निगहवान यहाँ भी है वहाँ भी
हिंदू भी मजे में है मुसलमान मजे में
इन्सान परेशान यहाँ भी है वहाँ भी 12

इस दौर में हिंदी में कई महत्त्वपूर्ण कविताएँ लिखी गई। बोधिसत्व की 'पागलदास', अनिलकुमार सिंह की 'अयोध्या 1991' और कुँवरनारायण की 'एक अजीब सी मुश्किल'। अपने समय की बर्बरता से परेशान कवि एकांत श्रीवास्तव की यह भी प्रश्न पूछते हैं कि
'....किस कोख से जनम लूँ / कि हिंदू न मुसलमान कहलाऊँ'13

इस प्रकार से हिंदी कविता में सांप्रदायिक परिदृश्य अपने पूरे सरोकारों के साथ जीवंतता से साकार होता हुआ दिखाई देता है, जो परोक्ष रूप से सद्भाव की काङ्कना करता है ।

संदर्भ :

1. 'अपनी जबान' – संपा. असद जैदी, विष्णु नागर – पृ. 8
2. 'अपनी जबान' – संपा. असद जैदी, विष्णु नागर – पृ. 6
3. 'आज की कविता' – विनय विश्वास – पृ. 109
4. 'आज की कविता' – विनय विश्वास – पृ. 87
5. 'यह ऐसा समय है' – संपा. असद जैदी, विष्णु नागर – प्रस्तावना से
6. 'अपनी जबान' – संपा. असद जैदी, विष्णु नागर – प्रस्तावना से
7. 'अपनी जबान' – संपा. असद जैदी, विष्णु नागर– पृ. 9
8. 'दस बरस' – संपा. असद जैदी – पृ. 12
9. 'एक बुरूँश कहीं खिलता है' – हरीश्चंद्र पाण्डे – पृ. 30
10. 'नेपथ्य में हँसी' – राजेश जोशी – पृ. 35
11. 'चौथा आसमान' – मोहम्मद अल्वी – पृ. 35
12. 'खोया हुआ सा कुछ' – निदा फाजली – पृ. 21
13. 'वर्तमान साहित्य : कविता विशेषांक' – अप्रैल–मई, 1992 – पृ. 270

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

14.हिन्दी चलचित्र विधा में साम्प्रदायिक सद्भाव

डॉ. विनोदकुमार विलासराव वायचळ 'वेदार्य',
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय,
उस्मानाबाद

भारतीय चलचित्रों के सौ साल पूरे होने के उपलक्ष्य में एक निजी चैनल ने एक शोध किया कि ऐसी कोई गीत रचना जो मुस्लिम द्वारा निर्मित हो लेकिन जिसमें हिन्दू भावना व्यक्त हो और ऐसी कोई गीत रचना जो हिन्दू द्वारा निर्मित हो और मुस्लिम भावना को अभिव्यक्त करती हो। इस शोध कार्य के दौरान अनेक गीत सामने आये, जिनमें दो गीतों को सार्वकालिक लोकप्रियता की कसौटी पर खरा पाया गया।

पहला गीत है – हरि ओम हरि ओम हरि ओम।
मन तड़पत हरिदर्शन को आज।
मोरे तुम बिन बिगडे सारे काज।
बिनती करत हूँ रखियो लाज।। 1।।
तुमरे द्वार का मैं हूँ जोगी।
हमरी ओर नज़र कब होगी।
सुनो मेरे व्याकुल मन का बाज।। 2।।
बिन गुरु ज्ञान कहाँ से पाऊँ।
दिजो दान हरि गुण गाऊँ।
सब गुणी जन पे तुमरा राज।। 3।।
मुरली मनोहर आस न तोड़ो।
दुख भंजन मोरा साथ न छोड़ो।
मोहे दर्शन भिक्षा दे दो आज।। 4।।

दूसरा गीत है – ऐ! मालिक तेरे बन्दे हम, ऐसे हों हमारे करम।
नेकी पर चले और बदी से टले, ताकि हँसते हुए निकले दम।। 1।।
ये अँधेरा घना छा रहा, तेरा इन्सान घबरा रहा।
हो रहा बेखबर, कुछ न आता नज़र, सुख का सूरज छिपा जा रहा।
है तेरी रोशनी में जो दम, तो अमावस को कर दे पूनम ।। 2।।
जब जुल्मों का हो सामना, तब तू ही हमें थामना।
वो बुराई करे हम भलाई भरें, नहीं बदले की हो कामना।
बढ़ उठे प्यार का हर कदम, और मिटे बैर का ये भरम।। 3।।
बड़ा कमजोर है आदमी, अभी लाखों हैं इसमें कमी।
पर तू जो खड़ा है दयालू बड़ा, तेरी किरपा से धरती थमी।
दिया तूने हमें जब जनम, तू ही झेलेगा हम सबके ग़म ।। 4।।

पहला गीत सन 1952 के सदाबहार चलचित्र 'बैजू बावरा' का है, जिसे शकील बदायूँनी ने लिखा, नौशाद अली ने संगीतबद्ध किया और मुहम्मद रफ़ी जी ने गाया है। दूसरा गीत 1957 के चलचित्र 'दो आँखें बारह हाथ' से है, जिसे भरत व्यास ने लिखा, वसन्त देसाई ने संगीतबद्ध किया और मन्ना डे ने गाया है। इन दोनों गीतों को भारतीय भजनों में स्थान मिला है। शकील बदायूँनी

की गत वर्ष जन्मशती (जन्म 3 अगस्त 1916) थी और भरत व्यास जी की अगले वर्ष जन्मशती (18 दिसम्बर 1918) है। 'इन्सान से इन्सान का हो भाईचारा। यही पैगाम हमारा।।' कहनेवाले कवि प्रदीप जी की दो वर्ष पहले जन्मशती (जन्म 6 फरवरी 1915) मनाई गई है। तो 'ना तू हिन्दू बनेगा न मुसलमान बनेगा। इन्सान की औलाद है, इन्सान बनेगा।।' का सन्देश देनेवाले साहिर लुधियानवी की जन्मशती चार वर्ष बाद (जन्म 8 मार्च 1921) मनायेंगे। कुल मिलाकर कहा जाये तो यह दशक चलचित्र के गीतकारों की जन्मशती का दशक होगा। हिन्दी चलचित्रों की कथा, पटकथा, संवाद और गीत लिखने वालों में भी सभी धर्मों और प्रदेशों के लोगों का समावेश हो जाता है।

भारतीय चलचित्रों के प्रारम्भ से प्रायः एक सदी को बीतने के बाद सही मायने में एक साहित्यिक विधा के रूप में चलचित्रों की ओर ध्यान गया है तथा चलचित्रों की समीक्षा की ओर भी गम्भीरता से देखा जा रहा है। एक समय ऐसा था, जब चलचित्रों की ओर भद्र समाज उपेक्षा की दृष्टि से देखता था। इस विधा को युवाओं को गुमराह करने वाली विधा मानकर ताने भी दिये जाते थे। मनोरंजन मानो गुनाह हो गया हो। चाहे जो हो इस बारे में अब स्थिति में ज़रा–सा सुधार तो हो ही गया है। अस्तु!

हिन्दी चलचित्र सही मायने में भाषा, साहित्य और संस्कृति के लोकदूत हैं। आज के भारतीय समाज में सच्चे मायनों में कोई धर्म निरपेक्ष चीज़ है तो वह हिन्दी चलचित्र ही है। हिन्दुओं, ईरानियों (पारसियों), सिखों, ईसाइयों की तरह ही मुसलमानों ने भी इस विधा में सराहनीय योगदान किया है। इस दृष्टि से हिन्दी चलचित्र को राष्ट्रीय चलचित्र कहा जा सकता है। यदि कोई भी व्यक्ति हिन्दी चलचित्र में प्रविष्ट हो जाता है, तो अपने आप ही उसकी जातीय, धार्मिक, प्रान्तीय, प्रादेशिक पहचान मिट जाती है और वह सम्पूर्ण भारतवर्ष में छा जाता है। आज सलमान खान, शाहरूख खान, आमिर खान, इरफान खान, नवाजुद्दीन सिद्दीकी, नसिरूद्दीन शाह, अर्शद वारसी, इमरान खान, इमरान हाशमी, सैफ अली खान, जावेद खान जैसे अनेक अभिनेता हैं, जिनसे हिन्दू जनता उतना ही मानती है जितना अमिताभ बच्चन, रणवीर सिंह, अक्षय कुमार, रणबीर कपूर, अजय देवगण, ऋतिक रोशन, मनोज वाजपेयी जैसे हिन्दू अभिनेताओं को मानती है। इनमें से अधिकांश हस्तियों के जीवनसाथी दूसरे धर्म को मानने वाले भी हैं। हिन्दू सेलीब्रेटी मुस्लिम त्यौहार और मुसलमान सेलीब्रेटी हिन्दू त्यौहारों को बड़े जोर–शोर से मनाते हैं।

1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में हिन्दू–मुसलमान दोनों अंग्रेजों के खिलाफ़ कंधे से कंधा मिलाकर लड़े थे। अंग्रेजों ने इस एकता को नष्ट करने के लिए दोनों में फूट डाली और अन्ततः खंडित स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई। हिन्दी चलचित्रों में इस विभाजन का चित्रण बड़ी गम्भीरता से किया गया है। विभाजन की समस्या को चित्रित करनेवाले कुछ चलचित्र निम्न प्रकार से हैं –

छलिया (1960 मनमोहन देसाई), धर्मपुत्र (1961 यश चोप्रा), अमर रहे यह प्यार (1961 प्रभू दयाल), गरम हवा (1973 एम. एस. सथ्यू), गांधी (1982 रिचर्ड एंटेनबरो), तमस (1987 गोविंद निहलानी), सरदार (1993 केतन मेहता), 1947 अर्थ (1998 दीपा मेहता), ट्रेन टू पाकिस्तान (1998 पामेला रूक्स), हे राम (2000 कमल हासन), गदर (2001 अनिल शर्मा), पिंजर (2003 चंद्रप्रकाश द्विवेदी), मिड नाइट चिल्ड्रेन (2012), क्या दिल्ली क्या लाहौर (2014 विजय राज) इन चलचित्रों पर अधिक शोधकार्य करने की आवश्यकता है।

हिंदू–मुसलमान संबंधों से युक्त तथा साम्प्रदायिक सद्भाव द्वारा राष्ट्रीय एकता का प्राचार करनेवाली कुछ महत्वपूर्ण चलचित्र निम्न प्रकार से हैं – मुगले आज़म (1960), पाकिज़ा (1972), अमर, अकबर, एंथनी (1977), जनम (1985), रोज़ा (1992), बॉम्बे (1995), जख़्म (1998), सरफरोष

(1999), फिज़ा (2000), मिस्टर एण्ड मिसेस अय्यर (2002), वीर ज़ारा (2004), देव (2004), खाकी (2004), रंग दे बसंती (2006), परज़ानिया (2007), चक दे इंडिया (2007), जोधा अकबर (2008), आमिर (2008), फिराग (2008), ब्लैक एण्ड वाइट (2008), रोड टू संगम (2009), दिल्ली 6 (2009), माय नेम इज खान (2010), ओ माय गॉड (2012), शिरीन फरहाद की तो निकल पड़ी (2012), रांझना (2013), पीके (2014), बजरंगी भाईजान (2015), धर्म संकट में (2015) आदि चलचित्रों पर भी शोधकार्य किया जा सकता है।

हिन्दू और मुसलमान भारतमाता की दो आँखें हैं। दोनों अपने वतन से समर्पित रीति से प्रेम करते हैं। दोनों ही कौमों ने अधिक से अधिक अपना और अपने देश का विकास करने के लिए कटिबद्ध होना चाहिए। अन्त में शकील बदायूँनी ने लिखा गीत प्रस्तुत करना चाहूँगा –

निर्धन का धन लूटनेवालों लूट लो दिल का प्यार,
प्यार वो धन है जिसके आगे सब धन है बेकार,
इन्सान बनो इन्सान बनो, कर लो भलाई का कोई काम।
दुनिया से चले जाओगे, रह जायेगा बस नाम।। 1।।
जिस बाग़ में सूरज भी निकलता है लिये गम,
फूलों की हँसी देख के रो देती है शबनम,
कुछ देर की खुषियाँ हैं तो कुछ देर का मातम,
किस नींद में हो जागो, ज़रा सोच जो अंजाम ।। 2।।
लाखों यहाँ शान अपनी दिखाते हुए आए,
दम भर के लिए नाच गए धूप में साए,
वो भूल गए थे के ये दुनिया है सराए,
आता है कोई सुबह तो जाता है कोई शाम ।। 3।।
क्यों तुमने लगाए हैं, यहाँ ज़ुल्म के ढेरे,
धन साथ ना जायेगा, बने क्यों हो लुटेरे,
पीते हो गरीबों का लहू शाम सबेरे,
खुद पाप करो, नाम हो शैतान का बदनाम ।।4।।

।। जय हिन्दी, जय नागरी।।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

15.हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा.डॉ.अनिता वेताळ/अंत्रे
कला,शास्त्र,वाणिज्य
महाविद्यालय,
राहुरी,जि.अहमदनगर (महाराष्ट्र)

भारत विभिन्न संस्कृतियों धर्मो और संप्रदायों का संगम स्थल है। यहाँ सभी धर्मो और संप्रदायों को बराबर का दर्जा मिला है। हिन्दू धर्म के अलावा जैन, बौध्द और सिक्ख धर्म का उद्भव यही हुआ है। अनेकता के बावजूद उनमें एकता है। हमारे मूल्य समयातीत है जिन पर हमारे ऋषि–मुनियों और विचारकों ने बल दिया है। चाहे कुरआन हो चाहे बाइबिल, हजरत मोहम्मद, इसा मसीह, गुरुनानक, बुध्द, महावीर, कबीर, नामदेव सभी ने मानव मात्र की एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव पर जोर दिया है। भारत के लोग चाहे किसी भी मजहब के हो, अन्य धर्मो को आदर करना जानते है। क्योंकि सभी धर्मो का सार एक ही है।

मध्ययुगीन सभी संतो ने समाज में राष्ट्रीय एकता की स्थापना एवं सांप्रदायिक सदभाव पर बल दिया। इनका मुख्य लक्ष्य संसार में राष्ट्रीयता एवं सांप्रदायिक सद्भाव की स्थापना करना था। इन संतो ने संसार को मानवतावाद का संदेश दिया। वे भक्ति तथा प्रेम के द्वारा इस संसार में सेवाभाव, धैर्य और विवेक आदि गुणों के माध्यमसे जीवन को सुखमयी बनाना चाहते है। यही कारण है कि इन संतों की वाणियाँ और रचनाएँ आज भी लोगों के लिए और आनेवाली पीढियों के लिए एकता का संदेश देती है। मध्ययुगीन सभी संतों ने संपूर्ण समाज को एकसूत्र में बाँधने के लिए धार्मिक भेदभाव का मिटाने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा जाति–पाँति, उँच–नीच, भेदभाव, मानवीय असमानता, आदि को दूर करने का आह्वान किया। उनका कहाना था कि मानव सब समान है, चाहे वह किसी भी धर्म, संप्रदाय, जाति, वंश और कुल के हो, एक ही ईश्वर की औलाद होने के कारण सब भाई–भाई है। संत कवियों का उद्देश्य देश में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भव का था। वे एक ऐसा समाज चाहते थे, जिसमें धनवान और निर्धन में गहरी असमानता न हों, जिससे एक व्यक्ति धन संचय करे और दूसरी ओर गरीब भूख मिटाने के लिए भीख माँगने को बाध्य हो।

इन संत कवियोंने जातिप्रथा का विरोध किया और हिन्दू–मुस्लिम एकता का समर्थन किया। कबीर, नानक, नामदेव, दादूदयाल आदि ने हिन्दू– मुस्लिम के बीच कोई भेदभाव नही माना। इन संत कवियों का विश्वास था कि धर्म केवल एक है, मानव धर्म। संतोने ऐसे धर्म की उद्भावना का प्रयत्न किया जो एक मनुष्य को दूसरे मनुष्यों के निकट ला सके। श्री गुरुग्रंथ साहिब में एक सीख दी गई है–

कोऊ भयो मुंडिया सन्यासी, कोऊ जोगी भयो,
कोई ब्रहमचारी कोई जतियन मानबो।
हिन्दू तुरक कोऊ, राफजी इमाम शाफी
मानस की जात सबै एक पहचानबो

तो कबीरदास कहते है–

अखल अल्लाह नूर उपाया कुदरत दे सब बंदे ।
एक नुर ते सब जग उपज्या, कौन भले को मंदे।।

हिन्दी साहित्य राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव से भरा पडा है। भारतीय साहित्यकारों ने साहित्य, राजनीति और सांस्कृतिक पुनर्जागरण को अभिव्यक्ति देने के लिए पत्र–पत्रिकाओं का सहारा लिया। इन पत्र–पत्रिकाओं का उद्देश्य सामाजिक रुढियों, कुरीतियों अंधपरम्पराओं का विरोध

करना था। माखनलाल चर्तुवेदी ने 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से रचना की राष्ट्रकवि गुप्त जी ने ''किसान'' काव्य लिखा। चतुर्वेदीजीने प्रतीकात्मक कविता ''पुष्प की चाह'' जैसी कविता लिखकर फूल को राष्ट्रप्रेमी नागरिक का प्रतीक बनाया जिसकी चाह है–

मुझे तोड लेना वनमाली उस पथ पर देना तुम फेंक
मातृभूमि पर शीश चढाने जिस पथ पर जोव वीर अनेक।।

विश्वकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने हमारे राष्ट्रगीत जनगन मन अधिनायक जय हे जैसी अमूल्य कृति देश को प्रदान की। गांधीजी ने इस कविता को देशप्रेम का भक्तिमंत्र कहा है। उनकी स्वर्णदेश कविता ''आमार सोनार बांगला'' 'आमि तोमाय भालोबासी' मे राष्ट्रीय एकता कि भावना स्पष्ट झलकती है। नेताजी का गीत ''कदम–कदम बढाए जा खुशी के गीत गाए जा, ये जिंदगी है कौम की तू कौम पर लुटाए जा'' आज भी हमें राष्ट्र एक एकता की प्रेरणा देती है। राष्ट्रीय एकता की भावना से प्रेरित होकर बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने 'आनंदमठ' की सृष्टि की। इनकी 'सुजला सुफला शस्य श्यामला' कविता में सारे देश में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना की लहर फैला दी।

अर्थात राष्ट्रीय भावना एक मानसिक अनुभूति है। अनेकता में एकता की भावना अपने देश भारत की विशेषता रही है। भारत अनेक धर्मो, जातियो और भाषाओं का देश है। इन परिस्थितियों में अपने राष्ट्र को एक सुत्र में बाँधे रखने के लिए सभी धर्मावलंबियों में देशप्रेम और सांप्रदायिक सद्भाव की भावना का होना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1) भारतीय साहित्य –डॉ.शशि पंजाबी–ज्ञानप्रकाश,कानपूर
2) संत कबीर और तुकाराम के काव्य में प्रासंगिकता–डॉ.ज्ञानेश्वर गाडे– विकास प्रकाशन कानपूर.
3) प्राचीन ग्रंथों में राष्ट्रीय एकता–प्रो.अश्विनी केशरवानी, ई–पत्रिका

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

16. हिंदी कहानी साहित्य में सांप्रदायिक सद्भाव का चित्रण

डॉ.शकिला ज.मुल्ला
आबेदा इनामदार वरिष्ठ महाविद्यालय
कॅम्प, पुणे 1

भारत विविध जाति, भाशाओं तथा धर्मों का देश है। यहाँ प्राचीन काल से विविध संस्कृतियों का संगम होता आया है। अनेक जातियों और धर्मों के लोग यहाँ आकर भारतीय संस्कृति की धारा में समाहित हो गए। आर्य, अनार्य, द्रविड़ तथा विदेशी – यवन, शक, हूण, मुगल, मंगोल, तुर्क आदि विभिन्न जातियाँ एवं संस्कृतियाँ यहाँ पनपती रही। ये सभी जातियाँ, धर्म और संस्कृतियाँ भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बन गई। सब अपनी विभिन्नता खोकर भारतीय एकता के सूत्र में आबद्ध हो गई। भारत में विविध जाति, संप्रदाय, धर्म के लोग निवास करते है। सब की अपनी अपनी विशेष जातीय, सांप्रदायिक तथा धार्मिक मान्यताएँ हैं। भारत में हिंदू, मुस्लिम, सीख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी आदि धर्म के लोग एकत्रित वास करते हैं। इनकी भाषा अलग, इनका रहन–सहन भिन्न, इनकी धार्मिक मान्यताएँ भिन्न तथा इनकी संस्कृति भी भिन्न। फिर भी इन सभी को विविधता के बावजूद भारतीय संस्कृति ने एकसूत्र में बाँधे रखा है। भारत के इतिहास को दखने पर पता चलता है कि सदियों से नवनवीन संस्कृतियों से प्रभावित होकर यह देश विकास की ओर अग्रसर हुआ है। भारतीय संस्कृति में हिंदू, जैन, बौद्ध, इस्लाम, सीख तथा ईसाई धर्म का मेल बखूबी दिखाई देता है। विविधता और विभिन्नता के होते हुए भी भारतीय समाज में सभी लोग भारतीयता के एक सूत्र में बंधे नजर आते है। सभी का खान–पान, रहन–सहन, बोली–भाषा, शिक्षा–दीक्षा, रीति–रिवाज, काम–काज, राष्ट्रीयता आदि में एक समानता पाई जाती है। स्वतंत्र भारत के संविधान का धर्म–निरपेक्ष रूप किसी प्रकार के भेदभाव और सांप्रदायिकता को मान्यता नहीं देता। सदियों से एकत्रित रहने के बाद भी हिंदू और मुस्लिम इन दो समाजों में सांप्रदायिक भावना प्रखर रूप में दिखाई देती है। राजनीतिक उथल–पुथल के कारण सदैव दोनों धर्म प्रभावित रहे, अन्यथा समस्त भारत में ग्रामीण क्षेत्र से लेकर महानगरीय जीवन तक इनमें सद्भाव का परिचय मिलता है।

भारत के इतिहास में कुछ ऐसी विपरीत स्थितियाँ उत्पन्न हुई, कुछ ऐसी घटनाएँ घटित हुई, जिसके परिणाम स्वरूप हिंदू और मुस्लिम धर्मों के बीच द्वेश और नफरत की भावना और अधिक तीव्र हो गई। देश का विभाजन, बाबरी–मस्जिद का ध्वंस, गोध्रा हत्याकांड जैसी घटनाओं ने दंगे–फसादात के हालात निर्माण किए, लोगों में अविश्वास, असुरक्षा की भावना भर दी। इतने गहरे सद्मों के बाद भी स्थितियाँ सँवर गई, इसका एकमात्र कारण है सांप्रदायिक सद्भाव। प्रेम, विश्वास, भाईचारा, आत्मीयता, एवं मानवतावादी शक्तियाँ जीत गई।

भारतीय संस्कृति के मूल में जो जीवन मूल्य, नैतिक मूल्य पैठ गए है, उनके बीज कहीं न कहीं साहित्य के रूप में अवश्य प्राप्त होते है। भारतीय साहित्यकारों ने भारतीय समाज की राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में किया है। हिंदी साहित्य के अंतर्गत ऐसे कई साहित्यकार दृष्टिगत होते है जिन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा समाज को एकता तथा एकसूत्रता में बँधे रहने की प्रेरणा दी। समाज के प्रति, देश के प्रति एकनिष्ठ रहने के लिए भक्ति भाव से उद्वेलित किया। हमारे संत एवं सूफी कवियों की अहं भूमिका रही है। कबीर की रचनाएँ इसीलिए आज भी प्रासंगिक लगती है। आधुनिक युग में हिंदी कहानीकारों ने भी इस दिशा में अपना संपूर्ण योगदान दिया है। हिंदी कहानी साहित्य में भारतीय समाज की राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव का यथार्थ चित्रण मिलता है। हिंदू और मुस्लिम जीवन की मिली–जुली झांकियाँ हमें हिंदी

कहानियों में मिलती है। प्रेमचंद ने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व पंच परमेश्वर जैसी कहानियों में हिंदू और मुस्लिम जीवन का मिला–जुला चित्र प्रस्तुत किया। भारत–पाक विभाजन के बाद जो दंगे–फसाद, भीषण नरसंहार, अत्याचार, लूट–पाट और खौफ वातावरण निर्माण हुआ उसका चित्रण अनेक कहानियों में किया गया। भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया है' कहानी बड़े प्रभावी रूप से उन दिनों हुए दंगों, मार–काट, आगजनी, लूटपाट तथा दहशत और आतंक को चित्रित करती है। ऐसे भयावह वातावरण में भी इंसानियत के चिह्न दिखाई देते है। यदि एक संप्रदाय के लोग दूसरे संप्रदाय के लोगों को मौत के घाट उतार रहे थे, वहीं दूसरी और उसी संप्रदाय के कुछ लोग 'अपने प्यारो' को बचाने की पूरी कोशिश कर रहे थे। अज्ञेय की 'शरणदाता' ऐसी ही कहानी है, जिसमें रफीकुद्दीन अपने मुहल्ले के घनिष्ठ मित्र देविंदरलाल को लाहौर छोड़कर हिंदुस्तान नहीं जाने देता। वह उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी लेता है। देविंदरलाल का घर जलता देखकर वह यह कहता है– ''यह दिन भी देखना था, और आजादी के नाम पर, या अल्लाह...'' मानो उसके हृदय की मानवता रो पड़ती है किंतु बाद में परिस्थितियाँ यहाँ तक बिगड़ जाती है कि उन्हें रफीकुद्दीन के घर से निकाल कर उनके मित्र शेख अताउल्लाह के अहाते में बने गैराज में छिप कर कैदी की तरह रहना पड़ता है। यह कहानी मानवीय करुणा में एक विश्वास और आस्था जगा जाती है। ऐसे भयावह वातावरण में भी 'जैबू' जैसे कितने लोग होंगे जिन्होंने केवल मानवता के नाते पीड़ितों के प्राण बचाने की कोशिश की।

देश विभाजन के दंगों पर आधारित और एक सशक्त कहानी मिलती है – 'मलबे का मालिक' जिसके लेखक है मोहन राकेश। इस कहानी में गनी के परिवार को वही रक्खा पहलवान खत्म कर देता है, जिस पर उसके पुत्र चिराग को अटूट विश्वास था। कहानी में लेखक तीखा व्यंग्य करते हुए हृदय पर भारी चोट करते है। अपने परिवार को मिटानेवाले रक्खा पहलवान से ही गनी कहता है, ''मेरे लिए चिराग नहीं, तो तुम लोग तो हो। मुझे आकर इतनी ही तसल्ली हुई कि उस जमाने की कोई तो यादगार है। मैंने तुमको देखा तो चिराग को देख लिया। गनी के ये शब्द इन्सान के उस दुष्कृत्य पर करारा तमाचा है, जो विभाजन के समय क्रूरता से पेश आए।

महींप सिंह की 'पानी और पुल' विभाजन के पृथक राष्ट्र के सिध्दांत को झुठलानेवाली ऐसी ही सशक्त कहानी है। सराई स्टेशन पर विभाजन के चौदह साल बाद पहुँची माँ को जो आदर–सम्मान, स्वागत और संबंधों की गरमी मिलती है, वह साबित करती है कि आज भी पुलों के नीचे से कितना ही पानी बहे, पर मानवीय रिश्तों में वही आत्मीयता कायम है।

बदी उज़्जमा की 'परदेषी' और 'अंतिम इच्छा' कहानी के पात्र भी भारत व गया की धरती के लिए तरसते हुए पाकिस्तान के अस्तित्व में आने को व्यर्थ मानते है। 'अंतिम इच्छा' का लालवानी हिंदुस्तान में रहता हुआ कराची के लिए तरसता है और कमालभाई गया के लिए ललकता है।

अज्ञेय की कहनी 'बदला' का सरदार काफी प्रभावित करता है। हिंसा का उत्तर हिंसा से दिया जाए तो फिर मानवी अस्तित्व ही समाप्त हो जाए। नफरत, घृणा और द्वेश की आँधी में इतनी प्रखर मानवतावादी दृष्टि दुर्लभ ही है। रेल के डिब्बे में सुरैया लड़के और लड़की के साथ चढ़ जाती है। सरदार जी उसकी सहायता करना चाहता है और हिंदू बाबू बार–बार उकसाता है कि मुस्लिम स्त्री पर अत्याचार कर बदला लिया जाए।

भारत–पाक विभाजन त्रासदी के वर्षों बाद पुनः बाबरी मस्जिद के ढह जाने के कारण हिंदू–मुस्लिम संप्रदायों में नफरत की भावना जागृत हुई। नतीजा दंगे–फसाद का भयावह माहौल। आबिद सुरती ने बाबरी मस्जिद के ढह जाने से जो सांप्रदायिक दंगे मुंबई में उभरे उसका चित्रण

'हरि के नाम के व्यापारी' कहानी में किया है। विपरीत स्थितियों में निदा फाजली हिंदू पड़ोसियों के भरोसे टिके रहे और स्वयं लेखक रामदास नायक के भरोसे रहे। इसी प्रकार बाबरी मस्जिद के ढह जाने के बाद उभरे हालातों से प्रभावित होकर कई लेखकों ने बेहतर से बेहतर कहानियाँ लिखीं।

भारतीय समाज में इस कदर बदलती हवा के रूख के कारण परेशानियों का माहौल निर्माण होता रहा। किंतु समय के साथ सारे घाव भरते भी गए। आज भारत में हिंदू–मुस्लिम बड़े स्नेह से मिल जुलकर रहते है। दोनों समाज के लड़का–लड़की अंतर्धर्मीय विवाह कर खुशहाल जीवन व्यतित करते है। मिल जुलकर सभी पर्व, उत्सव मनाते हैं। स्वतंत्र भारत के धर्मनिरपेक्ष और सर्वधर्म समभाव के तत्व को सही रूप में साकार किया गया। लेखकों ने विषमता के जहरीले वातावरण में भी देश के अनुकूल भाईचारे और सद्भाव को बनाए रखने हेतु सदैव सकारात्मक प्रयास किए। देश को विघटन से बचाने के लिए लोगों में प्रेम, अपनत्व का भाव संचारित करने का कार्य हिंदी कहानियों ने किया है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

१७.हिन्दी कथा साहित्य में राष्ट्रीयता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा. संध्या तायडे
हिंदी विभाग प्रमुख
सिम्बायसिस कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
पुणे

भारत में विभिन्न धर्मो जातियों, सम्प्रदायों, भाषाओं और प्रजातियों के लोग रहते है। यह एक धर्म निरपेक्ष और प्रजातांत्रिक देश है। हमारे संविधान में लिखा है कि सभी लोग कानून की नजर में बराबर है। स्वतंत्रतापूर्व अंग्रेजों ने अपने राजनैतिक स्वार्थ के लिये हिन्दु और मुसलमान इन दो संप्रदायो को एक दूसरे के विरोधी संप्रदाय बनाने की साजिश रची। साम्प्रदायिकता द्वेष, घृणा, वैमनस्य, ईर्ष्या इत्यादि दुष्प्रवृत्तियों पर पनपने वाली मानसिकता है जो दो समुदायो को एक दूसरे से अलग करती है। साम्प्रदायिकता का धर्म से गहरा संबंध है। अंग्रेजो द्वारा निर्मित और पोषित सांप्रदायिकता के फलस्वरुप देश का विभाजन हुआ। इतिहास साक्षी है कि भारत में सभी धर्मो के लोग मिल जुल कर रहते थे और सभी में आपसी भाइचारा था। लेकिन स्वाधीनतापूर्व और स्वाधीनता के बाद सांप्रदायिकता किस प्रकार भयानक स्वरुप में हमारे समक्ष रुप बदल बदल कर आ रही है। साम्प्रदायिकता की समस्या खत्म होने का नाम ही नही ले रही। भारत घोषित रुप में धर्म निरपेक्ष राष्ट्र होते हुये भी धार्मिक साम्प्रदायिकता के विषैले वातावरण से पीडित है। साम्प्रदायिक सद्भावना का अर्थ जीओ और जीने दो है। धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनितिक जीवन में समझौता और सहयोग का वातावरण तैयार करके आपस में मिलजुल कर रहने की स्थिति को ही साम्प्रदायिक सद्भावना कहते है।

राष्ट्रवाद के संबंध में ओ.पी. गाबा लिखते है "१९ वी शतबाब्दी में संस्कृति, धर्म, इतिहास, भाषा आदि की एकता राष्ट्रीयता के आवश्यक तत्व माने जाते थे। राष्ट्रवाद उन ऐतिहासिक प्रतिक्रियाओ का प्रतिक है जिनके द्वारा राष्ट्रीय जातियों में एकात्मकता उत्पन्न होती है। राष्ट्र को एक प्रकार की समूह भावना भी कहा जा सकता है। राष्ट्रवाद को विचारधारा" (३)

साम्प्रदायिक द्वेष को साम्प्रदायिक सद्भावना में बदलने के प्रयास रचनाकारों द्वारा हिन्दी कथा साहित्य में उनके लेखन के माध्यम से होते रहे है। जिन में भारत के हरिशचंद्र, देवकी नंदन खत्री, प्रेमचंद, जय शंकर प्रसाद, जैनेंद्र कुमार चतुरसेन शास्त्री, सुमित्रा नंदन पंत, अमृतलाल नगार, यशपाल, भीष्म साहनी, अज्ञेय विष्णु प्रभाकर आदि अनेक साहित्यकारों प्रमुख है। भारत के हरिश्चंद्र ने अपनी असामयिक मृत्यु के कुछ पूर्व सन १८८४ में 'पंच पवित्रात्मा' शीर्षक से एक पुस्तिका प्रकाशित की थी जिसमे मुसलमानी मत के महात्मा मुहम्मद अली, बीबी फातिमा, इमाम हसन और इमाम हूसैन की संक्षिप्त जीवनी प्रस्तुत की थी। इससे पूर्व भी वे मुसलमान बादशाहों एवं सुलतानों का संक्षिप्त जीवन परिचय लिख चुके थे। निश्चय ही यह उस जातीय सद्भाव के संवर्धन की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रसाद था। देवकीनंदन खत्री ने अपने कथा साहित्य में मुसलमान पात्रों की बडी संख्या में सृष्टि की।

भारतीय कथा साहित्य में प्रेमचंद पहले लेखक है जिन्होंने स्वाधीनता आंदोलन के संदर्भ में इस जातीय सद्भाव के महत्व को समझा। १९०९ में प्रेमचंद लिखित 'सोजेवतन' जिस में पांच कहानियां थी

भावात्मक स्तरपर राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित थी। इस कथाओं में मुस्लिम पात्रों और उनकी संस्कृति को आत्मीय सद्भाव से चित्रित किया गया था। 'ईदगाह' और 'पंच–परमेश्वर' जैसी कहानियों में मुस्लिम जनजीवन का अंकन कर वे जातीय सद्भाव को विकसित करते है। 'आहुति' 'जुलूस' 'समरयात्रा' और 'सत्याग्रह' शतरंज के खिलाडी आदि कहानिया जातीय और राष्ट्रीयता को सुविकसित रुप है। शोषण और अत्याचार पर आधारित इस व्यवस्था का भयावह रुप प्रेमचंद की कहानियों में 'सवासेर गेहू' 'सद्गति' 'ठाकूर का कुआँ' 'पूस की रात' और 'कफन' देखा जा सकता है।

डॉ. रामविलास शर्मा जी लिखते है ''प्रेमचंद हिन्दुस्तान की नई राष्ट्रीय और जनवादी चेतना के प्रतिनिधि साहित्यकार थे। विराट मानव – संस्कृति की धारा में भारतीय जन – संस्कृति की गंगा ने जो कुछ दिया, उसके प्रमाण प्रेमचंद के लगभग एक डझन उपन्यास और सैकडो कहानियां है।'' (१)

प्रेमचंद पर गांधीजी का प्रभाव था। गांधीजी साम्प्रदायिक सद्भावना के लिये जिये और मरे। गांधीजी के अनुसार ''साम्प्रदायिक एकता दिलो की अतूट एकता का नाम है और जो राष्ट्रीयता की भावना को समझते है, वह एक दूसरे के धर्म में हस्तक्षेप नही करते, यदि वे ऐसा करते है तो वह एक राष्ट्र समझे जाने योग्य नही है।'' (२)

प्रसाद कवि नाटककार ही नही कहानीकार के रुप में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अपने युग में हो रहे सामाजिक राजनितिक परिवर्तन के प्रति बहुत नही, लेकिन कुछ तो चिंता उनके लेखन में अभिव्यक्त हुई है। 'ग्राम' 'पुरस्कार' 'शरणागत' उनकी महत्वपूर्ण कहानियाँ है।

अमृतलाल नागरजी ने 'तस्लीन लखनवी' के छद्म नाम से अनेक कहानियां और रेखाचित्र लिखे जो लखनऊ की मुस्लिम जन संस्कृति की बडी जीवंत एवं यथार्थ झांकी प्रस्तुत करते है। 'झुठा सच' में यशपाल ने विभाजन की पृष्ठभूमि में इसी सांप्रदायिक सद्भाव और राजनीति के क्षेत्र में समान कार्यकारों का अंकन विस्तार से किया है। 'प्रेम का सार' 'परदा' और गमी में खुशी आदि इसी प्रकार की कहानियां है। अज्ञेयजी ने 'शरणदाता' और 'बदला' कहानियां इसी विषय को लकर लिखी विष्णु प्रभाकर का 'मेरा वतन' कहानी संग्रह विभाजन की पृष्ठभूमि और मानवीय सौहाद पर ही आधारित है।

'सलमा आपा' 'सरदारनी', 'जहूर बख' और 'झुटपुटा' भीष्म साहनी की कहानिया सांप्रदायिक सौहार्द और मानवीय व्यवहार की गरिमा का बखान करती है। उनकी सुप्रसिध्द कहानी ''अमृतसर आ गया'' सांप्रदायिक उन्माद के उद्भव और विस्फोट को उद्घाटित करते है।

इस प्रकार हम देखते है हिन्दी कथाकारों ने अपनी कथाओं के माध्यम से राष्ट्रीयता और सांप्रदायिक सद्भावना को लेकर अनेक कहानियां लिखी और सांप्रदायिकता को मिटाने की कोशिश की जिस में उन्हे सफलता मिली।

संदर्भ :–१-(प्रेमचंद और उनका युग पृ.१७)

२- (महात्मा गांधी हिन्दु स्वराज्य पृ. ४८ ४९ अहमदाबाद, नवजीवन ट्रस्ट १९५९)

३- (ओ.पी. गाबा, राजनैतिक विचार कोश, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस हाऊस दिल्ली १९९५ पृ.२१७)

18.''आना इस देश'' उपन्यास में निहित राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ॰ कॅप्ट॰ बाबासाहेब माने
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
श्री शिव छत्रपति महाविद्यालय, जुन्नर,
जिला– पुणे

'आना इस देश' उपन्यास में भारत और पाकिस्तान के बंटवारे से उत्पन्न अलगाववादी विचारों को उद्घाटित करता हुआ युवा पीढ़ी के प्यार के माध्यम से राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव को नए सिरे उपस्थित करता है। इसमें भारत और पाकिस्तान में रहने वाले हिंदू और मुस्लिम लोगों के संबंधों एवं उनके परस्पर देशों संबंधी विचारों एवं भाव–भावनाओं को वाणी दी है। उपन्यास की नायिका पाकिस्तान की तलाकशुदा सुरैय्या नाम की युवती है। जो तलाकशुदा नारी के अकेलेपन और हवस की शिकार से संत्रस्त है। सुरैय्या के जीवन में आए उतार–चढ़ाओं और उसका अकेलापन एवं भारत को देखने की उसकी लालसा तथा सामाजिक एवं धार्मिक बंधनों में अटका उसका जीवन और सुरैय्या और अबीर के निश्चल प्यार की अतृप्त इच्छाओं की दास्तॉ इस उपन्यास की कथावस्तु के प्रमुख बिंदु नजर आते हैं।

सुरैय्या का जन्म पाकिस्तान में हुआ है। वह कराची में पली–बढ़ी है। उसकी शिक्षा कराची के एक कॉनवेंट स्कूल में हुई है। इस वजह से वह मुस्लिम रीति–रिवाजों के बंधानों से मुक्त जीवन उम्र के एक पडाव तक जीती है। परंतु उसका पिता नदीम जो भारतीय सेना के कुछ गुप्त दस्तावेज लेकर पाकिस्तान भागा था। वह अपनी बेटी सुरैय्या की शादी उसकी रजामंदी के बिना पाकिस्तानी एअरफोर्स के परवेज से करता है। परवेज सुरैय्या से दुगुनी उम्र का इंसान है और उसकी पहली पत्नी की मृत्यु हुई है। परेवज सुरैय्या पर अनेक धर्मगत बंधन लादकर अन्याय–अत्याचार करता है। उसे निरंतर अपनी हवस का शिकार बनाता है। इतना ही नहीं, उसके सामने ही उसकी फूफी की 14 साल की लड़की का बलात्कार करने की भी कोशिश करता है। उसी वक्त सुरैय्या उसके खिलाफ आवाज उठाकर उससे अलग होती है और अपने नवजात बच्चे के साथ मायके आकर रहने लगती है। वह परवेज से तलाक चाहती है, परंतु परवेज उसे तलाक नहीं देता। बार–बार उस पर दबाव बनाने की कोशिश करता है। परवेज फिर एक और महिला के साथ शादी करके अपना घर बसा लेता है। अतः सुरैय्या के ससुराल जाने के सभी रास्ते बंद हो जाते हैं। ऐसे समय में भी वह अपने बच्चे के साथ बची हुई जिंदगी काटना चाहती है, परंतु वह बच्चा भी मर जाता है। फिर उसके अब्बा यानी नदीम उसे खाला के पास दुबई भेज देते हैं। उसी समय उसकी मुलाकात गीत और अर्जुन से होती है। जो भारतीय हिंदू हैं और दुबई में रह रहे हैं। परंतु वहॉ पर भी खाला का दामाद उसको अपनी दूसरी बीबी बनाना चाहता है। जब सर के ऊपर से पानी गुजरने लगता है तो सुरैय्या गीत को सबकुछ बता देती है। उस समय गीत और अर्जुन सुरैय्या को सहरा देते हैं और उसे अपने गेस्टरुम में रहने का बंदोबस्त करते हैं। उनका बेटा 'सुर' जो छोटा है, उसे सुरैय्या बहुत चाहती है। इसी कारण भी अर्जुन और गीत सुरैय्या को अधिक पसंद करने लगते हैं।

सुरैय्या का पिता नदीम भारत के साथ गद्दारी करके पाकिस्तान चला गया था। परंतु सुरैय्या के चाचा, मामू , नाना, नानी आदि सभी उत्तर प्रदेश के रामपुर में ही रहते हैं। सुरैय्या की मॉ तरन्नुम और दादी को भारत से बिछोह सहा नहीं जाता। उनके मन में भारत निरंतर बसा हुआ है। सुरैय्या की मॉ और दादी नदीम को बार–बार भारत के साथ की गई गद्दारी के कारण टोकते हैं। परंतु नदीम धर्मांध हैं और वह पाकिस्तान तथा मुस्लिम धर्म को ही सर्वोपरि मानता है। दूसरे धर्मों

के प्रति खासकर हिंदू धर्म एवं हिंदुस्तान के प्रति उनके मन में अनेक कटु विचार हैं। इसलिए वह भारत की मिलटरी के कुछ गुप्त दस्तावेज चुराकर पाकिस्तान भाग गया था। वह अपने परिवार पर भी मुस्लिम धार्मिक कट्टरता का सतत दबाव डालता है। इसी वजह से पाकिस्तान ने उसे अपनी सेना में मेजर बना दिया है और कराची में एक अच्छा–सा प्लैट भी मुहैय्या कराया है। सुरैय्या अपनी मॉ तरन्नुम और दादी की इच्छा के खातिर भारत में रह रहे अपने मामाओं, नाना–नानी और चाचाओं से मिलना चाहती है। अतः उसे भारत लाने का इंतजाम गीत और अर्जुन करते हैं। जब वह गीत और अर्जुन के साथ भारत इंदौर आती है, तभी उसकी मुलाकात गीत के भाई अवधेश के दोस्त अबीर से होती है। यहीं से अबीर और सुरैय्या में प्रेम कहानी शुरु होती है और दोनों का ओंकारेश्वर में देह मिलन भी हो जाता है। दोनों के मन में शादी करने की इच्छा होने के बावजूद भी वे शादी नहीं कर पाते। चूँकि वे दोनों अलग–अलग धर्मों एवं देशों के बंधनों में जकडे हुए हैं। अबीर के मन में बार–बार सुरैय्या से शादी करके घर बसाने के विचार आते हैं। परंतु दोनों के प्यार में धर्म एवं देश की सीमाऍ तथा धार्मिक बंधन आडे आते हैं। दूसरी बार अबीर सुरैय्या को मिलने पाकिस्तान जाता है। तीसरी बार जब सुरैय्या हिंदुस्तान में एक गजल गायन कार्यक्रम में भाग लेने आती है। वहॉ पर भी अबीर और सुरैय्या की मुलाकात होती है। इसी तरह से दोनों की मुलाकातों का सिलसिला जारी रहता है और उन दोनों का प्यार अपने परवान चढ़ता जाता है। परंतु दोनों भी सामाजिक मान्यताओं एवं देशीय सीमाओं के आगे जा नहीं पाते। अबीर के माता–पिता अबीर की शादी तनु नाम की भारतीय लडकी के साथ तय करते हैं। जबकि अबीर इसके लिए टालमटोल करता है, परंतु आखिरकार वह भी अपने परिवार के खातिर राजी हो ही जाता है। अपनी शादी की व्यस्तता के कारण अबीर अपने दोस्त अंकित को सुरैय्या को पाकिस्तान की सीमा तक छोड आने का जिम्मा सौंपता है। अंकित उसे सही सलामत पाकिस्तान की सीमा तक छोड आता है। परंतु पाक सीमा के अंदर जैसे ही सुरैय्या दाखिल हो जाती है तो वहॉ के कुछ दरिंदे सुरैय्या को अगवा कर उसका बार–बार बलात्कार करते हैं। उसे कई दिनों तक भूखा रखते हैं । अतः वह पागल बन जाती है और अंत में उसकी मौत भारत पाक सीमा पर ही अबीर का नाम लेते हुए हो जाती है। अबीर उसे बचाने की कोशिश जरुर करता है। परंतु वह सफल नहीं हो पाता। अतः वह सुरैय्या के शव को भारतीय सीमा के अंदर ही मुस्लिम रिवाजों के अनुसार दफन कर देता है। अबीर और सुरैय्या की इस अतृप्त प्रेम कहानी में संलिप्त गीत और अर्जुन तथा अंकित जैसे युवा पात्रों के माध्यम से लेखिका ने प्यार के आगे धर्म, जाति एवं देश की सीमाओं को दोयम सिद्ध करने की सफल कोशिश की है।

हिंदुस्तान में रहने वाला अबीर हिंदू है और सुरैय्या पाकिस्तानी तलाकशुदा मुस्लिम नारी। परंतु दोनों में आत्मीय लगाव इस कदर उत्पन्न होता है। जैसे लैला–मजनू में हुआ था। जैसे हीर–रांझा में हुआ था। अतः दोनों का प्यार धर्मों एवं देशों की सीमाओं को तोडकर एकाकार होना चाहता है। परंतु पारिवारिक, धार्मिक एवं देशीय सोच के आगे लाचार हो वह आखिरकार अधूरा ही रह जाता है । दोनों की इच्छाऍ अतृप्त ही रहती हैं। उनके प्यार में सच्ची इंसानियत के भाव भरे हैं। चूँकि चाहे किसी भी देश, धर्म एवं जाति के नर–नारी क्यों न हो? उनमें प्यार एवं आत्मीयता की भावना एक जैसी ही होती है। इसलिए तो अबीर सुरैय्या के तलाकशुदा पाकिस्तानी मुस्लिम नारी होने बावजूद भी उसे ह्रदय से चाहता है। सुरैय्या भी केवल कामवासना के लिए उसका इस्तेमाल नहीं करती है, बल्कि वह भी अबीर को दिलोजान से चाहने लगती है। अबीर सुरैय्या को भारत में हर मुमकिन मद्द करता है। उसे उसके नाना–नानी, मामाओं तथा चाचाओं से मिलवाता है। उसकी

मॉ तरन्नुम को भारत में दफनाने में मद्द करता है। अबीर के विचार उदारवादी हैं। वह इंसानियत, प्यार, भाईचारा एवं सौहार्द में विश्वास करने वाला युवक है। उसके उदारवादी विचार निम्न कथन में स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं, जो राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव को उजागर करते हैं। जब सुरैय्या रामपुर में स्थित अपने नाना–नानी और मामाओं को मिलकर अबीर के साथ इंदौर लौट रही थी। तभी सिमरोल के आगे भंवरकुआं के पास दो मोटरों में टक्कर हुई थी। इसमें एक हिंदू परिवार था और दूसरा मुसलमान। इस ॲक्सिडेंट में दो लोग जगह पर ही मर गए थे और कई लोग घायल थे। अबीर उन घायलों को अस्पताल पहुॅंचाता है । उसमें मुस्लिम परिवार का एक लडका भी था, जिसे अबीर ने अस्पताल पहुॅंचाया था। उस लडके का पिता जस्टिस कुरैशी अबीर को ढ़ेर सारी दुवाएँ देता हुआ कहता है कि – "खुदा तुम्हें ढ़ेरों खुशियॉ दे। तुमने मेरे इकलौते बेटे को संभाला। ... ... बेटा तुमने हिंदू होकर मुसलमान की जान बचाई?"

इस पर अबीर कहता है– "आप कैसी बात कर रहे हैं । कब तक हम पाकिस्तानी व हिंदुस्तानी बने रहेंगे ? इंसान व हैवान तो दोनों जगह हैं। खुंखार दरिंदे वहॉ भी ! शहरों में बियाबान वहॉ भी यहॉ भी। इंसान परेशान वहॉ भी यहॉ भी । सच्चा भारतीय तो कभी हिंदू व मुसलमान का भेद नहीं करता ।"[1] अबीर के इस कथन से स्पष्ट है कि सच्चा भारतीय वही कहलाता है जो इंसानियत को बढ़ावा देता है। जो सांप्रदायिक ताकतों को भाईचारा, सौहार्द एवं अमन से रहने की सीख प्रदान करता है । जो धर्मभेद एवं जातिभेद से ऊपर उठकर पीडितों एवं घायलों की सेवा करता है। जिसके हृदय में प्रत्येक जीव के लिए संवेदना निहित होती है।

केवल हिंदू–मुसलमानों के बीच ही इसप्रकार सौहार्द नहीं है, बल्कि यहॉ के अनेक धर्म समुदायों में परस्पर स्नेह एवं आदरभाव दिखाई देता है। अबीर का निम्न कथन इसी को ही स्पष्ट करता है। जब सुरैय्या रामपुर के अपने नाना, नानी और मामाओं से मिलकर इंदौर आ रही थी । तब अबीर उसे कहता है कि – "आपको पता नहीं कि यहॉ बिहार जिला भी है, जहॉ पटना है, वहीं सीवान जिले के ठेपरा गॉव में हिंदू भी मुहर्रम मनाते हैं। ताजिया निकालते हैं। सीवान के जीरादोई से 12 कि.मी. दूर गॉव में सोमवार को हिंदू–मुस्लिम एक होकर मस्ती करते हैं। ये सब रोजा रखते हैं। मुहर्रम पर हिंदू औरतें रोती हैं, ईद मनाती हैं।"[2] इस तरह का सांप्रदायिक सद्भावना युक्त माहौल केवल बिहार में ही नहीं, बल्कि भारत के कई इलाकों में दृष्टिगोचर होता है । चंद ही लोग ऐसे होते हैं, जों सांप्रदायिक सद्भाव को चोट पहुॅंचाते हैं। राष्ट्रीय एकता में बाधा पैदा करने की कोशिश करते हैं। ये लोग अलग–अलग धर्मों की आम जनता की कमजोरियों को पहचानकर उन कमजोरियों का फायदा उठाकर उनके द्वारा गलत कार्य करवाते हैं। इसके लिए राजनैतिक शक्तियों के साथ ही भिन्न–भिन्न धर्मों के ठेकेदार (पंडित, मौलवी, पादरी आदि) भी जिम्मेवार होते हैं। ये ही लोग अपने–अपने समुदायों को गुमराह कर उनमें आपसी दंगे–फसाद, खून–खराबा और आंतकवादी गतिविधियॉ करवाते हैं। गीत की मॉ के यह विचार ऐसे लोगों की मानसिकताओं को यथार्थ रुप में उजागर करते हैं और धर्म का सही अर्थ समझाते हैं। जब गीत के घर में काम करने वाली मुस्लिम औरत शमा और हिंदू औरत रामकली के छः छः बच्चों और उनके शराबी पतियों के कारण हुई दुर्दशा की चर्चा गीत, सुरैय्या और अबीर कर रहे थे। उस वक्त गीत की मॉ उन दोनों औरतों के बारे में कहती है कि "वो रामकली कहती है कि बच्चे ईश्वर की देन है और शमा कहती है अल्ला ताला की रहमत है। हमारे धर्म में तो औलाद बढ़ाना अच्छा है। मौलवी सा. ऐसा ही कह रहे थे । पर.......

क्या समझेंगी दोनों ! जाहिल हैं। अंगूठा छाप ! कैसे समझायें कि पादरी, पंडित, मौलवी मनुष्य की कमजोरियॉ जानते हैं और उन्हीं कमजोरियों का शोषण कर भुनाते हैं । धर्म एवं मजहब कभी इंसानियत को गुमराह नहीं करते। सच्चा धर्म तो वो है, जो इंसान को दुःखों व कमजोरियों से मुक्त होने का रास्ता बताये।" [3] अतः स्पष्ट है कि कोई भी धर्म किसी भी तरह की हिंसा की परौकारी नहीं करता है । वह हमेशा इंसानियत की बात करता है और सांप्रदायिक सद्भावों को ही बढ़ावा देता है। वह इंसान की कमजोरियों और दुःखों को दूर करने के मार्ग भी प्रशस्त करता है। अतः कोई भी धर्म बुरा एवं हीन नहीं होता। इसलिए विविध धर्मों एवं सांप्रदायिक ताकतों को परस्पर स्नेह, भाईचारा एवं आत्मीय भाव से रहना चाहिए। देश की एकता और अखंडता को अक्षुण्ण रखने की कोशिश करनी चाहिए। तभी भारत में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव वृद्धिंगत हो सकता है। अन्यथा अगर इनमें कभी धर्म के नाम पर तो कभी जाति के नाम पर परस्पर कलह जारी रहा तो पाकिस्तान और चीन जैसे कट्टरतावादी एवं विस्तारवादी सोच वाले देश भारत को बर्बाद करने में समय नहीं लगायेंगे। अतः समय रहते ही हमें जागृत होना होगा। आपस में आत्मीय संबंध निर्माण करने हेतु रोटी–बेटी का भी व्यवहार करना होगा। अलग–अलग धर्मों की पवित्रता को आत्मसात करना होगा। सभी धर्मों एवं जातियों के लोगों को जीने का समान अधिकार देना होगा। परस्पर धर्मों का आदर एवं सम्मान करना होगा । तभी अगली पीढ़ी धर्म एवं देशीय सीमाओं के परे आत्मीय संबंध निर्माण करने में कामयाब होगी । देश की एकता बरकरार रहेगी और सांप्रदायिक सद्भाव भी प्रज्ज्वलित रहेंगे ।

संदर्भ सूची :

1) आना इस देश – डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री , पृ. 43
प्रथम संस्करण : 2014 , अमन प्रकाशन , रामबाग, कानपुर –208012 (उ. प्र.)
2) वही, पृ. 28
3) वही, पृ. 38

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

19. साम्प्रदायिक सद्भाव की तलाश : टोपी शुक्ला

प्रा. डॉ. पूनम त्रिवेदी
हिंदी विभाग
श्री. संत गाडगेबाबा हिंदी महाविद्यालय,
भुसावल, जि. जलगाँव, महाराष्ट्र

डॉ. राही मासूम रज़ा का उपन्यास 'टोपी शुक्ला' साम्प्रदायिकता पर आधारित घटनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण है। उपन्यास का कथ्य धर्म, समाज और राजनीति को परिप्रेक्ष्य बनाकर लिखा गया है। उपन्यास का नायक 'टोपी शुक्ला' है, जिसका पूर्ण नाम बलभद्र नारायण शुक्ला है। टोपी शुक्ला को केन्द्र में रखकर कथ्य का नियोजन हुआ है। कथानायक अपनी परिस्थितियों से समझौता नहीं करता है। वह अपने मुस्लिम मित्र इफ्फन के माध्यम से दो भिन्न परिवेश में जीवन बिताने वाले हिन्दुओं और मुसलमानों के संपर्क में आता है। जहाँ उसे इफ्फन की दादी का वात्सल्य प्राप्त होता है। किन्तु जब वह अपने घर लौटकर आता है तो उसे सबसे पहले नहाकर घर में घुसने दिया जाता है। मासूम शुक्ला जातिभेद से परे इन सब बातों को समझ नहीं पाता है।

कालान्तर में शुक्ला एम. ए. हिंदी करने के पश्चात् अलीगढ़ आता है जहाँ उसकी मुलाकात बचपन के मित्र इफ्फन से होती है। इफ्फन एक वर्ष तक डिग्री कॉलेज में इतिहास के प्राध्यापक रहे और बाद में अलीगढ़, मुस्लिम यूनिवर्सिटी में व्याख्याता हो गये। दोनों में अच्छी मित्रता होने के बावजूद भी वास्तविकता तो यह थी कि टोपी शुक्ला मुसलमानों से और इफ्फन हिन्दूओं से नफरत करते थे। फिर भी ये मान्यताएँ मित्रता की आड़ में नहीं आती थी। इफ्फन की पत्नी सकीना शुध्द भारतीय संस्कारों में पली धर्मनिरपेक्ष विचारोंवाली नारी थी जिसे मुस्लिम बर्दाश्त नहीं करते थे। 'टोपी शुक्ला' उपन्यास में धर्म के आधार पर फैली हुई छूआछूत की भावना को उपन्यासकार ने अपने पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। 'टोपी शुक्ला' अपने मित्र इफ्फन की पत्नी सकीना से कहता है ''भाभी तुम एक दिन अवश्य मेरा धर्म भ्रष्ट करवा कर दम लोगी। कितनी बार कहूँ कि मैं मुसलमानों के घर खाना नहीं खाता।''1 वह यह भी कहता है कि –''जब घर जाता हूँ तो रसोई में जाने की इजाजत नहीं मिलती। माँ मेरी थाली अलग रखती है। कहती है कि मैं मलेच्छ हो गया हूँ। परन्तु माँ है तो कभी–कभार प्यार कर ही लेती है तो प्यार करने के बाद सीधी गंगा नहाने जाती है। एक दिन मैंने कहा, माताजी मुसलमानों ने नहा–नहाकर गंगाजी को भ्रष्ट कर दिया हैं। जनबा वह खफा हो गई और छः महीने तक मुझसे बोली नहीं।''2

उपन्यासकार डॉ. राही ने आलोच्य उपन्यास में घिनौनी राजनीति की सक्रियता एवं सम्प्रदायवाद की वेदना को मुखरित किया है। देश की राष्ट्रीयता को अखंड बनाये रखने के लिए हिन्दू–मुस्लिम–ऐक्य की भावना समीचीन है। किन्तु यह दुःखद त्रासदी है कि धर्म के स्वरूप को न समझने के कारण हम सम्प्रदायवादी हो गये हैं। साम्प्रदायिक दंगों में भोली–भाली जनता अफवाहों की शिकार हो जाती है। ये अफवाहें ही साम्प्रदायिकता की ज्वाला को भड़काती है। दंगाई वातावरण में फैले अफवाहों पर 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' का सदस्य उपन्यास नायक टोपी शुक्ला व्यथित होकर सोचते हैं कि –''मुसलमानों ने इस तरह देश का सत्यानाश किया है। देशभर में जितनी मस्जिदें हैं, वो मंदिरों को तोड़कर बनाई गई है। टोपी को यह बात मानने में जरा शक था क्योंकि शहर की दो मस्जिदें तो उसेक सामने बनी थी और कोई मंदिर बंदिर नहीं तोड़ा गया था।''3 इतना ही नहीं साम्प्रदायिक दंगों से बच्चे भी आतंकित एवं प्रभावित हो जाते हैं। लूट–मार, खून–खराबे के शिकार मासूम बच्चे भी होते हैं। हालाँकि वे यह नहीं जानते है कि उनका कसूर क्या है! मासूम बच्चों के

बीच फैले आतंक को देखकर डॉ. राही मासूम रजा उपन्यास में लिखते हैं कि –''उस दिन पहली बार उसकी निगाहों में अल्लाह मियाँ की इज्जत कुछ कम हुई। यह तो कोई बात न हुई कि गुनाह करें बड़े और उसे भुगते बच्चे।''4

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश विभाजन के कारण उत्पन्न साम्प्रदायिक परिवेश ने व्यक्ति–व्यक्ति के बीच नफरत ! शक! डर! को पैदा किया है। यही कारण है कि इस बेबसी का फल हिन्दू होने के नाते टोपी शुक्ला और मुस्लिम होने के नाते इफ्फन जैसे लोगों को भुगतना पड़ता है। टोपी शुक्ला विश्वविद्यालय में जब साक्षात्कार हेतु उपस्थित होता है तब उससे प्रश्न पूछा जाता है कि क्या वे रसखान को हिन्दू मानते हैं या मुसलमान? इस पर टोपी शुक्ला उत्तर देते हैं कि मैं जायसी, मीर और गालिब को भी हिन्दू मानता हूँ। इस प्रसंग के माध्यम से उपन्यासकार ने यह चिन्ता व्यक्त की है कि –''जिस देश की यूनिवर्सिटी में यह सोचा जा रहा हो कि गालिब सुन्नी थे या शिया और रसखान हिन्दू थे या मुसलमान। उस देश में पढ़ाने का काम नहीं करूँगा।''5

विवेच्य उपन्यास में एक प्रसंग चित्रित है कि उपन्यास का एक मुस्लिम पात्र इफ्फन इतिहास का व्याख्याता बनकर कॉलेज जाता है परन्तु उसे अनुभव होता है कि सभी विद्यार्थी उदास हैं। इसका कारण साम्प्रदायिक संघर्ष है। इफ्फन यह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि –''इन लड़कों को क्या बतलाया जाये? इनकी समझ में यह बात कैसे आयेगी कि दो नदियाँ मिलकर तीन नहीं हो जाती – एक हो जाती है। इन लड़कों को यह कैसे समझाया जाए कि इतिहास अलग–अलग बरसों या क्षणों का नाम नहीं है, बल्कि इतिहास नाम है समय की आत्मकथा का। पानीपत की लड़ाईयाँ या बक्सर की जंग या प्लासी का युध्द, तो इस नदी के बुलबुले हैं।''6

सम्प्रति, साम्प्रदायिकता के संकीर्ण दायरे के कारण सामान्य जनजीवन अत्यंत दयनीय और भयावह बन चुका हैं। इससे ग्रस्त मनुष्य सामाजिक, आर्थिक परिवेश में जल झुलस रहा है। साम्प्रदायिक भावना की संकुचित प्रवृत्ति से व्यथित होकर डॉ. राही ने कथा नायक टोपी शुक्ला के माध्यम से अपनी वेदना व्यक्त करते हैं –''उसने एक नौकरी चाही तो कहीं हिन्दू होने के कारण नहीं मिली और कहीं मुसलमान होने के कारण। एक आदमी के कितने टुकड़े हो सकते हैं।''7

साम्प्रदायिकता की भावना नैसर्गिक नहीं है। यह मानव निर्मित हैं। इस संसार में व्यक्ति जन्म लेते ही किसी जाति, धर्म का अंग बन जाता है। यह जाति और धर्म उसे परिवार से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होता है। जाति–पाँति धर्म सम्प्रदाय में जकड़ा हुआ व्यक्ति धीरे–धीरे संकुचित धार्मिक भावना को अपनाने लगता है। ''संसार के तमाम छोटे–बड़े लोगों की तरह टोपी भी बेनाम पैदा हुआ था। नाम की जरूरत तो मरनेवालों को होती हैं। गांधी भी बेनाम पैदा हुए थे और गोडसे भी। जन्म लेने के लिए आज तक किसी को नाम की जरूरत नहीं पड़ी। पैदा तो केवल बच्चे होते हैं। मरते–मरते वह हिन्दू मुसलमान, ईसाई, नास्तिक, हिन्दुस्तानी, पाकिस्तानी, गोरे, काले और जाने क्या–क्या हो जाते हैं।''8

इसी प्रकार उपन्यासकार डॉ. राही ने जन्म और धर्म के सापेक्ष संबंध के बारे में सोचते हैं कि व्यक्ति जन्म लेते ही किसी धर्म का एक अभिन्न अंग बन जाता है। मजहबी दुनिया के इस व्यवहार के संबंध में उनका मत है कि – ''यह नामों का चक्कर भी अजीब होता है। उर्दू और हिंदी एक ही भाषा, हिन्दवी के दो नाम हैं। पर आप खुद देख लीजिए कि नाम बदल जाने से कैसे–कैसे घपले हो रहे हैं। नाम कृष्ण हो तो उसे अवतार कहते हैं और मुहम्मद हो तो पैगम्बर। नामों के चक्कर में पड़कर लोग यह भूल गये कि दोनों ही दूध देनेवाले जानवर चराया करते थे। दोनों ही पशुपति, गोबरधन और ब्रजकुमार थे।''9

देश–विभाजन का दुष्परिणाम यह हुआ कि हिन्दूओं और मुसलमानों के बीच एक गहरी खाई आज भी पनप रही है। धर्म, मंदिर, मस्जिद, जमीन को ही नहीं बाँटता बल्कि मनुष्य के मन में भी संकुचित दरारें बना डालता है। विभिन्न धर्मो के माननेवाले जहाँ पारस्परिक भाव से एक–दूसरे से सम्पृक्त थे, वे ही एक–दूसरे को भय और संदेह की दृष्टि से देखने लगे हैं। साम्प्रदायिक भावना की घिनौनी लपटों के भयावह परिणाम को चित्रित करते हुए उपन्यासकार कहता है कि –''हर आदमी अकेला हो गया था। जानी पहचानी गलियाँ साँप बनकर रेंग रही थी। पैरों की चाप की आवाज बदल गयी थी..........परछाइयाँ हिन्दू–मुसलमान बन गयी थी और आदमी अपनी ही परछाईयों से डरकर भाग रहा था। टूटे हुए ख्वाबों के रेजे शीशे की कीर्चियों की तरह तलवों में चुभ रहे थे।''10

आज का युग विज्ञान का युग है। संगणक प्रणाली वैज्ञानिक प्रगति की देन है। संपूर्ण विश्व विज्ञान और तकनीकी प्रणाली से भौतिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है परन्तु इन विकसनशील स्थिति में मनुष्य का मनुष्य के साथ व्यवहार समीचीन नहीं लगता है। आज मानव की संकीर्ण भावनाएँ सम्प्रदायवाद को बढ़ावा दे रही है। धर्म के स्वरूप का सही ज्ञान न होने के कारण लोगों के बीच दंगे–फसाद हो रहे है। 'टोपी शुक्ला' उपन्यास में टोपी शुक्ला और इफ़्फ़न दोनों सुशिक्षित एवं संस्कारित है। इफ़्फ़न का दर्द है कि अब यहाँ मुसलमानों को नौकरियाँ नहीं मिलती और टोपी का कहना है कि –''भारत पर उनका क्या हक रह गया है और हर मुसलमान के दिल में पाकिस्तान की ओर एक खिड़की खुली हुई है। मुसलमान पाकिस्तान की हॉकी टीम जीतने पर खुशी मनाते हैं।''11 टोपी शुक्ला और इफ़्फ़न में बहस होती है और इफ़्फ़न जब प्रश्न करता है कि अगर मुसलमान बुरे हैं तो तुम उनकी यूनिवर्सिटी में पढ़ने क्यों आये हों ? तब टोपी शुक्ला चिढ़ जाता हैं – ''यह मुसलमानों के बाप की यूनिवर्सिटी है ?.....केन्द्रीय सरकार से जो एक मिलती है क्या उसमें हमारा पैसा नहीं है ? सारे मुसलमान गद्दार हैं ?''12 अतः हिन्दू एवं मुस्लिम बुध्दिजीवियों के सोच में संकुचित भाव परिलक्षित होते हैं। इतना होने पर भी टोपी शुक्ला और इफ़्फ़न में गहरी दोस्ती है। इफ़्फ़न की पत्नी सकीना टोपी शुक्ला को भाई मानती है। किन्तु जब मित्रता धर्म के बीच में आती है तब टोपी शुक्ला और सकीना की मित्रता बेसिर–पैर की बातों का केन्द्र बन जाती है। टोपी को विभिन्न प्रताड़नाओं का सामना करना पड़ता है और इफ़्फ़न भी उबकर सपरिवार जम्मू चला जाता है। तत्पश्चात् टोपी अपने आपको अकेला महसूस करता है और कठिनाईयों को झेलते हुए अंततः आत्महत्या कर लेता है। मरणोपरान्त उसके पास दो लिफाफे मिलते हैं – एक में सकीना द्वारा भेजी गई राखी थी और दूसरे में बहराइच से आया नौकरी का नियुक्ति–पत्र। इस प्रकार कथा के अंत में टोपी मानव मूल्य पर एक प्रश्न–चिन्ह छोड़ जाता है। संपूर्ण उपन्यास में धार्मिक उदारता का चित्रण हुआ है।

संदर्भ :–

1) टोपी शुक्ला – डॉ. राही मासूम रजा, पृ. 15

2) पूर्ववत् – पृ. 15

3) पूर्ववत् – पृ. 47

4) पूर्ववत् – पृ. 50

5) पूर्ववत् – पृ. 131

6) पूर्ववत् – पृ. 59

7) पूर्ववत् – पृ. 133

8) पूर्ववत् – पृ. 18

9) पूर्ववत् – पृ. 32
10) पूर्ववत् – पृ. 74
11) पूर्ववत् – पृ. 82
12) पूर्ववत् – पृ. 53
13) हिंदी उपन्यास : परम्परा और प्रयोग – डॉ. सुभद्र, पृ. 326–327
14) टोपी शुक्ला – डॉ. राही मासूम रजा, पृ. 13

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

20. तुम बिलकुल हम जैसे निकले !

डॉ. विजय महादेव गाडे
एसोसिएट प्रोफेसर ,शोध–निर्देशक एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग
बाबासाहेब चितळे महाविद्यालय, भिलवडी
जि. सांगली (महाराष्ट्र)

बहुत वर्ष पूर्व पाकिस्तानी शायरा फहमिदा रियाज ने एक कविता लिखी थीं जिसके शब्द थे –

''तुम बिलकुल हम जैसे निकले अब तक कहाँ छिपे थे भाई ?
वह मुरखता, वह घामडपन जिसमें हमने सदियाँ गंवाई
आखिर पहुँची द्वार तुम्हारे अरे बधाई, बहुत बधाई!
फिर तुम लोग पहुँच जाओगे बस परलोक पहुँच जाओगे
हम तो हैं पहले से ही वहाँ पर तुम भी समय निकालते रहना
अब जिस नरक में जाओ वहाँ से चिट्ठी–चिट्ठी डालते रहना !''

हिन्दुस्तान के बदलते हुए परिवेश से प्रभावित होकर 1996 में उन्होंने यह नज्म लिखी थी। जिस दोजख में पाकिस्तान जल रहा है, उसी दोजख की ओर मेरा पडोसी हिन्दुस्तान भी चल रहा है जिसे देखकर उनके मन में संवेदना जागृत हुई और वहीं संवेदनाएँ इन शब्दों के माध्यम से नज्म में उतर गई।

संप्रति फहमिदा की यह नज्म काफी लोकप्रिय हो रही है और वहुचर्चित भी! बकौल फहमिदा– 'अगर आप कहते हैं की, आप की नज्म तो किसी जमाने की बात करती हैं, अब तो वह जमाना ही नहीं रहा। आज की तारीक में इस नज्म के कोई मायने ही नहीं है तो ज्यादा खुशी होती मुझे।

इधर और उधर के गूंडा मवाली एक दूसरे के सम्पर्क में रहते हैं। यहाँ और वहाँ के मूलतत्ववादी एक ही जबान का इस्तेमाल करते हैं। तो फिर विचारक एवं लेखको ने इकठ्ठा होकर अपनी भूमिकाओं का समर्थन किया तो इसमें कौनसी बुरी बात है ? यहाँ और वहाँ का प्रेस मीडिया भी अपनी बातों में काफी समानताएँ हैं और समान अवधारणाएँ भी! यह नज्म इसलिए पैदा हुई कि यहाँ के लोगों के लिए हम लोग सदैव हिन्दुस्तान की मिसाल देते हैं और इसलिए समकालीन हिन्दुस्तानी परिवेष हमारे लिए अलग मायने रखता है। हम अपने लोगों को हिन्दुस्तान की मिसाल इन शब्दों में देते हैं– 'इंडिया हमारे लिए एक जिन्दा मिसाल है, कम्युनल हार्मोनी और खुलेपन की।'

फहमिदा का यह नजरिया उनकी अवधारणा को स्पष्ट करता है। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान एक ही वक्त आजाद हुए। हिन्दुस्तान कहाँ पहूँच गया और पाकिस्तान कहाँ है ? यही सवाल हर पाकिस्तानी विचारक को बार–बार सताता रहता है। हिन्दुस्तान ने आज जो मुकाम हासिल किया है, वहाँ तक पहूँचने के लिए पाकिस्तान के कितनी जद्दोजहद करनी पडेगी ? यही सवाल आज भी पाकिस्तानी विचारक कर रहे हैं।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की तवारीख का मुआयना करने से पता चलता है कि हिन्दुस्तान दुनिया का सबसे बडा जनतंत्र है। मानवी हक, नागरी आजादी, अभिव्यक्ति की आजादी के इस माहौल में यहाँ हर हिन्दुस्तानी मुक्त होकर अपनी सांस ले सकता है। यह दुनिया का एक मात्र ऐसा मुल्क है जहाँ लगभग सभी धर्म संम्प्रदायो एवं मजहबों के लोग रहते हैं। अनेक वंश, रंग, धर्म, भाषा आदि की आस्मिताएँ इस देश में हैं। हर किस्म की इन को आजादी है। दंगा फसाद होते हैं, हुए हैं, शायद भविष्य में भी होंगे लेकिन पाकिस्तान की तरह हिन्दुस्तान में इन सब का कोई भी समर्थन

नहीं करता। एक शर्मोहया की बात इस नजरिए से इसे देखा जाता है और यह सारे जख्म एवं नासूरो का मुकाबला करते हुए यह मुल्क प्रगति की ओर जा रहा है। जो हिन्दुस्तान के लिए सम्भव है वह हमारे लिए क्यों नहीं ?

पाकिस्तान में अभिव्यक्ति की आजादी को दबाने का प्रयास 1947 से आज तलक बदस्तुर जारी है। आजादी मिलने के बाद भी क्यों यह आजादी मिली ? क्या आजादी पाने के बाद उसका अंजाम यहीं होनेवाला था ? जिस गुलिस्ताँ का ख्वाब हमने देखा था क्या वह सच्चाई में तबदील हुआ ? ऐसे कई सवाल फैज अहमद फैज समेत अनेक कवियों/विचारकों ने उपस्थित किए थें अतः उनके आज तलक जबाब मयस्सर नहीं हुए हैं। फैज ने लिखा भी था—

''ये दाग—दाग उजाला ये शबगुजीदा शहर
वो इन्तिजार था जिसका ये वो सहर तो नहीं
ये वो सहर तो नहीं जिसकी आरजू लेकर
चले थे यार कि मिल जाएगी कहीं न कही।''

फहमिदा के अनुसार पाकिस्तानी मिट्टी में जो द्वेश और जहर के बीज बोए हुए हैं जिसका आज विषैला वृक्ष बना है, वह बीज हिन्दुस्तान की मिट्टी एवं आबोहवा में कभी भी पल नहीं सके और न भविष्य में पलने एवं बढने की सम्भावनाएँ हैं। यह हिन्दुस्तान की सबसे बडी ताकत है और इसी ताकत को हर हिन्दुस्तानी को अपनाना चाहिए यह फहमिदा की मान्यता हैं। इसलिए नज्म के दूसरे हिस्से में वह लिखती हैं —

''भूत धरम का नाच रहा है कायम हिन्दु राज करोगे
सारे उल्टे काज करोगे ? अपना चमन नाराज करोंगे ?
तुम भी बैठे करोगे सोचा पूरी है वैसी तैयारी
कौन है हिन्दू कौन नहीं है ? तुम भी करोगे फतवे जारी
वहाँ भी मुश्किल होगा जीना दॉतो आ जाएगा पसीना
जैसे तैसे कटा करेगी वहाँ भी सबकी साँस घुटेगी
कुछ भी नहीं पडोस से सीखा क्या हमने दूर्दशा बनाई
कुछ भी तुमको नजर न आई ?''

फहमिद रियाज पाकिस्तानी रचनाकार और विचारक हैं। उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में 1946 में इनका जन्म हुआ। रेडिओ पाकिस्तान पर आर. जे. के रूप में उन्होंने काम किया और कुछ समय बाद लंदन जाकर बीबीसी उर्दू के लिए भी काम किया। जफर अली उजन के साथ शादी करने के बाद उन्होंने 'आवाज' नामक मॅगझिन का सम्पादन किया। लेकिन सरकारी नीति के खिलाफ लिखने के कारण फहमिदा पर अनेक मुकदमे दायर हुए और उसे जेल की यात्रा करनी पडी। हिन्दुस्तान में होनेवाले एव मुशायरे का बहाना बनाकर 1981 से 1987 से तक वे हिन्दुस्थान में रही। झिया उल हक की मौत के बाद और बेनझीर भूत्तो सत्तासीन होने के बाद वे पाकिस्तान वापस जा सकी। अभिव्यक्ति स्वतंत्रता की फहमिदा को बहुत बडी कीमत अदा करनी पडी और हिन्दुस्तानी मुखबीर और एजण्ट होने का उनपर इल्जाम लगा।

हिन्दुस्तान में हिन्दू बनकर जीने की यहाँ आजादी है। कोई शैव हैं कोई वैष्णव है........ लेकिन एक हिन्दु होते हुए भी प्रत्येक पंथ की उपासना प्रणाली अलग—अलग है। उनपर कोई सख्ती नहीं लगाई जाती। अगर इस तरह की सख्ती हिन्दुस्तान में की जाएगी इसकी कल्पना भी हम कर नहीं सकते है। इसलिए इस नज्म के एक अंष को देखिए जो कितना सार्थक प्रतीत होता है —

''भाड में जाए षिक्षा—विक्षा अब जाहिलपन के गुन गाना
आगे गढ्ढा है यह मत देखने वापस लाओ गया जमाना
हम जिन पर रोया करते थे तुम नें भी वह बात अब की है
बहुत मलाल है हम को, लेकिन हा हा हा हा हो हो ही ही!
कल दुख से सोचा करती थी सोच के बहुत हँसी आज आई
तुम बिलकुल हम जैसे निकले!''

इसलिए फहमिदा कहती हैं – ' ये खतरनाक रास्ता हैं..... और आगे जाकर जहन्नूम में ही पहुँचाता है। हम उसी ओर जा नहीं रहे, बल्कि जहन्नुम में पड चुके हैं। मेरी गुजारिश है, आप संभालिए!!''

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बुद्धिजीवियों मे मूलतः यहीं फासला है। हिन्दुस्तानी बुद्धिजीवी बहुत बार विशिष्ट राजनीतिक विचारधारा से प्रेरित और प्रभावित रहते हैं जबकि पाकिस्तान में यह आसार कम से कम हमें तो दिखाई नहीं देते है। बुद्धिजीवियों के आंदोलन को इसलिए सपोर्ट नहीं मिलता क्योंकि बहुत बार उनकी कथनी और करनी में काफी अंतर होता है। और जब यह अंतर दिखाई देता है तब लोग बुद्धिजीवियों से अलग हो जाते हैं लेकिन यह नहीं होना चाहिए।

फहमिदा कहती है – आजकल मैं यह सुन रही हूँ कि हिन्दुस्तानी लेखक और बुद्धिजीवी अपने पुरस्कार वापस कर रहे हैं, एक सराहनीय कदम है। रचनाकारों की हौसला अफजाई करनी होगी की जिस प्रकार का माहौल इस देष में बन गया है, यह बहुत बुरी बात है।

पुरस्कार वापसी यह केवल प्रतीकात्मक है, इसकी ओर भी ध्यान देना आवष्यक है। यह एक पहला कदम है। पुरस्कारों को लौटाने से अपनी भूमिका स्पष्ट नहीं होती। केवल कृति से ही नहीं बल्कि शब्दों के माध्यम से लोगों तक अपनी भावनाएँ पहुँच जानी चाहिए। जहर से जहर खत्म नहीं होता बल्कि समंजस मानसिकता और शांति की भाषा ही मानव जाति को इस विवाद से बाहर निकाल देगी। सबसे बडी बात यह है कि इसके लिए आपने क्या कीमत अदा की है यह बात भी लोगों तक पहुँचनी जरूरी है नहीं तो लेखकों की प्रतीकात्मक कृतिपर अब भरोसा रखने के दिन नहीं रहे है। इससे रचनाकार/विचारकों का उत्तरदायित्व बढ रहा है इसकी न केवल उन्हें बल्कि हमें भी कल्पना होना आवश्यक है। इस धोखे के इशारे को पहचानने की अब जरूरत है। यह काफी घातक माहौल है। इसलिए 'जिसकी शुरूआत आप के मुल्क में हो रही हैं उसका अंजाम हम भुगत रहे है।'

इन सभी बातों का अर्थ यही है कि देष जिस गहराई में जा गिरा है उससे उसे बाहर निकालना चाहिए क्योंकि दोजख की यह आग सभी को जलाएगी। कम से कम यही बात हर एक के मन में पैदा होना आवश्यक है।

हिन्दुस्तानी तहजीब गंगा—जमनी तहजीब है, साझी तहजीब है और साझी जिन्दगी का यह माहौल काफी पुराना है। यह केवल संस्कृति ही नही अपितु हिन्दुस्तान की बहुत बडी क्षमता भी है और सुरतेहाल में इसमें इजाफा होना अत्यंत जरूरी भी है। इसलिए हिन्दुस्तान की तरफ हम आषा भरी नजर से देखते रहते है।

फहमिदा नज्म के आखरी हिस्से में लिखती हैं –

''हम दो कौम नहीं थे भाई मश्क करो तुम आ जाएगा
उल्टें पाँव चलते जाना दूजा ध्यान न मन में आए
बस पीछे ही नजर जमाना एक जाप सा करते जाओ

बार–बार यहीं दोहराओं कितना वीर महान था भारत
कैसा अलिषान था भारत फिर तुम लोग पहुँच जाओगे
बस परलोक पहुँच जाओगे हम तो हैं पहले से वहाँ पर
तुम भी समय निकालते रहना अब जिस नरक में जाओ
वहाँ से चिठ्ठी–चिठ्ठी जलते रहना।''

मूलतः भारतीय राष्ट्रवाद की प्राकल्पना में यहाँ की सामाजिक संस्कृति अनस्युत हैं इसलिए भारत में राष्ट्रवाद का विकास यहाँ की सामासिक संस्कृति कों खतरा नहीं पहुँचा सकता।

राष्ट्रवाद की सार्थकता उसके सही उपयोग में ही छिपी रहती है। राष्ट्रवाद में राष्ट्रीयता को भी शामिल किया जाता हैं। अतिराष्ट्रवादीता की प्रवृत्ति हिटलर और मुसोलिनी का निर्माण कराती हैं। राष्ट्रवाद की जब अति हो जाती है वह अंधा राष्ट्रवाद बन जाता है। नाजीजम और फैसिजम इसके जीते जागते सबूत है। मेरा राष्ट्र महान बने इस आकांक्षा में कुछ भी गलत और गैर भी नहीं है। लेकिन राष्ट्रवाद का गलत ढंग से उपयोग करने से उपरोक्त साम्प्रदायों का निर्माण हो जाता है। नाजीजम में लाखों को दरबदर भटकने के लिए मजबूर किया और उतने ही लोगो को अपने प्राणों से हाथ धोना पडा। कार्ल मार्क्स ने कहा था धर्म अफिम की गोली हैं । कभी कभी यह कथन राष्ट्रवाद पर भी सार्थक प्रतित होता है।

अंध राष्ट्रवाद या अतिराष्ट्रवादीता अफिम की तरह होती है। जिससें व्यक्ति का विवेक मृत हो जाता है और सोचने की क्षमता भी लगभग खत्म हो जाती है। वह किसी नशेली व्यक्ति की तरह अपना व्यवहार करने लगता है। जिसका अंजाम राष्ट्र की क्षति में होता हैं।

तवारिख में इस अफिम का प्रयोग अनेंक नेताओनें किया और सत्ता प्राप्त की लेकिन ऐसे राष्ट्र और नेता दोनों का सर्वनाष हुआ। पाकिस्तानी शायर बकौल हबीब जालिब –

''तुझसें पहले भी यहा एक शख्स तख्तनशीं था
और उसे भी अपने खुदा होने पर तेरे जितना ही यकीं था ''

इसलिए अंत में फहमिदा ने जो दूआ की है वह केवल हिन्दुस्तान या पाकिस्तान की न रहते हुए वह सम्पूर्ण मानवजाति की दुआ बन जाती है। इसी बात को लेकर अंत में हम उन्हीं के शब्दों को दोहराते हुए लिखते हैं –

जो जिन्दगी सुकुन की है..... वो और खुषहाल बने
पडोस मे रहकर यहीं मेरी आस है। आमेन !!

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

21. प्रगतिवादी काव्यधारा में राष्ट्रीयता एवं साम्प्रदायिकता

डॉ. कान्ता एम्. भाला
हिन्दी विभाग
दादासाहेब देविदास नामदेव भोळे
महाविद्यालय, भुसावल, जि. जलगाव |

हिन्दी साहित्य की धारा लगभग एक हजार वर्षो से प्रवाहित हो रही है | जिसमें अनेक मोड़ विविध वादों के आयाम रहे है | सन 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना काव्य की दृष्टी से एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है | जिस समय प्रगतिवादी काव्य प्रारम्भ हुआ उस समय देश में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता- संग्राम का आन्दोलन चल रहा था | अंग्रेजों के साम्राज्यवाद, पूंजीवाद, और सामंतवाद की नीति के विरुद्ध प्रगतिवाद तनकर खड़ा रहा | इसीलिए प्रगतिवादी काव्यधारा में साम्राज्यवाद, पूंजीवाद और सामंतवाद के विरोधी विचार परिलक्षित होते है | नागार्जुन, रामविलास शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल, शिवमंगल सिंह 'सुमन', रांगेय राघव, त्रिलोचन शास्त्री मुक्तिबोध इत्यादि शीर्ष कवी है, जिन्होंने प्रगतिवादी विचारों को अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी है |

हिंदी साहित्य के इतिहास में राष्ट्रीय काव्यधारा प्रवाहमान रही है | जिसके माध्यम से अनेक कवियों ने स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु जनजागरण का पावन और महम कार्य कर यह प्रमाणित किया है कि साहित्य व्यष्टि- समष्टि एवं राष्ट्र से सम्पृक होता है | जन्मभूमि भारत और कर्मभूमि भारत की भावना से राष्ट्रीयता का निर्माण होता है | मातृभूमि से नैसर्गिक प्रेम ही राष्ट्रीयता को जन्म देता है | प्रगतिवादी कवियों में राष्ट्र के प्रती आस्था और निष्ठा बलवती है | इसी कारण उन्होंने जहाँ एक और राष्ट्र के प्रती प्रेम व्यक्त किया है | वही दूसरी और विदेशी आक्रमणों पर प्रक्षोभ अभिव्यक्ति की है | प्रगतिवादी कवियों ने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन को अपने काव्य के माध्यम से प्रेरणा प्रदान की है | श्री. जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद' ने 'अगस्त, क्रान्ति का गीत' में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए बलिदान करने का सन्देश दिया है |

"जब तक अन्तिम भारतवासी जीवित बचे आत्मबलि रण में,
और एक राम अन्तिम कण हो बाकी उसके आहत तन में,
तब तक उसके सुदृढ करों में झन्डा रहे राष्ट्र का प्यारा है,
स्वतंत्र सब भारतवासी, भारतवर्ष स्वतंत्र हमारा |"[3]

सुभाषचन्द्र बोस द्वारा स्थापित "आज़ाद हिन्द फौज" के प्रति डॉ. महेन्द्र भटनागर 'जयहिन्द' एवं नरेन्द्र शर्मा ने 'आदेश' और 'एक गीत जय हिन्द' कवितओं में अपनी-अपनी आस्था-निष्ठा व्यक्त की है |

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के काव्य में भी राष्ट्रीयता की भावना से सम्बंधित अनेक कविताएँ दृष्टिगत होती है | "भारती जय विजय करें" राष्ट्रीयता की सर्व श्रेष्ठ रचना कही जा सकती है | राष्ट्रीयता की दृष्टी, रामविलास शर्मा की "आझाद पताका" एवं "झंडा ऊँचा रहे हमारा" में दृश्य है | आजाद पताका' में वे लिखते है |

"दीपक की लो से उठती है,
भारत की आज़ाद पताका
उपट नीर भरे बादल है,
नीचे है आज़ाद पताका |"[4]

कवी पन्त ने भी राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति की है | उनकी कविता “भारतमाता” में भारत की दुर्दशा का चित्रण हुआ है | इस यथार्थवादी चित्रण हुआ है | इस यथार्थवादी चित्रण में कवी का राष्ट्र प्रेम ही झलकता है –

“तीस कोटि संतान नग्न तन
अर्धक्षुधित शोषित, निरस्त्र जन
मूढ़ असभ्य, अशिक्षित, निर्धन
नत मस्तक तरु-तल निवासिनी|”[5]

श्री शिव मंगल सिंह ‘सुमन’ राष्ट्रीय काव्यधारा के कवी माने जाते है | ‘हिल्लोल’ ‘जीवन के गान’ ‘प्रलय सृजन’ ‘विद्य हिमालय’, ‘मिटटी की बारात’ आदी उनके काव्य संग्रह है | इन संग्रहों की कविताओं में राष्ट्रियता के विविध आयामों को प्रस्तुत किया है | वे अपनी कविताओं में देशभक्तों को प्रेरित करते हुए कहते है –

“आओ उठो चलो जल्दी
समरांगण में कुहराय मचाने
पीकर जिसका दूध खड़े है,
उस माता की लाज बचाने |”[6]

प्रगतिशील चेतना के कवी केदारनाथ अग्रवाल ने राष्ट्रीय कविताओं के अंतर्गत उद्बोधन पर गीत लिखे है जो उनके ‘लोक ओर आलोक’ में दृष्टव्य है | कवी क्रान्ति के स्वरों को मुखरित करता ह़ा लिखता है |

“ए दधीचों शक्ति का डंका बजाओ,
शांति का उल्लासमय सूरज उगाओं
लाल सोने का सबेरा चम् चमाओं,
लेखनी के लोक में आलोक लाओ|”[7]

कवी त्रिलोचन ने अपने काव्य संग्रहों- ‘धरती’ “गुलाब और बुलबुल” ‘दिगन्त’ में राष्ट्रीय भावनाओं को अभिव्यंजित किया है | कवी स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जन-जागृति का सन्देश देता है |

“ताकत हो उत्साह हो बढ़ो, स्वतंत्रता कुछ दूर नहीं है,
स्वतंत्रता या मौत नहीं हों दोनों साथ-साथ मिलती है|”[8]

बालकृष्ण शर्मा ‘नवीन’ क्रान्ति की भावना को व्यक्त करते है | उनके द्वारा लिखा, ‘विप्लवगान’ अत्यंत लोकप्रिय रहा है |

रांगेय राघव को भारत के प्रति अत्यंत आस्था और निष्ठा है, वह भारत के कल्याण और नवनिर्माण का स्वप्न देखता हुआ भारत का जयजयकार करना चाहता है –

“जाग
मेरे हिन्द
तेरी धूलि के जरें
बने सम्राट के अभिमान
फिर उड़े तेरी पताका
गूंजकर टकरा उठे थे
प्रबल तेरे गान |”[9]

प्रगतिवादी कवी भारत के स्वतंत्र होते ही अपना आनंद व्यक्त करता हुआ भारत का जयजयकार करता है |

"मंगल-मुहूर्त तरुगण फूलों नदियों अपना पयदान करो,
जंजीर तोड़ता है भारत, किन्नरियों, जय जय गान करो|"[10]

नागार्जुन का काव्य भी राष्ट्रीय भावनाओ से ओतप्रोत है | कवी कभी मातृभूमि की वंदना करता है, तो कभी राष्ट्रीय एकता के प्रति आग्रह करता है | कवी विदेशी आंदोलनों से प्रक्षोभित होता है तो कभी राष्ट्रीय हित में बाधक प्रवृत्तियों पर प्रहार करता है | कवि का देश प्रेम अत्यंत सरल शब्दों में व्यक्त हुआ है, जो आम आदमी को सहजता से प्रभावित करता है | कवी को भारत भूमि के प्रती गहरा लगाव-झुकाव है | वह इस भूमि के कण-कण में भारत को देखता है-

" खेत हमारे भूमि हमारी सारा देश हमारा है,
इसीलीए तो हमको इसका चप्पा-चप्पा प्यारा है|"[11]

नागार्जुन की राष्ट्रीयता उनकी मातृभूमि की वन्दना के रूप देखी जा सकती है-

"देवी तुम्हारा वसुंधरा का बित्ता-बित्ता रत्नाकर है |
गंगा, यमुना, सिंध, और वे पांचों नदियाँ
ब्रह्मपुत्र, कृष्णा, कावेरी,
गोदावरी – नर्मदा कोसी- गंडक सरयू |"[12]

नागार्जुन की राष्ट्रीय चेतना सजग होने के कारण उनके काव्य का केन्द्रबिन्दु राष्ट्रीयता ही है | यही कारण है कि उनके काव्य में राष्ट्रीयता से संबंधित अनेक कविताएँ दृष्टिगत होती है |

भारत का विभाजन भी सांप्रदायिक आधार पर स्वतंत्रता –प्राप्ति के पूर्व से ही सन 1946-47 में देश विभाजन की पृष्ठभूमि में भयंकर सांप्रदायिक दंगे हुए | मर्माहित कवी दिनकर ने 'हे मेरे स्वदेश' नामक कविता में लिखा-

"जलते है हिन्दू- मुसलमान, भारत की आँखे जलती है,
आने वाली आज़ादी की, लो दोनों पाँखे जलती है |"[13]

वस्तुतः देश विभाजन की त्रासदी हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष ही है | दिनकर ने 'तक़दीर का बंटवारा' में लिखा की-

"खुँ बहाया जा रहा इन्सान का
सींगवाले जानवर के प्यार में
कौम की तक़दीर फोड़ी जा रही
मस्जिदों की ईट की दीवार से |"[14]

नौआरवाली के सांप्रदायिक दंगो को दृष्टि में रखकर पंतजी ने लिखा था –

"कौन खड़े उन्नत अविचल, दुर्धर झंझा के सन्मुख
स्वर्ग-दूत से जाती-भेद का हरने धरणी का दुःख |"[15]

नरेन्द्र शर्मा ने साम्प्रदायिकता की आलोचना करते हुए, यही लिखा कि यद्दपि एक हिन्दू और दूसरा मुसलमान है परन्तु यथार्थ यह है कि दोनों ही इंसान है और सदियों से एकात्म भाव से साथ-साथ रहे है-

"सदियों से हम दोनों साथ रहे, यह बात न अब तक पहचानी
दोनो ही धरती के जाये, हम अनचाहे मेहमान नहीं|"[16]

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ भारत के, सांप्रदायिक दंगों की भयावहता झेलनी पड़ी इससे व्यथित होकर डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुयन' ने "मेरा देश जल रहा कोई नहीं बुझानेवाला" शीर्षक से लिखी कविता में यह व्यथा व्यक्त कि है की स्वतंत्रता सैनानियों का उल्लेख करते हुए लिखते है –

"भगतसिंह अशफाक, लाल मोहन, गणेश बलिदानी
सोच रहे होंगे हम सबकी व्यर्थ गयी कुर्बानी,
जिस धरती को तन की देकर खाद खून से सींचा
अंकुर लेते समय उसी पर किसने जहर उलीचा |" [17]

उन्होंने साम्प्रदायिकता की संकुचित भावना के परिणाम को व्यक्त करते हुए लिखा है हिंदुस्तान तो एक घर था, परन्तु भाईचारे की संकुचित भावना ने इस घर को उजाड़ कर रख दिया | डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने साम्प्रदायिक दंगों की पृष्ठभूमि पर लिखा की-

"भाई की गर्दन पर भाई का तन गया दुधारा,
सब झगडे की जड़ है पुरखों के घर का बँटवारा
एक अकड़कर कहता है, अपने मन का हक़ ले लेंगे
और दूसरा कहता तिल भर भूमि न बँटने देंगे
पंच बना बैठा है घर में फूट डालने वाला
मेरा देश जल रहा है कोई नहीं बचाने वाला |"[18]

प्रगतिवादी कवि 'सुमन' इन सांप्रदायिक दंगों को शोषकों का छल – छन्द मानते है | उनके अनुसार शोषक वर्ग शोषितों का खून चूसने के लिए दंगों को उकसाते है और स्वयं लाभान्वित होते है –

"ये छल-छन्द शोषकों के है, कुत्सित ओछे गन्दे
तेरा खून चूसने को ही ये दंगों के फंदे |"[19]

साम्प्रदायिकता का प्रमुख कारण धार्मिक संकुचित भावना है | सभी धर्म अपने-अपने स्थान पर श्रेष्ठ है परन्तु जब समाज सर्व-धर्म संभव के आदर्श से हट जाता है तब हिंसाचार बढ़ता है-

"धर्म घृणा की ज्वाला में जल भुनकर
आज मात्र शरणार्थी बन गया |"[20]

यह एक सच्चाई है की महात्मा गाँधी की हत्या साम्प्रदायिकता की भावना का ही परिणाम थी इसलिए नागार्जुन साम्प्रदायिक प्रवृत्ति पर आक्रोश व्यक्त करते हुए यह प्रतिज्ञा करते है की –

"हाँ बापू ! मैं निष्ठापूर्वक आज शपथ लेता हूँ
सम्प्रदायवादी दैत्यों के विकट खोह जब तक खंडहर न बनेंगे
तब तक मै इनके खिलाफ लिखता जाउंगा |"

यह निर्विवाद है कि साम्प्रदायिकता की संकुचित भावना का परिणाम आज भी भारत भोग रहा है | निरंतर साम्प्रदायिक संघर्ष बंधु भाव में बाधक है | तो साथ ही भारत के विकास में रूकावट बन गया है | यही कारण है की राष्ट्र के प्रती प्रतिबद्ध प्रगतिवादी कवियों ने साम्प्रदायिकता की संकुचित प्रवृत्ति पर अपनी लेखनी के माध्यम से तीक्ष्ण प्रहार किया है |

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

3	बलिपथ के गीत -	जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद',	पृ. 90
4	रूपतरंग-	रामविलास शर्मा,	पृ. 24
5	तारापथ -	सुमित्रानंदन पंत,	पृ. 143

6	जीवन के गीत -	शिवमंगल सिंह 'सुमन',	पृ. 33
7	लोक और आलोक -	केदारनाथ अग्रवाल,	पृ. 83
8	धरती -	कवि त्रिलोचन,	पृ. 64
9	अजेय खंडहर -	रांगेय राघव,	पृ. 115
10	निम के पत्ते -	रामधारी सिंह 'दिनकर',	पृ. 14
11	नागार्जुन रचनावली – खंड 1 -	सं. शोभाकांत,	पृ. 100
12	युगधारा -	नागार्जुन,	पृ. 70
13	सामधेनी -	रामधारी सिंह 'दिनकर',	पृ. 29
14	हुँकार -	रामधारी सिंह 'दिनकर',	पृ. 71
15	स्वर्ण किरण -	सुमित्रानंदन पंत,	पृ. 35
16	हंस माला -	नरेन्द्र शर्मा,	पृ. 10
17	आज के लोकप्रिय कवि शिवमंगल सिंह 'सुमन' -	डॉ. आनंद प्रकाश दीक्षित,	पृ. 85
18	विश्वास बढ़ता ही गया -	शिवमंगल सिंह 'सुमन',	पृ. 49
19	पूर्ववत -	शिवमंगल सिंह 'सुमन',	पृ. 52
20	समय देवता दूसरा सप्तक -	नरेश मेहता,	पृ. 137

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

२२. हिंदी कथा साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. बेबी कोलते

शरदचंद्रजी पवार महाविद्यालय,

जेजुरी,

अध्यक्ष, हिंदी विभाग

'हिंदी कथा साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव' इस विषय पर चर्चा करते समय भारत में राष्ट्रीय एकात्मता की्या आवश्यकता है? उसी प्रकार साम्प्रदायिक सद्भाव की्या आवश्यकता है? इस पर विचार करना बहुत ही प्रासंगिक है। जैसे राष्ट्रीय एकात्मता जरूरी है, बिल्कुल वैसे ही साम्प्रदायिक सद्भाव जरूरी है। राष्ट्र के प्रति होनेवाली निष्ठा यह राष्ट्रीय एकात्मता है। अलग-अलग जाति, धर्म या गुट के लोगों की अलग-अलग प्रकार की विचारसरणियाँ होती है।

देश की विशेषता है अनेकता में एकता। देश में अनेक जातियों, धर्मों, पंथों, भाषाओं, प्रांतो और विविध व्यवसायों के लोग रहतें हैं। यह है भिन्नता और जहाँ भिन्नता होती है, वहाँ वाद-विवाद होते हैं। भिन्नता को जोड़ने के मार्ग है राष्ट्रीय एकात्मता। इसके साथ-साथ और भी कई मार्ग है। जैसे - मूर्ति, नृत्य, चित्र, संगीत, क्रीडा और साहित्य। जब भारत की मैंच इंग्लंड या पाकिस्तान के खिलाङ्क चलती है तो वहाँ हमें राष्ट्रीय एकात्मता दिखायी देती है। जब लता मंगेशकर गीत गाती है तो मुस्लिम व्य्ति यह नहीं कहता कि मैं महमद रङ्गी को सुनूँगा। यह भाव उनके मन में नहीं आता। देश में अनेक धर्म के लोग रहते हैं। सीख, ईसाई, हिन्दू, मुस्लिम, ख्रिश्चन प्रत्येक धर्म की अपनीं एक धारणा होती है। किसी भी जाति-धर्म के लोगों के मन में वैमनस्य या संघर्ष न हो इसलिए सद्भाव की आवश्यकता होती है। व्य्ति किसी भी जाति-धर्म या वर्ण का हो किसी के प्रति मन में दुजा भाव या जहर न पालना यह सद्भाव है।

'वसुधैव कुटूम्बं' यह राष्ट्रीय एकात्मता है। भारत में विभिन्न जाति-धर्म के लोग रहते हैं। ङ्कि र भी आपस में सामंजस्य है, यह राष्ट्रीयता ही है। संत ज्ञानेश्वर ने कहा है - 'हे विश्वची माझे घर।' कहा जाता है - 'वैष्णव जन तो तेणे कहिए, जो पीर पराई जाने रे।' जो दूसरों की पीड़ा जानते है, उनके मन में सदैव अच्छा भाव रहता है। जब आसाम या कश्मीर में कुछ दुर्घटना होती है तो उसकी संवेदना कन्याकुमारी तक पहुँचती है, यह है राष्ट्रीयता।

कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है -

'वियोगी होगा पहला कवि, आहत से उबजा होगा गान।

उमड़कर आँखों से चुपचाप, वहीं होगी कविता अनजान।'

महादेवी वर्मा ने कहा है - 'वेदना ही मेरी कविता की जन्मदात्री है।' राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव में भी यही होना चाहिए।

मैंने अपना यह आलेख चुनिंदा कथासाहित्य में सीमित रखा है। अज्ञेय की 'शरणदाता' कहानी १९४७ के साम्प्रदायिक दंगों, देश के विभाजन एवं शरणार्थियों पर लिखी गई है। कहानी की समस्त घटनाओं को भाव और विचार के कई स्तरों पर गूँथा गया है। कहानी के दूसरे स्तर में बार-बार

परिस्थितियों ङ्कें पड़कर ङ्कानवीय विवेक पराजित होता हुआ लगता है, पर लेखक उसे किसी दूसरे स्तर पर उदित होता दिखाकर आस्था को समाप्त नहीं होने देता। जब तमाम लोग मानवीय विवेक को खोने लगते हैं तब वह रङ्काकुद्दीन में विद्यमान रहता है, जब वे हारने लगते हैं, तो उनके मित्र शेख साहब उस विवेक को शरण देते हैं, पर जब वे भी पराजित होने लगते हैं तो जेबुन्निसा के माध्यम से यह मानव विवेक अभिव्य्रत पाता है। कहानी में जेबुन्निसा इसी विवेक का प्रतीक है।

देश विभाजन और साम्प्रदायिक दंगों के कारण देवेन्द्रलालजी रङ्काकुद्दीन का आश्वासन पाकर वही रह जाता हैं लेकिन मुहल्ले का विषाृत वातावरण द्वेष और घृणा की चाबुक से तड़ङ्काड़ाते हुए हिंसा के घोडे देखकर रङ्काकुद्दीन देविन्दरलाल का अपने मित्र शेख अताउल्लाह के यहाँ प्रबंध कर देते हैं। परंतु एक दिन शेख साहब देवेन्द्रलालजी के खाने में जहर मिलाते हैं। शेख अताउल्लाह की बेटी जेबुन्निसा खाने के डिब्बों में ङ्कुलकों की तह के बीच कागज की एक चिट्ठी लिख के भेज देती है। उसमे लिखा हुआ है - ''खाना कुत्ते को खिलाकर खाइएगा''[१] जेबुन्निसा मुस्लिम होते हुए भी हिन्दू धर्म के देविन्दरलाल को अगाह करके उसकी जान बचाती है। उसके मन में हिंन्दू धर्म के प्रति कोई दुराभाव नहीं है, ऐसा न होता तो्या देविन्दरलाल की जान बच जाती?

एक दिन देविन्दरलाल को लाहौर की ङ्कुहरवाली चिठ्ठी ङ्किलती है, उसङ्कें लिखा था - ''आप बचकर चले गए, इसके लिए खुदा का लाख-लाख शुक्र है... अब्बा ने जो किया या करना चाहा उसके लिए ङ्कें ङ्काँङ्का ङ्काँगती हूँ और यह भी याद दिलाती हूँ कि उसकी काट ङ्कैंने ही कर दी थी।..... आपके ङ्कुल्क ङ्कें कोई अल्पसंख्यक ङ्कजलून हो तो याद कर लीजिएगा। इसलिए नहीं कि वह ङ्कुसलङ्कान है, इसलिए कि आप इन्सान है।''[२]

इस कथन से स्पष्ट होता है कि जेबुन्निसा के ङ्कन ङ्कें कोई हिन्दू या ङ्कुस्लिङ्क नहीं। उसने जो कुछ किया, ङ्कानवतावादी दृष्टि से किया, जो ङ्कनुष्य होने के नाते सबको करना है।

प्रेमचंद की 'बौड़म' कहानी का धर्म-निरपेक्ष पात्र बौड़म हिन्दू धर्म का सम्मान करने के लिए न केवल कसाइयों के हाथों से गाय मोल लेकर हिन्दुओं को देता है अपितु जब उसके घर के लोग गाय की कुर्बानी कर देते हैं तो उसका प्रायश्चित ङ्ककीरों को खाना खिलाकर करता है। वह कहता है - ''मेरे घर कुर्बानी हुई। मैंने हरचंद बावेला मचाया, पर मेरी कौन सुनता है? उसका कङ्कारा (प्रायश्चित) मैंने यह अदा किया कि अपनी सवारी का घोड़ा बेचकर ३०० ङ्ककीरों को खाना खिलाया और तब से कसाइयों को गायें लिये जाते देखता हू तो कीमत देकर खरदी लाता हूँ, इस व्रत दस गायों की जान बचा चुका हूँ। वे सब यहाँ हिंदुओं के घरों में हैं।''[३] दूसरों के धर्म का आदर करना ही सद्भाव है। जो भाव अपने धर्म के प्रति है वही भाव अन्य धर्मों के प्रति होना चाहिए। उ्रत कथन से स्पष्ट होता है कि बौड़म कुरितियों के खिलाङ्क है।

बौड़म के चाचा साहब का एक चमारिन से ताल्लुक होनें के कारण दो बच्चे पैदा हुए थे। एक लड़का और एक लड़की, चमारिन लड़की को गोद में छोड़कर मर जाती है। तब दोनों बच्चों की हालत उन्हीं के घर में यतीमों जैसी हुई है। इस संदर्भ में बौड़म कहता है - ''उनको खाने-पहनने को भी न मिलता। बेचारे नौकरों के साथ खाते और बाहर झोंपड़े में पड़े रहते थे। जनाब, मुझसे यह न देखा गया।

मैंने उन्हें अपने दस्तरखान पर खिलाया और अब भी खिलाता हूँ। घर में कुहराम मच गया। जिसे देखिए मुझ पर लोरियां बदल रहा है, मगर मैंने परवाह न की आखिर है वह भी तो हमारा ही खून।''[४] इस कथन से प्रतित होता है कि बौड़म के मन में मात्र करूणा, इन्सानियत और आत्मियता है। इन्सान को इन्सान होने के नाते जिन गुणों की आवश्यकता होती है वे सारे गुण बौड़म में मौजूद हैं। उसके व्यवहार से यही प्रतित होता हैं कि धर्म का सम्बन्ध मात्र मनुष्य और ईश्वर से है। उसके मन में हिन्दूओं के प्रति कोई आपसी द्वेष-भावना नहीं है। वह दोनों को समान मानता है। इसलिए तो वह इतना बड़ा साहस जुटा पाया। उसका मानना है, मनुष्य हिन्दू हो या मुस्लिम वह तो इन्सान ही है।

रामवृक्ष बेनीपुरी का रेखा चित्र 'सुभान खाँ' में सुभान खाँ हिन्दू-मुसलमानों के बीच भाईचारा बनाये रखने के लिए जीवनभर जुझते हैं। उनके लिए भारतीय होना गर्व की बात है। वे धार्मिक समता एवं भारतीय एकता के पक्षधर हैं। उनका मानना है कि हिंदू-मुसलमान भाई-भाई है। अतः दोनों ने भाईचारे के साथ रहना चाहिए। इस भाईचारे के लिए स्वयं सुभान खाँ जीवनभर जूझते रहे। जब वे हज की यात्रा से लौटते हैं तो लाया गया प्रसाद सभी को बड़े प्यार से देते हैं। उनकी विनम्रता और सज्जनता सबको एकसाथ बाँध के रखती है, लेकिन आए-दिन हिंदू मुस्लिम दंगों के अखड़ों ने प्रेम, भाई-चारा और सहृदयता के स्थान पर घृणा, विरोध और नृशंस हत्या को अपना लिया। मुसलमान जवान चाहते थे कि मस्जिद में गाय की कुर्बानी देंगे। परंतु सुभान खाँ कड़ा विरोध करते हैं। वे लोगों को समझाते है कि गाय को मारना मजहब नहीं है। लेकिन वातावरण ऐसा निर्माण हुआ है कि कोई किसी की बात मानने को तैयार नहीं है। यह देखकर सुभान खाँ कहता है - ''मैं मस्जिद में चल रहा हूँ। पहले मेरी कुर्बानी हो लेगी, तब गाय की कुर्बानी हो सकेगी।''[५] इस कथन से स्पष्ट होता है कि सुभान खाँ मानवीय करूणा की मूर्ति है। जिसके रोम-रोम में प्रेम और भाई-चारे का संदेश दृष्टिगत होता है।

संदर्भ -

१) कहानी विविधा, संपादक - डॉ. देवीशंकर अवस्था, पृ. १२९

२) वही, पृ. १३१-१३२

३) प्रेमचंद की ५१ अनमोल कहानियां, प्रकाशक - मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ. ४८८-४८९

४) वही, पृ. ४८८

५) गद्य ङ्कु लवारी, प्रकाशन, राजपाल एण्ड सन्स-दिल्ली, पृ. ९६

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

23. "गजल साहित्य मे ंराष्ट्रीय एकता एव ंसाम्प्रदायिक सद्भाव"

डॉ.एस.पी.मिश्र
हिंदी विभाग प्रमुख
प्रा.रामकृष्ण मोरे विद्यालय आकुर्डी
पुणेः 411044

हिंदी गज़ल का कथ्य अंत्यत व्यापक है। उसमें हमें जीवन के विविध आयाम परिलक्षित होते है। सामाजिक, राजनैतिक, प्रेम विशयक, आर्थिक , धार्मिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक बोध के अलावा राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सद्भाव, जीवनदर्शन और परिवर्तन की चाह, व्यवस्था विरोध, पुलिस विभाग की जुल्म, अंधविष्वास और रूढिविषेष आदि अनेक बातों की अभिव्यक्ति हुई हैं। हिंदी गज़लकारोंने अपनी गज़लो में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव की अभिव्यक्ति की हैं।

हिंदी के नये गज़लकार पादराम शर्मा ने अपनी गज़लों के माध्यम से एकता और सामंजस्य की भावना को वाणी प्रदान की है। इनकी धारणा है कि देश में कभी कोई अलगाव की बातें नहीं होनी चाहिए। प्यार एवं अपनापन के बिखराव की बातें नहीं होनी चाहिए। आपसी टकराव खत्म कर देनी चाहिए। देश में लोगो के बीच आपसी विश्वास निर्माण हो दुराभाव नष्ट हो जाना चाहिए।

"फिर भी कोई कहीं अलगाव की बातें न हों।
फिर कहीं भी आपसी टकराव की बातें न हो।"

जो लोग देश की एकता और अखंडता को नष्ट करने पर तुले है उनका हृदय पाषाण की तरह कठोर बन गया है। वे शैतान की तरह जी रहे हैं। वो अपनी काली करतूतों से देश को बरबाद कर रहे है। वे अपने ही पैरोपर कुल्हाडी मार रहे हैं। ऐसे लोगों को अवधकिशोर सक्सेना यह समझाने की कोशीश करते है कि धर्म और जाति से बढकर राष्ट्रहित होता हैं। –

"वे जी रहे क्यों भला शैतान की तरह
उनके हृदय क्यों हो गये पाषाण की तरह।
धर्म और जाति से बडा है राष्ट्रहित, सखे
हर बात सोचो समझो, इंसान की तरह।।"

अवधकिशोर सक्सेना एक ऐसे गज़लकार है जिन्होंने देश की एकता और सामंजस्य की भावना को अपनी गज़लो के माध्यम से सशक्त स्वर प्रदान किया हैं। पंजाब में खलिस्तान को लेकर जो आतंकवाद फैला था उसका परिणाम यह हुआ की आम आदमी उसका शिकार बना ही, वह आतंकवाद प्रधानमंत्री तक को खागया। पंजाब में होने वाले अत्याचार और अनाचार को देखकर आतंकवादियों को संबधित करते हुए अवधकिशोर सक्सेना ने लिखा है कि,

"नानक की आत्मा करती हाय हाय
दीनों का संहार, आँख भिगो गया।
भारत माँ हर हिंदुस्थानी की माँ है,
आतंकवादीयों का विवेक क्यों सो गया।"

देश के लोगों का आपस में युँ कटे कटे रहना देश की एकता और अखंडता के लिए घातक है। एकता विकास की कुँजी हैं। जिस राष्ट्र में एकता की भावना नहीं होती वह राष्ट्र बर्बाद हो जाता है। इशराक बिलरानी ने अपने गज़लो मे राष्ट्रीय एकता को महत्व दिया है। उनकी धारणा है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश से प्यार होना चाहिए। देशहित के लिए त्याग भावना होनी चाहिए। देश के लिए जीना और देश के लिए मरना यह प्रत्येक व्यक्ति का धर्म होना चाहिए।

“हमारी एकता का विश्व में ऐलान हो जाये,
नजर जिस मुल्क पे जाये वो हिंदूस्तान हो जाये।”

हिंसा से किसी भी समस्या का ही नही होता। समस्याओं को सुलझने के लिए देश को बरबाद करना जरूरी नही है। ऐसी हरकतों से आपसे में नफरत की भावनाएँ बढेंगी। हमें इस बात को हमेशा याद रखना चाहिए कि हम सब किसी भी धर्म या प्रांत के क्यों न हों सबसे पहले हम सब हिंदूस्तानी हैं। अतः हमारे बीच एकता और सामंजस्य का होना जरूरी है। इस बात को इश्वरचंद्र श्रीवास्तव ने ही अपनी एक गज़ल में इस तरह व्यक्त किया है –

“मसले हल नहीं होते,कभी खूनो–खराबे से।
चमन को क्या मिटाते है, गिला कर कुछ जमानें से ।”

आतंकवाद के कारण मनुष्य का जीवन डरावना हो गया है। आतंकवादी दूसरो के हाथ का खिलौना बनाकर देशवासियों को मौत के घाट उतार देते है। उन्हें यह सोचना चाहिए कि हमारे हाथो में बंदूके थमाने वाले कौन है? यदि वे नही सोचेगे तो वे कभी इस आग में जलकर नष्ट हो जायेगें। अतः किसी के बहकावे मे आकेर अपना तथा देश का अहित नहीं करना चाहिए :–

“ जीवन के सपने मत देखो इन हत्यारी रातों मे,
अपनी जान गँवा बैठोगे तुम भी बातों बातों में।”

देश में धर्म के नाम पर होने वाले विवादों के कारण भी देश की एकता और सामंजस्य मे बाधा निर्माण होती है। देश की अखंडता को चोट पहुँचती हैं। हमें यह नही भूलना चाहिए कि हिंदू हो या मुसलमान सभी इस देश के नागरिक हैं। इसलिए मज़हबी झगड़ो में उलझना नहीं चाहिए। आज हिंदू या मुसलमान होते की उतनी आवश्यकता नही है जितनी इंसान होने की। यदि मनुष्य कुछ और न होकर केवल इंसान हो जाये तो सारे विवाद अपने आप ही समाप्त हो जायेगें।

:–“ काश ऐसी भी मोहब्बत हो कभी इस देश में
मेरे घर उपवास हो जब तेरे घर रमजान हो।
मजहबी झगडे मे अपने आप सब मिट जायेगें
और कुछ होकर न गर इंसान बस इंसान हो।।”

आपसी सद्भाव और सामंजस्य देश की उन्नती के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके आभाव देश में देश पतन की ओर बर्बाद की ओर बढता है। पराए मुल्क ऐसी परिस्थितीयों से लाभ उठाते है, हमें लडाकर तमाशा देखते है। अतः जरूरी है कि :–

“ मेरे दुख–दर्द का तुझ पर हो असर कुछ ऐसा,
मैं रहूँ भूखा तो तुझसे भी न खाया जाये।
जिस्म दो हो के भी दिल एक हो अपने ऐसे
मेरे आँस तेरी पलकों से उठाया जायें।।”

आज के इस अशांत एवं भयावह वातावरण में एकता और सामंजस्य निर्माण करना अत्यंत आवश्यक है। जिसमें आपस में सद्भाव निर्माण हो सके राष्ट्रभिमान निर्माण हो सके। अतः लोगो के दिलों से नफरत की भावना को खत्म करना जरूरी है। लागो को हिंसा, घृणा एवं अन्याय की भावना से मुक्त कर देश में एकता और सामंजस्य निर्माण करने की आवश्यकता है। सुनिल त्रिवेद़ी ने अपनी एक गज़ल में लिखा है कि :–

“क्या किसी देवेश की परिवेश की च़र्चा करें। स्वर्ग से बेहतर बनाये आज भारत भुमि कि।
आईये मिल कर के अपने देश की चर्चा करें।। और फिर माँ के सुनहरे अेब की चर्चा करें।।”

इस तरह हम देखते है कि हिंदी गज़लो में राष्ट्रीय एकता और सामंजस्य के भावों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। गज़लो ने अपनी गज़लो की माध्यम से एकता और सामंजस्य के महत्व पर प्रकाष डाला है और यह समझानें की कोषीष कि है के विकास के लिए एकता जरूरी है। प्रत्येक व्यक्ति में राष्ट्रभावना होनी चाहिए।

प्राचीन काल से ही हमारा देश धर्मप्रदान देश रहा है। धर्म मुलतः उदार एवं उदात्त भावों से परिपूर्ण होता है। उसमें किसी प्रकार की संकीर्णताओं की स्थान नहीं होता। डॉ. इकबाल के शब्दों में कहा जाये तो :— " मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।" किंतु समय के साथ साथ धर्म का उदात्त स्वरूप भी नष्ट होता चला गया। सडी गली रूढीयों, जीर्ण—जीर्ण परम्पराओं, आडम्बरों और धर्म के ठेकेदारो ने धर्म को विकृत बनाकर रख दिया। आज धर्म के क्षेत्र में अनेक विकृतियाँ निर्माण हो गई है। धर्म के नाम पर ढकेस्लो बाजी स्वार्थी मनोवृत्ति धार्मिक स्थानों पर होने वाले अनाचारों एवं अत्याचारों ने कई ताह की विसंगतियों को जन्म दिया है।

ओमरायजादा ने अपनी गज़ल में लिखा है कीः—

"धर्म पर इतने मतातूर हो गये,
इश—बंधन के कई तुकडे हो गये।।"

धर्म के नाम पर दंगे फसाद होते रहते है। रोज खून बहाया जा रहा है। धर्म की संकीर्णता से समाज का वातावरण विशाक्त बन गया है।

हिंदी के कई गज़लकारोंने साम्प्रंदायिक सद्भाव को कथ्य के रूपमे अपनाया है। जहीर कुरेशी को 'राम और रहमान' में कोई अंतर नही दिखाई देताः—

"आपको राम की और मेरे रहमान की
शक्ल मुझको सदा एक सी मिली है।"

छोनो एक है इनमें अलगाव नही है। जब तक यह भावना दोनों साम्प्रंदायों के बीच नही होती तब तक बीच की दूरियाँ नष्ट नहीं होंगी। साम्प्रंदायिकता के कारण ही धर्म और मजहब के बीच दिवार खडी हो गयी है। इसी दिवार को गिराना आवष्यक है। रमेष षेखर अपनी गज़ल में इस दिवार को गिरने की चर्चा की है।

"धर्म मजहब का एक आँगन है, ये कैसा पर्दा,
आइए बीच की दिवार गिरा दि जाए।।"

हिंदी के सभी गज़लकारो नें अपनी गज़लो में इंसानी धर्म निर्माण करने की बात कहीं है। क्योंकी आज के दौर में हिंदू या मुसलमान होना आवष्यक नही हैं, बल्कि इंसान होना जरूरी है। लोगो के दिलो में बढ़ती हुई नफरत को केवल प्यार मोहब्बत से ही मिटाया जा सकता है। इसीलिए बेकल उत्साही अपनी गज़ल में इंसान की बात कहते है।

"मुझे बाद में बनाना,काई हिंदू या मुसलमान।
मुझे पहले एक इंसान बडे प्यार से बना दो।।"

ऐसे माधव मधूकरने अपनी गज़ल में राश्ट्र और मानवता को आहत करने वाली साम्प्रंदायिक ताकतों की चर्चा की है, इसाई बनकर जीना नही चाहते, वे मात्र इंसान बनकर जीना चाहते हैः—

"हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई तो हमें बनना नहीं,
यार जिने दो फक्त इंसान ही बनकर हमें।।"

मंदीर और मस्जिद को लेकर लोग आपसमें लडते है जिसके कारण इंसानियत आहत होती है। आपसी सद्भाव और अपनापन नष्ट होता है। लोगों की यह बढेंगी हरकतों को देखकर प्रार्थना स्थल भी मौन हो जाते हैः–

"मजहब की खातीर बस्ती में लोग लडे है जिस दिन से,
मंदीर तब से मुक खडा है, मस्जिद है बीमार सी।।"

भारत वर्ष की धर्मभुमि में साम्प्रंदायिकता के बीज दिन–प्रतिदिन पनपते जा रही है। शांति का संदेश देनेवाले इस देश में ही अशांति का वातावरण निर्माण हो गया है। सारा देश साम्प्रंदायिकता को जला रहा है। यदि हमने इसे समय पर ही नही रोका तो यह आग हमारे हरे भरे चमन को तबाह कर देगी। इस बात को समझते हुए आजाद कानपूरी अपनी एक गज़ल में लिखते हैः–

"आप अपना इस कुछ प्रगतीशीलता
वर्ना फिर रूढियों में जक़ड जायेगें।"

हिंदू मुस्लिम के बीच आपसी सद्भाव बढे, भाईचारा निर्माण हो यह जरूरी है। अतः एक दूसरे के प्रति स्नेह भाव जरूरी है। दोनो की एकता और सामंजस्य पर ही देश की एकता निर्भर हैः–

"अब तो एक ऐसा वतन मेरा तेरा ईमान हो
इक तरफ गीता हो जिसमें इक तरफ कुरान हो।
काश ऐसी भी मोहब्बत हो कभी इस देश में
मेरे घर उपवास हो जब तेरे घर रमजान हो।।"

नीरज के मतानुसार भारतवर्ष को यदि सम्पन्न और खुशहाल बनाना है तो एक ऐसे मजहब को चलाना जरूरी है। जिसमें इंसान को इंसान बनाने की बात हो। कुछ ऐसे फूलों के पौधो को विकसित करने की आवश्यकता है जो न केवल अपने बल्कि पडोसी के घर को भी महका देः–

"अब तो मजहब कोई ऐसा भी चलाया जाये।
जिसमें इंसान को इंसान बनाया जाये।
जिसकी खुशबू से महक जाये पडोसी का भी घर
फूल इस किस्म का हर सिम्त खिलाया जाये।।"

छेश में रहनेवाले हिंदू मुस्लिम सिख इसाई सब हिंदूस्तानी है। सब एक है, सब का खून एकसा है। जो इन लोगों के बीच नफरत एवं भेदभाव निर्माण करते है वे देशद्रोही है। प्रत्येक धर्म ने हिंसा और नफरत को हेय बताया है। प्रत्येक धर्म मनुष्य को भाईचारा एवं प्रेम का संदेश देता है। जन्म और मरण सबके साथ जुडे हुए है। अतः आज के दौर में जाति पाँति की दिवारों को तोडना अत्यल्प आवश्यक है।ः–

"हिंदू, मुस्लिम, ईसाई सब हिंदूस्तानी है
खून एक, नहीं किसी की अलग कहानी।
जनम मरण में सभी एक से आते जाते
जाति पाँति की दिवारें सब है बेमानी।।"

उपदेश शंखघर ने अपनी गज़लों में सांम्प्रदायिक सद्भाव की बात कही है। इनकी घातक है कि राम, रहमान, ईसा और नानक थे अलग–अलग नहीं बल्कि एक ही आत्मा के चार नाम है।ः–

"हम न हिंदू न सिख मुसलमान है।
दोस्तों कुछ नहीं हमतो इंसान है।

राम—रहमान—ईसा और नानक सभी
एक ही रूह के चार उन्वान है।।”

धार्मिक संकीर्णता और सांम्प्रदायिकता को बढावा देने वालों को भी हिंदी गजलकारों ने अपनी गज़लों के माध्यम से सचेत किया है। अदम गोंडवी की मान्यता है कि इतिहास के जो पाव अत्याचारी थे, उनके अत्याचारों को कुरेदकर सांम्प्रदायिक तनाव निर्माण करना उचित नही है। यदि हमें संघर्ष करना है तो अभाव और दरिद्रता के विरूध्द करना चाहिएः—

“हिंदू मुस्लिम के एहसास को मत छेडिए।
अपनी कुर्सी के लिए जज्बात को मत छेडिए।
छेडिए इक जंग, मिलजुलकर गरीबी के खिलाफ
दोस्त मेरे मजहबी नग्मात को मत छेडिये।।”

इस तरह हिंदी गज़लकारोंने अपनी गज़लों के माध्यम से धार्मिक विकृतियों पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि डाली है। सांम्प्रदायिकता के कारण देश और समज की क्या स्थिति हुई है उपर भी प्रकाश डाला है। लोगो के बीच मतभेद और नफरत पैदा करनेवाली असामाजिक तत्वों का पर्दाफाश की है। राजनीति हेतु धर्म का कौन दुरूपयोग किया जा रहा है उन्हे भी चित्रित किया है। लोगो को सावधान भी किया है। ये मतभेद तुम्हें तबाह कर देगें। सांम्प्रदायिक सद्भाव बनाये रखना अत्यंत आवश्यक है।

“संदर्भ ग्रंथ”

1. समकालीन हिंदी गज़लः— संपा.मधूर नज्मी पृ.55
2. वातावरण खराब हो चलाः— अवध किशोर सक्सेना पृ.15
3. वातावरण खराब हो चलाः— अवध किशोर सक्सेना पृ.39
4. निर्झर (हिंदी गज़ल विषेशांक) संपा.अखिलेश सक्सेना पृ.32
5. नविनत्म हिंदी गज़लेः— संपा.डॉ.रोहिताश्व अस्थाना पृ.27
6. बर्फ से ढका ज्वालामुखीः— विजयकुमार सिंघल पृ.75
7. नीरज की पातीः— गोपालदास सक्सेना ‘नीरज’ पृ.125
8. नीरज की पातीः— गोपालदास सक्सेना ‘नीरज’ पृ.130
9. बहुरंगी हिंदी गज़लेः— संपा. डॉ.रोहिताश्व अस्थाना पृ.157

10 आधुनिक हिंदी गज़ल और अधुनिकता बोधः— प्रतिमा सक्सेना पृ.228

11.चाँदनी का दुखः— जहीर कुरेशी पृ.42

12.हिंदी की सर्वश्रेष्ठ गज़लेंः— संपा.डॉ.गिरिराजशरण अग्रवाल पृ.143

13.गज़लें ही गज़लेः— संपा.डॉ.शेरजंग गर्ग पृ.173

14.आग का रागः— माधव मधुकर पृ.82

15.धूप के हस्ताक्षरः— ज्ञानप्रकाश विवेक पृ.36

16.बहुरंगी हिंदी गज़लेः— सं. डॉ.रोहिताश्व अस्थाना पृ.28

17.नीरज की पातीः— गोपालदास् सक्सेना ‘नीरज’ पृ.125

18.नीरज की पातीः— गोपालदास् सक्सेना ‘नीरज’ पृ.130

19. वातावरण खराब हो चलाः— अवध किशोर सक्सेना पृ.14

20.वातावरण खराब हो चलाः— अवध किशोर सक्सेना पृ.67

21.प्रसंगवश(हिंदी गज़ल विशेषांक) :— संपा.वेदप्रकाश अमिताभ पृ.98

24.मोहन राकेश की कहानिया में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा.चौधरी निलोफर महेबुब
हिंदी विभाग,
श्री शिवाजी महाविद्यालय,बार्शी.

देश की जनता को आजादी की लड़ाई में आश्वासन दिया गया था कि, देश मनुष्य और शोषण के जाल से मुक्त हो जाएगा और हर मनुष्य फिर वह किसी भी जाति, धर्म, रंग, वर्ण या हो वह हर समय समानता, स्वतंत्रता और बंधुता की भावना को हमेशा अनुभव करेगा।

"देश हमारा धरती अपनी, हम धरती के लाल, नया संसार बसायेंगे, नया इंसान बनायेंगे।" राष्ट्र ऐसी महाशक्ति है, जो राष्ट्र का निर्माण करनेवाली कोटि–कोटि देशवासियों की शक्ति का समाविष्ट रूप है। देश में विभिन्न जातियों–उपजातियों के व्यक्ति मिलकर एक राष्ट्र का निर्माण करते हैं। आज जातिवाद के सीमित घेरों को तोड़कर राष्ट्रीयता अन्तरराष्ट्रीय चेतना की ओर उन्मुख हो रही है, क्या जातिवाद का रूप प्रायरू धुँधला हो गया है। 'जाति' का अर्थ है–वंश अथवा कुलविशेश से सम्बध्द, व्यक्तियों का समूह।

देश में राष्ट्रीय एकता अखंडता में सबसे बडा बाधक तत्व सांप्रदायिकता हैं–सम्प्रदाय का अर्थ है, कुछ विशेष परम्पराओं और सिध्दान्तों के प्रति प्रर्वाग्रहपूर्ण दृष्टिकोन रखनेवाले जन–समुदायों को सम्प्रदाय संज्ञा दी जाती है। राष्ट्रविशेष में एक ही समय एकाधिक सम्प्रदाय विद्यमान रह सकते हैं। इसका जन्म कभी राजनीतिक, कभी सामाजिक और कभी आर्थिक मतभेदों के कारण होता है। "सांप्रदायिकता की आड में जनता के बीच घृणा, हिंसा, अशांति और दंगों और कर्फ्यू से जनजीवन को अव्यवस्था फैल रही है। उत्पादक कार्य को असंभव बनाकर लाखों लोगों की रोजी–रोटी पर हमला किया जा रहा है। मस्जिद विवाद, अलीगढ, मुरादाबाद, मुंबई के दंगे खालिस्तान की माँग, गुजरात और उडीसा में इसाइयों पर हो रहे हमले, गुजरात का व्यापक नरसंहार, राष्ट्र के लिए खतरा है। अपना हित साधनेवाली धर्म संस्थाओं के ठेकेदार पूँजीपति वर्ग और उनसे जुडे नेता ये सभी विभिन्न सांप्रदायों को उनकी संस्कृति की दुहाई देकर आपस में लड़वाते हैं।

भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष विविधता में एकतावाले राष्ट्र को सांप्रदायिकता में बाँटने का काम हो रहा है, "साम्प्रदायिक दंगे आज धार्मिक या जातीय उन्माद के कारण हो रहे है लेकिन वास्तविकता यह है कि कोई भी धर्म मूल रूप से संघर्ष की शिक्षा नहीं देता।" "साम्प्रदायिकता भय और घृणा की राजनीति करती है। खतरे का आविष्कार इसकी प्रमुख विशेषता है। धर्म खतरे में है, संस्कृति खतरे में है, अस्तित्व खतरे में है। आतंकवाद, सांप्रदायिक दंगों के मूल में इन्सानियत का विनाश है, जिससे हमें उभरना है।"

'मलबे का मालिक' में भारत–पाकिस्तान के विभाजन के कारण उत्पन्न भावना का निरूपण किया गया है। इस कहानी में विभाजन के नाम पर राजनैतिक हथकण्डों के बीच मनुष्य की विवशता का चित्रांकन अत्यन्त हृदयस्पर्शी ढंग से किया है। सन 1947 में देश विभक्त हुआ जिसमें मनुष्य की पाशविक वत्तियों ने ऐसा नग्न नत्य दिखाया कि मानवता भी थर्रा उठी। देश दो टुकडों में बँट गया जिससे मनुष्य की आस्थाएँ डगमगाने लगी। इन टुकडो से केवल देश का विभाजन नहीं, बल्कि लोगों के हृदय में स्थित प्रेम टुकडों में बँट गया जिससे उनमें पारस्परिक तनाव, आशंका, नरसंहार आदि का शिकार बने एक वयोवृध्द मुसलमान की कहानी मलबे का मालिक में प्रस्तुत हुई है।

साढे सात साल के पश्चात् अमतसर में हॉकी मैच के बहाने से भारत आये लाहौर के लोग अपने आत्मीयजन से मिलने का अनुभव करते हैं। भारत–पाकिस्तान में अलग हुए लोग विभाजन से पहले भाई–भाई की भॉति रहा करते थे। फिर भी लाहौर और अमृतसर के लोगों की बातों में अपनापन

दिखाई देता है–"जिस रास्ते से भी पाकिस्तानियों की टोली गुजरती, शहर के लोग उत्सुकतापूर्वक उसकी ओर देखते रहते। कुछ लोग अब भी मुसलमानों को आते देखकर आशंकित से रास्ते से हट जाते, जबकि दूसरे आगे बढ़कर उनसे बगलगीर होने लगते। ज्यादातर वे आगन्तुकों से ऐसे–ऐसे सवाल पूछते कि आजकल लाहौर का क्या हाल है। अनारकली में अब पहले जितनी रौनक होती या नहीं। पाकिस्तान में अब बुर्का बिलकुल उड गया है, यह ठीक है, एक–दूसरे के हालात जानने के लिए वे उत्सुक है।"[1]

भारत–पाकिस्तान विभाजन पर गनी बाबा का बेटा अमतसर का अपना नया मकान त्यागने के लिए तैयार नहीं था। जब गनी बाबा द्वारा उसे लहौर चलने के लिए दबाव डाला गया तो "वह जिद पर अडा रहा कि नया मकान छोडकर नहीं जाऊँगा यह अपनी गली है, यहाँ कोई खतरा नहीं है।"[2] गनी बाबा के पुत्र को जिन हिन्दुओं पर विश्वास था उन्हीं हिन्दुओं पर करवे पहलवान का साम्राज्य था उसी रक्खे पहलवान ने भाई–चारे का गला घोंट दिया वजह थी सिर्फ गनीबाबा का मकान प्राप्त करने की चाए।

गनी बाबा ने पहलवान से कहा कि "तू बता, रक्खे, यह हुआ किस तरह गनी किसी तरह अपने ऑसू रोककर बोला । तुम लोग उसके पास थे। सबमें भाई–भाई की–सी मुहब्बत थी। अगर वह चाहता, तो तुममें से किसी के घर में नहीं छिप सकता था।"[3]

यहॉ करवे पहलवाल पर गनीबाबा का अट्ट विश्वास था कि सब एक ही थे, पहलवान पर विश्वास कर वह अपने बेटे एवम् परिवार को बेझिझक छोड गया था। यहा एक मुसलमान का विश्वास था, कि वह हिंदु उसका अपना है।

जहॉ विभाजन की राक्षसी ज्वाला में साधुसिंह के तॉगे मे बैठे लोग अपनी जमीन–जायदाद को लेकर जल रहे है, वहॉ दूसरी तरफ साधुसिंह जैसे लोग भी जल–भुन रहे है, जिनके पास क्लेम करने के लिए न जमीन है और न ही जायदाद। क्लेम करने के लिए यदि उनके पास अपना कुछ है जिसे वे वापस प्राप्त करना चाहते हैं, तो वह है उनका घर, बीबी, आम का पेड, अपने सपने आदि की प्राप्ति चाहता है। "नौ रूपये महीने का वह मकान बरसों के परिचय के कारण अपना मकान ही लगता था। हीरा ने कितनी ही बार कहा था कि पराये घर में पेड लगा रहे हो, पाल–पोसकर एक दिन दूसरों के लिए छोड जाओगे। मगर तब यह कहॉ सोचा था कि वह घर इस तरह छूटेगा कि जिन्दगी भर उसके पास से गुजरना तक नसीब न होगा।"[4] वह अपने अतीत की यादो के सहारे अपना जीवन व्यतीत कर रहा है, वह उन यादों के सहारे जीवन जिने के लिए मजबूर हो जाता है, तो दूसरी ओर देश में स्वतंत्रता के पश्चात् जो भ्रश्टाचार पनप रहा है, उसका यथार्थ चित्र मोहन राकेश ने परमात्मा का कुल कहानी के द्वारा व्यक्त किया है। यहॉ एक बूढा सरकार अपने बेटे की विधवा एवम् उसके बच्चों के साथ सरकार से अपनी जमीन मॉगने सरकारी दप्तर में आया हुआ है।

"दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालों, जमीन के नाम पर तुमने मुझो जो गडढ़ा एलॉट कर दिया है, उसकी जगह कोई दूसरी जमीन दो । मगर दो साल से अर्जी यहॉ के दो कमरे ही पार नहीं कर पाई।"[5] देश आझाद तो हो गया लेकिन उनकी समस्याएँ बढने लगी है, पहले जैसी मानवियता सरकारी कार्यालयों में देखने को नही मिलती इसी कारण बूढा इमानदारी के पाठ पर कहता है, "तुम सब भी कुत्ते हो हम लोगों की हडियॉ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौकते हो। मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ। उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ और उसकी तरफ से भौंकता हूँ।"[6] कहानी में मानवीय मूल्यों और राष्ट्रीय निष्ठा से दर्शकों को जोडते है, स्वार्थ को त्याग कर उदात्त्त विचारों और नैतिक भावनाओं को बल देते है, जिससे नागरिकों में भ्रश्टाचार और अव्यस्था के विरूध्द खडे होने की भावभूमि

बन जाती है। आज हमारा देश निःसंदेह स्वतंत्र है और प्रजातंत्र शासन व्यवस्था से चल रहा विकास नहीं हो पा रहा है। आम आदमी की बेकारी और शोषण से त्रस्त है। सत्ता का संयोजन जनता की सुरक्षा और पोषण के लिय किया गया था, उसके शोषण के लिये नहीं। मेहनत श्रमिक करता है, पेट सत्ता का भरता है।

"क्लेम" कहानी के माध्यम से लेखक ने यह प्रश्न उठाया है कि, क्या व्यक्ति अपने पीछे छोडी हुई सब चीजों का सरकार से क्लेम कर सकता है? क्या व्यक्ति अपनी पत्नी, बच्चे उनकी यादे उनकी कल्पना उनके स्पर्श आदि का क्लेम पर सकता है? क्या व्यक्ति अपनी पत्नी, बच्चे उनकी यादे उनकी कल्पना उनके स्पर्श आदि का क्लेम का सकता है? साधुसिंह टॉगा चलाने का व्यवसाय करता था, वह भी विभाजन की क्रूरता का शिकार बना हुआ था। इनकी जायदाद, आम का पेड, हीरा, अपनेपन की गन्ध आदि को स्मृतिपटल पर अंकित कर रहा था। उसकी इस जायदाद कह कोई क्लेम नहीं कर सकता। देश का विभाजन होने से लोगों को अपनी समस्त जमीन जायदाद छोडकर भागना पडा था। स्वतंत्रता के पश्चात् इस विभाजन के शिकार हुए लोगो ने सरकार से क्लेम मॉगा इनमें से कुछ लोगों ने वास्तविक सम्पत्ति से दुगुनी–तिगुनी सम्पत्ति का क्लेम किया तो कुछ लागों ने वास्तविक सम्पत्ति का ही क्लेम भरा फिर भी बेईमानी करनेवाले एवम् न करनेवाले दोनों ही पक्ष दुःखी ही थे। ये सभी अभाव के कारण जैसे लाश बनकर मर–मरकर जीवन व्यापन कर रहे थे।

"परमात्मा का कुला" भी मोहन राकेश की अत्यंत सशक्त कहानी है। इसमें कुत्ते को सांकेतिक रूप दिया गया है। बेवफादार दफ्तरी कुत्तों को एक निम्नवर्गीय शोषित व्यक्ति पाठ पढाकर स्वयं को परमात्मा का कला बनाता है। इस कहानी में अर्जियों की निरर्थकता, दफ्तरी तौर–तरीको की बेईमानी कार्यवाही और दफ्तरों मे छायी अकर्मण्यता का वर्णन भी मिलता है। सरकारी तंत्र में हो रहा जनता का शोषण रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार एवम् गैरजिम्मेदारी पर सामान्य जनता का ध्यान आत्कृष्ट किया है। कहानी में सरकारी दफ्तर है, जहाँ विभाजन से सम्बन्धित समस्त मामलों को सुलझाया जाता है।

सरकार के अफसरों की जेब में रिश्वत की कमी न आ जाए तब तक वे कोई का नहीं करते। अतः वे यह कहकर टाल दिया करते हैं कि कल–परसों आना। राकेश जी दर्शाना चाहते है, कि सरकारी तंत्र में यदि आप रिश्वत देते हैं तो ही सरकारी अफसर आपके कार्य में दिलचस्पी रखते है। सरकारी अफसरों के इस प्रकार के कार्य से कथा–नायक सरकारी कर्मचारियों का विद्रोह करते हुए उन्हे जली–कटी सुनाने लगाता है। और नंगा होकर वहाँ तमाशा करना चाहता है, जिससे उनकी ऑखे खुले। वह यह भी प्रश्न करता है कि "महात्मा गॉधी ने आजादी क्या इसीलिए दिलवाई थी।" सरकारी दप्तर के बाहर ही वह न्याय माँगता है उसे कमिश्नर द्वारा न्याय मिलता है, जब वह दफ्तर से अपना काम पूरा करवाकर लौटता है, तो लोग उसकी ओर देखते है, जो उसको ही तरह कई दिनों से दफ्तर के चक्कर लगा रहे है, उन्हें संबोधित करते हुए बुढा कहता है, "चूहों की तरह बिटर–बिटर देखने से कुछ नहीं होता। भौंको–भौंको सब भौंको अपने आप सालों के कान फट जायेंगे ।"[7] विभाजन के पश्चात् देश के सरकारी कामकाजों में आए परिवर्तन एवम् विभाजन के कारण अपना समस्त गँवा चूके लोगों की तरफ ध्यानाकर्षित किया गया हैं। राकेश जी इस कहानी में वस्तुस्थिति ओर कुरूप यथार्थ का परिचय मात्र नहीं देते, बल्कि इससे उबरने का रास्ता भी दिखाते है। व्यक्ति में अंतर्निहित शक्ति का उद्घाटन और सत्य का पर्दाफाश करके राकेश जी ने हताश सामान्यजन को नई दृष्टि दी हैं।

संदर्भ –

1. मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियॉ–संपादक अनीता राकेश प.सं.224
2. मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियॉ–संपादक अनीता राकेश प.सं.229
3. वही, प.स.229
4. मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियॉ–संपादक अनीता राकेश प.सं.111
5. मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियॉ–संपादक अनीता राकेश प.सं.323
6. वही–प.सं.324
7. वही–प.सं.326

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

25. हिंदी महाकाव्यों में चित्रित सांप्रदायिक सद्‌भाव

प्रा. डॉ. प्रवीणकुमार न. चौगुले
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
श्रीमती कस्तुरबाई वालचंद महाविद्‌यालय, सांगली

हिंदी साहित्य में महापुरूषों के चरित्र को केंद्र में रखकर महाकाव्य लिखने की परंपरा है। इस परंपरा के अनुसार आधुनिक हिंदी कवियों ने युगपुरुष महात्मा गांधी के जीवन–कार्य से प्रेरित होकर महाकाव्य और खण्डकाव्य लिखे हैं। इन आधुनिक हिंदी महाकाव्यों और खण्डकाव्यों में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन–कार्य का, आचार–विचारों का चित्रण किया है। कुछ कवियों ने अपने महाकाव्यों में नायक के रूप में महात्मा गांधी का चित्रण किया है, जैसे महामानव (ठाकुरप्रसाद सिंह), जननायक (रघुवीरशरण 'मित्र'), गांधी–मानस (नटवरलाल 'स्नेही'), मानव (डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल'), दांडी कूच (श्री नलिनकांत भट्‌ट), गांधी पारायण (अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'), गांधी संवत्सर महाकाव्य (दुर्गादत्त त्रिपाठी)। इन महाकाव्यों में महाकाव्यकारों ने महात्मा गांधी जी को युग–पुरूषों की श्रेणी में रखकर उनके कार्य को गौरवान्वित किया है, साथ ही महात्मा गांधी जी के विचार निरंतर प्रेरणादायी रहेंगे ऐसा संदेश भी दिया है। यहाँ महाकाव्यकारों ने सांप्रदायिकता के संदर्भ में गांधी जी के विचारों को चित्रित किया है। अतः इन महाकाव्यों में महाकवियों द्‌वारा चित्रित गांधीजी के सांप्रदायिक सद्‌भाव के संदर्भ में अभिव्यक्त विचारों पर इस आलेख में प्रकाश ड़ाला गया है।

गांधीजी ने स्वराज्य की प्राप्ति एवं उसे कायम रखने के लिए देश के विभिन्न संप्रदायों में धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक एकता का होना आवश्यक माना है। गांधीजी का मानना था कि देश के विभिन्न संप्रदायों में एकता की स्थापना के लिए सब में आजादी से रोटी–बेटी व्यवहार होना ही चाहिए अथवा उनके भिन्न–भिन्न धर्मों और संस्कृतियों के भेद मिट जाने चाहिए। किसी एक ही धर्म की अथवा किसी भी धर्म का आधार न रखनेवाली संस्कृति निर्माण होनी चाहिए, यह आवश्यक नहीं है और इष्ट भी नहीं है। प्रत्येक जाति को अपनी–अपनी विशेषता कायम रखते हुए एकता करनी चाहिए।[1] अपने–अपने धर्म एवं संस्कृति की विशेषता को कायम रखते हुए अन्य विभिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार से ही एकता की स्थापना हो सकती है और ऐसी एकता देश की उन्नति के लिए अत्यावश्यक है।

सांप्रदायिक सद्‌भाव के संदर्भ में रफीक जकारिया का मत द्रष्टव्य है, ''गांधी कभी अप्रासंगिक नहीं हो सकते, क्योंकि उन्होंने ताउम्र जो मुद्‌दे उठाए और जिन मूल्यों का प्रसार किया, वे हमेशा जीवित रहेंगे। भौतिकवाद और हिंसा जितने बढ़ते जाएँगे, महात्मा गांधी की आवाज संघर्षरत इंसान के लिए सदिच्छा का अहसास कराती रहेगी। अपने सार्वजनिक जीवन की शुरूआत से ही उन्होंने सांप्रदायिक सद्‌भाव के लिए काम किया, खासकर हिंदू–मुसलमान एकता के लिए, क्योंकि उनका मानना था कि भारत को एक बनाए रखने का यही एक रास्ता है।''[2]

गांधीजी के मन में हिंदू–मुस्लिम दोनों के प्रति प्रेम–भावना थी। देश–विभाजन समय के भीषण दंगों में गाँव–गाँव जाकर शांति संदेश फैलानेवाले बापू का चित्रण 'लोकायतन' (पृ. 75) में किया गया है। नोआखाली के सांप्रदायिक दंगों के समय में हिंसक मुसलमानों को समझाते हुए करूणारूप गांधी जी के हिंदू–मुस्लिम एकता के पक्ष को 'श्री गांधी–चरित–मानस' के सप्तम सोपान में विद्‌याधर महाजन जी ने वर्णित किया है। भारत–पाक विभाजन के बाद प्रतिहिंसा स्वरूप जब दिल्ली में भी हिंदुओं द्‌वारा मुस्लिमों को मारा जा रहा था, तब बापू की तिलमिलाहट, हिंसा को

रोककर शांति का प्रयास 'गांधी—मानस' में अभिव्यक्त हुआ है। साथ ही हिंदू—मुस्लिम एकता के लिए बापू ने ईक्कीस दिनों का उपवास करने का निश्चय किया था। इस दृश्य को 'गांधी—पारायण' में भलभाँति चित्रित किया गया है।

गांधीजी ने देश—विभाजन का विरोध किया था। स्वतंत्रता आंदोलन के समय जब जिन्ना बँटवारे पर अडे थे तब गांधी जी ने उन्हें समझाने की कोशिश की। इसका चित्रण 'जननायक' सप्तविंश सर्ग—'तलवार की धार' में रघुवीर शरण 'मित्र' जी द्वारा किया गया है।

'मानव' महाकाव्य में भी देश विभाजन के प्रश्न पर 'गांधी—जिन्ना वार्ता' समय गांधी जी द्वारा जिन्ना को समझाने का दृश्य उपस्थित है –

भिन्न मसजिद और मंदीर, भेद अम्बर में कहाँ है,
भिन्न राम—रहीम हैं, पर भेद ईश्वर में कहाँ है।
एक मानव जाति है, दो धर्म हिंदू और मुसलिम,
रूप जल का एक है, पर वाष्प से है भिन्न कुछ हिम।[3]

'जननायक' महाकाव्य में ग्राम यात्रा दौरान सांप्रदायिकता के संबंध में गांधी जी के विचारों को बखूबी प्रस्तुत करने का प्रयास रघुवीर शरण 'मित्र' जी ने किया है –

बापू बोले, अरे हिन्दुओ! अमृत—कुन्ज के सरस बिहारी!
इस रसाल बन को मत नोचो, खूब महकने दो फुलवारी।
क्या हिन्दू का जाता बोलो ? क्या जाता है मुसलमान का ?
भला नहीं होता 'गीता' का, भला नहीं होता 'कुरान' का।।[4]

आगे इसी महाकाव्य में 'मृदुल विरोध' इस सर्ग में हिंदू—मुस्लिम भाईचारे तथा एकता के अमर यत्न में प्रयासरत रहने वाले पथिक गांधी जी को प्रकाशित किया गया है। साथ ही आत्माहुति देकर भी सांप्रदायिक एकता लाने की गांधी जी की उत्कटता को 'लोकायतन' में (पृ. 74) चित्रित किया गया है।

हिंदू—मुस्लिम एकता के लिए 'दांडी कूच' में चंडोलासर तीर पर बापू जी ने भाषण दिया था। हिंदू—मुस्लिम सब एकसाथ मिलकर ही स्वतंत्रता लेने के बापू पक्षधर थे –

भेदभाव ना हो अपने में। कौम कौम के बिच सपने मे।
सब मिल करैं प्रेम से सेवा। एकदूज से रखैं न भेदा।
हम सब हैं आपस में एका। जस वृक्षन के पात अनेका।
हम सब एक झाड़ के पत्ते। भारत माँ के हम सब बच्चे।
कहना जुदा सोइ परंपचँ स्वराज्य सबका शंक न रंचँ
हिंदू मुस्लिम रंकू राई। स्वतंत्रता सबके लिय भाई।
लेवैं तो सब मिल कर लेवैं। अन्य उपाय न सो पा लेवैं।[5]

गांधी जी सांप्रदायिक एकता को प्रस्थापित कर सर्व धर्म समन्वय की भावना के पक्षधर थे –

सर्वधर्म—समानता सत्याग्रही की मान्यता थी।
भाव जन—मन में जगाना था उसे इस साधना का।
सांप्रदायिक एकता ही द्वेष—हिंसा—नाशिनी थी।
सर्व—धर्म—समन्वयी था रूप उसकी भावना का।[6]

बापू हिंदू—मुस्लिम एकता के पक्षधर थे। पंचगाँव में एक मुस्लिम द्वारा बापू के हिंदू होते हुए एकता लाने के प्रयास पर सवाल किया गया। तब बापू ने जो उत्तर दिया वह मिसाल बन पड़ा है।

बापू के राम दशरथपुत्र राम नहीं हैं, वे तो निर्गुण राम है, जो घट–घट में व्याप्त हैं। बापू तो जगत्–कल्याण के लिए उसी निर्गुण राम को जपते थे –

बापू पड़े बहुत उलझन में, गहरा देखा विष जन मन में।
बापू ने उनको समझाया, राम नाम का भेद बताया।
बोले बापू राम हमारे, नहीं पुत्र दशरथ के प्यारे।
उसका है इतिहास नहीं कुछ, महि पर हुआ विकास नहीं कुछ।
वह अज्ञेय अजर अविनाशी, उसका कहीं न कावा काशी।
व्यापक ब्रह्म अनादि अज, बिरज अनीह अकाम,
जड़ चेतन में व्याप्त जो, है वह मेरा राम।[7]

दांडीकूच में सभी धर्मों एवं संप्रदायों में एकता के दर्शन होते हैं। सांप्रदायिकता का कलह मिटाके बापू ने एक आदर्श प्रस्थापित किया –

दो– मुसलमान हैं संघ में ख्रिस्ती हरिजन साथ
निवास में को विघ्न ना मिले सभी का साथ
संतराम मंदिर में ठहरे। नड़ीयाद में सैनिक सगरे।
एकहि पंगत सबहिं जिमाई। महंत जी ने महिम बढ़ाई।[8]

अफ्रीका में हिंदुस्तानियों की सभा में सर्व–धर्म–समभाव संबंध में गांधी जी ने भाषण दिया। सभी धर्मों को भेदभाव भूलकर एक होने के संदर्भ में आग्रह करते हुए गांधी जी को 'गांधी पारायण' में इस प्रकार से चित्रित किया गया है –

हिंदू मुसलमान ईसाई, भेद भाव सब भूलें भाई।
सिंधी गुजराती मदरासी, समझें, हैं सब भारतवासी।[9]

स्वराज्य पाने के बाद 'भरूच' सभा में स्वतंत्र धारासभा में मुसलमानों को सीटें दिलवाने की मात्रा के संदर्भ में जब गांधी जी को प्रश्न पूछा गया, तब उनका मार्मिक उत्तर देखिए –

फिर भी जो कदापि पद पाऊं। मुसलमिनों को प्रथम बुलाऊं।
रिव्रस्त पारसी सबहि बुलाऊं। उन्हें चहिय जो सोइ दिलाऊं।
सबके पीछे हिंदुन बारी। बाकी सीटों के अधिकारी।[10]

डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल' जी अपने 'मानव' महाकाव्य में उपवास भंग के बाद बिडला भवन में दिए गांधी जी के संदेश को वर्णित किया है –

ईश्वर–प्राप्ति एक ही तो है सत्य–सभी धर्मो का सार,
पीड़ित होना जन से जन का है अधर्म बस अत्याचार।
धर्म हमारा हो सम्मानित यदि चाहें तो यही उपाय,
आदर करें सभी धर्मो का हो विकसित मानव समुदाय।[11]

अर्थात् केवल सत्य ही ईश्वर प्राप्ति का आधार और सभी धर्मों का सार है। हमारे धर्म के सम्मान के लिए और समूचे मानव समुदाय के विकास के लिए हमें चाहिए कि हम भी अन्य सभी धर्मों का आदर करें।

गांधी जी ने अहमदाबाद के निकट साबरमती आश्रम की स्थापना की। यह आश्रम सांप्रदायिक एकता का सर्वोत्तम उदाहरण है। आश्रम का सारा वातावरण सांप्रदायिक एकता के लिए पूरक है। सांप्रदायिक सद्भाव के उदाहरण स्वरूप आश्रम की एक झलक देते हुए कवि नटवरलाल 'स्नेही' जी कहते हैं –

मुक्त द्वार था जिसका – सेवा सत्य अहिंसा साधक को,
रूप–वर्ण था बाधित कर सकता न वहाँ आराधक को।
वहाँ न कोई ब्राह्मण, अंत्यज हिंदू–मुस्लिम, ईसाई,
एक पिता के पुत्र सभी थे सच्चरित्र भाई–भाई।[12]

स्वराज्य केवल हिंदुओं का ही नहीं है, बल्कि मुस्लिम एवं हरिजनों का भी है। अतः आपस में भेदभाव न करते हुए स्वराज्य का स्वीकार करो। धर्म और संप्रदाय के नामपर आपस में जो संघर्ष होता है, उसे मिटाओ। जबतक आपस में एकता की भावना नहीं होगी, तबतक स्वराज्य का लाभ सभी को नहीं मिलेगा। इस बात पर गजेरा की सभा में जोर देते हुए गांधी जी के विचारों को कवि ने प्रस्तुत किया है–

ये निकला सवराज जलूसा। करौ न भेदभाव मनहूसा।
आज चढ़ा मैं घोड़े पर हूँ बिना वरण के नहीं उतरहुँ
करूं वरण मैं या आजादी। या दो टूक होब मम छाती।
स्वराज ना केवल हिंदुन का। अत्यंज मुसलमान सह सबका।
खपैं नहीं सवराज हमारे। बिना हरीजन मुस्लिम प्यारे।[13]

देश–विभाजन के समय सांप्रदायिकता के रोग ने देश के जन–मानस को घेर लिया था। हिंसाचार की परिसीमा को उसने पार किया था। आज भी ये समस्या अपने नए–नए रूपों को लेकर उसी प्रकार से जीवित है। इस संदर्भ में 'महामानव' महाकाव्य में सांप्रदायिक भेद मिटाकर मानव को मंजिल की ओर बढ़ने की सलाह देती हुई पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं –

एक डग भर छोड़ मंदिर मसजिदों के ये घरौंदे
अमर! चल उस ओर पिछले बंधनों के व्यूह रौंदे[14]

स्वतंत्रता के बाद प्रतिहिंसा में हिंसाचार से लथपथ जनता के प्रति विषाद व्यक्त करते हुए सांप्रदायिक मतभेदों में प्रतिहिंसा का विरोध कर सदाचार एवं नैतिक शिक्षा तथा मानवता के संदेश को 'गांधी मानस' में बखूबी अभिव्यक्ति मिली है –

'मातृ सदृश्य पर दारा' का शुचि मंत्र आर्य–संस्कृति का द्योतक
इंद्रिय–निग्रह, धृतिः, क्षमा, दम।
वेदों की भी दृष्टि न पहुँची प्रतिहिंसा के भाव–कोष तक,
सिंधु न तजता तट का संयम।[15]

शत्रु के प्रति प्रतिहिंसा की भावना मन में नहीं होनी चाहिए। शत्रु के प्रति की प्रतिहिंसा की भावना को गांधी जी ने नकारा है। पाकिस्तान भले ही हिंसा को अपनाए, भारत को भारतीय मुसलमानों के साथ प्रतिहिंसा का भाव नहीं रखना चाहिए, इस मत की पुष्टि उपरोक्त पंक्तियों में हुई है। आज भी सांप्रदायिक दंगों में प्रतिहिंसा का भाव धरे बेवजह ही कई मासूमों का कत्ल किया जाता है। प्रतिहिंसा का भाव न रखते हुए शांति से अगर समस्या को सुलझाया जाए तो कई मासूमों की जानें बच सकती हैं। देश के विभिन्न संप्रदायों में एकता हो तो देश में खुशहाली आएगी।

संदर्भ :

1. किशोरलाल घ. मशरूवाला, गांधी विचार–दोहन, पृ. 72.
2. सं. ज्ञानेन्द्र रावत, महामानव महात्मा गांधी एक विमर्श, पृ. 137.
3. डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल', मानव, पृ. 68.

4. रघुवीर शरण 'मित्र', जननायक, पृ. 506.
5. श्री नलिनकांत भट्ट, दांडी कूच, पृ. 87.
6. दुर्गादत्त त्रिपाठी, गांधी संवत्सर महाकाव्य, पृ. 147.
7. अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', गांधी पारायण, पृ. 607.
8. श्री नलिनकांत भट्ट, दांडी कूच, पृ. 100.
9. अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', गांधी पारायण, पृ. 135.
10. श्री नलिनकांत भट्ट, दांडी कूच, पृ. 205.
11. डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल', मानव, पृ. 124.
12. नटवरलाल 'स्नेही', गांधी मानस, पृ. 70.
13. श्री नलिनकांत भट्ट, दांडी कूच, पृ. 172.
14. ठाकुर प्रसाद सिंह 'अग्रदूत', महामानव, पृ. 168.
15. नटवरलाल 'स्नेही', गांधी मानस, पृ. 185,186.

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

26.हिंदी नाटक एवं एकांकी : सांप्रदायिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. प्रेरणा उबाळे
हिंदी विभागाध्यक्ष,
मॉडर्न कला, विज्ञान और वाणिज्य महाविद्यालय,
शिवाजीनगर, पुणे–05

साहित्य में मनुष्य जीवन की वरेण्यता दिखाई देती है। साहित्य में नाटक और एकांकी ऐसी विधाएँ हैं जिनमें मनुष्य जीवन जीवंतता से उभरता है। आधुनिक काल से लिखे गए हिंदी नाटकों–एकांकियों की परंपरा को देखा जाए तो प्रतीत होता है कि विभिन्न विषयों को केंद्र बनाकर कथावस्तु लिखी गई है।

भारतेंदुयुग तथा स्वतंत्रता के युग में विदेशी दासता से मुक्ति पाने के लिए, सभी धर्मों में सांप्रदायिक एकता और सद्भाव बनाए रखने के लिए अनेक नाटकों की रचना हुई। स्वतंत्रतापूर्व भारत में गोरक्षा के संदर्भ में हिंदू–मुस्लिमों से बड़े विवाद हो रहे थे। दोनों धर्मों में संघर्ष निर्माण करनेवालों में स्वार्थी धर्मशिक्षक, शास्त्री, मुल्ला, अंग्रेज दोषी थे। भारतीय समाज–सुधारकों ने दोनों धर्मों लोगों को धर्म का सही अर्थ समझाया और दोनों में एकता निर्माण करने का प्रयास किया। उन्होंने केवल धर्मों के बीच के अंतर को खत्म करने की कोशिश ही नहीं की अपितु भारत की विभिन्न जातियाँ के लोगों के बीच के अंतर को पाटने का सफल प्रयत्न किया।

रामकृष्ण कौशल के ‘इकाई’ नाटक और चिरंजीत के ‘इंद्रधनुष’ एकांकी में सांप्रदायिक सद्भाव का अंकन हुआ है। चिरंजीत के ‘इंद्रधनुष’ एकांकी में पं. रमानाथ का घर इंद्रधनुष–सा है जिसमें भारत के विभिन्न प्रांतों एवं जाति–धर्मों की तीन बहुएँ ब्याही गई हैं। इसलिए उनकी बिरादरी के पंडित कामताप्रसाद उनपर धर्म डुबो देने का आरोप लगाते हैं। तब पंडित रमानाथ कहते हैं– ‘‘धर्म का मतलब जातिवाद और प्रांतवाद नहीं। धर्म का संबंध मेरी आत्मा से है, मेरे निजी जीवन से है।’’[1] एकांकीकार ने पंडित कामताप्रसाद जैसे कट्टरपंथी व्यक्ति और उनकी संकीर्ण मनोवृत्ति का निषेध किया है। इसके विपरीत पंडित रमानाथ स्वयं धार्मिक होने पर भी अथवा अपने हिंदू धर्म में आस्था रखने पर भी अन्य धर्मों को तुच्छ नहीं समझते। धर्म के प्रति व्यवहार की दृष्टि से पंडित रमानाथ और महात्मा गांधी में समानता दिखाई देती है। इसी तरह रामकृष्ण कौशल द्वारा लिखित ‘इकाई’ नाटक में सेठ रामदास सभी धर्मों में आस्था रखनेवाले व्यक्ति हैं। वे मानवतावादी दृष्टि रखते हुए स्थापित की गई फर्म में होनेवाले भेदभाव को अत्यंत तुच्छ मानते हैं और उसका विरोध करते हैं।

बैजनाथ राय द्वारा लिखित ‘हम एक हैं’ नाटक में जातिवाद, भाषावाद, प्रांतीयता, वर्गवाद आदि की संकीर्ण मनोवृत्ति पर कड़ा व्यंग्य किया है। सेठ गोविंददास का ‘जातिउत्थान’ एकांकी, धर्मराज जायसवाल का ‘नई रोशनी; नए रास्ते’ नाटक सर्वधर्मसमभाव एवं उससे निर्मित राष्ट्रीय एकता के सुंदर चित्र उपस्थित करते हैं। इन नाटककारों ने राष्ट्रीय एकता को खंडित करनेवाले जाति, धर्म, वर्ण आदि के भेदों को अनुचित माना है। साधारणतया इन सभी नाटकों की कथा, पात्र, घटना–प्रसंग आदि में स्वधर्म और परधर्म के प्रति प्रेम रखने के लिए प्रेरित किया गया है।

सांप्रदायिक सद्भाव और एकता के कारण ही मानवता का निर्माण संभव हो पाता है और समूची मनुष्य–जाति एक परिवार समान प्रतीत होती है।

विष्णु प्रभाकर ने ‘हमारा स्वाधीनता संग्राम’ एकांकी में महात्मा गांधी के जीवन की एक घटना का स्मरण किया है जब विभाजन के समय भारत में हुए सांप्रदायिक दंगों को शांत करने के लिए महात्मा गांधी अपने कुछ अनुयायियों के साथ नोआखाली में निकल पड़े थे। उस ऐतिहासिक यात्रा

का वर्णन करते हुए नाटककार लिखते हैं– ''इन सबके ऊपर ये–महात्मा गांधी जो अपने जीवन–संध्या में कराहती हुई मानवता की पुकार सुनकर अकेले ही दावानल में घुसते चले गए। उन्होंने जातियों के खोए हुए विश्वास और सद्भाव को वापस लाने के लिए प्राणों की बाजी लगा दी। नोआखाली की यात्रा संसार की ऐसी यात्रा है जिसकी कोई तुलना नहीं है। नंगे पैर, हाथ में लकड़ी थामें टैगोर की 'एकला चलो रे' गीत की ध्वनि पर एक–एक कदम उठाते हुए वे गाँव–गाँव घूमते थे।''[2] महात्मा गांधी के माध्यम से विष्णु प्रभाकर जी ने सांप्रदायिक एकता निर्माण करने के संदर्भ में आदर्श उदाहरण सम्मुख रखा है। सांप्रदायिक दंगों में लोगों की रक्षा के कारण म. गांधी मानवता के पुजारी कहलाए। प्रस्तुत नाटक में एक ब्राह्मण का चित्रण किया है, वह भी महात्मा गांधी के समान मानवता को सभी जाति–धर्मों से बड़ी मानते हुए दंगों में मुसलमानों की रक्षा करता है। वह ब्राह्मण केवल दंगाइयों का विरोध नहीं करता बल्कि अपने आचरण से मानवता को प्रतिष्ठित कर देता है।

सभी प्रकार के भेदों से तभी दूर हुआ जा सकता है जब मनुष्य के मन में मानवता का निर्माण हो। ''माखनलाल चतुर्वेदी : एक झलक'' नाटक में मानवता को मनुष्य के व्यक्तित्व के सम्यक विकास का पहला चरण माना गया हैं मनुष्य को पशुता से दूर जाने का संदेश यह नाटक देता है। एक स्थान पर नाटककार माखनलाल चतुर्वेदी के माध्यम से कहते हैं– ''स्थूल रूप से यह मूल लक्ष्य है– अपने व्यक्तित्व का सम्यक विकास। पशु से मनुष्य को ऊँचा समझते हुए भी पशुता से मुक्ति पाने के लिए निरंतर सचेष्ट नहीं रह पाते। पशुता से मुक्त ही व्यक्तित्व के विकास की पहली सरणि है।...इस सरणि की ओर कदम न बढ़ाकर पशुता से मुक्त होने की चेष्टा न करके अथवा मानवता का नारा बुलंद करता रहे, उसका जीवन विडंबना के अतिरिक्त क्या होगा?''[3] मनुष्य को जाति–पाँति, धर्म आदि की संकीर्ण मनोवृत्ति से ऊपर उठने का परामर्श लेखक प्रस्तुत संवाद के माध्यम से देते हैं। इसी तरह सेठ गोविंददास द्वारा रचित 'कुलीनता' नाटक के यदुराय तथा विष्णु प्रभाकर के 'नया समाज' नाटक के दयाकृष्ण द्वारा मनुष्य एवं मनुष्यता को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। 'मैत्री', 'इकाई', 'हम एक हैं' जैसी नाट्य–रचनाएँ जाति और धर्म को नकारते हुए मानवता की प्रतिष्ठापना करती है।

भारतीय स्वतंत्रता के काल में हिंदू–मुस्लिम एकता को बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयत्न हुए। इस संदर्भ में चिरंजीव के 'राम–रहीम' एकांकी का उल्लेख किया जा सकता है। इसमें एक स्थान पर बैसाखी का चरित्र हिंदू–मुस्लिम धर्मों के बीच निर्मित संभ्रम और तनाव को अनावश्यक बताते हुए कहते हैं– ''राम, रहीम एक ही भगवान के दो नाम हैं। दोनों में कोई फर्क नहीं। फर्क तो हमारी ही नजरों में है। अज्ञानवश हम ही मंदिर और मस्जिद बनाकर दोनों को अलग देखते हैं। यही वह भ्रम है, जो बार–बार हमारे देश में हमारे दिलों में फूट के जहरीले बीज बोता है।....भगवान को चाहे राम कहो या रहीम, कृष्ण कहो या करीम, खुदा कहो या गॉड– वह एक है। वे धर्म और मजहब उसी भगवान तक पहुँचने के अलग–अलग रास्ते हैं, उसकी पूजा और इबादत अलग के तरीके हैं।''[4] एकांकीकार ने बैसाखी के चरित्र द्वारा हिंदू–मुस्लिमों में निर्माण हुई द्वेष–भावना को मिटाने का प्रयास किया है। प्रस्तुत एकांकी सांप्रदायिक विद्वेष को दूर करते हुए अहिंसा, प्रेम, सद्भावना को प्रतिष्ठित करता है।

प्रेमचंद ने सत्य और अहिंसा के माध्यम से अपने 'कर्बला' नाटक के द्वारा सांप्रदायिक एकता, सद्भाव निर्माण करने का प्रयत्न किया। डॉ. सुषमा नारायण प्रेमचंद के इस योगदान के संदर्भ में कहती हैं– ''भारतीय मुसलमानों की राष्ट्रीय भावना को जागृत करने तथा उन्हें भी सत्य एवं

अहिंसा के मार्ग का अनुकरण करने के लिए यह आवश्यक था कि उनके धर्म–ग्रंथों, मुस्लिम इतिहास के महान चरित्रों तथा घटनाओं के सत्य, आत्मबल और अहिंसा के उदाहरण रखे जाए। हिंदी नाट्य–क्षेत्र में यह कार्य प्रेमचंद जी द्वारा संपन्न हुआ है।''[5]

असगर वजाहत द्वारा लिखित 'गोडसे @ गांधी कॉम' नाटक का उल्लेख यहाँ जरुर करना होगा। इस नाटक में गांधी और गोडसे के माध्यम से नाटककार ने धर्म के दो भिन्न चेहरों को सामने लाने का प्रयास किया है। साधारणतया महात्मा गांधी के विरोधी के रूप में विनायक दामोदर सावरकर की ओर देखा जाता है। सावरकर भारत को पूर्णतः हिंदू राष्ट्र बनाने के पक्ष में थे तथा नाथूराम, सावरकर से अत्यधिक प्रभावित था। गोडसे मानता था कि भारत को हिंदू राष्ट्र बनाने में सबसे बड़ी बाधा म. गांधी है। ''गांधी के विचारों और उनकी राजनीति से टकराना उस समय हिंदुत्ववादी शक्तियों के बस की बात न थी। इसलिए उनके लिए गांधी की हत्या ही एकमात्र रास्ता बचता था। गांधी स्वयं पक्के हिंदू थे। गोडसे भी पक्के हिंदू थे। एक पक्के हिंदू ने दूसरे पक्के हिंदू की हत्या क्यों कर दी? यह विषय नाटक के एक केंद्रीय सरोकार के रूप में उभरकर आता है।''[6] प्रस्तुत नाटक में म. गांधी मानते हैं कि जिस प्रकार गोडसे के साथ संवाद जरुरी था, वैसा ही संवाद पूरे देश के लिए जरुरी है। नाटक के अंत में नाथूराम का हृदय परिवर्तन होना अर्थात् मनुष्य में निहित अच्छाई की विजय होना है। प्रस्तुत नाटक में हिंदू, हिंदी, हिंदुत्ववाद, धर्म, राष्ट्र, हिंदुस्तान, मनुष्यता, राजनीतिक निर्णय आदि से संबंधित गांधी के विचारों को प्रस्तुत किया गया है। हिंदू और मुस्लिम दो पक्षों में आज भी संघर्ष होता हुआ दिखाई देता है। यह संघर्ष विचार और राजनीति का है। वर्तमान समाज में गोडसे जैसे अनेक कट्टर चेहरे दिखाई देते हैं जिन्हें धर्म की सही व्याख्या समझाने से तथा हृदय परिवर्तन के द्वारा दोषमुक्त किया जा सकता है।

इन सभी नाटकों के अध्ययन और सर्वेक्षण के बाद यह प्रतीत होता है कि ये सभी नाटक युग–सापेक्ष्य हैं। कथ्य और संरचनागत नवीनता इनमें दिखाई देती है। इतना ही नहीं, प्रस्तुतीकरण की सक्षमता भी मौजूद हैं स्वतंत्रतापूर्व काल में लिखे नाटक अपने आरंभिक काल के होने के बावजूद भी कथ्य, उद्देश्य की दृष्टि से अपना प्रभाव डालने में सक्षम हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल के नाटक कई अर्थों में मंच से जुड़े हैं। साथ ही ये नाटक विभिन्न प्रायोगिक चुनौतियोंसहित मंच से जुड़ गए हैं। प्रस्तुतीकरण की सजगता और प्रस्तुतिगत विविधता भी नाटकों में दिखाई देती है। प्रकाश, ध्वनि, संगीत का कलात्मक प्रयोग इस काल के नाटकों में हुआ है जिससे संपूर्ण प्रस्तुति के प्रभाव में वृद्धि हुई है। सांप्रदायिक एकता, सद्भाव को प्रतिपादित करनेवाले ये नाटक सघन, गंभीर, झकझोरनेवाले नाट्यानुभव देते हैं और हिंदी नाट्य–परंपरा को वृद्धिंगत करते हैं।

- **संदर्भ–ग्रंथ सूची :**

1. मंदिर की जोत (एकांकी संग्रह) – चिरंजीत, 'इंद्रधनुष' (एकांकी) – चिरंजीत, पृ.84,
2. श्रेष्ठ हिंदी एकांकी–संपादक : सेठ गोविंददास, 'हमारा स्वाधीनता संग्राम' (एकांकी) – विष्णु प्रभाकर, पृ.136
3. माखनलाल चतुर्वेदी : एक झलक – प्रेमनारायण टडंन; पृ.70
4. मंदिर की जोत (एकांकीसंग्रह) – चिरंजीत; पतित–पावन (एकांकी)– चिरंजीत; पृ.23–24
5. भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की हिंदी साहित्य में अभिव्यक्ति– डॉ. सुषमा नारायण, पृ.230
6. गोडसे @ गांधी. कॉम – भूमिका–असगर वजाहत; पृ.73

27. राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव–चन्द्रसेन 'विराट' के काव्य के संदर्भ में

प्रा. डॉ. श्रीमती कामिनी बी. तिवारी
हिंदी विभाग
कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
बोदवड, जि. जलगाँव

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव आवश्यक रहा है क्योंकि देश के विकास में आपसी वैमनस्य एवं संकुचित साम्प्रदायिकता बाधक होती है। मैथिलीशरण गुप्त माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामधारी सिंह 'दिनकर' जैसे शीर्ष कवियों ने राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव की पैरवी की है। इस राष्ट्रपरक कवियों की परम्परा में 'विराट' का योगदान अनुपम रहा है। वे अपने समय एवं स्थिति के प्रति प्रतिबध्द होकर काव्य–सृजन करते रहे हैं। इसी कारण उनकी कविताओं में राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता एवं उपादेयता, साम्प्रदायिक वैमनस्य पर चिंता परिलक्षित होती है। भारत की एकता के स्वर को मुखरित करते हुए विराट 'हम सब हिन्दुस्तानी' कविता में यह विचार व्यक्त करते है कि विभिन्न धर्म, विभिन्न पूजा स्थल विभिन्न प्रांत होते हुए भी भारत की एकसूत्रता उसकी एकता का प्रमाण है –

न हिन्दू न मुसलमाँ है ना सिख हैं ना क्रिस्तानी हैं
एक देश भारत है सबका हम सब हिन्दुस्तानी हैं।
मंदिर मसजिद हैं गुरूद्वारे
गिरजें है कि शिवाले है
सबका मजहब है मानवता
सबके सब भारत वाले हैं। (स्वर के सोपान, पृ. 4)

विराट ने 'आँधी हो या तूफान' में भी लिखा है कि 'हिन्दू हो, मुसलमान हो, या सिख या इसाई / ममता सभी पे देश की धरती न लुटाई/' क्योंकि इन्हीं से देश बना हैं। विभिन्न धर्म, विभिन्न भाषा, विभिन्न प्रांत तो मोती है जिनसे भारत की जयमाल पिरोई हुई है। कवि ने 'सबसे पहले देश' कविता में राष्ट्रीय एकता की उपादेयता सिध्द की है जाति, धर्म, प्रदेश से बढ़कर राष्ट्रीय एकता होती हैं। हमें जातिवाद और प्रांतवाद के संघर्ष से उभरना होगा यद्यपि हमारी वेशभूषा, रहन–सहन, रीति–रिवाज भिन्न है परंतु हम भारतीयों का हृदय एक है जिसमें भारतीयता समाहित हैं इसलिए आवश्यक यह है कि पारस्परिक मतों को विस्मृत कर एक होकर रहा जाये –

एक हृदय है भारतीय हम
अलग हो चाहे देश
भूल हमारे मतभेदों को मिलकर एक इकाई हम
अलग प्रांत हैं अलग बोलियाँ फिर भी भाई–भाई हम। (मिट्टी मेरे देश की, पृ. 37)

देश–विभाजन अंग्रेजों की नीति थी क्योंकि वे प्रारंभ से ही – 'फूट डालो और राज्य करों' की कूटनीति अपनाते रहे है और वर्तमान राजकीय नेता भी इसी कूटनीति को अपना रहे है जैसा कि डॉ. कृष्णगोपाल मिश्रा ने लिखा है –''जिस प्रकार अंग्रेज हिन्दु–मुसलमानों में दंगे करवाकर कूटनीतिज्ञ शडयंत्रों द्वारा सत्ता हथियाते रहे उसी प्रकार स्वतंत्र भारत में देशवासियों को सवर्ण–असवर्ण, उच्च–दलित वर्ण, बहुसंख्यक–अल्पसंख्यक आदि अनेक समूहों में बाँटने के साथ–साथ धर्म, भाषा, क्षेत्र आदि नये–नये विभेदों में भी विभाजित करके परस्पर लड़वाया जा रहा है। जनता न केवल उपर्युक्त भेदों–विभेदों में बंटी है अपितु वह स्वार्थी, भ्रष्ट और सत्ता लोलुप

अपराधिक, राजनीतिक, पुरोधाओं का हित साधन करती हुई परस्पर अनेक राजनीतिक दलों में भी विभक्तत हो।''1 चंद्रसेन विराट 'होली पर साम्प्रदायिक अशांति एक पश्चाताप' में यह व्यथा व्यक्त करते हैं कि न जाने कैसा जहर घुल गया है रंगों में की गई होली का उल्हास शोक में बदल गया है। अतएव विकासशील भारत में इस प्रकार पारस्परिक वैमनस्य हितावह नहीं है। यदि देश को विकास करना है तो साम्प्रदायिक सद्भाव स्थापित करना होगा कवि 'देश सँवरता जाता है' कविता में लिखते हैं कि –इंसानों से मिल भेदों रे, करों विचारों को पावन

प्रेम ह्रदय में, दृग में आँसू, अधरों पर जीवन गायन
मानवता से बड़ा न मजहब कोई भी इस दुनिया में
इंसानी आदर्श जगत में आज निखरता जाता है।'' (मिट्टी मेरे देश की, पृ. 77)

सभी भारतीयों को शांति का मंत्र स्वीकार करना चाहिए एवं मानवता सर्वोपरि धर्म है मानकर मानवता का पूजन करना चाहिए। राष्ट्रीय एकता को गंभीरता से स्वीकार न करने के फलस्वरूप भारतीय प्रांतवाद को महत्व देते हुए कभी देश की नदियों के लिए सभी प्रांत की सीमा के लिए संघर्ष कर रहे है। कवि की चिंता यह है कि भारतीय प्रांत की सीमा के लिए संघर्ष कर रहे है। कवि की चिंता यह है कि भारतीय प्रांत–प्रांत की सीमा के हित के लिये लड़ते है। फलस्वरूप देश के प्रमुख प्रश्न उपेक्षित हो रहे है। 'हम हिन्दुस्तानी' कविता में विराट जी ने लिखा है कि भले ही हम हिन्दू हो, मुसलमान हो, सिक्ख हो, क्रिश्चन हो हम पहले हिन्दुस्तानी है। देश में अलग–अलग धर्मो के श्रध्दास्थान है। यहाँ मंदिर है, मस्जिद है। गुरूद्वारे है गिरिजें है। लेकिन उससे बढ़कर मानवता है। हमें प्रांतवाद के और भाषावाद के संकुचित दायरे में आबध्द नहीं होना है। देश के प्रति प्रतिबध्द होना है। इसलिए हम पंजाबी, बंगाली, गुजराती, मद्रासी, आंध्र, महाराष्ट्र, आसामी, राजस्थानी होने पर भी हम सभी हिन्दुस्तानी है इस सत्य को विस्मृत नहीं करना चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि 'ममता सभी पे देश की धरती ने लुटायी / सब मिलके एक देश है विशाल साथियों।' भारत के सभी प्रांत गौरवशाली है तो भी प्रत्येक प्रांत की कुछ न कुछ विशेषताएँ है। जिनसे भारत का शृंगार हुआ है। कवि 'अपना देश महान है' में यह यथार्थ अभिव्यक्त करता है कि –

द्रविड़, उत्कल, बंग, मराठा
मालव राजस्थान है
हर प्रदेश का अपना गौरव
अपनी–अपनी शान है।
सभी प्रांत ने रक्त दिया है शिश किये बलिदान है,
सब पर माँ का स्नेह रहा है दिये सभी वरदान है। (मिट्टी मेरे देश की, पृ. 39)

भारत की राष्ट्रीय एकता को खंडित करने के लिए साम्प्रदायिक संकुचित भावना भड़काने के लिए राजनेता जबाबदार है। अतएव कवियों ने स्वार्थी राजनेताओं के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है। चंद्रसेन विराट राजसत्ता पर आक्रोशजनक व्यंग्य करते हुए लिखते हैं –

धर्मांधता बढ़, भ्रम फैले, यह प्रपंच हो और जटिल
मुकुट धरा सर, हर कीमत पर, देश भले हो जाये शिथिल
राजनीति वह करों कि जिससे
सुलझ न पाये कभी विवाद
यह सिंहासन जिंदाबाद। (मिट्टी मेरे देश की, पृ. 175)

राजनेता क्षेत्र एवं जाति के विभेद से भेड़ें हाकते हैं यही स्थिति देश के लिये घातक सिध्द हो रही है। देश में धर्म के नाम पर मानव–मानव में वैमनस्य फैलाया जा रहा है। देश में संकुचित भावना फैलायी जा रही है, जिसका प्रमाण यह है कि –

अंधी आंधी चली धर्म की, मनुज–मनुज को बाँट दिया
सिर्फ घृणा को पनपाया है, और प्यार को छाँट दिया,
मंदिर–मस्जिद डूबे, गिरिजाघर–गुरूद्वारे डूब गये। (सन्नाटे की चीख, पृ. 81)

विराट जी का बार–बार आग्रह रहा है कि राष्ट्रीय चरित्र को बनाये रखने के लिए उदारता एवं उदात्तता आवश्यक है। इस संबंध में डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र के विचार अनुकरणीय है उन्हीं के शब्दों में –''कहने की आवश्यकता नहीं कि यदि मनुष्य सक्रिय चरित्रा का विकास कर स्वयं को राष्ट्रीय हित साधन का उपकरण समझे, भूमि और जन से अपनी रागात्मकता विकसित करे दे तो आतंकवाद, अलगाववाद, धर्म, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार की समस्याएँ स्वतः समाप्त हो जायेगी।''2 यही यथार्थ काव्य चिंतक विराट के काव्य में दृष्टिगत होता है। वे –'मेरे देश ! दुःखी मत हो।' में यह चिंतनधारा व्यक्त करते है कि –

जाति–धर्म का, वर्ण–वर्ग का, राग पुराना शेष अभी
भिन्न प्रांत भाषाओं वाला, रोना–गाना शेष अभी
बड़ा हुआ आतंक, अराजकता है, दहशत शेष अभी। (गाओ कि जिये जीवन, पृ. 23)

विराट की मान्यता है कि भारत में अनेक धर्म है एकाधिक धर्म होने पर भी हम भारतवासी है। यह देश गंगा और हिमालय का है। भारतीय संस्कृति एवं भारतीय आध्यात्मिकता एकता में विश्वास रखती है। जैसा कि वे लिखते हैं –'' जियो स्वयं औरों को जीने दो / जीवन अमृत सबको पीने दो।' यही सर्वहिताय संदेश है। जैसा कि वे लिखत है – ''जियो स्वयं, औरों को जीने दो/ जीवन अमृत सबको पीने दो।' यही सर्वहिताय संदेश है। वास्तव में हम आत्मीय हैं, भारतीय हैं, भारत माँ के बेटे हम सब /भाई–भाई हैं / एक राष्ट्र ध्वज की छाया में / एक इकाई है / राष्ट्र हमारा प्राण, प्राण से / राष्ट्रीय है हम / भारतीय है हम / प्रांत–प्रांत के है पर पहले/भारतवासी है/जन आधारित मान मूल्यों के अभ्यासी है/ हम विशाल जन–तंत्र विधायी, संसदीय है हम/ भारतीय है हम।'' (सरगम के सिलसिले, पृ. 14)

राष्ट्रीय एकता का एकमात्र मूल सिध्दांत है – 'हम भारतीय है।' परंतु दुःख का होता है। जब व्यक्ति सोचता है कि मैं पहले अपने वर्ण का हूँ, जाति का हूँ, एक विशिष्ट समाज का हूँ, विशिष्ट सम्प्रदाय का हूँ, विशिष्ट प्रांत का हूँ, यह सोच राष्ट्रीय एकता को खंडित करने के लिए पर्याप्त है। अनेकता में एकता भारत की विशेषता है जिसे दृष्टिकेन्द्र में रखना आवश्यक है। 'अनेकता में एकता' यह केवल नारा नहीं है व्यक्ति सूत्र वाक्य है। जीवन जीने का तरीका है। यह तो भरत वाक्य है। देश की एकता पर चिंतन करते हुए एवं साम्प्रदायिक की कलुषित भावना पर भाष्य करते हुए 6 सितम्बर 1992 के मंदिर–मस्जिद संघर्ष पर डॉ. नरेन्द्र मोहन ने उस दिन की अपनी डायरी में लिखा था – ''बाबरी मस्जिद का ध्वंस कुल्हाड़ी की एक–एक चोट के साथ मेरे कानों के परदे फटने लगे। एक और काला दिन मुझे लिलने को है। कुल्हाडियों और लोहे की हड जैसी मेरी छत और छाती पर पड़ रही है।.......... उधड़ती रही सीवने और चोलियाँ हमारे लोकतंत्र की, धर्म निरपेक्षता की ओर हम नंगे होते गये..........जातियों और देशों का जीना–मरना ऐसा ही होता है क्या ?''3 इसका परिणाम यह हुआ कि मुंबई, भोपाल, कानपुर, वाराणसी, अहमदाबाद, सूरत, जयपूर आदि अनेक शहरों में साम्प्रदायिक वैमनस्य व्याप्त हुआ, दंगे भड़के ऐसा क्यों होता है ? इसका एक ही उत्तर है

साम्प्रदायिक सद्भाव का अभाव। यही चिंतन और चिंतक चन्द्रसेन विराट का भी है। जैसा कि डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र ने लिखा है –''श्री विराट की राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय एकता के महत्व से सुपरिचित है। वे जानते है कि राष्ट्रीय कष्टों का एक बड़ा कारण 'राष्ट्रीय एक्य' का अभाव है। राष्ट्र न केवल विभिन्न प्रांतों में विभक्त है अपितु भाषा, धर्म, देश, क्षेत्र आदि में भी विभाजित है। यद्यपि यह विभाजन प्राकृतिक और व्यवस्थागत कारणों से राष्ट्रीय व्यवस्थाओं के सुचारू संचालन के लिए किया गया है, किन्तु शुद्र स्वार्थो ने राष्ट्रीयता की उदार एवं उदात्त भावना को आहत कर राष्ट्रीयता के पोषक तत्वों को ही विभाजन–विवेचक भूमिका ने सक्रिय कर दिया हैं।''4

समग्रतः सम्प्रति राष्ट्र, जग, विकास की ओर तीव्र गति से मति दे रहा है। तब राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता एवं उपादेयता निःसंदिग्ध है। देश में व्याप्त संघर्ष वैमनस्य, हिंसा का प्रमुख कारण साम्प्रदायिक सद्भाव का अभाव है। यही यथार्थ विराट की कविताओं से स्वयंसिध्द है।

संदर्भ :–

1) चंद्रसेन विराट का काव्य – डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र, पृ. 194
2) पूर्ववत् – पृ. 201
3) नरेन्द्र मोहन रचनावली – खण्ड तीन, पृ. 233–234
4) चंद्रसेन विराट का काव्य – डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र, पृ. 201

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

28. गिरिराजशरण अग्रवाल की ग़ज़लों में अभिव्यक्त साम्प्रदायिक सद्भाव

प्रा. डॉ. मनोज नामदेव पाटील
हिंदी विभाग
डॉ. अण्णासाहेब जी. डी. बेंडाले महिला महाविद्यालय,
जलगाँव

यह एक वास्तविकता है कि किसी भी साहित्यकार का व्यक्तित्व उसके कृतित्व में समाहित होता है। उसके व्यक्तित्व का प्रतिबिंब उसकी सृजनधर्मिता में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में होता ही है। व्यक्ति जिस परिवार, परिवेश, परिस्थिति में जीवन यापन करता है उसका प्रभाव एवं उसके संस्कार उसके व्यक्तित्व में दृष्टिगत होते हैं। अतः उसका व्यक्तित्व उनके कृतित्व में झलकता है। किसी भी साहित्यकार के व्यक्ति में उसकी स्वभावगत विशेषताएँ, उसके पारिवारिक संस्कार, परिवेशगत अनुभव विभिन्न प्रसंगों से उसके मन–मस्तिष्क में होनेवाली क्रिया–प्रतिक्रियाएँ समाहित रहती है। हिंदी साहित्य में अमीर खुसरों से ग़ज़ल की एक लम्बी परम्परा विकसित हुई तथा 1960 में दुष्यंत कुमार द्वारा ग़ज़ल को एक नया मोड़ दिया गया। उसके उपरान्त कई ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल विकास में अपना योगदान दिया उनमें जहीर कुरेशी, सुर्यभानू गुप्त, चंद्रसेन विराट, ज्ञानप्रकाश विवेक, रोहिताश्व अस्थाना, रामकुमार कृषक, डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, हनुमंत नायडू, अदम गोंडवी आदि उल्लेखनीय है।

मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामधारी सिंह 'दिनकर' जैसे शीर्ष कवियों ने राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय एकता तथा साम्प्रदायिक सद्भाव की पैरवी की है। इस सामाजिक कवियों की परम्परा में 'गिरिराजशरण अग्रवाल' का योगदान अनुपम रहा है। गिरिराजशण अपने समय एवं स्थिति के प्रति प्रतिबध्द होकर ग़ज़लों का सृजन करते हैं। इसी कारण उनकी ग़ज़लों में राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता परिलक्षित होती है।

सम्प्रति, ग़ज़लकार ने अपनी ग़ज़लों द्वारा साम्प्रदायिक सद्भावना को अवश्यंभावी मानते हुए साम्प्रदायिक एकता तथा समन्वय की भावना को उजागर किया है। अलगाव, साम्प्रदायिकता, आपसी मतभेद देश की प्रगति में बाधक सिध्द होती है। आज भाईचारा, बंधुत्व, इंसानियत की काफी आवश्यकता है, यह सचाई ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों में अभिव्यक्त की है।

भारत देश में आदिकाल से ही साम्प्रदायिकता का अस्तित्व दिखाई देता है। समाज से ही तो साम्प्रदायिकता का गहरा संबंध होता है। अतएव इसी समाज का वास्तविक चित्रण ग़ज़लकार अपनी ग़ज़लों में अंकित करता है। इतिहास पर दृष्टि डालने से यह सिध्द होता है कि साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज पर एक अमीट–सी छाप छोड़ जाता है।

भारत देश विभिन्न संप्रदायों का देश है। भिन्न–भिन्न संप्रदायों के लोग यहाँ निवास करते है। किन्तु इन सम्प्रदायों के कारण तथा धार्मिक कट्टरता एवं वैमनस्य भाव पनपने के कारण दंगे–फसाद होते है और वही पर राष्ट्र की एकता का प्रश्न निर्माण होता है। इस मौके का फायदा उठाते हुए राजनेता लोग आपसी वाद–विवाद मिटाकर जनता का शोषण करते है। फलस्वरूप देश में अशांति का वातावरण निर्माण होता है। इसी साम्प्रदायिकता के कारण देश में विभाजन भी हुआ है। हमारे देश के राजनेताओं ने इस समस्या को मिटाने के बजाय उसे भड़काया ही है। इसका मुख्य कारण है, ''हमारे देश में चल रही वोट की राजनीति ने एक समुदाय और दूसरे समुदाय, एक जाति और दूसरी जाति के बीच संख्या के आधार पर अलग–अलग पहचान बनाने की भूमिका निभाई है। इस

पहचान ने आगे चलकर विभिन्न समुदायों और जातियों के बीच एक ओर टकराव की स्थिति पैदा की तो दूसरी ओर अवसरवादी राजनीति को फलने–फूलने के अवसर प्रदान किए है।''1

आज यदि हम साम्प्रदायिकता को बारीकी से देखे तो हमारे राजनेता चाहे वे अपक्ष हो या किसी पक्ष के साथ जुड़े हो दोनों ही एक–दूसरे से दुश्मनों सा व्यवहार करते है। राजनेता ही क्या कोई एक धर्म की विभिन्न जातियाँ भी आपस में टकराव की स्थिति उत्पन्न करती है। देश में रहनेवाले हर जाति–सम्प्रदाय के लोग सब भारतीय ही तो है। प्रत्येक धर्म ने हिंसा और नफरत को त्याग दिया तो प्रत्येक धर्म मनुष्य को प्रेम और बंधुत्व का ही संदेश देता है। आज हमें धर्म, सम्प्रदाय, जाति, पंथ के भेदों को तोड़ना होगा। इसके संबंध में ग़ज़लकार कहते है –

हिंदु, मुस्लिम, ईसाई सब हिन्दुस्तानी
खून एक–सा, नहीं किसी की अलग कहानी,
भेदभाव को, नफरत को जो है, फैलाते,
हरकत उनकी देशद्रोह की जानी मानी। 2

साम्प्रदायिकता को धर्म के खानों में बाँटने का शडयंत्र चल रहा है। इस संदर्भ में डॉ. राही मासूम रजा ने लिखा है –''साम्प्रदायिकता कोई धर्म नहीं होता। वह अपने आपमें एक इकाई है। भारत की हर भाषा बोलती है। भारत का हर धर्म मानती है और आप जब तक इसे मन्दिरों, मस्जिदों और गुरूद्वारों में ढूँढते रहेंगे तब तक यह परछाई आपके हाथ नहीं आएगी। तब तक धर्म का शोषण करनेवालों का चेहरा आपको दिखाई देगा।''3

साम्प्रदायिकता के कारण जाति–जाति, धर्म–धर्म, समाज–समाज में मनमुटाव होते नजर आता है। आपसी मतभेद बढ़ रहे है। धर्म के नाम पर मार–पीट, दंगे–फसाद हो रहे है। इसका बुरा असर जनजीवन पर पड़ता है। इस समाज में फैली नफरत की आग को बुझाना आवश्यक है। आनंद द्वारा या अपनेपन द्वारा वातावरण के साथ–साथ परिवेश भी आनंददायी हो जाता है। सभी के मन के कुलषित भावों को मिटाकर हम एक–दूसरे को गले से लगाए तो प्रकृति के साथ ही वातावरण में भी हम आनंद की अनुभूति ले सकेंगे। ग़ज़लकार की यही कामना है कि देश में सद्भाव का वातावरण निर्माण हो –

फूल की चर्चा करो, गुलजार की चर्चा करो,
नफरत बढ़ने लगी है, प्यार की चर्चा करो,
रात–दिन परलोक के जीवन की चिंता किसलिए,
जिसमें जीवित हो उसी संसार की चर्चा करो।4

साम्प्रदायिक सद्भाव को लेकर ग़ज़ल के आलोचक डॉ. मधु खराटे का कथन सार्थक लगता है, ''ग़ज़लकार की स्पष्ट मान्यता है कि इस तरह से लोगों के बीच साम्प्रदायिकता के बीज बोना ठीक नहीं है। इससे किसी का भी हित नहीं हो सकता। यह तरीका ही गलत है। वे राजनेताओं को आगाह करते हैं कि लोगों में इस तरह की भावनाओं को न भडकाएँ। अगर तुम्हें कोई जंग छेड़नी ही हो तो गरीबी, अभाव, बेकारी, आदि के खिलाफ छेड़नी चाहिए। अपनी सत्ता को बचाने के लिए इस तरह की हरकत ठीक नहीं हैं। ग़ज़लकार यह चाहता है कि देश में सद्भाव बना रहे, एकता बनी रहे। जिससे हमारा देश दिन–प्रतिदिन उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ता रहे।''5 इसी तथ्य को गिरिराज भी अपनी ग़ज़लों में स्थान देते है।

देश में आज हर समाज नदी के द्वीप की तरह अलग–थलग पड़ रहे है। इन्हें एकत्रित लाना अत्यंत आवश्यक है। इनमें जो घृणा और हिंसा की भावना चरम सीमा पर है उन्हें मिटाना होगा।

सबको एकत्रित आकर एकता का ध्वज लहराना होगा। एक–दूसरे से होनेवाली यह दूरियाँ मिटानी होगी। इससे डॉ. अग्रवाल चिंतित होकर लिखते है –

काफिला साथ में ले हाथ बढ़ा हाथ बढ़ा,
रूत है अलगाव की, आ प्यार का परचम बन जा,
अब के महफिल में किसी को भी अकेला मत छोड़
दोस्त इसका तो किसी और का हमदम बन जा।6

भारत में हिंदु एवं मुस्लिम त्यौहारों पर साम्प्रदायिक दंगे होते है, यह घटनाएँ घटित होना ही हमारे दुर्भाग्य का रूप सामने लाता है। वास्तव में स्वतंत्रता पूर्व हिंदू मुस्लिम दोनों के ही त्यौहार एक–दूसरे के घर जाकर मनाते थे। किन्तु देश–विभाजन के कारण यही बंधुत्व भाव दंगों में परिवर्तित होता नजर आता है। हर भारतीय को भारतीय होने के नाते शांति का मंत्र स्वीकार करने में संकोच नहीं करना चाहिए। शांति के साथ ही मानवता की पूजा हो सकती है। आज समाज आपस में नदियों की सीमा, राज्यों की सीमा, राष्ट्रों की सीमा में लेकर आपस में संघर्ष कर रहा है। कवि की चिंता यह है कि भारतीय, राज्य और राष्ट्र की सीमा को कारण बनाकर आपस में लड़ते है। इसके कारण देश में प्रमुख प्रश्न उपेक्षित हो रहे है। इसमें परिवर्तन लाने का आशावादी दृष्टिकोण रखते हुए ग़ज़लकार लिखत है –वो मित्रता, वो प्यार वो सद्‌भावना दुलार,

बीते दिनों की कोई निशानी निकालिए। 7

साम्प्रदायिक सद्‌भाव को विशालता एवं सुदृढ़ता के साथ डॉ. अग्रवाल कहते है, ''हमारी कामना है कि हम धर्मनिरपेक्षता को अपने समाज में जीवन–दर्शन के रूप में स्थापित करने में सफल हो। आवश्यकता इस बात की है कि समुदायों का हृदय परिवर्तन करने के पूर्व हम अपना हृदय परिवर्तन करे। धर्म–सम्मान और धर्म निरपेक्षता के बीच जब तक विभाजन रेखा नहीं खीची जाएगी, तब तक इस लक्ष्य तक पहुँचना संभव नहीं होगा।''8 देश में साम्प्रदायिक भाव को नष्ट करने के राष्ट्र के हर व्यक्ति को कार्य करना होगा। समाज की रूढ़ीवादी मानसिकता को त्यागकर विकास के मार्ग को प्रशस्त करना होगा। एक–दूसरे का द्वेष न करते हुए सर्वधर्मसमभाव की भावना को हमे अपनाना होगा।

समग्रतः कहा जा सकता है कि डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने अपनी ग़ज़लों में धर्म के नाम पर चल रहे पाखंड पर दृष्टि डाली है। साम्प्रदायिकता के कारण हमारे देश की बिगड़ती स्थिति पर चिंता व्यक्त की है। व्यष्टि द्वारा समष्टि के मनोभावों पर असामाजिक तत्त्वों द्वारा होनेवाले परिणाम को भी चित्रित किया है। उन्होंने ग़ज़ल को यथार्थ के धरातल पर स्थापित करने का प्रयास किया है। मानवता के पक्षधर डॉ. गिरिराजशण अग्रवाल ने अपनी ग़ज़लों में साम्प्रदायिकता के विविध आयामों पर प्रकाश डाल ग़ज़ल को समृध्द बनाने का प्रयास किया है।

संदर्भ :–1) साम्प्रदायिक सद्‌भाव की कहानियाँ – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 5
2) वातावरण खराब हो चला – अवधकिशोर सक्सेना, पृ. 14
3) खुदा हाफिज कहनेवालों का मोड़ – पृ. 22
4) शिकायत न करो तुम – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 107
5) दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़ल – डॉ. मधु खराटे, पृ. 94
6) शिकायत न करो तुम – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 93
7) शिकायत न करो तुम – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 25
8) साम्प्रदायिक सद्‌भाव की कहानियाँ – डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, पृ. 8

29. डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यासों में अभिव्यक्त सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. गिरीश एस. कोळी
हिन्दी विभाग
श्रीमती प.क.कोटेचा महिला
महाविद्यालय, भुसावल
महाराष्ट्र – 425201

भारत में विविधता में एकता हैं। इस देश में विविध धर्म के, जाती के, वंश के लोग रहते है। साहित्य के माध्यम से सामाजिक सद्भाव को अभिव्यक्त किया जाता है। डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यासों में सांप्रदायिक सद्भाव को चित्रित किया है। समाज में हिन्दू–मुसलमान की अवधारण समाज को दो वर्ग में विभाजित करती है। किसी भी जगह किसी हिन्दू की हत्या की तो वह मुसलमान ही था यह दृष्टिकोन हिन्दूओं के मन में और हिन्दूओं के प्रति मुसलमानों के मन में भी व्देष की भावना दिखाई देती है।

डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यास सांप्रदायिक सद्भाव को अभिव्यक्त किया है। 'आओ लौट चले' उपन्यास में प्रो. राजेन्द्र व्दारा सामाजिक सद्भाव को प्रकट किया है। किसी ने अफवाह फैला दी कि शहर में साम्प्रदायिक दंगा हो गया है। कॉलेज के पचास–साठ लड़के जमालपूर में मुसलमानों को सबक सिखाने के लिए निकते है तब प्रो.राजेन्द्र कहते है– ''मूर्खों, तुम केंचुए को साँप समझ रहे हो। आंतकवादी लाठी, डंडों और छुरों से नहीं लड़ते। उनके पास आधुनिक हथियार होते है। ये बेचारे गरीब तेली और लुहार किसी को क्या मारेंगे ? दो वक्त की रोटी जुटाने में इनकी सारी उम्र कट जाती है। उन्हें साम्प्रदायिकता से क्या लेना–देना ? आंतकवाद से लड़ना है तो अपने आप को तैयार करो। पढ़ो–लिखो और पुलिस, फौज और सीमा सुरक्षा दल में भरती हो जाओ। कौन रोकता है।''[1] प्रो.राजेन्द्रसिंह की बाते सुनकर सारे छात्र अपनी कक्षाओं में चले गए।

''सूरज फिर उगेगा'' उपन्यास में डॉ. तेजपाल चौधरी ने सांप्रदायिकता के उदाहरण दिखाई देते है। इस उपन्यास में सामाजिक सद्भाव को अभिव्यक्त किया है। सांप्रदायिक सद्भाव के सम्बन्ध में डॉ.कृष्णा भावुक लिखते ''वास्तव में साम्प्रदायिकता के अंतर्गत वे सभी भावनाएँ व क्रिया–कलाप आ जाते है, जिसमें किसी धर्म अथवा भाषा के आधार पर किसी समूह विशेष के हितों पर बल दिया जाए तथा उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाए या उसको प्रोत्साहन दिया जाए।''[2] सूरज फिर उगेगा उपन्यास में सामाजिक सद्भाव के अंतर्गत विवके और दिव्या का चित्रण मिलता है। जायसवाल की शराब दुकान विवके बंद करना चाहता है। जायसवाल को कहने दुकान एक दिन बंद करता है। इस संदर्भ में लिखा है– '' उसने एक दिन दुकान बंद रखी। विवेक रात में शराब के दुकान पर एक पेन्टर को बुला कर दुकान के शटर पर लिख देता है कि, यह दुकान स्थायी रूप से बंद हो गया है।''[3] इस घटना से जायसवाल को क्रोध आता है। जायसवाल विवेक को सबक सिखाना चाहता है। विवेक रात के समय घर जाते समय जायसवाल और माधवसिंह ने उस पर हमला कर दिया। विवेक घायल हो जाता है, उसे अस्पताल में भर्ती करवा दिया जाता है– ''जब पुलिस उसे पुछने के लिए आती है कि तुम पर किसने हमला किया ? उसे नाम पता होने पर भी नहीं बोलता। वह कहता है–बैर से बैर शान्त नहीं होता ।''[4]विवेक ने पुलिस को कुछ भी नहीं बताया। दिव्या विवेक से हमलावरों के नाम जानना चाहती है। इस पर विवेक कहता है, ''हमारा उद्देश्य किसी को सजा दिलाने में नहीं है, गाँव में शराब की दुकान को हटावाना है। यह अहिंसात्मक

संघर्ष ही सम्भव है।''[5] विवेक सामाजिक शांती और सद्‌भाव के लिए जायसवाल की शराब की दुकान बंद करवाना चाहता था।

डॉ. तेजपाल चौधरी मानवतावाद पर बल देते है। मानवता मनुष्य के भीतर होनी चाहिए। समाज में रहनेवाला हर व्यक्ति एक जैसे है कोई जाति, अस्पृश्यता, अछुत नही है। इसलिए दलितोध्दार महत्वपूर्ण माना जाता है। इस बारे में महात्मा गांधी का कहना है– " खूब अच्छी तरह सोच समझकर, बिना किसी तरह के संकोच के, मैं यह कहता हूँ कि अगर हिन्दू लोग छुआछुत के इस पिशाच को सर्वथा नष्ट न कर देंगे तो यह पिशाच हिन्दुओं और हिन्दू धर्म– दोनों को खा डालेगा।''[6] समाज में दलित वर्गो को उपेक्षित देखा जाता है। वह समाज का पिछडा वर्ग होने के कारण शिक्षा के व्दार भी बंद किए जाते है। अज्ञान ही सबसे बड़ा पाप है। शिक्षा से सभी लोगों के जीवन मं परिवर्तन की लहर आ सकती है। डॉ. तेजपाल चौधरी ने उपन्यास में दलितों के पिछे पडने के कारण के बारे में बताने का प्रयास किया है। इस बारे में दिव्या कहती है, " बाबा ठीक कहते है। दलित और अशिक्षित वर्ग के साथ यही हुआ है। हमने न उनको कशक्षा दी , न उनकी चेताना को जगाया और न उनके साथ सहानुभूति दिखाई। बस उनसे घृणा करते रहे।''[7] इस प्रकार दलितों के उध्दार के लिए शिक्षा एक मात्र साधन है। उनसे हमें घृणा नहीं करनी चाहिए।

भारत कृषी प्रधान देश है। डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यास में किसानों की समस्या को हल करके सद्‌भाव का चित्रण किया है। रवि गाँव में किसानों और मजदूर वर्ग की समस्याओं को हल करता है। गाँवों में गेहूँ की फसल तैयार खड़ी थी। परन्तु कटाई के लिए मजदूर जादा की माँग करने लगे। किसानों ने पहले से चली आ रही परम्परा से मजदूरी दिया करते थे, जो दोनों के लिए अनुकू ल थी। किसानों की फसल खेत में खड़ी थी। मजदूर फसल काँटने के लिए तैयार नहीं थे। रवि ने सुझाव दिया किसानों की पंचायत बुलाई जाये। पंचायत बुलाई गयी। वह जो फैसला करेगी, वह सबको स्वीकार्य करेगा। अन्त में तय हुआ कि गाँव में मनादी करा दी जाये कि कोई मजदूर किसानों के खेतों में से अपन पशुओं के लिए घास नहीं निकालेगा और न ही खाली पड़े खेतों में अपनी गाय–भैंसे चरायेगा।''[8] इस प्रकार के निर्णय से मजदूरों पर मुसिबत आ गई। किसानों के खेतों में सिर्फ साल में छह महीने काम होता है। इस प्रकार मजदूर और किसानों की समस्याओं पर रवि ने हल निकाल लिया। मजदूरों ने रवि की बात मान ली।

रवि समाज सुधारक एवं नैतिक विचारों के मार्ग पर चलने वाला नव युवक है। किसानों की समस्याओं के प्रति रवि कहता है, ''किसान भाईयों, आप जानते है आज किसानों के हितों की किस तरह उपेक्षा हो सही है। बीज, खाद, बिजली और डीजल के दाम निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं, किन्तु अनाज और गन्ने के दाम घट रहे है। इसकी भी दुःखद बात यह है कि हजारों क्विटल गन्ना खेतों में खडा है परन्तु उसका ग्राहक कोई नहीं। शुगर मिलें सब जानते हुए भी अप्रैल में कर दी गयीं। मिमालिक मनमानी कर रहे हैं और सरकार आँख–कान किये बैठी है। इस अन्याय को चुपचाप सहन नहीं कर सकते।''[9] रवि किसानों के साथ मिलकर अन्याय का विरोध करने के लिए अहिंसात्मक आंदोलन करने की बात करती है। इस बारे में रवि कहता है – ''हम कलेक्टरेट पर अपना मोर्चा ले जायेंगे। सरकार से निवेदन करेंगे कि बन्द पड़ी मिलें फौरन चाले करायी जायें और किसानों से समर्थन मूल्य पर गन्ना लिया जाये। जब तक खेत में एक भी गन्ना शेष रहे, मिलमालिक–मिल बन्द न कर सकें। आपके यह प्रस्ताव मंजूर है ?''[10] रवि और धामी साहब के नेतृत्व में कलेक्टर साहब से सारे किसानों के आंदोलन के साथ मिलने चले गए। रवि और धामी

साहब कलेक्टर साहब से लिने गए। कलेक्टर साहब ने सरकार को रिपोर्ट भेजी। रिपोर्ट में कहा था ''किसानों का यह आंदोलन पूर्णतया अहिंसक और अनुशासित आयोजन था। वास्तव में गन्ना बहुत कड़ी मात्रा में अभी भी खेतों में खड़ा है। सरकार यथोचित कार्यवाही करे।''[11] इस प्रकार सरकार ने घोषणा की कि जब तक किसानों का गन्ना खेतों में है उस समय तक कोई भी मिलें फिर से शुरू की जायए। किसानों के आंदोलन में सबसे बड़ी जीत थी, जो पूर्णतया रूप से अहिंसात्मक रूप में दृष्टिगोचर होती है।

डॉ. तेजपाल चौधरी ने उपन्यासों में धार्मिक सद्भाव को चित्रण हुआ है। अश्विन की बहन पायल का विवाह संजीव के साथ किया जाता है। संजीव ब्राम्हण है और पायल एक किसन की लडकी। अश्विन के साथ पूरे परिवार को यह रीश्ता मंजूर नहीं था। इसी के साथ संजीव के पिता रामरतन शुक्ल को अन्तरजातीय विवाह पंसद नहीं था। वह गर्व से कहते है, ''हम ब्राम्हण है, ऋषि–मुनियों की सन्तान ! हम बेटे का अन्तरविवाह करके अपना इहलोक और परलोक में नहीं बिघाड़ सकते।''[12]संजीव और पायल एक दूसरे से प्रेम करते थे। पूरे गाँव को संजीव और पायल के बारे में पता चल गया था। इसलिए पायल से विवाह करने के लिए कोई तैयार नहीं था। रवि रामरतन शुक्ल को समझाते हुए कहते है – ''आपका जातीय अभिमान उस समय कहा चला गया था, जब आपका सुपुत्र नाबालिक लडकी से इश्क फरमा रहा था ? अपने उच्च कुल की इतना ही खयाल था तो इस ऋषिपुत्र ने मासूम को सुनहरे सपने क्यो दिखाये ? यदि मुझे समय रहते इसकी करनी का पता चल जाता तो अपनी बहन को जमीन में गाड़ देता और इसके चीरकर दो टुकड़े कर देता।.... और जहाँ तक जातीय की श्रेष्ठता का प्रश्न है हम भी राम और कृष्ण के वंशज है, जिनका चरणामृत पिकर आप लोग आने आप को धन्य समझते है।.....यह मैं आपके जातीय अभिमान को ललकारने के लिए कह रहा हूँ, नहीं तो आज के युग में जाति–पाँति कोई अर्थ नहीं रहा। और कर्म से जाति मानें तो आपकी और हमारी एक ही जाती है। आप किसान हैं हम भी किसान हैं... ।''[13] लेकिन अंत में रवि की बाते सुनकर रामरतन शुक्ल ने संजीव और पायल का विवाह के लिए अनुमति देते है।इसी प्रकार रवि भी अन्तरजातीय विवाह करता है। रवि कहता है, ''भैया, मैं अन्तरजातीय विवाह करना चाहता हूँ। पायल की शादी के समय जब अश्विन मुझसे बहसस कर रहा था तो मैंने बातों–बातों में उसके सामने प्रण किया था कि शादी करूँगा तो दूसरी जाति की लड़की से।''[14] रवि शुभ्रा से शादी करता है।शुभ्रा जाती से बंगाली ब्राम्हण थी। इस प्रकार रवि और शुभ्रा का अन्तरजातीय विवाह सम्पन्न होता है।

अतः डॉ. तेजपाल चौधरी के उपन्यासों मे साम्प्रदायिक सद्भाव का चित्रण दृष्टिगत होता है। इसमें सामाजिक, धार्मिक बडी सजकता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। सामाजिक सदभाव में व्यक्ति का सामाजिक दायित्व, गॉव के प्रति कर्तव्य आदि का चित्रण किया है। धार्मिक संदर्भ में हिन्दू – मुसलमान दंगल, जाति, अस्पृश्यता, अछुत, अन्तरजातीयस विवाह आदि के माध्यम से साम्प्रदायिक सद्भाव का चित्रण हुआ है।

संदर्भ

1 आओ लौट चले – डॉ. तेजपाल चौधरी पृ. 123
2 भारतीय संस्कृति की महिमा– डॉ.कृष्णा भावुक पृ.45
3 सूरज फिर उगेगा– डॉ. तेजपाल चौधरी पृ.82

4 पूर्ववत्– पृ. 91
5 पूर्ववत्– पृ. 88
6 हिंदी कहानी में गांधीवाद – डॉ.निशा गहलौत पृ.336
7 सूरज फिर उगेगा– डॉ. तेजपाल चौधरी पृ. 79
8 पूर्ववत्– पृ. 41
9 पूर्ववत्– पृ. 99
10 पूर्ववत्– पृ. 99
11 पूर्ववत्– पृ. 100
12 पूर्ववत्– पृ. 67
13 पूर्ववत्– पृ. 68
14 पूर्ववत्– पृ. 107

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

30. हिंदी काव्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव

इबरार खान
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
मौलाना आजाद नेशनल उर्दू युनिवर्सिटी,
हैदराबाद 500032

आदिकाल में अब्दुर्रहमान तथा अमीर खुसरा का नाम लिया जाना प्रासंगिक है। रामधारी सिंह लिखते है ''अमीर खुसरो, जायसी, अकबर, रहीम और दाराशिकोह मुसलमान भी थे और भारत के भक्त भी।''1 कबीर के साहित्य में राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के महत्वपूर्ण तत्व सांप्रदायिक सद्‌भाव भरे पडे है। वे बराबर हिंदुओं मुसलमानों को समझाते रहते थे।

हिंदू कहत है राम हमारा, मुसलमान रहमाना।
आपस में दोउ लडे मरत है, भेद ना कोई जाना। –कबीरदास

कबीर के संबंध में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते है – ''समाज सुधार की भावना या हिंदू मुस्लिम एकता कबीर के लिए प्रमुख वस्तु थी जिसे उन्होंने अपनी काव्य संवेदना में ढाला, और काव्यबनकर ही उने संदर्भ में वह स्पृहणीय है।''2

मलिक मुहम्मद जायसी की चर्चा करते हुए आ. रामचंद्र शुक्ल लिखते है ''सौ वर्ष पहले कबीरदास हिंदू और मुसलमान दोनों के कट्टरपन को फटकार चुके थे। पंडित और मुल्लाओं को तो नहीं कह सकते पर साधारण जनता राम और रहीम की एकता मान चुकी थी।''3

प्रेमाश्रयी शाखा के कवि भले ही मुसलमान थे परंतु कथा वे हिंदुओं की ही कह रहे थे तथा हिंदू धर्म संस्कृति की चर्चा भी अपने काव्य में कर रहे थे।

यह तन जारौ छार कै, कहों कि पवन उड़ाव।
मकु तेहि मारग होइ परे, कन्त धरै जहं पांव।। – जायसी

पद्‌मावती कहती है यह शरीर जलाकर राख कर दूँ और पवन से कहूँ कि मेरी राख उड़ाकर ले जाओ। मेरी इस राख को उस मार्ग पर गिरा देना जिस मार्ग से मेरे स्वामी जाते हैं। यह राख स्वामी के पैरों से छू जाएगी तो मैं धन्य हो जाउंगी।

ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह पैर स्पर्श करने की बात की ओर संकेत किया जा रहा है। पैर छूने की बात हिंदू धर्म में है इस्लाम में नहीं है, जबकि जायसी मुसलमान थे। सूफी कवियों में सूरदास नामक एक सूफी कवि का उल्लेख मिलता है। राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्‌भाव का उदाहरण नूर मुहम्मद के यहाँ भी मिलता है –

जानत है वह सिरजनहारा, जो पिछु है मन मरम हमारा।
हिंदू मग पर पाँव न राखेउ, का जो बहुतै हिंदी भाखेऊ। –नूर मुहम्मद

सूरदास ने कृष्ण भक्ति की है। उनके संबंध में रामधारी सिंह दिनकर लिखते है ''हिंदी के दूसरे महाकवि सूरदास में भी मुसलमानों के प्रति निंदा और आक्रोश के भाव नहीं है।''4

तुलसीदास रामभक्तिशाखा के कवि है। जाति के ब्राह्मण थे परंतु रसखान व रहीम से उनकी मित्रता जग जाहिर है। तुलसी ने रामचरितमानस को सबसे पहले किसी को सुनाया तो वे रसखान थे। रसखान भले ही कृष्ण भक्त थे परंतु वह मुसलमान थे।

जमुनातट पै त्रय वत्सर लौ, रसखानहिं जाई सुनावत भौ। मूल गुसाई चरित
एक दरिद्र ब्राह्मण हेतु तुलसीदास ने रहीमदास की यह पंक्ति लिखी –
सुरतिय नरतिय नागतिय अस चाहत सब कोय। – तुलसीदास

रहीम ने उस दरिद्र ब्राह्मण को धन देकर विदा करते समय कहा –

गोद लिए हुलसी फिरै तुलसी सों सुत होय। –रहीम

तुलसी गरीबनेवाज तथा जुलाहा शब्द का प्रयोग भी करते है जो कि वास्तव में हिंदी के शब्द नहीं है। रामचरितमानस के उत्तरकांड में कलिकाल वर्णन को आधार बनाकर कुछ आलोचक कहते है। तुलसी मुसलमानों के विरोधी थे परंतु यह सत्य नहीं है। दिनकर लिखते है ''तुलसीदास के सारे साहित्य में इस बात का कहीं रंच भर भी प्रमाण नहीं है कि मुसलमानों पर उन्हे तनिक भी क्रोध या आक्रोश था।... तुलसीदास का सम्मान दोनों ही धर्मों के लोग करते थे।''5

रसखान मुसलमान होकर भी कहते है –

मानुष हौ तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।

रहीम की भारत भक्ति से कौन परिचित नहीं है। दिनकर लिखते है ''अपने धर्म और आध्यात्मिक विश्वास पर सुदृढ रहते हुए भी मुसलमान कितना अधिक भारतीय हो सकता है, रहीम इसके जाज्वल्यमान प्रमाण है।'' रहीम की प्रशंसा करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते है ''मुसलमान और उस पर भी तत्कालीन शासन के अंग होकर वे हिंदू देवताओं का स्तुतिगान करते हैं। सही दरबार के मानी सदस्य होते हुए सूफी संतों भक्तों की कोटि से अपने को जोडते है। हिंदू मुसलमान के समरस होते जातिय जीवन के वे प्रतिनिधि कवि है।''6

रहीम के संबंध में डॉ. बच्चन सिंह लिखते है ''साम्प्रदायिकता कहीं छू भी नहीं गयी थी। मुसलमान होते हुए भी हिंदू देवताओं का श्रद्धापूर्वक स्मरण तथा पौराणिक गाथाओं का संदर्भण इस देश की गौरवपूर्ण संस्कृति के प्रति उनकी आस्था का सूचक है।''7

रामधारी सिंह दिनकर लिखते है ''अनीस अहमद, कमाल, जमाल, जलालुद्दीन, ताज, तानसेन, नवाज, फकीरूद्दीन, आलम और शेख तथा मुबारक और रसलीन आदि मुसलमान कवियों ने हिंदी में उच्च कोटि की रचनाएँ की और हिंदू हृदय को इस विषय में काफी आश्वस्त किया किया कि भारत के मुसलमान और कोई नहीं भारत की ही संतान है और उनकी तथा हिंदुओं की किस्मत एक है।''8

हिंदी में मुस्लिम कवयित्री ताज की असांप्रदायिक सोच का उल्लेख करना अति आवश्यक है। ताज के संबंध में दिनकर जी लिखते है ''ताज मुसलमान थी और वे मुसलमान रहीं भी। किंतु कृष्ण तत्व की महिमा दिखाने के उत्साह में उन्होंने जो कुछ कहा, वह केवल असांप्रदायिक कवि ही कह सकता था।''9

रीतिकाल में राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भाव के उदाहरण मिलते है। रीतिकाल में आलम नामक कवि के संबंध में आ. रामचंद्र शुक्ल लिखते है ''ये जाति के ब्राह्मण थे, पर शेख नाम की रंगरेजिन के प्रेम में फंसकर पीछे से मुसलमान हो गए और उसके साथ विवाह करके रहने लगे। आलम को शेख से जहान नामक पुत्र भी हुआ।''10 बोधा का विवाह भी सुभान नामक नर्तकी से हुआ था। द्रष्टव्य है उर्दू में सुभान तथा सुबहान एक ही तरह से लिखा जाता है। सुबहान शब्द मुसलमानों में होता है यदि बोधा की पत्नी का नाम सुबहान रहा होगा तो फिर बोधा ने एक मुस्लिम महिला से विवाह किया था, इसे स्वीकार करने में संदेह नहीं होना चाहिए। रीतिकाल में भूषण का नाम एक वीर रस से युक्त कवि के रूप में किया जाता है। उन्होंने शिवाजी व छत्रसाल की प्रशंसा की है। शिवाजी का युद्ध मुस्लिम बादशाहों से होता था। इस आधार पर कुछ संकीर्ण मानसिकता के आलोचक भूषण को मुस्लिम विरोधी कवि सिद्ध करते है परंतु यह सत्य नहीं क्योंकि भूषण मुस्लिम

विरोधी नहीं बल्कि उन मुस्लिम बादशाहों के विरोधी थे जो हिंदू जनता को प्रताडित करते थे। भूषण ने अकबर जैसे बादशाह की प्रशंसा भी की है।

भारतेंदु युग में देशप्रेम के साथ राजभक्ति भी दृष्टिगोचर होती है। द्विवेदी युग में आ. महावीर प्रसाद द्विवेदी के दिशा निर्देश में हिंदी साहित्य आगे बढ रहा था। मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय एकता के लिए लिख रहे थे। उन्होंने अपनी काव्य रचना हिंदू में हिंदुओं, मुसलमानों, पारसियों ईसाईयों के प्रति अपने उद्गार व्यक्त किए है।

छायावाद के प्रमुख कवियों में राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भाव दृष्टिगोचर होता है। रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते है ''राष्ट्रीयता जहाँ कविता बनी है वे प्रसाद और निराला के गीत है।''11 वे आगे लिखते है ''कामायनी के मनु और शक्तिपूजा के राम की हताशा मनःस्थिति एक जैसी है जो इस समकालीन रचनाकारों की समकालीन राष्ट्रीय दशा से तुलनीय है।''12 राष्ट्रीय एकता की भावना आगे चलकर दिनकर, नागार्जुन, मुक्तिबोध,रघुवीर सहाय, शमशेर बहादुर सिंह आदि में भी मिलती है।

स्मकालीन परिस्थितियों में राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भाव बनाकर रखने की नितांत आवश्यकता है। समकालीन कवियों का भी ध्यान इस ओर है और वे राष्ट्रीय एकता व सांप्रदायिक सद्भाव पर कविताएँ लिख रहे हैं। जो प्रशंसनीय है। इस विषय में एक महत्वपूर्ण बिंदु द्रष्टव्य है कि मात्र लेखन में ही राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव की बात नहीं की जानी चाहिए अपितु वे बातें हमारे व्यवहार में भी दृष्टिगोचर होना चाहिए।

संदर्भ

1. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, पृ 201
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.40
3. त्रिवेणी, आ. रामचंद्र शुक्ल, पृ.15
4. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, पृ.252
5. वही, पृ.252
6. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.52
7. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, डॉ. बच्चन सिंह, पृ.160
8. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, पृ.256
9. वही, पृ.256
10. हिंदी साहित्य का इतिहास, आ. रामचंद्र शुक्ल, पृ.228
11. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.40
12. वही, पृ.123

31. 'सत्ती मैया का चौरा' उपन्यास में सांप्रदायिक सद्भाव

जयराम गाडेकर
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
फर्ग्युसन महाविद्यालय, पुणे–04

हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध एवं प्रगतिवादी उपन्यासकार के रूप में भैरवप्रसाद गुप्त का नाम जाना जाता है। भैरवप्रसाद गुप्त ने प्रेमचंद की तरह शहर और गांव दोनों को अपनी रचना का केंद्र बनाकर मानवीय शोषण के रूपों को जड़ से उखाड़कर वर्गहीन समाज की राह तैयार की है। गुप्त जी ने समाज के बुनियादी वर्गो के किसान, मजदूर का चित्रण किया है साथ ही देश विभाजन की पृष्ठभूमि मूल्यों का विघटन, हिंदू–मुस्लिम समस्या को केंद्र में रखकर साहित्य अंकित किया है। गुप्त जी के प्रमुख उपन्यास 'शोले' (1946), 'मशाल' (1948), 'गंगा मैया' (1952), 'जंजीरें और नया आदमी' (1954), 'सत्ती मैया का चौरा' (1959), 'धरती' (1962), 'आशा' (1963), 'कालिन्दी' (1963), 'अंतिम अध्याय' (1970), 'नौजवान' (1972), 'एक जीनियस की प्रेमकथा' (1980), 'सेवाश्रम' (1983), 'काशी बाबू' (1987), 'भाग्य देवता' (1992), 'अक्षरों के आगे मास्टरजी' (1993), 'छोटी–सी शुरूआत' (1997) आदि। साथ ही कहानी संग्रह, नाटक और एकांकी संग्रह में भी अपनी कलम चलाई है।

सांप्रदायिकता की संकल्पना स्पष्ट करने से पहले संप्रदाय क्या है यह जानना जरूरी है। ''संप्रदाय' शब्द का प्रयोग सहस्त्रों वर्ष पूर्व से ही होता रहा है तथा धर्म, दर्शन, साहित्य एवं विविध क्षेत्रों से संबंधित अगणित संप्रदाय प्रचलित रहे हैं। संप्रदाय शब्द 'दा' धातु के अंत में 'धत्र्' प्रत्यय तथा पूर्व में 'सम्' और 'प्र' उपसर्ग जोडने से संप्रदाय शब्द बना है। कोश ग्रंथों से हटकर व्यवहार में ऐसे अनेक शब्द प्रचलित हैं, जो संप्रदाय के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। पंथ, परंपरा, मत, वाद, मार्ग, शब्द संप्रदाय के ही पर्याय है।''[1] वर्तमान में संप्रदाय, सांप्रदायिकता का इतना संकीर्ण संकुचित अर्थ किया जा रहा है कि, उसे अनर्थ कहना असंगत नहीं होगा। संप्रदाय को कट्टरता से जोड़ दिया गया हैं। भ्रमवश 'कम्यूनलिज्म' और 'फिरकापरस्ती' को सांप्रदायिकता का पर्याय मान लेना संकीर्ण मनोवृत्ति का परिणाम कहा जा सकता है। अंग्रेजी भाषा में 'स्कूल' शब्द संप्रदाय का सही पर्याय रहा है। डॉ. पीताबंर दत्त बडथ्वाल तथा अन्य विद्वानों ने संप्रदाय के लिए 'स्कूल' शब्द का ही प्रयोग किया हैं किंतु पिछले पाँच दशकों से 'कम्यूनलिज्म' और 'फिरकापरस्ती' शब्दों ने इतना उत्पात मचा दिया है कि, अच्छा–भला शुद्ध सात्विक शब्द बदनाम हो गया है। आज के युग में संप्रदाय और सांप्रदायिकता का अर्थ पूर्णतः बदल गया है। राजनीति में संप्रदाय को विशेष महत्व प्राप्त होता है क्योंकि राजनेता किसी संप्रदाय विशेष से संबंधित होता है, वह अपने संप्रदाय के विकास के लिए तत्पर रहता है। कभी–कभी वह संप्रदाय का उपयोग सत्ता प्राप्त करने तथा कुर्सी बचाने के लिए करता है। भारत में सांप्रदायिकता राजनेताओं के हाथ की कठपुतली बन गई है। सांप्रदायिकता की परिणति दंगे, फसाद में होती है। आज भारत में सांप्रदायिकता का बोलबाला वैयक्तिक आपसी संबंध, स्थानीय तथा राष्ट्रीय राजनीति, परस्पर धार्मिक संबंध और जातीय टकराव आदि जगहों पर प्रखर रूप से देखने को मिलता है। राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में सांप्रदायिकता का उपयोग अपने समूह का प्रभाव निर्माण करने के लिए एक हथियार के रूप में किया जा रहा है। हर गाँव, शहर और कस्बे में इस तरह के सांप्रदायिक संगठनों का बोलबाला है। आधुनिक कोशों में इसका अर्थ 'जातिविषयक भावना' अथवा 'जातिवाद' दिया है। सांप्रदायिक से तात्पर्य किसी विशेष संप्रदाय से संबंध रखनेवाला होता है। अतः हम कह सकते हैं कि सांप्रदायिकता मनुष्य के उस संकीर्ण और स्वार्थपरक विचारधारा

का प्रतीक है जिससे धार्मिक समुदायों में परस्पर द्वेष और घृणा की भावना पनपती है और हिंसा की आग भड़कती है।

प्रस्तुत उपन्यास में पिपरी गांव के जन्म से लेकर सन् 1957 ई. तक के घटनाओं का चित्रण मिलता है। इस गांव के मुस्लिम जमींदार मन्ने की कथा है वही उपन्यास का प्रमुख पात्र है। उसके बचपन का दोस्त मुन्नी है जो बाद में कम्युनिष्ट विचारधारा का समर्थक होता है। इन दोनों के बहाने विभाजन की समस्या और सांप्रदायिक प्रश्नों का विवेचन होता है। मन्ने के पिता स्वभाव से बहुत अच्छे है उन्होंने कभी गांव के हिंदू–मुस्लिमों में मजहब के आधार पर अलगाव फैलाने की कभी कोशिश नहीं की। मन्ने पर भी इसी विचार का प्रभाव आगे हमें दिखाई देता है। पिता के मृत्यु के बाद मन्ने पर जिम्मेदारी आती है। वह उच्चशिक्षा पाने के बाद वह अपने गांव में रहता है। गांव में धीरे–धीरे अलगाववादी शक्तियाँ बढ़ने लगती है। मन्ने इन सभी शक्तियों से अलग रहने की कोशिश करता है। अपने बचपन का साथी मुन्नी के विचारों से प्रभावित होकर वह गांव के नवनिर्माण के योजनाओं में हिस्सा लेता है। सतीमैया के चौरे के बहाने हिंदू–मुस्लिम संघर्ष को तीव्र करने का प्रयत्न होता है। प्रस्तुत उपन्यास में सतीमैया का चौरा गांव के सांप्रदायिक संघर्ष का प्रतीक बन जाता है। और अंत में उसका खोदा जाना इसी का सूचक है कि अब इसकी आवश्यकता समाप्त हो गई है। अब गांव में धीरे–धीरे चेतना आ जाती है। इस प्रकार समाजवादी जीवनदृष्टि का निरूपण उपन्यास का मूल उद्‌देश्य रहा है। इस उपन्यास में प्रमुख पात्र– मन्ने, मुन्नी, संतराम तेली, जुब्ली जो आम मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व करते है तो कैलाशिया, भिखरिया, बसमतिया, चन्नन आदि गौण पात्र है।

इसमें हिंदू–मुस्लिम और विभाजन की समस्या को भी साम्यवादी दृष्टिकोण से देखते हैं। इस उपन्यास में तीन पीढ़ियों के जीवन का वर्णन है, साथ ही पिपरी गांव की राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों का चित्रण मिलता है। उपन्यासकार ने बड़ी कुशलता से पिपरी गांव के मन्ने और मुन्नी की बचपन की घटनाओं और गांव के माहौल का चित्रण किया है। इस गांव की अनेक छोटी–छोटी घटनाएँ है जिससे सांप्रदायिकता को जन्म दिया जाता है। उपन्यास में ''मुसलमान मन्ने जब हिंदी में परीक्षा देने का निर्णय लेता है, गांव में हलचल–सी मच जाती है। इस्लामिया स्कूल के मास्टर और प्राइमरी स्कूल के नायब प्रचार करते हैं कि हिंदू लड़के मुन्नी के मुकाबिले में पण्डित जी ने मुसलमान लड़के मन्ने को खड़ा कर दिया है और यह कि मन्ने के अव्वल आने पर हलचल मच जाती है। लोग मुन्नी को चिढ़ाते हैं– और दोस्ती करो तुरूक से। बड़े पण्डितजी को स्कूल में आकर कई लोग धमकी दे जाते हैं– इस बात को आगे ले जाएगें। यह सरासर अन्याय है हिंदूओं के स्कूल में मुसलमान अव्वल आ जाय। बड़े पण्डित जी को माफी माँगकर वादा करना पड़ता है कि आगे से कभी ऐसा नहीं होगा।''[2] इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि हिंदूओं के स्कूल में मुसलमान प्रथम आता है। इससे हिंदूओं की भावना को चोट पहुँचती है। और फिर मन्ने कभी भी परीक्षा में प्रथम नहीं आता। मुन्नी की मन्ने से घनिष्ठ मित्रता को मुन्नी के धर्म–विद्रोह के रूप में स्वीकारा जाता है। इसके जड़े इतनी गहरी है कि मासूम मन्ने को भी इस विभाजन रेखा का ज्ञान होता है। यहाँ तक की वह मुसलमान है इसलिए कोई हिंदू उसके साथ खाना नहीं खाता। अब गांव में सुख–शांति, भाई–चारा का माहौल में धीरे–धीरे परिवर्तन होने लगा। गुप्तजी मूलतः प्रगतिवादी साहित्यकार है। उन्होंने हिंदू–मुस्लिमों में सांप्रदायिकता को फैलाने के लिए आर्थिक विषमता का कारण मानते हैं। उपन्यास में आर्थिक विषमता को गुप्तजी ने इस प्रकार अंकित किया है– ''हिंदू–मुसलमान का नारा देंगे और शोर मचाएँगे कि हिंदूओं को निचा दिखाने के लिए

मुसलमान जमींदार ने यह साजिश की है। यह कहा जाएगा कि, हिंदू खतरे में है। सभी हिंदूओं को मिलकर जमींदार का मुकाबिला करना चाहिए।''[3] इससे स्पष्ट हो जाता है कि हिंदू–मुस्लिमों में वैमनस्य की भावना पनपने लगी है।

प्रस्तुत उपन्यास में शिक्षा क्षेत्र से भी किस तरह सांप्रदायिकता बढ़ती है। इसका चित्रण उपन्यास में मिलता है– ''मुस्लिम युनिवर्सिटी और हिंदू–युनिवर्सिटी के नाम से ही चिढ़ थी। कौन नहीं जानता कि इन संस्थाओं के जन्म के पीछे हिंदू–राष्ट्रवाद और मुस्लिम–कौमियत की संकीर्ण मनोवृत्ति थी और इन दोनों संस्थाओं ने शिक्षा जैसी पवित्र चीज को भी सांप्रदायिकता के रंग में रंग दिया था।''[4] इस कथन से स्पष्ट है कि इस विश्वविद्यालय से भारतीय हिंदू–मुस्लिम स्वतंत्र सत्ता लाना चाहते थे। इस संस्था के जितने भी मुस्लिम छात्र थे वे आगे चलकर अधिक–से–अधिक लीगी और पाकिस्तान के प्रचारक बनें। आगे यह संस्था मुस्लिम विश्वविद्यालय के रूप में स्थापित हुई। इससे स्पष्ट होता है कि सांप्रदायिकता के मूल में शिक्षा व्यवस्था, धार्मिक, सांस्कृतिक, इतिहास, तत्कालीन नेतृत्व, राजनीति और आर्थिक स्थिति रही है। देश के विभाजन में आर्थिक समस्या से अधिक राजनीतिक ने देश का विभाजन किया है– ''हिंदू–मूसलमान की बात कभी भी अपने दिमाग में उठने न दो, यह समस्या धार्मिक नहीं राजनीतिक है और सही राजनीति ही सांप्रदायिकता का अंत करा सकती है।''[5] इस कथन से कह सकते हैं कि राजनीति ही सांप्रदायिकता का अंत कर सकती है। यह राजनीति कौन–सी है ? उपन्यासकार उसे साम्यवादी राजनीति कहते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में पृष्ठ क्र. 630, 631 पर स्पष्ट किया है कि सांप्रदायिकता किन–किन कारणों से बढ़ रही है–

1. हिंदू–मुस्लिमों में एक दूसरे के प्रति भय की भावना।
2. मज़हब के कारण।
3. मुस्लिम और हिंदू–अहंवाद और भारतीय मुस्लिमों का इतिहास।
4. आर्थिक विषमता के कारण।
5. शिक्षा संस्था (अलीगढ वि., हिंदू वि.) के कारण।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि काफी अंशो तक ये कारण यथार्थ भी है और महत्वपूर्ण भी रहे है। इसी कारण विभाजन की पृष्ठभूमि का वातावरण तैयार होने लगा। परिणाम स्वरूप ये दोनों शक्तियाँ कार्य करने लगी। पिपरी गांव के कुछ लड़के और महाजन हिंदू संगठन की ओर मुड़ जाते है। उस समय देश में धीरे–धीरे आर्यसमाज और आर. एस. एस. हिंदू संगठन के लिए प्रयत्नशील होते गए। इस गांव में आर्य–समाज के प्रचारक आकर कभी–कभी उपदेश के नाम पर हिंदूओं को भड़का रहे थे। मुस्लिम लीग के कार्यकर्ता गांव आकर गांव में मुस्लिम लीग की स्थापना कर चुके है। तो दूसरी ओर गांव के हिंदू रामचंद्र देहवली को बुलाकर उनका व्याख्यान आयोजित कर रहे है। कई सदियों से जहाँ दोनों धर्मों के लोग बड़े प्यार से जी रहे थे वहीं अलगाववादी विचारों का जहर दे रहे थे। मूलतः तत्कालीन समाज में अशिक्षत समाज अधिक था। उन्हें तो पता भी नहीं था पाकिस्तान कहा से होगा और वह क्यों होने जा रहा है। पाकिस्तान बनने के बाद पिपरी गांव के सामान्य मुस्लिम जोश में लीगी बन गए थे। उन्हें विभाजन की भयानकता का पता ही नहीं था वे तो समझ रहे थे कि जहाँ उनकी जमीन–जायदाद है, वह भी पाकिस्तान में जाएगी क्या ? कहा जाता है कि लीग का जन्म तो राजनीति और अंग्रेजों के प्रेरणा से ही हुआ। मुस्लिम सांप्रदायिकता के कारण ही हिंदू सांप्रदायिकता का जन्म (राजनीतिक स्तर) हुआ है। क्योंकि सांप्रदायिकता को फैलाने के लिए तत्कालीन राजनीति अधिक मात्रा में सक्रिय रही है। प्रस्तुत उपन्यास में मन्ने हमेशा गांव में

सद्भाव स्थापित रखने का प्रयास करता है। लेकिन अलगाववादी शक्तियाँ के आगे उसका कुछ नहीं चलता।

अतः कह सकते हैं कि गुप्तजी ने उपन्यास में सांप्रदायिकता के समस्याओं को चित्रित किया है लेकिन वह सांप्रदायिकता राजनीति और आर्थिक कारण से बढ़ती है। भारत का विभाजन और स्वतंत्र होने के बाद भी देश में आज भी हिंदू–मुस्लिम समस्या, सांप्रदायिक दंगे, अलगाव की राजनीति, जातिवाद, प्रांतवाद, भाशावाद, रामजन्मभूमि–बाबरीमस्जिद का विवाद आदि समस्याएँ रही है। आज भारत विभाजन और स्वतंत्र हुए उनहत्तर साल हो गए फिर भी हम सांप्रदायिकता को मिटा नहीं सकें। यह काम हमें सबसे पहले परिवार, मोहल्ला, गांव की चौपाल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, मिलों, फैक्ट्रियों, बैकों, सरकारी दृतरों, राजनीतिक के सभी संगठनों से, धार्मिक मठों से अन्य मेल–मिलाप के जगह से शुरू होना चाहिए, जो काम आज तक उपेक्षित ही पड़ा है। आज सांप्रदायिकता के खिलाफ वैचारिक और विचारधाराओं का संघर्ष करके सांप्रदायिक घृणा और हिंसा पर रोक लगाकर मानवता और सद्भाव स्थापित करना है।

संदर्भ :

1. मानव मूल्य–परक शब्दावली का विष्वकोष (पंचम खंड) –संपादक डॉ. धर्मपाल मैनी,स्वरूप एंड सन्ज, नई दिल्ली,

संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 2010,11

2. सत्ती मैया का चौरा – भैरवप्रसाद गुप्त, नीलाभ प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 48
3. सत्ती मैया का चौरा – भैरवप्रसाद गुप्त, नीलाभ प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 57
4. सत्ती मैया का चौरा – भैरवप्रसाद गुप्त, नीलाभ प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 262
5. सत्ती मैया का चौरा – भैरवप्रसाद गुप्त, नीलाभ प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 593

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

32-रामधारी सिंह दिनकर की कविताओं में राष्ट्रीय चेतना का स्वर

डा.कल्पना गवली
एसोसियेट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग,कला संकाय,
महाराजा सयाजीराव विश्वविधालय, बडौदा

राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर ने हिंदी साहित्य में न सिर्फ वीर रस के काव्य को एक नयी ऊंचाई दी, बल्कि अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का भी सृजन किया है | मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य के प्रथम राष्ट्र कवि थे तो दिनकर उनके सच्चे अर्थ में उतराधिकारी थे| दिनकर ने प्रारंभ से ही ओजस्विता एवं तेजस्विता से परिपूर्ण कविताएँ लिखी| उनकी काव्य-कृतियाँ में 'बारडोली विजय', 'रेणुका', हुंकार', रसवन्ती द्वन्द गीत सामधेनी, बापू इतिहास के आंसू, दिल्ली, धूप और धुँआ, नील कुसुम, नील के पत्ते, सीपी और शंख, परशुराम की प्रतिज्ञा, कोयला और कवित्व आदि विशेष उल्लेखनीय है| प्रणभंग , कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, उर्वशी उनके प्रबंध काव्य है उनकी चुनी हुई कविताएँ चक्रवाक में संग्रहित है|

आधुनिक युग में भारत माता की कल्पना अथर्ववेद के सुक्तकार की देन है वह स्वयं को धरती का पुत्र मानता हुआ कहता है- "माता भूमि: पुत्रोहं पृथिव्या: अर्थात मेरी मातृ भूमि"

'क्रांति धात्री, कवित जाग उठ, आडम्बर में आग लगा के
पतन पाप पाखण्ड जले जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे '

हिंदी साहित्य के अन्य कवियों में मैथिली शरण गुप्त रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि कवियों से रामधारी सिंह दिनकर की राष्ट्रीय चेतना भिन्न रही है. दिनकर के काव्य में पौरुष और प्रमुख स्थान प्राप्त है. उनकी राष्ट्रीयता से भरी-पूरी भावना में उत्साह, पौरुष व प्रतिरोध के भाव बहुत गहरे तक समाए हुए है. दिनकर ओज व पौरुष के कवि है और उनकी रचनाएं इन भावों की अजस्त्र सरणियाँ बहाती है-

"लेना अनल, किरीट भाल पर आशिक होनेवाले
काल कूट पहले पी लेना, सुधा बीज बोने वाले"

"दिनकर ने बारडोली सत्याग्रह पर काव्य रचना की लेकिन चौथे दशक में रचित उनके काव्य खास करके 'रेणुका' और 'हुंकार' की कविताओं का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि दिनकर की कविताओं में उग्र राष्ट्रवाद की प्रवृत प्रबल थी. उग्र राष्ट्रवाद कविता में उत्तेजक भावों और आवेगों के साथ उतेजनापूर्ण भाषा में व्यक्त हुआ है| स्वयं दिनकर ने इस तरह की अपनी अभिव्यक्ति को गर्जन तर्जन कहा है. अत: ओजपूर्ण अभिव्यकित से आगे की चीज है, लेकिन मैं यहाँ कहना चाहता हूँ कि उग्र राष्ट्रवाद में एक प्रकार की अराजकता होती है, जो किसी प्रकार के विधान को मान कर नहीं चलती. दिनकर अपनी एक कविता में कहते हैं –

'पूछेगा बूढा विधाता तो मैं कहूँगा / हाँ तुम्हारी सृष्टि को हमने मिटाया.'(1)
'हिमालय'

“रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ /जाने दे उनको स्वर्ग धीर /पर फिरा हमें गांडीव गदा /लौटा दे अर्जुन भीम वीर”

‘हिमालय’ -- “ओ मौन तपस्या लीन यती/ पल भर को तो कर दुगुन्मेष/ रे ज्वालाओं से दग्ध विकल / है तड़प पूछ पद पर स्वदेश”

‘प्यारा स्वदेश’ -“नए सुरों में थिजिनी बजा रही जवानियाँ /लहू मैं तैर तैर के नहा रही जवानियाँ” .

दिनकर की राष्ट्रीय चेतना पर सत्य और अहिंसा के दो स्रोत देखे जा है (1) प्रतीक परम्परा का प्रभाव (२) गाँधी का प्रभाव. दिनकर जहां एक ओर अहिंसा वादी नीति का विरोध करते हैं, तो दूसरी ओर शक्ति और क्रांति के महत्व का वर्णन करते है. परशुराम की प्रतीक्षा अहिंसा की नीति का विरोध करते हुए प्रतिशोध शक्ति की प्रशंसा करते हुए करते है-

‘गीता में जो त्रिपिटिक पढ़ते है,
तलवार गलाकर जो तकली गढ़ते है’

शीतल करते हैं अनल प्रबुद्ध प्रजा का / शेरों को सिखलाते हैं कार्य अजा का / जब तक प्रसन्न वह अनल सुगुण हँसते है/ है जहाँ खडग अब पुण्य वहीं रखते है/ वीरता जहाँ पर नहीं, पुण्य का रूप है / वास्तविक मर्म जीवन का जान गए है/ हम भली भाँती तुमको पहचान गए है / हम समझ गए है खूब धर्म के छल को / दम की महिमा को और विनय के बल को. मैथिलीशरण गुप्त – “बिहार प्रान्त की पावन धरती में सोये हुए शक्ति कण से संभूत रामधारी सिंह दिनकर की काव्यात्मकता ने इतिहास को अंगड़ाई लेने को विवश कर दिया. राष्ट्रीय ओज के इन अमर गायक की लेखिनी ने भारतीय पौरुष को ऐसे ललकारा कि होने को विवश हो गए युद्ध एवं शांति की दिशा में मौलिक चिंतन को काव्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने का उन्होंने सफल प्रयास किया.”(२)

परशुराम की प्रतीक्षा के रूप “दिनकर की वैचारिक भाव भूमि मानवतावादी है। तथापि समसामयिक परिस्थितियों उठे विक्षोभ ने उन्हें राष्ट्रीयतावादी कवि के रूप में स्थापित कर दिया। दिनकर के काव्य ने भारतीय जन-मानस को नवीन चेतना से सराबोर किया है। राष्ट्रीय-कविता का स्वरूप राष्ट्र के रूप ही आधारित होता है।“(३)70 के दशक में संपूर्ण क्रांति के दौर में मिलती है। दिल्ली के रामलीला मैदान में लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने हजारों लोगो के समक्ष दिनकर की पंक्ति 'सिंहासन खाली करो कि जनता आती है’ तत्कालीन सरकार के खिलाफ विद्रोह का शंखनाद किया था।

“आज राष्ट्र बाह्य और आंतरिक शत्रुओं के चक्रव्युह में फंस कर अपना संगठित स्वरूप खोने लगा है। विधटनकारी तत्व अपना सिर उठा रहे हैं। सांप्रदायिकता का विषैला प्रभाव राष्ट्रीय शिराओं में बहती जीव-धारा को विषाक्त करा रहा है। ऐसी विनाशक और विस्फोटक स्थिति में देश को दिशा देना साहित्य का गुरुवर से दायित्व है। “(४)

दिनकर के समग्र काव्य को देखते हुए लगता है कि राष्ट्रीयता, आवेग, आवेश, मनोवेग, उतेजना इन सभी के कारण ही दिनकर की प्रसिद्धि छायी है। कुरुक्षेत्र में आकर कवि हिंसा का निषेध नहीं करने की स्थिति में आ जाते है।

सामधेनी- सारी दुनिया उजड़ चुकी है गुजर चुका है मेला उपर है बीमार सूर्य नीचे मैं मनुज अकेला तो हैं स्थायी तत्व की खोज करता हुआ दृष्टिगत होता आदमी का स्वपन ! है व वह बुलबुला जल का आज उठता और कल फिर फूट जाता है किंतु फिर भी धन्य ठहरा आदमी ही तो!बुलबूलों से खेलता कविता बनाता है

रश्मिलोक की भूमिका में स्वयं लिखते हैं - "अहिंसा अगर परम धर्म है तो हिंसा को आपधर्म मानना ही पडेगा। और इस मान्यता से भी निस्तार नहीं है कि जिसका आपधर्म नष्ट हो गया उसका परम धर्म भी नहीं बचेगा।" कुरुक्षेत्र एक विचार काव्य है और विचार की उदातता और सशक्त अभिव्यक्ति ने एक श्रेष्ठ काव्य प्रस्तुत किया। रश्मिलोक की भूमिका में आगे लिखते है- "ज्यौं-ज्यों मैं संसार की नई कविताओं से परिचित होता गया मेरी अपनी कविताओं की अदाएं बदलती गई।"

राष्ट्रीय संचेतना को झकझोरने वाला काव्यजन मानस को आंदोलित कर नैतिक मूल्यों को स्थापित करने का साहस भरता है। उन मूल्यों को महत्व देने के लिए प्रेरित करता है जिनमें हिंसा, धृणा को नकारकर एक उन्मुक्त वातावरण उत्पन्न किया जा सके और जिसमें सभी धर्म निश्चित होकर सांस ले सके राष्ट्रीय चेतना का काव्य अपने समाज के उदात भाव और रचनात्मक संस्कार उत्पन्न कर सके, तो निश्चय ही काव्य मानव कल्याण के लिए होगा। यानी राष्ट्रीय काव्य मूलत: मानवतावादी काव्य है। दिनकर की संपूर्ण काव्य-यात्रा मानव प्रेम, सांस्कृतिक एकता भावीयी सौदाई और शक्ति उपासना के मार्ग पर गतिमान है। राष्ट्रीयता उनकी रंगों में प्रवाहित होती रहती थी, कविताएं कभी हुंकासी है धर्म और संप्रदाय के नाम पाखंड फैलानेवालों को सही मार्ग बताती है।

'आरती लिए तू किसे ढूंढता है मूरख
मंदिरों, राजप्रसादों में, तहखानों में
देवता कहीं सडकों पर मिट्टी तोड रहे
देवता मिलेंगे खेंतों में, खलिहानों में'

विध्वंस एवं विनास के विरुद्ध हमेशा तनकर खड़ा होने की हिम्मत रखनेवाले दिनकर ने यदि गांधी के सिद्धातों को स्वीकारा तो कार्लमार्क्स के विचारों को भी कभी खारिज नहीं किया कहते है- "जो वक्त की आंधी से खबरदार नहीं है/ कुछ और ही होंगे वे कलमकार नहीं है। 'राष्ट्रीय" चेतना देश के निवर्तमान, वर्तमान और आवर्तमान तीनों कालों से सम्बद्ध होती है। इसलिए सफल राष्ट्रकवि वही होता है जो अतीत का गौरव करता है, वर्तमान का सूक्ष्म दृष्टा होता है और भविष्य का पारदर्शी होता है।"

दिनकर केवल 'अपने समय के सूर्य' नहीं थे, बल्कि वे तो हमारी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के शाश्वत सूर्य हैं जिसके दिव्य प्रकाश से हिंदी काव्य जगत् सदैव प्रकाशमान रहेगा। दिनकर ने ओजस्वी कविताएँ लिखकर देश को एक नया जोश नयी चेतना दी. उनकी कालजयी रचनाएँ युगों तक शौर्य –पराक्रम और राष्ट्र चेतना का उद्घोष करती रहेगी. वास्तव में दिनकर राष्ट्र धर्म के ओजस्वी कवि रहे है तेजस्वी तारे की तरह जो सदैव झिलमिलाता रहा है.

सन्दर्भ सूची -

1.www.hindisamay.com/contentdetail.aspx?

2.www.sahityashilpi.com/2009/04/blog-post

(3))(भारत की राष्ट्रीय संचेतना : सं. मिथिलेश वामनकर फरवरी:2009 (https://vimisahitya.wordpress.com/tag/भारत-की-राष्ट्रीयचेतना

"(४)(भारत की राष्ट्रीय संचेतना : सं. मिथिलेश वामनकर फरवरी:2009) https:// vimisahitya.wordpress.com/tag/भारत की राष्ट्रीय चेतना)

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

33. 'कितने पाकिस्तान' में सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा. शिंदे नवनाथ सर्जेराव,
टीचर रीसर्च फेलो, हिंदी विभाग,
सावित्रीबाई फुले पुणे
विश्वविद्यालय, पुणे

"इन बंद कमरों में मेरी साँस घुटी जाती है,
खिड़कियाँ खोलता हूँ तो जहरीली हवा आती है।"

उपर्युक्त पंक्तियाँ कमलेश्वर द्वारा सन् 2000 में रचित उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' के आरंभ की है। उपर्युक्त पंक्तियों के आशय से समझा जा सकता है कि कमलेश्वर की मूल चिंता देश में ही नहीं पूरे विश्व में तेजी से फैल रही सांप्रदायिकता की भावना को रोकना है। सांप्रदायिकता हमारे समाज की एक जटिल एवं प्रमुख समस्याओं में एक है। यह न केवल हमारे देश, समाज और संस्कृति के लिए गंभीर खतरा बन गई है, बल्कि इसने पूरे विश्व को अपने विष–जाल में लपेट लिया है। उसने देश की एकता एवं अखंडता के सामने चुनौति खड़ी कर दी है। मानवीय मूल्यों को झकझोर के रख दिया है।

सांप्रदायिकता का संबंध धर्म के साथ होता है। धर्म के माध्यम से जनता को संगठित एवं आंदोलित करना सबसे आसान होता है। धर्म के नाम पर सामान्य जनता में विश्वास एवं उससे लाभ उठाया जाता है। धर्म के ठेकेदार पंडित अथवा मुल्ला–मौलवी अपने स्वार्थ सिद्धि हेतु धर्म के घेरे को सुंकुचित करना आरंभ कर देते हैं और वहीं से धर्म संप्रदाय विशेष में बदलना आरंभ होता है। वास्तव में सांप्रदायिकता किसी भी धर्म का विकृत एवं संकुचित रूप होता है। सांप्रदायिकता किसी भी धर्म के मूल उद्देश्य एवं विचारधारा को प्रदूषित करती है। वह धर्म में निहित उदारता एवं मानवीय मूल्यों को खत्म करती है। वास्तव में 'सांप्रदायिकता' शब्द की व्युत्पत्ति 'संप्रदाय' शब्द से हुई है जिसका अर्थ सम्यक प्रकेण देय है अथवा किसी आचार्य या गुरू की परंपरा को मानने वालों को क्रमशः प्राप्त होनेवाला ज्ञान अथवा व्यवहार है। सांप्रदायिकता का कोशगत अर्थ है– "1. सांप्रदायिक होने का भाव. 2. केवल अपने संप्रदाय की श्रेष्ठता और हितों का विशेष ध्यान रखना, दूसरे संप्रदायों या अनुयायियों को कुछ न समझना। "[1] असल में अपने ही संप्रदाय ,जाति या धर्म के लोगों को लाभ पहुँचाने और उन्हीं के साथ मेलजोल रखने की भावना या प्रवृत्ति सांप्रदायिकता है। यह प्रवृत्ति प्रायः अन्य संप्रदायों के प्रति बैर–भाव के रूप में पनपती है। च्यूँकि भारत बहुभाषी, बहुधार्मिक देश है इसका इतिहास इस बात का साक्षी है कि यहाँ धर्म कितना संवेदनशील विषय रह चुका है। अतः इस देश में सांप्रदायिक सद्भाव अत्यंत आवश्यक है।

भारतीय जनजीवन को जिन समस्यायों ने सबसे अधिक आंदोलित एवं उद्वेलित किया उनमें सांप्रदयिकता एक है। भारत लंबे समय से इस समस्या से पीड़ित रहा है। भारतीय लोगों को इसके परिणामों को सहना पड़ा है। चाहे बाबरी मस्जिद का विध्वंस हो, उड़िसा में इसाइयों की हत्या हो, गुजरात के दंगे हो या देश के विविध भागो में हुए बम विस्फोट हो, जनता को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी है। इस समस्या के कारण अनेक है परंतु प्रमुख कारण हमारी संकीर्ण राजनीतिक दृष्टि है जो चुनावी वाटों पर केंद्रित रही है। अनेक राजनीतिक दल चुनावी हथकड़े के रूप में सांप्रदयिकता का प्रयोग करते हैं। इससे बचना आवश्यक है। कमलेश्वर ने कितने पाकिस्तान में इन सभी कारणों की तलाश की है।

'कितने पाकिस्तान' यह साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मनित रचना है । यह रचना भारत–पाकिस्तान के विभाजन की त्रासदी को लेकर लिखी गई है, जिसमें किसी देश के बटवारे की प्रवृत्ति चित्रिण किया गया है। धर्म के नाम पर सामान्य जनता का बटवारा कितना अनैतिक एवं अमानवीय है यह प्रस्तुत उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने कथानायक 'अदीब' के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि किस प्रकार सत्ता अपने स्वार्थ हेतु समाज की एकता में फाँक लगाती है। इस उपन्यास के संबंध में हरिनारायण ठाकुर कहते हैं,"भारतीय संदर्भ में हिंदू–मुस्लिम संघर्ष, सांप्रदायिकता और विभाजन की पृष्टभूमि पर केंद्रित यह उपन्यास विश्वभर में फैले प्रांत, कबीले , राष्ट्र, जाति, धर्म और सभ्यता के संघर्षों में लहूलुहान मानवता की मार्मिक दास्तान भी है।"[2] अर्थात प्रस्तुत उपन्यास भारतीय परिप्रेक्ष्य मे जितना प्रासंगिक है उतना ही वैश्विक प्रसंग में भी, स्वयं कमलेश्वर कहते हैं,"वैश्विक चिंताओं के बीच इसमें हर देश में मौजूद 'अपने देश' को पहचानने की कोशिश की गई है।"[3] प्रस्तुत शोधालेख की आरंभ की काव्यपंक्तियाँ इसी बात को संकेतित करती है।

प्रस्तुत उपन्यास का प्रमुख पात्र अदीब (लेखक) है। उसकी चिंताएँ सहज मानवीय चिंताएँ हैं, जिनमें प्रेम एक मानवीय मूल्य के रूप में सर्वोपरी बनकर उभरा है। इस अदीब की एक अदालत है, जो सिर्फ सच्चाई की पैराकार है और सारी सच्चइयाँ यहाँ कहानियाँ बनके खड़ी है। वह इस अदालत में दुनियाभर की सभ्यताओं व उनके नायकों–प्रतिनायकों को बुलाता है और उनसे जिरह करता है। असल में यह रचना लेखक के मन में लगातार चलनेवाली जिरह का ही परिणाम है। लेखक ने समय को ही नायक या प्रतिनायक के रूप में प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि लेखक की यह जिरह आदमी के अंदर की आस्था–अनास्था, संशय–विश्वास, घृणा–प्रेम की भी जिरह है और बाहर की सत्ता, समाज ,वैभव और विचारों की भी है। कमलेश्वर पाकिस्तान के अलग राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आने के मूल में हिंदूओं और मुसलमानें के मन में विद्यमान संशय और द्वेष भाव को मानते हैं। उपन्यास का पात्र गुलाम महमूद कहता है,"पाकिस्तान इसलिए बन कि आजादी से पहले हिंदू–मुसलमानों के दिलों में एक–दूसरे के लिए शक और नफरत थी, मुसलमानों के हकों की कोई गारण्टी नहीं थी......इसलिए पाकिस्तान बना।"[4] अर्थात् कमलेश्वर मानते हैं कि विभाजन के पश्चात अस्तित्व में आया पाकिस्तान महज एक देश नहीं बल्कि धार्मिक असहिष्णुता, घृणा, प्रतिशोध, हिंसा व षड्यंत्र पर आधारित विचारपद्धति भी है, जो दुनिया की कई सभ्यताओं और देशों में न सिर्फ मौजूद है ,बल्कि फल–फूल रही है। इसलिए अदीब कहता है," लेकिन अब तो सब मुल्कों में नफरत का एक पाकिस्तान बनने की कोशिशें जारी है। क्या हुआ बोस्निया में, क्या हुआ है साइप्रस में, क्या हुआ है तब के टूटे सोवियत यूनियन और अब के बने रशियन फेडरेशन में, क्या हो रहा है आज के अफगानिस्तान में ? हर व्यक्ति नफरत के सहारे अपने ही लोगों के खिलाफ एक दूसरा पाकिस्तान ईजाद करना चाहता है।"[5] अदीब का यह कथन एक तरह से इस रचना में निहित सांप्रदायिकता की समस्या को उद्घाटित करता है।

भारत का धर्म के नाम पर विभाजन होने के पश्चात यहाँ और वहाँ के लोगों का जीवन पूरी तरह से बरबाद हुआ। भारतीय मुसलमान पाकिस्तान में तो चले गए परंतु वे अपनी पुश्तैनी जमीन से अपना मोह नहीं छोड पाएँ। इसी टीस को उपन्यास की सलमा कहती है,"जब मौत आती है तब किसी को काबा या कर्बला याद नहीं आता, अपना घर याद आता है। मैं तो यह कह ही रही हूँ, यकिन न हो तो पूछिए जाके किसी भी मुल्क के मुसलमान से । यहाँ तक कि रियाद और तेहरान में रहनेवाले मुसलमान से......खुदा का घर सबके लिए है लेकिन अपनी मौत के वक्त सिर्फ अपने घर–गाँव का घर अपना होता है। ......यही आखिरी सच है।"[6] अर्थात सलमा के माध्यम से कमलेश्वर

कहते हैं कि मनुष्य कहीं भी चला जाए अपनी मिट्टी, मातृभूमि से लगाव महसूस करता है। और जब वह अपनी जमीन से पराया होता है तब उसका जीवन उखड़ा हुआ लगता है। यह सर्वविदित सत्य है कि राजनीतक दलों द्वारा अपने स्वार्थ हेतू सांप्रदायिकता को हथियार बनाकर दंगे करवाये जाते हैं। देश के विभाजन के समय देश में संशय का माहौल था। देश में हिंदू और मुसलमानों के बीच दंगे हुए इससे सबसे अधिक पीड़ित स्त्री और छोटे–छोटे बच्चे हुए हैं। नारी की इस अवस्था के संबंध में सलमा कहती है,"लेकिन मेरा सच हिंदुस्तान और पाकिस्तान की तरह विभाजित ही रहेगा। शायद यही हिंदुस्तानी मुसलमान औरत का नसीब बन गया है..... औरत यहाँ की हो या वहाँ की, वह पहले भी आधी से कम थी, इस तक्सीम ने तो उसे आधे से भी आधा बनने पर मजबूर कर दिया है।"[7] स्पष्ट है कि भारतीय नारी जो की बेसाहारा एवं असुरक्षित और आधी अधूरी मानी गई है उसे इस विभाजन ने कहीं का नहीं रहने दिया।

हमारे देश में कुछ सांप्रदायिक ताकते मजहब का वास्ता देकर संकुचित सांप्रदयिकता के विष–वृक्ष को सींचने का काम करते हैं। जब तक इस प्रकार की संकुचित राजनीति खत्म नहीं होगी तब तक यह सांप्रदायिकता का विष–वृक्ष रूकने का नाम नहीं लेगा। आलोच्य उपन्यास का पात्र निखिल चक्रवर्ती का कहना सही है," पाकिस्तान से पाकिस्तान पैदा होता है.... यह छूत का एक रोग है। जब तक धर्म, नस्ल, जाति और दुनिया की पहली शक्ति बनने का नशा नहीं टूटता, जब तक सत्ता और वर्चस्व की हवस नहीं टूटती तब तक इस धरती पर पाकिस्तान बनाये जाने की नृशंस परंपरा जारी रहेगी।"[8] अतः इस विषवृक्ष को उखाडकर फेककर उसके स्थान पर बोधिवृक्ष लगाये जाने की आवश्यकता है जो समय की माँग है। क्योंकि बोधिवृक्ष शांति, सहअस्तित्व एवं बंधुत्व का प्रतीक है । आलोच्य रचना का पात्र अंधा कबीर कहता है,"बोधिवृक्ष की जड़ें नीलकंठ की तरह सारा विष पी लेती है.... पहला बोधिवृक्ष मैं पोखरन में लगाऊँगा, फिर सरहद पार करके दूसरा वृक्ष मैं चगाई की पहाड़ियों में लगाऊँगा।"[9] अर्थात कमलेश्वर प्रेम, मानवता, करूणा, संवेदना में विश्वास करते हैं, वहीं हमें शाश्वत सत्य के साथ शांततामय सहअस्तित्व दे सकता है।

कमलेश्वर ने मानव–मानव में मजहब के नाम पर घृणा की राजनीति का विरोध करते हुए प्रेम जैसे शाश्वत मूल्य पर विश्वास व्यक्त किया है। उन्होंने आलोच्य रचना में विद्या– अदीब, जनेब–बूटासिंह, सलमा और अदीब के प्रेम प्रसंगों के माध्यम से इसका संकेत दिया है। वास्तव में अदीब, विद्या और सलमा की कथा न तो प्रेम का त्रिकोण है और न जज्बाती जुनून, यह विभिन्न परिस्थितियों में जाति, धर्म और देश की दरों–दिवारों के आर–पार दो दिलों जिनके सपने एक है, उनको जोड़ने की इन्सानी जद्दोजहद भी है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि 'कितने पाकिस्तान' इस उपन्यास के माध्यम से कमलेश्वर ने वैदिक कालीन समय से करगील युद्ध तक के देश एवं विदेशी विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से धर्म के नाम पर भारत में ही नहीं पूरे विश्व में हो रहे विभाजन का चित्रण किया है। यह विभाजन धर्म के नाम पर लोगों को गुमराह कर दूसरे धर्म के लोगों के बारें में अविश्वास पैदा करके उनके प्रति मन में घृणा एवं द्वेष का भाव निर्माण करके होता है। जब कोई धर्म संकुचित होकर अपने वास्तविक दर्शन से भटकर दूसरे धर्म के प्रति असहिष्णु, संकुचित एवं कट्टरता को अपनाता है तब सांप्रदायिकता का जन्म होता है। कमलेश्वर इसे बचने हेतु मनुष्यों को प्रेम को रास्ता अपनाने की सलाह देते है और धर्म के आधार पर किसी देश के विभाजन से बचने हेतु करूणा, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व एवं सांप्रदायिक सद्भाव पर जोर देते हैं। अतः कह सकते हैं कि कमलेश्वर का 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास सांप्रदायिक सद्भाव की भावना को व्यक्त करता है जो धर्म, राजनीति, क्षेत्रिय

महत्वकांक्षा, भौतिक सुखों की होड़, प्रजातीय और बौद्धिक अहंकार आदि के तहत देश विभाजन का विरोध करता है।

संदर्भ –

1.संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर– संपा. रामचंद्र वर्मा– नागरी प्रचारिणीसभा काशी, षष्ठ संस्करण–1958, पृ. 964

2.वैश्विक चिंताओं के बीच मानव मुक्ति की पड़ताल– हरिनारायण ठाकुर, समकालीन भारतीय साहित्य– अंक–105, जनवरी–फरवरी–2003, पृ. 145

3 कितने पाकिस्तान– कमलेश्वर, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली, संस्करण–2008, पाँचवे संस्करण की भुमिका से

4.कितने पाकिस्तान– कमलेश्वर, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली, संस्करण–2008, पृ.100–111

5.वहीं, पृ.93

6.वही. पृ.93

7.वहीं, पृ.139

8.वहीं, पृ.187

9.वहीं, पृ. 362–363

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

34.प्राचीन हिंदी संतकाव्य में साम्प्रदायिक सद्भाव

डॉ मीना ठाकूर
हिंदी विभाग
शाहू कॉलेज पुणे

संत हृदय नवनीत समाना।
कहा कबिन्ह पर कहे न जाता ।
निज परिताप द्रवह नवनीता।
पर दुख द्रवह संत सपुनीता ।

प्राचीन हिंदी संतकाव्य धारा में संत कबीर, तुलसीदास, सुरदास, रसखान, मीराबाई आदि कवियों ने मूल्यबोध तथा समाज के प्रति उत्तरदायित्व की व्यापक सद्भावना को प्रस्तुत किया है। गुरू महिमा, सदाचरण पर बल, झुठे आडम्बरो एवं परम्परा के प्रति विरोध दर्शाया हैं। जाति भेदभाव, राष्ट्रीय एकता, हिन्दु–मुस्लिम एकता, सभी भारतीय भाषाओं का महत्व प्रतिपादित किया है।

संतकवियों ने समाजके लोगों में श्रध्दा, भक्ति, ज्ञान, योग, दर्शन, प्रेम आदि से परिचित है। सांस्कृतिक, पौराणिक, नैतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक सदभाव के मूल्यों के प्रति समाज को प्रभावित किया है। आत्मविश्वास और आत्माभिव्यक्ति को जागृत करते हुए वेद, उपनिषद,दर्शनशास्त्र व्दारा मोक्ष एवं आनंद की प्राप्ति का संदेश दिया है। घर, परिवार, समाज, देश, विश्व के जन समुह को भक्ति, वेदना, सदभाव, प्रेम अध्यात्मिक दृष्टि से प्रेरित करने का प्रयास किया है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारो तत्वों की पूर्णता से संसार एवं समाज में साम्प्रदायिक सदभाव निर्माण किया। भगवदभक्ती, लोकमंगल, लोक कल्याण की दृष्टि के कारण साम्प्रदायिक सदभावना से जनसमुदाय प्रेरित हुआ। संतकबीर दास ने कहा– ''मौकों कहाँ ढूँढ बंदे मे तो तेरे पास में। ना में देवल ना में मस्जिद में ''आत्माभिव्यक्ति और समाजपयोगी ज्ञान का महत्व है यह समस्त मानव समुदाय को संदेश दिया है।

भाष करे ज्ञान प्राप्ति का साधन और माध्यम माना जाता है। भाषा व्दारा अनुभव व्यक्त ही नहीं होते उन्हे रूप भी मिलता है। इसी कारण भाषा को संप्रेषण का एक महत्वपूर्ण और कारगार माध्यम माना जाता है। भाषा मनुष्य को समाज से जोडती है, उसे सामाजिक बनाती है समाज मे किसी भी व्यक्ति को किसी भी भाषा का संपूर्ण ज्ञान नहीं होता, चाहे वह मातृभाषा क्यों न हो। मातृभाषा क्यों न हो। मातृभाषा से व्यक्ति अपने सांस्कृतिक परिवेश से जुडता है और समाज में जगह बनातर है। मातृभाषा मनुष्य की अपनी अस्मिता की पहचान होती है।

भाषा केवल विचारों की अभिव्यक्ति और संप्रेषण माध्यम नही बल्कि वह ज्ञान प्राप्ति का संस्कृति और राष्कृति और राष्ट्रीयता की वाटिका भी होती है। जनभाषा का व्यापकतम रूप जो संपुर्ण देश में विविध व्यवहारों वैचारिक आदान–प्रदान का माध्यम हो– राष्ट्रभाषा बनती है। देश की राष्ट्रीय सांस्कृतिक गौरवशाली परंपरा को राष्ट्रभाषा के माध्यम से महसूस किया जा सकता है। हिंदी भाषा समस्त भारतीय भाषाओं के निकट है। व्दितीय भाषा के रूप में हिंदी का देश तथा विदेश में भी सहज स्वीकार हो रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ती के बाद भाषिक अलगाववाद के कारण नहीं हिंदी को स्थापित होना या वहाँ उसे विस्थापित किया जा रहा है। जहा अंग्रेजील का विस्थापन होना था वहा उस नए रंग से स्थापित किया जा रहा है।

दुनिया में यह एकमात्र ऐसा देश है जो

1. आजाद होकर भी अपनी भाषा बोल नहीं पाता।

2. गणतंत्र होका भी गणतंत्र की भाषा में सर्व स्वीकृत राजभाषा नहीं है।
3. लोकतंत्र शासन प्रणाली होका भी उसकी स्वीकृत राजभाषा नहीं है।
4. जिस देश के राष्ट्राध्यक्ष तथा प्रधानमंत्री और उच्च पदस्थ नेतर तथा अधिकारी अंग्रेजी बोलन के लिए
भाषा हिंदी में ही बोलना अनिवार्य होना चाहिए। उन्हे साम्प्रदायिक सदभाव के लिए राष्ट्र

हिंदी को राष्ट्रभाषा, राजभाषा तथा संपर्क भाषा का स्थान प्राप्त होने पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। फिर भी व्दितीय भाषा के रूप में हिंदी देश के भीतर महानगरों , तीर्थस्थानों, औदयोगिको क्षेत्रों, रेल, बसअडडों, आदि जगहों पर संपर्क भाषा के रूप में स्वीकृत हो रही है। जिसके अनेकाधिक क्षेत्रिय रूप बन रहे हैं। जिये बंबईया हिंदी, कलकत्ते की हिंदी, हैदराबाद कि हिंदी आदि से पहचाना जाता है, फिर भी हिंदी को सन्मानित करना है तो शुभकर्म अपने हाथ से शुरू होना चाहिए। मूल भारतीया ब्रिटीश उदयोगपती लॉर्ड स्वराजपाल के विचार सार्थ है, दुनियाभर में हिंदी का सन्मान बढ़ने के लिए तो उन्हे पहले भारत में हिंदी का प्रभाव और सन्मान बढ़ाना होगा।

भाषा का संबंध संप्रेषण व्यवस्था के साथ होने के कारण मनुष्य उस भाषा को उसी रूप में सीखना चाहता है। जो उस व्यवहार क्षेत्र के लिए सर्वाधिक उपयोगी है। भारत की जनभाषा हिंदी को सर्वसम्मत एवं व्यवहार्य बनाने के लिए परिभाषिक शब्दावली निर्माण का कार्य सामाजिक, व्यवहार से संबंधित होना चाहिए। केंद्रिय हिंदी संस्थान, केंद्रीय मंत्री निदेशालय, दक्षिण भारत हिंदी संस्थान, केंद्रिय हिंदी नि देशालय, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा चेन्नई, दक्षिण भारत, हिंदी परिषद, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग आदि संस्थाए महत्त्वपुर्ण कार्य कर रही है।

हिंदी न किसी कानून व्दारा राष्ट्रभाषा बनी और न कोई कानून ऐसा बना जिससे उसका प्रयोग राष्ट्रभाषा के रूप में न किया जाए। हिंदी स्वाधीनता प्राप्ती से पूर्व राष्ट्रभाषा के रूप में न किया जाए। हिंदी स्वाधीनता प्राप्ती से पुर्व राष्ट्रभाषा के पूर्व राष्ट्रभाषा थी और आज भी है। राजभाषा बन जाने पर हिंदी का प्रयोग जितने व्यापक रूप में होना चाहिए था उतना नहीं हुआ तो उसके लिए हम सब दोषी है, उस दोष को स्वीकार करे। स्थिती को सुधारने के उपाय सोचने के बजाय, जब काफी समय हिंदी के राजभाषा, राष्ट्रभाषा आदि रूपों कि चर्चा करने पर लगाया जाता है। तो वह उसका सुचक है कि हम अपने वास्तविक कर्तव्य से मुंह मोड रहे है।

''वह दिन ऐतिहासिक था।
जब भारत स्वाधीन हुआ।
वह दिन महत्तवपूर्ण था।
जब भारत गणतंत्र घोषित हुआ।
वह दिन गौरवपूर्ण होगा,
जब भारत का कामकाज भारतीय
भाषाओं मे होगा और तभी
वह दिन साम्प्रदायिक सदभाव का होगा।''

संदर्भ

हिंदी संत काव्य धारा– डॉ नगेंन्द्र
कबीर ग्रंथावली– डा. रामचंन्द्र शुक्ल
मीराबाई का काव्य– डॉ रामचरन सहाय
सुरदास का काव्य– डा. रामचंन्द्र शुक्ल

35.समय की पीड़ा का रचनात्मक स्वर हमारा शहर उस बरस :

तायडे राजाराम बाबुराव
शोधछात्र-
उत्तर महाराष्ट्र विश्व विद्यालय जलगांव ,
अध्ययन केंद्र नाहाटा .ओ .पु –महाविद्यालय भुसावल,

भारत विविधता सम्पन्न देश है I प्रत्येक राष्ट्र के साथ उसके अपने समाज का एक तादात्म्य सम्बन्ध होता है I इस सम्बन्ध का मुख्य कारण व्यक्ति या समाज की भावनाएँ निहित होती है I व्यक्तिगत स्वार्थो से ऊपर उठकर राष्ट्रीय एकताराष्ट्रीय , हितों में अपनी सामूहिक उन्नति की भावना और राष्ट्र के लिए बलिदान करना ही राष्ट्रीयता की पहचान है I विश्व बंधुत्व या विश्व राष्ट्र की कल्पना राष्ट्रीय एकता की चरम सीमा है I पारिवारिक और सामाजिक विघटन से ही राष्ट्र का विघटन और उन्नति में ही राष्ट्र की उन्नति निहित है I राष्ट्रीय भावना मनुष्य ह्रदय की एक चिरस्थायी भावना है I मनुष्य अपने हितों के प्रश्न नहीं उठाता बल्कि सामाजिकता , साम्प्रदायिकता के कारण राष्ट्रीय एकता की अभिव्यक्ति करता हैI धर्मआदि राष्ट्रीयता को ,स्वार्थ ,भाषा ,जाति , सुदृढ़ बनाने में सहायक होते है I

समय की पीड़ा को रचनात्मक स्वर गीतांजलि श्री ने) 'हमारा शहर उस बरस'1998इस उपन्यास में (उद्घाटित किया हैI इस उपन्यास की कथावस्तु सांप्रदायिक तत्वों पर आधारित है I इस उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने देश में समय – समय पर हो रहें सांप्रदायिक एवं सामाजिक कटुता वैमन्यस्य की ओर संकेत किया है , I उपन्यास का कथानक विशिष्ट अख्यान प्रविधि शैली में लिखा गया है 'हमारा शहर उस बरस' I जिसके द्वारा दंगो की जड़ो तक पहुंचा जा सकता है I उपन्यास की कथा वस्तु चार पात्रों की माध्यम से आगे बढती है जिसमे दद्दू इन पात्रों के माध्यम से साम्प्रदायिकता दृष्टिगत होती है ,तिश्रु ,हनीफ ,शरद ,I इन तीनों पात्रो ने ठाण लिया है कि इस वक्त चुप नहीं रहा जा सकता "I सब कुछ खोलकर रख देना है I की जो हवा दे उसके जड़ो तक जाना है I" [1]

शरद और हनीफ दोनों बुद्धिजीवी प्राध्यापक है I श्रुति पत्रकार है वह स्त्रीयों के प्रती संवेदनशील है ,I उपन्यास की कथा हिन्दू – मुस्लिम इन दो वर्गो मे विभाजित है I शहर में एक पुल हैपुल के उस पार हिन्दुओं , है 'मठ' काI तो दूसरी ओर मुस्लिम बस्ती है I दोनों वर्गो के लोग अपने –अपने जाति का प्रतिनिधित्व करते है I उपन्यास में दद्दू वृद्ध पात्र है I अपने वैचारिक प्रगल्भता के कारण दोनों वर्गों के लोगों से शांति बनाए रखने की नसीहत देते है I

दद्दू के किरायेदार हनीफ ओर श्रुति इन दोनों का अंतरधर्मीय विवाह है परन्तु शरद के वे इतने आत्मीय है की एक ही परिवार के लगते है I चारों पात्रों के माध्यम से हिन्दू और मुस्लिम साम्प्रदायिकता को लेखिका ने उद्घाटित किया है I

'हमारा शहर उस बरस' में सांप्रदायिक सदभाव :-

जब धर्म को संकुचित रूप में देखा जाता है, तब साम्प्रदायिकता का प्रारंभ होता है । गीतांजलि श्री का उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' में साम्प्रदायिकता परिलक्षित होती है । गोपालराम लिखते है, "साम्प्रदायिकता की समस्या आज के दिन भी, हमारी एक बड़ी समस्या है, इसमें दो राय नहीं हो सकते यह समस्या एक तरफ तो मनुष्य की उन कुप्रवृत्तियों का परिणाम है जो उसे पशु - धरातल की ओर

खींचती रहती है और दूसरी तरफ स्थापित व्यवस्था, या उत्तर आधुनिकता की शब्दावली में वृतांत, इसे अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए पैदा करती है और उग्र बनती है ।"[2]

भारत का यह दुर्भाग्य रहा है कि, यहाँ साम्प्रदायिकता देश के किसी-न-किसी भुभागपर दृष्टिगत होता है । एक धर्म दुसरे धर्म के विरोध में जेहाद छेड़ता रहता है । लेखिका ने लिखा है "कि उस बरस हिन्दुओं ने शांतिप्रियता छोड़ दी थी । अब के ऐलान करके छोड़ी की एक गाल पर तमाचा पड़ा तो दूसरा बढा दिया । पर अब तीसरा गाल कहाँ से लावे ? हम मजबूर है वे चीखे । मस्जिदों पर सवार होकर त्रिशूल की नोंक पर देवी की पताका फहराने लगे की, जो हमारे संग हुआ है । वहीँ हमें उनके संग करना है । पाप का बदला पाप चुकेगा ।"[3] यह बदले की भावना के कारण दंगे होने लगे । हिन्दू सोचने लगें की, उनकी बेटियां लुटती रहे, तब क्या वे हिजड़े बनकर असहाय्य बनेंगे । फलस्वरुप शहर की हवा सनसनाने लगी । इसी साम्प्रदायिकता के कारण शहर में दंगे बहोत होते है । फुल क्रास करते ही, सदभावी लोग मिलते है । किसी कारण वश दंगल छिड जाती है । 'शहर में उस बरस' "एक सम्प्रदाय के चार युवकोने दुसरे समुदाय के इक्के चालक को जबरन निचे खींचकर उसकी आँखे फोड़ दी । भीड़ जमा हुई तो, पुलिस को आँसू गैस छोड़नी पड़ी, कुल मिलाकर दो मरे । छः घायल हुए, अब स्थिति नियंत्रण में है । एहतियातन कर्फ्यू लगा दिया गया है ।[4] इस प्रकार की घटना कई शहरों में होती रहती है । मठ की तरफ़ से आने वाली भीड़ उत्तेजित थी । हिन्दुओं का जागरण का सन्देश दिया जा रहा था -"हिन्दू जागो, देश बचाओं । की नहीं तो हम पर अन्याय बढ़ता जाएगा । हमारे रक्त की नदियाँ बहेंगी । बह रही है । मंदिर और गुरूद्वारे नष्ट होंगे । हो रहे है । हमारी इज्ज़त और सम्प्रत्ति लुटी जाएगी । हमारी लड़कियों का सारेआम अपहरण होगा । हो रहा है । लुट रहीं है । हिन्दू कुत्ते-बिल्ली की तरह मारे-मारे फिरेंगे । फिर रहे है । मार तो हिन्दू सारी दुनियाँ में खा रहे है । .... औरों के लिए तो पच्चासों देश है, पर हमारे लिए तो बस हिन्दुस्थान है ।"[5]

'हमारा शहर उस बरस' सांप्रदायिक दंगों में चार सौ लोग सरकारी सूची में मरे दर्ज थे । गैर सरकारी अनुमान था कि, पांच सौ कम नहीं मरे । जब ये तीनो घर लौटे तो उनके हाथों में वे कैसेट थे । जो गल्ली-गल्ली में बज रहें थे । वे कैसेट सुन रहे थे - ".....तुम्हे हमने बराबरी दी, तुमने हमें क्या दिया ? हो गयी दया-धर्म की बातें । अब है वीरता और क्रूरता के दिन । यहाँ रहना था तो, रहम, दसखान बनते । प्यार से दूध में चीनी की तरह । पर नींबू बनोंगे तो क्या होगा ? दूध फटेगा और दूध तो पनीर बनेगा । उसकी किमत बढ़ेगी, पर नींबू कट के, निचुड़ के, सूखके कूड़े में फ़िकेगा.....।[6] कैसेट में हिन्दू-मुस्लिम अंतर को स्पष्ट किया गया है ।

साम्प्रदायिकता और सदभावना हिन्दू और मुसलमान इन दो वर्गों में दिखाई देती है । साम्प्रदायिकता के कारण दंगे भड़कते रहते है । "शहर में दंगो का मौसम है, कर्फ्यू का मौसम है, लोगों में डर मौसम है । हिन्दू एवं मुसलमान दोनों जातियों के लोगों की दंगों में मरनेवालों की संख्या बढती ही गई । शहर में पुलिसों ने लॉन्ग मार्च किया और कर्फ्यु लग गया । अच्छे हिन्दू-मुसलमान शरीक लोग दंगे के कारण शहर छोड़ने लगे । दोनों जातियों में भयंकर डर था । मठ की दीवार पर किसी ने जातिय दंगल भड़काने का वक्तव्य लिख दिया । इस प्रकार के पोस्टर, नारे, सम्प्रदायवाद को हवा ही देते है । हनीफ एक बुरी खबर देता है कि, बूढ़े महंत मारे गए है । महंत के अंतिम दर्शन करने के लिए भीड़ उमड़ती है । इसका टेलीविजन पर सीधा प्रसारण हो रहा है । जनता हाथ जोड़े मृत महंत की परिक्रमा कर रही है । चन्दन की चिता पर महंत की अंतेष्टि हुई । इस घटना के कारण शहर का वातावरण तंग हो चुका । छोटे जोश के अनुसार "धार्मिक जुनून चढ़े । दूसरे धर्मो को दोष दें, फिर उनके संतपन में आस्था रह पाती है । मारकर पर उतर आएंगे तो टुच्चे राजनीतियों और उनमे क्या फरक है ? कही ताकद की लढाई ।"[7]

विवेच्य उपन्यास में व्यक्त साम्प्रदायिकता के सम्बन्ध में डॉ. वीरेन्द्र यादव लिखते है - "गीतांजलि श्री का उपन्यास 'हमारा शहर उस बरस' साम्प्रदायिकता एवं कट्टरता के विमर्श को भिन्न धरातल पर प्रस्तुत करता है । यहाँ धर्मनिरपेक्षता, धार्मिक सहिष्णुता, मजहबी कट्टरपण व् राष्ट्रवादी की प्रचलित पदावली का विखंडन करते हुए, उस मनोदशा की पड़ताल की गई है । जो अन्तत: साम्प्रदायिक होने को अभिशप्त है । गीतांजलि श्री भारतीय समाज की अतल गहराईयों में जड़ जमाये उस धर्म ग्रंथि की पड़ताल करती है । जो अवसर पाते ही साम्प्रदायिकता के बारूद में चिंगारी का कम करती है ।"[8]

गीतांजलि श्री एक सजग लेखिका है । जो अपने समय की स्थिति से व्यथित है । जहाँ आए दिन हिन्दू- मुस्लिम दंगे भड़कते है और इसी स्थिति का चिंता उनके उपन्यास में व्यक्त हुई है । डॉ. गोपाल राय के शब्दों में -" इस उपन्यास में हिन्दू साम्प्रदायिकता का चित्रण किया गया है । उपन्यास का 'मठ' हिन्दू साम्प्रदायिकता का प्रती क है । यह साम्प्रदायिकता फ़ासी वादी रहस्यपूर्ण और आंतक से भरी दुनिया का सृजन करती है । इसी मानसिकता ने बाबरी मस्जिद के विध्वंस को अंजाम दिया था । उपन्यास का नाभिकेन्द्र साम्प्रदायिक तनाव की असामान्य स्थिति में एक मुस्लिम पात्र के अकेला होने और अलग-अलग पड़ते जाने की मानसिकता है ।"[9]

गीतांजलि श्री ने इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता का चित्रण किया है । सांप्रदायिक तनावों को भूल कर एक जाति दूसरी जाति से मिलजुल कर रहें तो सांप्रदायिक सदभावना स्थापित हो सकती है । विश्व में शांति स्थापित करने में ही सभी की भलायी है । भारत को अग्रेसर बनाने के लिए सभी धर्म, जाति इनको सामंजस्य स्थापित कर धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इन परिस्थितियों में भारत की अलग पहचान बनानी होगी और राष्ट्रीय एकता की पहचान देनी होगी । दंगो से इंसानियत मरती है, इससे किसी का भला नहीं होता । दंगों में अलग-अलग प्रकार की अफवाए फ़ैलाई जाती है । सरकार कुछ भी करें तो दोनों गुंटो को शांत नहीं किया जा सकता । लेकिन जब तक दोनों धर्मो में, जाति में, वैचारिक सामंजस्य स्थापित नहीं होगा । तब तक शांति स्थापित नहीं होगी । विश्व में शांति स्थापित करने के लिए शिक्षा का माध्यम ही सशक्त माध्यम है । शिक्षा से ही विश्व और राष्ट्र इनमें सदभावना स्थापित की जा सकती है ।

सन्दर्भ - ग्रन्थ

1. हमारा शहर उस बरस - गीतांजलि श्री पृ- 7
2. समीक्षा - जनवरी -मार्च -1998 सं- सत्यदास पृ- 12
3. हमारा शहर उस बरस - .गीतांजलि श्री -पृ 10
4. हमारा शहर उस बरस - .गीतांजलि श्री -पृ 19
5. हमारा शहर उस बरस - .गीतांजलि श्री -पृ 22
6. हमारा शहर उस बरस - .गीतांजलि श्री पृ -44
7. हमारा शहर उस बरस - गीतांजलि श्री पृ -329
8. आधुनिक हिंदी उपन्यास - भाग -2 सं. डॉ. नामवर सिंह पृ -24
9. समीक्षा - मार्च -2001 सं.गोपालराय पृ- 21

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

36. 'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नइ' नाटक में सांप्रदायिक सद्भाव ।

- डॉ. रमेश संभाजी कुरे
सहयोगी प्राध्यापक एवं हिंदी विभागाध्यक्ष,
नारायणराव वाघमारे महाविद्यालय,
आखाडा बाळापूर, जि. हिंगोली. (महाराष्ट्र)

भारतीय मुल्क को अंग्रेजों के चंगूल से मुक्त करने के लिए हिंदू, मुसलमान, सिक्ख, जैन सभी धर्म, भाषा, जाति और क्षेत्र के लोगों ने कडा से कडा संघर्ष किया। आजाद हिंद फौज में बडी संख्या में मुसलमान थे जो पाकिस्तान के पक्ष में कतई नहीं थे। 1945 में श्रमिक नेता बी. शिवराज ने इंग्लैंड स्थिति बोर्ड ऑफ ट्रेड के अध्यक्ष को लिखा।" लाल किले में जिनपर मुकदमा चलने वाला है, उनमें ज्यादा संख्या मुसलमानों की है। इनमें कुछ को जिन्ना से सख्त शिकायत है कि वह पाकिस्तान का बखेडा किए है।"[04] लेकिन अंग्रेज हिन्दू मुस्लिम एका को तोडने और देश का विभाजन करने में सफल हुए। 15 अगस्त 1947 को हमें राजनीतिक आजादी तो मिल गई लेकिन अखंड राष्ट्र का हमारा सपना टूट गया। सांप्रदायिक अलगांववाद ओर पूंजीवादी साम्राज्यवाद के कारण धर्म के नामपर हिंदूसतान के दो टूकडे हो गये। जिसमें एक टूकडा पाकिस्तान बना और दूसरा भारत। आजादी के मिठे फल के साथ अंग्रेजों ने हमें सांप्रदायिक मार-काट, लाशों के ढेर और खून की नदीया के रूप में विष से भरा एक कटोरा भी भेंट कर गये। विभाजन की विभीषिका का भयानक तांडव शुरू हुआ। सांप्रदायिक दंगों और देश विभाजन से बडी संख्या में दोनों ओर के लोगों का अपनी जान-माल से विस्थापन हुआ। पाकिस्तान के कई हिंदू अपना सब कुछ छोडकर भारत आये तो भारत के कई मुसलमान जिने की मजबुरी में पाकिस्तान चले गयो विस्थापन और दंगों में मानवता की इतनी बडी हानी हुयी कि, वह जखम अब तक कई सांप्रदायिक दंगे और काश्मीर समस्या के रूप में नासूर बनकर बहती है।

भारत - पाकिस्तान विभाजन के समय सांप्रदायिकता अपने भयानक रूप दिखा रही थी। लेकिन फिर भी मानवता ने हार नहीं मानी थी। कुछ इन्सान अपने व्यवहार से मानवता का संदेश दे रहे थे। असगर वजाहन जी का नाटक "जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ" इसी भयानक विभिषिका का चित्रण करते हुये मानवता और सांप्रदायिक सद्भाव का भी चित्रण करता है। प्रमुख पात्र रतन की माँ, मौलवी, कवि नासिर काजमी, सिकंदर मिर्जा, हमीदा बेगम, तन्नो और जावेद आदि के द्वारा कथा वस्तु को नाटकीय और मानवीय स्वरूप प्रदान किया है प्रस्तुत शोधालेख में "जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ" नाटक का सांप्रदायिक सद्भाव पर आधारित अनुसंधानात्मक विश्लेषन किया गया है।

रतन की माँ :- नाटक का प्रमुख पात्र और नायिका रतन की माँ है। जिसके जीवन का हर लम्हा, व्याहार मानव सेवा के लिए अर्पित है। भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद भी व भारत नहीं जाती। सिकंदर मिर्जा असे कई बार हिंदूओं के कॅंप में छोडने और भारत जाने की बात करते हैं पर वह नहीं मानती। असे हिंदू धर्म से भी अधिक अपनी मातृभूमि लाहौर से प्यार है। लाहौर जैसा शहर तुम्हारे हिंदूस्तान में नहीं है।

इसलिए वह मशहूर मसल "जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ" का उदाहरण देती है। लखनऊ से लाहौर आये सिकंदर मिर्जा के परिवार की वह पूरी सहाय्यता करती है। उन्हें अपनी हवेली में अपने पुत्र की तरह रहने देती है। पाकिस्तान में अब कोई हिंदू नहीं रह सकता अगर रहेगा तो उसे जबरदस्ती मुसलमान बनाया जायेगा। यह मालूम होने पर वह मरने के लिए तैयार होती है। लेकिन लाहौर नहीं छोडती। "बेटी, कोई बार-बार नहीं मरदा... मैं मर चुकी हां मनूं पतां है। रतन और उसदे बीवी बच्चे हुण इस दुनियां विच नई हैं... मौत ओर जिंदगी विच मेरे वास्ते कोई फर्क नई बचया।"[05] माई के वात्सल्युक्त आचरण से जल्द ही हत्या के लिए रूपये देनेवाला मिर्जा का परिवार उसे अपनी माई मानता है। माई का हिंदू होना उसकी मुसलमान लोगों की सेवा में कोई रुकावट नहीं डालता। वह दिनभर किसी न किसी की सहायता करती है। इसीलिए तो मोहल्ले के बच्चे-बच्चे के जबान पर माई का नाम रहता है।.... हर मर्ज की दवा माई बन जाती है। किसी को कोयले बाँटती है, किसी के घर काम में हाथ बाँटती है, किसी के बच्चे को संभालती है तो छोटी-मोटी विमारियों का इलाज भी वह करती है। जहाँ विभाजन के बाद सांप्रदायिकता की आग भड़कती है वहाँ हिंदू भाई सारे मुसलमानों की सेवा का वृत लेती है। उसे हिंदू और मुसलमान होने में कोई फरक नहीं पडता। "माई घर में रहती कहाँ हैं।.... कभी सुबह अकील साहब के यहाँ बडियाँ डाल रही हैं, तो कभी नफीसा को अस्पताल ले जा रही है, कभी बेगम आफताब के लडके की तीमारदारी कर रही हैं, तो शाम को सकीना को अचार डालना सिखा रही हैं...।"[06]

माई के जान की रक्षा मिर्जा का परिवार करता है। मिर्जा की अनुमती से माई लाहौर मे दिवाली का त्यौहार मनाती है। सबको मिठाई बाँटकर सबकी मंगल कामना करती है। यह सांप्रदायिक सद्भाव का बहुत बडा उदाहरण है। वह मिर्जा को अपना बेटा और जावेद और तन्नो को अपना पोता और पोति मानती है। अपनी वजह से मिर्जा के परिवार पर कोई संकट या मुसीबत ना आऐ इसलिए अंत में माई दिल्ली जाने का निर्णय लेती है। तब मिर्जा का परिवार और नासिर का जमी उसे हिंदूस्तान जाने से रोकते है। नासिर कहते है "तुम अगर यहाँ न ही तो हम सब नंगे हो जायेंगे माई... नंगा आदमी नंगा होता है, न हिंदू होता है न मुसलमान...।"[07] जावेद भी कहता हैं "दादी तुम्हें मेरी कसम है, अगर तुम कहीं गयी।" लाहौर में विभाजन के बाद रहनेवाली माई अकेली हिंदू है। तकी के बच्चे को जब चेचक निकलता है तो वह रात-रात भर उसके सिरहाने बैठकर उसकी सेवा करती है। एकी नेक दिल, मददगार ओर खिदमती माई के मृत्यू पर सबको बहुत दु:ख होता है। कब्बन की बीवी, हमीदा बेगम बहुत रोती है। सब मिलकर हिंदू रस्म में के अनुसार माई का अंतिम संस्कार करते हैं। माई की अर्थी के पीछे सब "राम नाम सत है - यही तुम्हारी गत है" कहते हुये रावी नदी के किनारे ले जाते हैं। मिर्जा माई की चिता को बेटे के फर्ज़ समझकर अग्नि देते है। यहाँ माई सांप्रदायिक सद्भाव के प्रतीक के रूप में सामने आती है।

आजकल हम देखते हैं कि हिंदू और मुस्लिम धर्म के ठेकदार धर्म के नामपर सामान्य जनता को भडकाकर अपना स्वार्थ साध लेते है। लेकिन इस नाटक का एक महत्वपूर्ण चरित्र मौलवी धर्म को केवल हिंदू-मुस्लिम न मानकर मानवता से जोड़कर देखते हैं। जब पहलवान रतन की माँ को कुकृ कहकर लाहौर से हकालने की बात करता है तब मौलवी कहते हैं लडना है तो उपने नक्स से लडो, वही सबसे बड़ा

जिहाद है, खुदगर्जी, लालच से लडो बेसहरा बुढ़ी औरत के साथ लडना इस्लाम नहीं है। "पुत्तर जुल्म को जुल्म से खत्म नहीं कर सकदे... नेकी, शराफत, ईमानदारी से जुल्म खत्म होंदा हैं... जानवर तक प्यार नाल पालतु बन जांदा है... तुझी इंसान ते जुलम करके खुदा नू की मुँह दिखाओगें? इस्लाम जुल्म दे खिलाफ है... जो जुल्म करदे ने ओ मुसलमान नहीं है... समझे..."[08] नाटक के अंत में पहलवान और उसके साथी मौलाना की हत्या करते है।

इस तरह मौलाना मुसलमान धर्मगुरु होते हुये भी सभी धर्मों का सम्मान करते हैं। उनके कहने पर ही माई का अंतिम संस्कार हिंदू रस्म के अनुसार हुआ। समाज विरोधी तत्वोंद्वारा धर्म के गलत उपयोग का वे विरोध करते हैं, चाहे उसमे उनकी जान भी चली जाय उन्हे परवाह नहीं हैं। "बुध्दिजीवियों और साधारण जनता के बीच का जो संबंध होना चाहिए वह नाटककार ने मौलवी, कवि और जनसाधारण का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्रों के माध्यम से उभारा है। मास्जिद में मौलवी की हत्या एक प्रतीक है। जिसके माध्यम से स्वार्थी तत्वों द्वारा धर्म तथा जीवन के महान मुल्यों को नष्ट कर देने की बात कही गई है।"[09]

विभाजन की विभिषिका में नासिर काजमी हरियाणा के अम्बला से लाहौर आये हैं। माई और मौलाना के बाद तिसरा महत्वपूर्ण चारित्र नासिर का है जो सांप्रदायिक सद्भाव और मानवता की राह पर चलता है। जब माई को मारने या भारत हकालने के प्रयास पहलवान करते हैं तब उसका पुरजोर विरोध नासिर करते हैं। दूसरे धर्म का आदर करने की बात कहकर वे कुराण में यहूदी और ईसाई मजहब का जिक्र होने की बात करते हैं। दूसरे धर्म को द्वेष ना कर उनसे से भी हमें सिखना चाहिए। धर्म के ठेकेदारों का ठेकेदारों का विरोध करते हुये वे कहते हैं कि, किस धर्म मे जन्म होना चाहिए ये इन्सान के हाथ में नहीं है। इसलिए धर्म के नाम पर खून बहाना उचित नहीं है। उनकी दृष्टि में धर्म और देश की सरहदों से बढ़कर इन्सानियत होती है। माई द्वारा दिवाळी की पुजा करने पर वे पहलवान से कहते हैं - "वो हिन्दू हैं उन्हें पूरा हक़ है अपने मज़हब पर चलने का।" वृक्षों से पत्तों को झड़ते देख उदास होनेवाले शायर नासिर एक उदार और संवेदनशील चरित्र हैं।

सिकंदर मिर्जा का कोई नूकसान न हो इसलिए माई दिल्ली जाने का फैसला करती है। तब नासिर माई को अपनी माँ समान मानकर कहते हैं "माई मिर्जा साहब का कोई बाल बांका नहीं कर सकता... हम सब उनके साथ है।.... तुक हमारी काँ हो... हमसे जो कहोगी करेंगे... लेकिन ये मन कहो कि तुम हमारी माँ नहीं रहना चाहतीं... तुम अगर यहाँ न रहीं तो हम सब नंगे हो जायेंगे माई... नंगा आदमी नंगा होता है, न हिंदू होता है और न मुसलमान...."[10]

सिकंदर मिर्जा के परिवार के माध्यम से नाटककार ने यह दिखाया है कि, आम आदमी के लिए धर्म एक सामान्य बात है लेकिन पहलवान जैसे समाजविरोधी तत्व लोगों को धर्म के नामपर भड़काने का काम करते हैं। पहले तो सिकंदर मिर्जा का परिवार माई को द्वेष कर उसे भारत से हकालने या मारने के प्रयास करता है। सिकंदर और जावेद का विरोध करते हुये हमीदा बेगम कहती है। "नहीं आपको मेरी

कसम... ये न कीजिए। ...हाय मेरे अल्लाह, इतना बडा गुनाह... जब हम किसी को जिंदगी दे नहीं सकते तो हमें छिनने का क्या हक है?"[11] जब माई का सहदयी स्वभाव, वात्सल्य और प्रेमभावना से वे परिचित होते हैं तब माई को अपनी माँ मानकर उसके जा की हिफाजत करते हैं। इसका मतलब यही है कि, मनुष्य को धर्म नहीं तो मानवता की अधिक आवश्यकता है। जब माई दिवाली मनाने की इच्छा प्रकट करती है तो सारा परिवार उसकी दिवाली पूजा में शामील होकर उसे मुबारक बात देतें हैं। माई को दिल्ली जाने से रोकते हैं। जावेद माई को कहता है "दादी, तुम्हे मेरी कसम है, अगर तुम कहीं गय़ी।" सिकंदर मिर्जा भी बहुत दु:खी होकर कहते हैं "कसम खुदा की आप चली जाती तो हमपर क्या बीतती पता है आपको... हम शर्म से जमीन में गड जाते... हम किसी से आँखें मिलाने लायक न रह जाते... अरे हद है... अब आप कहीं नहीं जायेंगी।"[12] अंत में माई की मृत्यु पर परिवार हिंदू रीतिरिवाज से माई का अंतिम संस्कार करता है। सिकंदर मिर्जा खूद माई की चिता को अग्नि देकर बेटा होने का फर्ज अदा करते हैं। यहां इन्सान के बीच बनाई गई धर्म की दिवार मानवता के आगे पिघलकर प्रेम की धारा को प्रवाहित करती हुयी दिखाई देती है।

तन्नो अपनी माँ से कहती है "अम्माँ ये सब हुआ क्यों?... यही हिंदोस्तान, पाकिस्तान?... अम्माँ, अगरं हम लोग और भाई एक ही घर में रह सकते हैं तो हिंदुस्तान में हिंदू और मुसलमान क्यों नहीं रह सकते थे?"[13]

असगर वजाहत जी ने नाटक में विभाजन के दर्द का चित्रण भी किया है। वे कथावस्तु को मानवीय स्वरुप प्रदान करने में पूर्णत: सफल हुये हैं। नाटक की माई और मौलाना तो ऐसे लगते हैं जैसे मानवता का संदेश लेकर धर्म आये हुये फरिश्ते हैं, जो सभी धर्मों में आपसी सद्भाव का संदेश देते हैं। लेखक धर्म का विरोध नहीं करते बल्कि इन्सानियत विरोधी ताकतें किस प्रकार धर्म का गलत इस्तेमाल कर मानवता को खत्म करना चाहते हैं। यह बताना चाहते हैं। मानवीय त्रासदी के साथ हिंदू-मुसलमान दोनों समुदाओं की मानसिकता का भी चित्रण किया है। नाटक का उद्देश दोनों समुदायों के बीच सांस्कृतिक एकता, सांप्रदायिक सद्भाव, सहिष्णूता, मोहल्लेदारी, प्रेम, विश्वास, और भाईचारा निर्माण करता है। 1991 में कराची से डॉन समाचार पत्र नाटक पर अपनी प्रतिक्रियास्वरुप लिखता है। "इस देश में आज जिस चीज को सबसे ज्यादा जरुरत है वह सहिष्णुता है जिसका अभाव हमारी नैतिक और सामाजिक बुनियादों को खोखला कर रहा है। इस संदर्भ में 'तहरीके निस्वा' थियेटर ग्रुप द्वारा हाल ही में प्रस्तुत नाटक 'जिस लाहौर नइ देख्या...' बहुत प्रासंगिक था।"[14]

संदर्भ संकेत :-

1) हिन्दी साहित्य साम्प्रदायिक सद्भाव, संपा. डॉ. रमेश कुरे (भारतीय साहित्य में सांप्रदायिक सौदाई का सृजन - डॉ. रविता भाटिया), विकास प्रकाशन कानपुर 2014, पृष्ठ - 95
2) जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ, असगर वजाहत, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, 2013, पृष्ठ - 25

3) वही, पृष्ठ - 52
4) वही, पृष्ठ - 66
5) वही, पृष्ठ - 43
6) वही, मलपृष्ठ
7) वही, पृष्ठ - 66
8) वही, पृष्ठ - 35
9) वही, पृष्ठ - 69
10) वही, पृष्ठ - 54
11) वही, मलपृष्ठ

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

37. भक्तिकालीन काव्य में राष्टीय एकता एव सांप्रदायिक संदभाव

प्रा.डॉ.विजय भास्कर लावणे
शोधमार्गदर्शक
महात्मा गांधी महाविद्यालय, अहमदपूर
ता.अहमदपूर जि.लातूर

वर्तमान में राष्ट्रीय एकता जरुरत निर्माण हो राही। हर धर्म अपना अस्तित्व किस तरह बडा है यह दिखाने का प्रयास कर रहा है। इससे साधारण आदमी के मन में उलझन निर्माण हो रही है । इस उलझन का निराकरण भक्तिकाल के काव्य में दिखाई देता है। निसमें प्रमुख तौर पर तुलसीदास और कबीर का स्थान अग्रणी माना जाता है। भक्तिकाल में समाज दिशाहीन हुआ, अस्थिरता बढने लगी सांप्रदायिक सदभावना की जरुरत निर्माण होने लगी । तब दोनों संतों ने अपने काव्य द्वारा राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सदभावना को बढावा मिले ऐसे काव्य की निर्मिति की है।

सामाजिक दृष्टिसे विविध संप्रदायों द्वारा फैलाया हुआ अन्याय, अत्याचार से भरा शासन था। समाज के हर क्षेत्र में अस्तव्यस्तता, विश्रृंखता फैलने लगी थी किसी को भी धर्म का सही रुप समझ नहीं रहा था। कभी संप्रदाय, कभी जाति, कभी पंथ का वर्चस्व सामान्य जनता पर बढ रहा था, उच्चवर्ग निम्न जाति को दबोच रहे थे। जाति भेद तो आखरी सीमा तक पार कर गया था तभी इन दोनो संतों ने लोकनायक बनकर अपनी दिव्यवणी से दिन हिन समाज में नवचेतना निर्माण का कार्य किया है।

भक्तिकाल में जो राजा थे वह अपनी मनमानी करते थे समाज के सामान्य, दलित को वह न्याय नही था सब चाटूकारों का शासन बन गाय था । गरिब जनता को राजा के दरबार में स्थान तक नहीं था तब तुलसीदास ने अपने काव्य द्वारा तत्कालीन राजाओं के लिए संदेश पर काव्य में लिखा –

" तुरुत सकल लोगन्ह पहि जाहू
आसन उचित देहु सब काहू "

इस तरह का राजा का सामान्य के प्रति बर्ताव जब होगा तभी राजा का पूरी तरह से आदर सम्मान भी जनता करती है ।

समाज की दरिद्रता बढ रही थी समाज का एक वर्ग जमीनदार था दूसरा वर्ग जमीन पर काम करने वाला था । नारी की स्थिति बडी दयनीय थी समाज को दिशा देने वाला कोई नहीं था, अराजकता बढ रही थी। राजा और प्रजा में दूरी निर्माण हो रही थी। भ्रष्टाचार बढ रहा था गरीबों के लगान में बढोतरी हो रही थी। गरीब जनता की आर्त पूकार सूनने वाला कोई राजा नहीं था तब तुलसीदास कहते है राम राज्य आना चाहिए ।

"नहीं दरिद्र कोउ दुखी न दीना
नहीं कोउ अबुछ न लच्छन हीना "

तुलसीदास का यह वक्तव्य आज के युग में बडा प्रासंगिक लगता है उन्होंने कहा है कि देश में कोई भी गरीब, दुखी, नहीं चाहिए, कोई भी किसी का शोषण ना करे, कोई भी किसी को हिनता भरी नजरों से न देखे, सब एक समान होने चाहिए ताकि जाति धर्म मुक्त समाज निर्माण हो और सब के मन में सूरक्षा की भावना निर्माण हो ।

एक दूसरे के प्रति द्वेश की भावना बढने लगी थी ऐसे समय धार्मिक सांप्रदायिक सद्भावना को बढावा देने का काम कबीर ने किया है वे एक अच्छे समाज सुधारक के रुप में सामने आते है वे जो गलत देखते थे उसके उपर आलोचनात्मक काव्य की निर्मिति करते थे। कबीर ने हिन्दू लोगों के

बाह्य आडंबर का कडा विरोध भी किया है। मंदिर प्रवेश की नियमावली देखी तब उन्होंने अपने काव्य द्वारा मूर्तिपूजा का कडवा विरोध भी किया है ।

"पहार पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजौ पहार ।
ताते या चकी भली, जो पीस खाय संसार ।।

कबीर मूर्तिपूजा का साफ विरोध करते थे इसी कारण " उनका कहना था यदि पत्थर के टुकडों को पूजने से ईश्वर प्राप्ति होती है तो क्यों न पहाड की पूजा की जाये" 1) लोग सिर्फ दिखावे के लिए पूजा पाठ करते है हाथ में माला लेते है और मन में छल कपट के विचार चलते रहते है । लोग तिलक लगाते है झूट बोलते है। वर्तमान में यही परिस्थिति चल रही है लोग मंदिरों में काले धन से चढावा चढाते है और दूसरी तरफ गरीब बेचारे भूख से तडप रहे है ।

भक्तिकाल में जाति व्यवस्था का बडा महत्व था उच्चवर्ण के लोग दलित समाज को बूरी नजरों से देखते थे, उनका स्पर्श पाप माना जाता था, कवी कबीर स्वयं को जुलाह कहते है, वह कहते है मन से संकोच की भावना निकाल देनी चाहिए । वर्ण व्यवस्था का वे विरोध करते है –

"भूला भरमि परै जिनी कोई, हिन्दू तुरक झूठ कल दोही
एक ज्योति से सब उत्पन्ना, कौन ब्राहमन कोन सूदा"

इससे स्पष्ट होता है कि कबीर धर्म, जात, पंथ, संप्रदाय को नहीं मानते है। उन्होंने देश हित को सामने रखकर ही निष्काम भक्ति को स्थान दिया है । भक्तिकाल में वैचारिक संघर्ष बढ रहा था इस कारण सांप्रदायिक झगडे बढ रहे थे। उसमें अंग्रेजों की कुटनिति भी शामिल थी पर निरपराध लोग देगे, झगडे, युध्द में मारे जा रहे थे। उसी समय तुलसीदास और कबीर ने धार्मिक विसंगतियों के विरुध्द काव्य के द्वारा अपना आक्रोश व्यक्त किया है। धार्मिक अनाचार को मिटाकर उसकी जगह मानवता धर्म की स्थापना करने का प्रयास दोनों महान संतों ने काव्य द्वारा किया है।

तुलसीदास और कबीर ने अपने काव्य द्वारा जाति–पति का विरोध किया है कबीर कहते है जो भगवान मनसे चाहता है उसे भगवान प्राप्त होते है उसमें जाति का संबध्द ही नहीं। तुलसिदास काव्य में आदवासि भिल्ल शबरी के झूटे बेर राम खाते है, इस उदाहरण द्वारा भी तुलसीदास ने जाति –पाँति के भेद को मिटाने का पूरा प्रयास किया है।

समाज में गरीब सामान्य दलित लोगों की और समाज का कोई भी राजा सरदार नहीं देख रहा था, हिन्दू मुस्लिम भूख से तडप रहे थे तब "कबीर ने हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच वास्तविक एकता लाने का प्रयास किया था" 2) उन्होंने धार्मिक सामाजिक अडम्बरों का खूलकर विरोध किया ताकी दोनो धर्मां सें सांप्रदायिक एकात्मता बनी रहे। कबीर के काव्य में राष्टीय एकात्मता की भावना प्रबल थी इसी कारण उन्होंने "एक ऐसी विचारधारा को जन्म दिया, जिससे दो संस्कृतियों दो विचारधाराओं और दो जातियों को निकट लाने के लिए भावनात्मक भूमिका तैयार की है।" 3) जिससे सामाजिक सदभावना को भी बढावा मिलता है ।

रामचरितमानस में रामराज्य की कल्पना करके लोकतंत्र के विधि–विधान पर प्रकाश डाला है। समाज रक्षण लोकरक्षण के लिए नैतिक मूल्य की जरुरत है। नैतिक मूल्य समाज के हर पहलू में है पर सिर्फ उसे जगाने की जरुरत है। आज देश भ्रष्टाचार बेरोजगारी दरिद्रता, अन्याय, दहशतवाद, आतंकवाद से लड रहा है। देश की संपति कुछ ही लोगों के पास रह गयी है गरीबी बढ रही है। इसी कारण कबीर, तुलसीदास ने सामाजिक सदभावना से प्रेरित होकर राष्ट्रीय एकात्मता को जागृत करने का प्रयास किया है। "भक्तिकालीन पद सम्पूर्ण मनुष्य जाति के कल्याण के साथ जुडे है। लोकमंगल ही इन पदों का प्रमुख उद्देश्य रहा है"4) यह काव्य भक्ति काल के है पर इसमें मानवीय

ऐवयबोध, समन्वय की भावना, राष्ट्रीय एकात्मता और सांप्रदायिक सदभाव को बनाये रखने में मददगार साबित होगी।

भक्तिकालीन काव्य में कबीर और तुलसीदास ने सामाजिक समरसता को काव्य में पिरोकर उदात्त ध्येय से प्रेरित होकर सांप्रदायिक सदभावना को बढाने का यथार्थ प्रयास किया है। आज इन दोनों के निति मूल्य की जरुरत है क्योंकि देश में भ्रष्टाचार, आंतकवाद, दहशदवाद, बढ रहा है जिससे सांप्रदायिक तनाव निर्माण होता है और सामान्य आदमी का जीवन क्षतिग्रस्त होता है । इसी कारण तुलसीदास और कबीर के काव्य को फिरसे जन जन तक पहुँचाना पडेगा ताकि देश में सांप्रदायिक तनाव कम होगा और राष्ट्रीय एकात्मता की भावना को बढावा मिलेगा।

संदर्भ

1) डॉ.पीताम्बर सरोदे, डॉ.विश्वास पटिल/हस्ताक्षर/सरस्वती प्रकाशन,कानपूर/पृष्ठ – 19

2) अनिता कोठारी/हिन्दी साहित्य एवं साहित्यकार/मार्क पब्लिशर्स,दिल्ली/ पृष्ठ – 83

3) डॉ.पीताम्बर सरोदे, डॉ.विश्वास पटिल/हस्ताक्षर/सरस्वती प्रकाशन,कानपूर/पृष्ठ – 21

4) डॉ.हणमंतराव पाटिल /भाक्तिकालीन काव्य में मानवीय मूल्य/ समता प्रकाशन,कानपूर/पृष्ठ – 71

38.देश विभाजन पर आधृत कहानियों में राष्ट्रीय एकता तथा सांप्रदायिक सद्भाव का संदेश

डॉ. साधना च. भडारी
सहयोगी प्राध्यापक तथा शोधनिर्देशक,
अण्णासाहेब मगर म.वि.
हडपसर, पुणे – 28

आजादी के बाद भारत–पाकिस्तान विभाजन हुआ। इस विभाजन की त्रासदी को कई साहित्यकारों ने देखा तथा भोगा है, परिणामतः विभाजन का दर्द, दुःख त्रासदी इनकी कहानियों में यथार्थता से प्रस्तुत हुआ है। देश–विभाजन समस्या पर हिंदी में कई कहानियाँ लिखी गई जिसमें सांप्रदायिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता का संदेश कहानीकारों ने दिया है।

भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया है' अज्ञेय की 'शरणदाता' 'मुस्लिम हिंदु भाई–भाई,' मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक' और 'क्लेम' महीप सिंह की 'पानी और पुल, 'शहर' 'पारदर्शी दीवार' आदि कहानियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें से कुछ कहानियों पर यहाँ प्रकाश डाला जाएगा।

1) अमृतसर आ गया है – भीष्म साहनी

भारत–पाक विभाजन पर आधृत यह कहानी भीष्म साहनी की कालजयी कहानी है जो विभाजन की त्रासदी को प्रस्तुत कर सांप्रदायिक सद्भाव की प्रेरणा देती हैं। विभिन्न जाति, धर्म संप्रादायिक सद्भाव की प्रेरणा देती हैं। विभिन्न जाति, धर्म संप्रदाय के लोगों को अपने मकाम पर पहुँचानेवाली रेल–यात्रा से इस कहानी का आरंभ है। पठानों की संख्या जादा है, हिंदू अकेला है परिणामतः दुबला बाबु मुस्कराता है और बाहर देखता है। पठानों की संख्या ज्यादा होने के कारण वह इन पठानों के साथ झगडा करना नहीं चाहता, क्योंकि वह अकेला है। इस वजह से चिढानें के बाद भी वह चुप बैठता है। पठानों का चिढाते कम नहीं होता पठान चिढाने हुए कहता है ''मांस नई खाता ए, बाबु तो जाओ जनाना डिब्बे में बैठो इधर क्या करता ए?'' और डिब्बे में कहकहा उठता है।''[1]

और गुस्से में दुबला बाबू पागल हुआ जा रहा था। वह उतर कर कुछ लाने गया था। अमृतसर के प्लेटफार्म पर तीनों पठान चुपचाप उतर कर दूसरे डिब्बे में जाकर बैठ गये थे। घूस्से में लाल पीला उसका चहेरा हो गया था, आते समय उसके दाये हाथ में लोहे की छड़ थी और डिब्बे में घुसकर वह पठानों को पीटना चाहता था लेकिन पठाना को न पाकर वह हड़बड़ाकर चारों ओर देखता है ''निकल गये हरामी–––मादर सब के सब निकल गये तुमने उन्हें जाने दिया? तुम सब नामर्द हो बुजदिल''[2]

जो रेल सभी जाति, धर्म संप्रदाय के लोंगो को मकाम पर पहुँचाती है उस रेल में विभाजन हो गया था। पठान – पठान के डिब्बे में जाकर बैठे थे हिंदू–हिंदू के जो विभाजन पहले प्रत्येक डिब्बे के भीतर होता रहा था, अब सारी गाडी के स्तर पर होने लगा था। अगले स्टेशन पर जब गाडी रूकती है एक आदमी खिडकी में से – हाथ अंदर डालकर खिडकी से टटोलते लगता है दुबला बाबू चिल्लता हुआ है कहता है नहीं है यहाँ जगह –––– उतर जाओ।'' वह आदमी चढने का बूरी तरह से प्रयास करता है तो दुबला बाबू लोहे की छड़ से उस पर वार करता है। उस मुसाफिर के चेहरे

पर लहू की धारें फूट पडती हैं और वह एक' या अल्लाह' कहकर नीचे गिरता है और फिर वह एक झटके के साथ छड़ बाटर फेंकता है और अपने दोनों हाथों को सूँघता है कि कहीं उसके हाथों से खून की बू तो नहीं आ रहीं। सामने बैठा सरदार जी बोलता है '' बडे जीवन वाले हो बाबू, दुबले–पतले हो पर बडे गुस्सेवाले हो। बडी हिंमत दिखायी है। तुमसे डरकर ही वे पठान डिब्बे में से निकल गये। यहाँ बने रहते तो एक न एक की खोपडी तुम जरूर दुरूस्त कर देते।'' सरदारजी हँसने लगा और दुबले बाबू के चहेरे पर बीभत्स सी मुस्कान छा गयी।

इस कहानी के माध्यम से सांप्रदायिक बोलबाल नकोरकर सांप्रदायिक सद्भाव का प्रयास भीष्म साहनी ने किया है।

2) मलबे का मालिक – मोहन राकेश –

गनी मियाँ विभाजन के बाद पाकिस्तान चले जाते है और उनका बेटा अमृतसर में रहता है। गनी मियाँ बडे विश्वास के साथ अपने बेटे और उसके परिवार को रक्खे पहलवान के हवाले कर गए थे परंतु रक्खे पहलवान ही उनका कत्ल करता है। जिस घर को बनाने में गनी मियॉ ने जिंदगी की पुॅजी लगाई थी उस घर को मलबे में परिवर्तित देखकर उनका रोम.......रोम कॉंप उठता है। इस कहानी के माध्यम से लेखक प्रेम भाईचारा और विश्वास और सांप्रदायिक सद्भाव स्थापित करना चाहते हैं।

साढे सात साल पहले गनी मियाँ यहाँ से पाकिस्तान चले गऐ थे। उस समय उन्होंने अपने बटे चिरागदीन को समझाया था। अब यहॉ रहना खतरे से खाली नहीं हैं हम सब बेचकर पाकिस्तान जाऐंगे, लेकिन चिरागदिन मानता नहीं। वह अपने पिताजी को कहता है ' रक्खे के होते हुए मुझे यहॉ काई छु भी नहीं सकता।'' जब गनी मियाँ रक्खे से मिलते हैं, तो बहूत प्यार से मिलते है। चिराग का उसके प्रति जो विश्वास था वह जाहिर करते है। '' रक्खे उसे तेरा बहुत भरोसा था। कहता था कि रक्खे के रहते काई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मगर जब आवी आयी तो रक्खे के भी न रूक सकी।''[3]

गनी मियॉ घर की जली चौखट पकड कर रोते है। अपने जिदंगी की कमाई जिस घर को बनाने में उन्होनें लगायी थी उस घर को मलबे में परिवर्तित देखकर उनका रोयॉ..........रोयॉ कॉप उठता है। गली में चेहमें गाईयॉ हो रही हैं कि मनोरी सारी बात गनी मियॉ को बता देना.........लेकिन डर के मारे मनोरी भी कुछ नहीं बोलता है।

रक्खे पहलवान जो स्वार्थ के लिए चिराग का कत्ल कर देता है वह गनी मियॉ की बातों से आसक्ति से अनासाक्ति की ओर जाता है और 'मलबे का मालिक' आखिर कुत्ता होता हैं।

आसक्ति और अनासक्ति के संघर्ष में मनुष्य अनासक्ति की ओर कैसे जाता है? यह भी लेखक ने बहुत सुंदरता से दर्शाया है। भारत–पाक विभाजन की त्रासदी को इस कहानी में बहुत सुंदरता से चित्रित किया

3) क्लेम – मोहन राकेश

'क्लेम' कहानी के गरीब साधुसिंह की जो वेदना है वह उस समय कई लागोंने भोगी है। बलवे में कई बेटीयॉ लापता हो गई कईयों की बीबीयों को अगुआ किया गया। यह अकेले साधुसिंह की

त्रासदी नहीं रहीं अपित पंजाब मे कई लोगों की यह त्रासदी रहीं हैं। लेखक ने साधुसिंह के माध्यम से विभाजन की समस्या से उत्पन्न मानव के दर्द का गहरी संवेदना के साथ अंकन किया है।

4) पानी और फुल– महीपसिंह पत्नी और पुलं महीपसिंह की देश विभाजन को उत्तर–कालीन सुखद प्रभावपुर्ण तथा लोकप्रिय कहानी है। कहानी का शीर्षक प्रतीकात्मक है। 'पाती ' जीवनदामिनी नदी का प्रतीक है जिसमें व्यापकता, निर्मलता , असीमता है। पंजाब से निकलकर कई नदियॉ पाकीस्तान में जती है जिसमें जेहलम, सतलज हैं। क्या मनुष्य पत्नी को बॉट सडा है? फुल राष्ट्रीय एकात्मता का तथा मनोमिलन का अपूर्व सेतु है।

विभाजन की घोषणा के बाद पंजाब से लाखों की संख्या में लोग लाहोर गए थे। पंजाब में कभी भी जान जा सडती हैं यह खतरा उन्हें था। '' उन दिनों जब पंजाब का विभाजन घोषित हो चुका था, पंजाब की पॉचो नदियों का जल उन्माद की तीखी शराब बन चुका था मॉने फिर पंजाब जाने का फैसला किया था। सभी ने ऐसे विरोध किया जैसे वे जलती आग में कूदने जा रहीं हों। विभाजन के समय सारे पंजाब मे आग लग गई। घर के घर गॉव के गॉव और शहर के शहर उस आग में जलने लगे।'' और जब आग रूकी तो ऐसे लगा कि अमृतसर और लाहौर के बीच की जीम ही फट गयी हो। लोग भूल गए थे कि उस गटरी खाई हे उसपार उनका ' अपना गॉव' था।

लेखक याने मैं और उनकी मॉ लाहौर से पंजाब जा रहे थे। विभाजन से उन्हें स्थलांतरित होना पड़ा था। जब अपने सराई गॉव के स्टेशन पर रेल रूकी तो रेल के आसपास के लोग, प्लॅफार्म पर खडे लोग पूछने लगे 'आपमें से कोई इस गॉव का है? और जब मॉ ने जवाब दिया हॉजी हम सराई के ही है।'[4]

तो रोल के बाहर से कई आवाजें आई '' तुम किसके घर से हो'' और जब लोगों को पता चलता है कि यह मूलसिंह की बीवी तथा बेटा हैं तो कई प्रश्नों की बौछार होती है । मूलसिंह कैसे–कैसे है? खेलसिंह कैसे–कैसे है, जब उन्हें पता चलता है कि मूलसिंह नहीं रहें..... तो लोगों में निस्तब्धता छाए गयी। कुशल क्षेम के संदर्भ में पूछजाछ हुई। जमें हुए लोगों ने सूखे मेवे की कई पोटलियॉ दी जिसमे बादाम, अखरोट, किश मिश थे। चंद मिनीटों में बर्थ पर पोटलियों के ढेर लग गए। गार्ड रेल को हरी लालटेन दिखा रहा था तो एक आदमी ने उसे पकड लिया और कहा '' अरे बाबू घे न्चार मिनट और खड़ी रहने दे न गाडी को देखता नहीं, यह बीवी इसी गॉव की है। अंदर एक ने उसका लालटेनवाला हाथ पकडकर नीचे कर दिया।''[5]

रेल बाहर के सभी लोग कहने लगे ' भरजाई तुम वापस आ जाओ।''[6] मॉ का स्वर गइगइ हो गया था वह सब को हाथ जोड रही थी उसकी ऑखोसे ऑसू बह रहे थे। देश का बॅटवारा होने के बाद भी या लाहौर जाने के बाद भी मॉ अपने गॉव को नहीं भूल पायी थी। यहॉ स्पष्ट दिखाई देता है कि अपने गॉव के लोगों के प्रति मन में चौदह साल बाद भी उतना ही प्रेम हैं जितना पहले था। विभाजन के बाद स्थलांतरित लोगों के जीवन का यथार्थ दिखाई देता है।

5) शरणदाता – अज्ञेय

देश – विभाजन पर लिखी गयी यह कहानी अज्ञेय की सर्वश्रेष्ठ कहानी मानी जाती है।

विभाजन के बाद पंजाब से लाखों की संख्या में हिंदू शरणार्थी भारत की ओर लगे। उनके यहॉ पहुॅचने के कुछ ही दिनों बाद यहॉ के मुस्लिम भी शरणार्थी बन गये और वे भी लखनऊ,

दिल्ली, कानपुर, अमृतसर आदि शहरों से पाकिस्तान की ओर निकले किसी भी समय आक्रमण का भय था। हरेक को अपने रक्षा की चिंता थी। पंजाब से निकलते समय हिंदू भी हिंदू के लिए पराया था मुस्लिम भी मुस्लिम के लिए पराया था। सब ओर विषैला वातावरण द्वेष, घृणा और हिंसा.... नृशंसता का वातावरण फैला था।

इस कहानी में देविदंरदयाल और रफिकनुद्दीन दो दोसा है। लाहौर में जब हिंदू – मुसलमानों के दंगे– पुसाद हो रहे थे देविदंरदयाल लाहौर से बाहर निकलना चाह रहे थे....सारे बस्ती के हिंदूओ के घर खाली हो रहे थे। देविदंरदयाल की पत्नी जालंधर में मायके में थी उन्होंने उसे वहीं रूकन के लिए कहा था, परिणामतः वे शहर छो़डकर बाहर निकलना चाह रहे थे। कत्ल, मारकाट, आगजनी की घटनाएँ दिन–ब–दिन बढ रही थी परिणामतः देविंदर का रफिकनुद्दीन के यहाँ रहना मुश्किल हो गया। मोहल्लें के मुसलमानों को यह पता चल गया था। कि रफिकनुद्दीन के घर में कोई हिंदू आदमी छिपा है। इस वजह से मोहल्लेंवाले लोग रफिकनुद्दीन पर दवाब डालने लगे कि उस हिंदू आदमी को पनाह मत दो। रफिकनुद्दीन पर इस दवाब का कोई असर नहीं हुआ उन्होंने अपने मित्र के रहने की व्यवस्था अताउल्लाह के गैरेज में कर दी। इस गैरेज में उन्हें रोज दो बार भोजन पहुँचाया जाने लगा। रफिकनुद्दीन की बेटी जैबन्निसा भी डिबो में भोजन करती थी। एक दिन डिब्बे में रोटियों के साथ एक पुडिया उन्हें मिलती है, पुडिया खोलकर देखते है तो उसमें एक वाक्य लिख है ' खाना कुत्ते को खिलाकर खाइएगा।'' सारी बातें देविदंर के ध्यान में आती है वह वहाँ से भाग निकलते है। लगभग डेढ महीने बाद जब देविदंर अपने घर के लोगों का पता लेने के लिए दिल्ली – रेडिओ से अपील करवा रहे थे तब एक दिन उन्हें एक चिढ़ी प्राप्त होती है जिसमें लिखा है '' खुदा का लाख –लाख शुक्र हे आप बचकर चले गए। अब्बा ने जो दिया था उसके लिए माफी माँगती हूँ और यह भी याद दिलाती हूँ की उसकी काट मैनें ही कर दी थी। अहसान नहीं जताती, मेरा कोई एहसान आप पर नहीं है सिर्फ यह इब्तजा करती हूँ कि आपके मुल्क में असलीपन का कोई मजलम हो तो याद कर लिजिएगा, इसलिए नहीं की वह मुसलमान है, इसलिए की वह इन्सान है, खुदा हाफिज।''[7] जैबुन्निसा ने देविदंर की जान बचाई थी उसी जैबुन्निसा की चिठ्ठी आ देविदंर चुटकी से उडा देते–है। देविदंर को बचानेवाली जैबुन्निसा की मानवयिता देविदंर रौंद रहा है।

हिंदी कहानी साहित्य में भारत–पाक विभाजन की त्रासदी के माहपमसे कहानीकार 'साप्रदायिक सद्भाव एवं भारत के अखंडत्व, एकता का संदेश देते हैं।

संदर्भ

1) कथा विहार – सं.डॉ. सुरेशकुमार जैन / डॉ बीणा मनचंदा
(अमृतसर आ गया है – भीष्म साहनी – पृ. 84)
2) वही पृ. 90
3) वही पृ. 52
4) गदय परिपाठ– सं. डॉ.सुभाष तलेकर (पानी और फुल – महीपसिंह –पृ– 168)
5) नदी – पानी और फुल – महीमसिंह पृ. 171
6) नदी – पानी और फुल – महीमसिंह पृ. 172
7) नदी – पानी और फुल – महीमसिंह पृ. 173

39. प्रेमचंद और साम्प्रदायिक सदभावना

डॉ. साइफुल इस्लाम
जुरिया महाविद्यालय
नगावं, असम

प्रेमचंद एक वैसे महान साहित्यकार थी, कि किसी भी वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म, सम्प्रदाय के खिलाफ नहीं आवाज उठाया। वह न जात देखता और न धर्म सिर्फ बुरायों के विरूद्ध आवाज उठाई। 'ईदगाह' कहानी में उन्होंने हामिद को जिसने प्यार से उपस्थित कराया ठीक उसी तरह 'प्रेमाश्रम' में कादिर मियां की मानवता को सामने लाये है। प्रेमचंद उधार मानवता को सामने रखकर हिन्दु–मुसलमान दोनों धर्म का विरूध किया है। मानवधर्म आप खुद हिन्दु होते हुई भी न जाने कितने हिन्दुपन से न जाने कितने ऊपर उठ सके और मुसलमान होते हुये भी मुसलमानों के घर परिवारों के अन्दर झाककर प्रामाणित कला के साथ यर्थाथ को सामने लाया है। प्रेमचंद बार–बार समझा रहा था कि मुक्ति की रास्ता धर्म और संस्कृति के गलियारों से होदकर नहीं गुजरते, बल्कि राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक हितों के लिए हिन्दु मुसलमान एक साथ और एक ही रास्ते से ही गुजरने सही प्राप्त होगी। प्रेमचंद स्वंय लिखा है ''मैं दुनिया में महात्मा गांधी का सबसे बड़ा मानता हूँ। उनका उद्धेश्य भी यह है कि मजदुर और कासकार सुखी हो। वह उन लोगों को जगाने के लिए, आन्दोलन मचा रहे है। मैं लिख करके उनको उत्साह दे रहा हूँ। महत्मा गांधी हिन्दु–मुसलमान की एकता चाहते है। मैं भी हिन्दी–उर्दू को मिला करके हिन्दुस्तानी बनाना चाहती हूँ।[1]''

प्रेमचंद अपने समय में अपनी सीमाओं में जितना कुछ कर गई, वह हमारा पाथेय है और उनके साम्प्रदायिक सद्भावना के लिए पुरे भारतीय लोगों के सामने अमर रहेगें। प्रेमचंद का सपना थ कि हिन्दु – मुसलमान एक वैसा देश बने जहाँ एक समाज व्यवस्था हो जहां सब वर्ग,वर्ण, धर्म और सम्प्रदाय छोरकर एक मानव धर्म हो।

प्रेमचन्द्र अपने कथा साहित्य में हिन्दु–मुसलमान सदभावनां के भाव दिखाई है। उन्होंने कथा साहित्य में धर्म के नाम पर हिन्दु–मुसलमान को गुमराह करने वाले धार्मिक भावना को राजनैतिक नेताओं ने कैसे इस्तेमाल करते है, इसका पर्दा फास किया, उन्होंने सीधे शब्द में कहा कि कोई भी नेता अपने धर्म के लोगों के स्वार्थ को पहला स्थान नहीं देते। साम्प्रदायिकता का सबंध न धर्म से है और न संस्कृति से सिर्फ अपने सत्ता से होता है। जिसका नाता न आम हिन्दु न आम मुसलमान से है। प्रेमचन्द्र के निबंध मनुष्यता का अकाल, साम्प्रदायिकता और संस्कृति, हिन्दु–मुस्लिम तथा उनके उपन्यास और कहानी में साम्प्रदायिक सदभावना की बात की है।

प्रेमचंद अपने साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय मुक्ति की चिता का सवाल उठाया और भारतीय लोगों के मन में स्वदेश प्रेम जगाना चहाता था। इस में न कोई हिन्दु न कोई मुसलमान का भेद– भाव रखा था। भारत की स्वत्रंता के लिए महात्मा गांधी जी को भी साथ दिया था। लोगों में स्वदेश प्रेम बड़ाने के खुद सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया था।

प्रेमचंद के करबला नाटक में मुसलमानों के साथ–साथ हिन्दु की कुरबानी दिखाते है। आपके उपन्यास 'कायाकल्प' में यशोदानंदन की हत्या पर ख्वाजा महमुद आसु बहा रही थे कि वैसा काम करना उचित नही है। लेकिन जब पता चला कि उनके बेटे द्वारा हो अहल्या को अपहरण की जाती है और बदसलूक करने चाहने पर अहल्या उनके बेटे को मार देती तब ख्वाजा कहते कि '' एक घंटा पहले तक मैं उस पर निसार होता था। तब उसके नाम से नफरत हो रही है उसने वह

फैसला किया जो इंसानियत के दरजे से गिरा हुआ था। इसका बाद भी ख्वाजा अहल्या की तारीफ करते है और कहते, काश इस मुलक में ऐसी ओर लड़कीया होती।

साधारणतः दिखा जाता है कि पुजींपतियों के आर्थिक स्वार्थ सामाजिक राजनैतिक समस्याओं को किस प्रकार सामराज्यवाद रूप देते है, इसका चित्रण आपके उपन्यास कायाकल्प में मिलता है। साम्राजवाद विरोधी चेतना को उन्होंने साम्प्रदायिक सहयोग और सदभाव के महत्व को गम्भीरतापुर्वक हिन्दु–मुसलमान के साझा कार्यभार को रेखाकिंत किया। उन्होने कायाकल्प उपन्यास में लिखा है '' दोनों कौमी में कुछ लोग ऐसे है जिनकी इज्जत और साख दोनों को लड़ाते रहने पर ही कायम है। बस, वह एक न एक शिगुफा छोड़ा करते है''[2]। प्रेमचंद का समय ब्रिटिसों की जमाना थे और अग्रेजों चाल चलता था कि भारतीय लोग एक साथ न हो सके। इसलिए हिन्दु मुसलमान दोनों के बीच झगड़ा लगाकर रखाना चाहता था ताकि सब एक साथ होकर अग्रेजों के खिलाफ आन्दोलन न कर सके।लेकिन इसी समय में प्रेमचंद ने पुरे होशियारी से हिन्दु मुसलमान दोनों सम्प्रदायों के बीच में एकता सृष्टि कर अंग्रेजों के खिलाफ लोगों को देश–प्रेम के ओर प्रेरित किया।

आज हमारे गीच भले प्रेमचंद क्यों न लेकिन आपको पूरे हिन्दुस्तानी लोगों के ह्रदय में विराजमान है। हिन्दी साहित्य में वैसा साहित्यकार खुब कम ही मिलेगा, जो हिन्दुस्तान को जाना, समझा, और उसमें साहित्यक साधना की। प्रेमचंद वह नारा आज भी लोगों के मुख में कि न मैं हिन्दु हूँ और न मुसलमान मैं एक इंसान हूँ।

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में हिन्दु मुसलमान कोई अलग तरिके से नही रखीं । सिर्फ जीवन के अनुभव ओर अनुभूति के साम्प्रदायिक सदभावना उनके साहित्य में विराज करते है। 'कर्मभूमि' उपन्यास में पदानिन चरित्र के माध्यम से वे कहलाती हे '' धनी लोग हम गरीबों की बात कया पुछेगें। हालाकि हमारे नबी का हुक्कू हे कि शादी व्याह में अमीर गरीब का ख्याल न होन चाहिए पर उनके हुकुम कौन सुनता है। नाम के मुसलमान नाम के हिन्दु रह गए है। न कही अच्छा मुसलमान नजर आता है न सच्चा हिन्दु।''[3]

हिन्दी साहित्य के इतिहास मुंशी प्रेमचंद जी के नाम आज भी बड़े इज्जत से लिखा जाता है। आप मृत्यु हो गई प्रायः 80 साल हो गई फिर उनके ऊपर चर्चा, शोधकार्य आज भी क्यों ? सच बात तो यह है कि प्रेमचंद की साहित्य आज भी प्रासगिंक है, जितना की कल था। उनके साहित्य में वैसा कोई भारतीय समस्या न उवडें है जो यहाँ हुआ करते थे। अप राष्ट्रमुक्ति और स्वस्थ्य समाज निमार्ण करना उनका उद्धेश्य था।

साम्प्रदायिकता का अर्थ अपने धर्म तथा जाति को श्रेष्ठ और दूसरे जातियाँ धर्म को निकृष्ट समझना, या उन धर्म तथा जाति के लोगों के प्रति देश भाव फैलाना ही सम्प्रदासिकता कहा जाता है और देश भाव फैलाने से परस्पर जाति धर्म के लोगों के बीच शंका अविश्वास बड़ जाता है, जिसके फलस्वरूप समाज में विभाजन तथा एक दुसरे से अलग–अलग हो जाता है। और नुकसान सभी धर्म के लोगों पर पड़ता है।

समाज के कुछ स्वार्थवादी लोग अपने स्वार्थ के लिए देश या स्माज धर्मो का अवेग ओर उत्माद सृष्टि कर अपना रास्ता हासिल रिना चाहते है। कभी–कभी वैसा देखा जाता हे कि चुनाव के वक्त राजनैतिक नेताओं धर्मगुरू अपने अपने धार्मिक भावनाओं को फैलाकर राजनैतिक सत्ता बनाने में जुड़े रहते हे । लेकिन ध्यान देने से पता चलता हे वह नेता या धार्मिक गुरू किसी भी धर्म का क्यों न हो। चाहे वह इस्लाम, हिन्दु, इसाई धर्म क्यों न हो ? और वह लोग हर धर्म के पुजीवांदी शोषणकारी हो रहते है ?

दुनिया के किसी धर्म ने यह कैसे नही सिखाते कि एक धर्म के लोगे दूसरे धर्म के लोगों को दोष,हिंसा करें फिर हम क्यों करतें है वैसा ? जरव श्रेष्ठ मानव जाति यह समझना चाहिए कि भेदभाव हिंसा, ईर्ष्या आदि से कभी भी ना स्वर्ग जा सकले ना बेहेस्त जा सकते हें। इसलिए हम सम्प्रदायिकता सद–भावना को बनाई रखने के लिए पहले राजनैतिक नेता, धर्म गुरू से सर्तक रहना है। इसके साथ – साथ आम जनता भी जागृत रहना पड़ेगा ताकि कोई राजनैतिक नामक विश्व देश या समाज फैलाने न पाये। फिर भी वैसा परिस्थिति अभी साय तो एक धर्म के लोग दुसरे धर्म लोग एक साथ बैठकर क्यों पथ्थकन के माध्यम से यह सुलझाना चाहिए ओर क्षमा, दया करूणा, प्यार – मुहब्बत, सहयोग, सहिष्णूता आदि मानवीय गुणों के दृष्टि से देखकर समाधान करना चाहिए।

सन्दर्भ

1 प्रेमाश्रम–प्रेमचंद, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद , पृष्ठ–43
2 कायाकल्प–प्रेमचंद, सरस्वती प्रेस, बनारस–पृष्ठ–427
3 कर्मभूमि–प्रेमचंद, हंस प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ–78
4 प्रेमचंद एक विमर्श–संम्पादक– डा0 गणेश दीक्षित, प्रकाशक–सचीव, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद–001
5 प्रेमचंद : युगीन सन्दर्भ– डॉ0 अनिल कुमार सिंह, प्रकाशक–सचीव, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद–001

40. 'बदला' कहानी में सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा. संतोष धोत्रे
(सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष)
हिंदी विभाग, फर्ग्युसन महाविद्यालय,पुणे.

'सांप्रदायिक' शब्द का निर्माण संप्रदाय से हुआ है जिसका अर्थ है सम्यक प्रकेण दाय अर्थात गुरु की परंपरा को मानने वालों को प्राप्त होनेवाला ज्ञान हैं। इसका एक अर्थ विचार परम्परा भी रहा है। हिंदी में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्**भाव** को लेकर प्रचुर मात्रा में साहित्य निर्मिति हुई है। वर्तमान समय में संप्रदाय शब्द का अर्थ-विस्तार हो गया है, आज वह जाति और धर्म के लिए प्रयुक्त होने लगा है। भारत विविधताओं में एकता रखनेवाला देश हैं। हमारे देश में भाषा, धर्म, वर्ण, रूप-रंग, खान-पान और आचार-विचार में विविधता पाई जाती हैं, परंतु फिर भी भारत सुसंगठित राष्ट्र है | राष्ट्रीय एकता एक प्रबल शक्ति है,यह देश के लोगों को प्रगति पथ पर आगे बढने की प्रेरणा देती है। संसार के अनेक राष्ट्रों ने राष्ट्रीय एकता की भावना से प्रेरित होकर उन्नति की है। राष्ट्रीय एकता के अभाव और दलगत स्वार्थ के कारन राष्ट्रीय एकता पर आघात हुआ है। आज ऐसे विचारों के प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। जिससे लोग अनुभव कर सके कि हम सब एक है ,हम सब भारतीय है।

'बदला' अज्ञेय द्वारा १९४७ में लिखी गई कहानी हैं। जिसे हिंदू–मुस्लिम दंगे की पार्श्व भूमि को लेकर हमारे सन्मुख प्रस्तुत होती है। यह कहानी सोचने पर मजबूर करने वाली कहानी है। इस कहानी की नायिका सुरैया है , जो लड़का आबिद और लड़की जुबैदा के साथ सुरक्षित जगह अलीगढ जाना चाहती है। अत: वह अपने दो बच्चों के साथ अँधेरे में रेल के डिब्बे में चढ़ जाती है और देखती है कि डिब्बे के दुसरे कोने में बैठे हुए दो व्यक्ति अपने मुसलमान भाई नहीं बल्कि सिख है। सुरैया के मन में आशंका छा जाती हैं और झूलती हुई खतरे की चेन के निचे वह अनिश्चित –सी बैठ जाती है। एक महिला अपने दो छोटे बच्चों के साथ अँधेरी रात में दंगे फसाद के दिनों में रेल यात्रा करते समय अपना सगा संबंधी न होते हुए अपने आप को सुरक्षित कैसे महसूस कर सकती है ? उसका मन आशंकित होना स्वाभाविक है परन्तु इस स्थिति में किया भी क्या जा सकता है? तभी उससे सवाल पूछा जाता है-"आप कहाँ तक जाएँगी?" इस प्रश्न पर उसे डर महसूस होता है, सुरैया को लगता है कि यह आदमी मारकर कब रेल से फेंक देगा पता नहीं? इसी सोच में सुरैया थी ,तभी फिर से वह पूछता है आप कितनी दूर जाएगी?" सुरैया चिंता कर रही यह ताड़कर सिख कहता है-"साथ कोई नहीं है?" इस बात से सुरैया और डर जाती है, उसे लगता है कि कहीं वह सरदार उसे मार न दें। वह यूँ ही कह देती है कि मेरा भाई दूसरे डिब्बे में हैं। असल में सिख जानता है कि इस महिला के साथ कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है। वह कहता है कि ऐसे हालात में आपके भाई को आपके साथ बैठना चाहिए। यह सिख की विचार करने की प्रवृति उसकी सद्भावना की तरफ इंगित करती है। एक महिला की व्यथा को सिख का समझ लेना अपने आप में बड़ी बात है। अँधेरी रात में जुगनू की चमक से जैसे प्रकाश की आशा की जा सकती है, कुछ वैसी ही स्थिति सुरैया की है। जिससे डर लग रहा था, वही व्यक्ति मनुष्यता का परिचय दे रहा हो।

एक समय आता है कि सुरैया को सिख कह देता है –"मैं आपको अपनी बहन समझता हूँ और इन्हें अपने बच्चे... आपको अलीगढ तक ठीक-ठीक पहुंचा दूंगा । उससे आगे खतरा भी नहीं है और वहाँ से आपके भाई-बंद भी गाड़ी में आ जाएँगे।" एक चिंतित स्त्री को राहत देने का कार्य सिख करता है । जिस समय पूरे देश सांप्रदायिक दंगे फसाद हो रहे हो, उस समय दो भिन्न जाति के लोगों में यह संप्रदाय के बंधनों को तोड़कर सोच रखना अपने आप में अनूठा कार्य है। ऐसे लोग समाज में होते हैं और उन्हीं की बदौलत समाज या देश आगे बढ़ता है।

आगे के स्टेशन पर डिब्बे में आया हुआ हिंदू व्यक्ति जब सिख से पूछता है कि आपका घर कहाँ है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए सिख कहता है कि पहले वह शेखूपुरे में था अब यहीं है अर्थात रेल का डिब्बा और यहाँ का कोई कोना ही मेरा घर है। हिंदू समझ जाता है, यह शरणार्थी है। दोनों के बीच बातचीत जारी रहती है। उन पर हुए अन्याय और अत्याचार के संबंध में वह बाते करता है और उस स्थिति का बखान करता जाता है। असल में सरदार को उकसाने की कोशिश करता है। यह सब बाते करते हुए वह बार-बार सुरैया की तरफ देखता जाता है मानो वह ही इन चीजों के लिए जिम्म्मेदार हो। वह सुरैया की तरफ देखते हुए कहता है, “दिल्ली में कुछ लोग बताते थे, वहाँ उन्होंने क्या-क्या जुल्म किए हैं हिन्दुओं और सिखों पर। कैसी-कैसी बातें वे बताते थे,क्या बताऊँ, जबान पर लेट शर्म आती है। औरतों को नंगा करके...” सरदारजी बीच में बात काटते हैं। अपने बेटे को ऊपर जाकर सोने की सलाह देते हैं। पर वह व्यक्ति फिर से उसी बात को आरंभ करना चाहता है, तो सिख से रहा नहीं जाता और वह कहता है, “बाबू साहब, हमने जो देखा है, वह आप हमी को क्या बताएँगे!” इसके बावजूद भी हिंदू व्यक्ति बोलता ही जाता है ,जो सिख को पसंद नहीं है। वह बदले की बात करता है कि दिल्ली में सिख और हिंदू कैसे मुस्लिमों के साथ व्यहवार कर रहे हैं। साथ ही जब कुछ घटनाओं का जिक्र करता है तो सिख को यह बात अच्छी नहीं लगती है। वह सीधे सुरैया की माफ़ी मांगता है और कहता भी है कि बहन यह गलत बाते तुम्हें मजबूरन सुनने पड रही है।

सिख के संवाद एक आम भारतीय व्यक्ति के मन के विचार हैं। इन विचारों को उस परिस्थिति में अपने मन में लाना श्रेष्ठ भारतीय संस्कृति का परिचायक है। जिसे लेखक ने सिख के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। हिंदू व्यक्ति उन लोगों का प्रतिनिधित्व करता है जो बदले की भावना से पीड़ित है। उसका यह व्यवहार उस समय गलत है; वह मानवीय दृष्टी से स्वीकारने लायक नहीं है। कहानी में सिख की स्थिर मानसिकता का परिचय मिलता है जब वह कहता है कि बाबू साहब औरत की बेइज्जती सब के लिए शर्म की बात है। साथ ही यह भी बता देता है कि यह महिला मेरे साथ है और मैं इन्हें अलीगढ़ तक पहुँचानेवाला हूँ। समाज में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो स्त्री को माँ और बहन की दृष्टी से देखते हैं परंतु कुछ सामाजिक और वैचारिक दृष्टी से विकलांग लोग हैं, जिससे पूरे समाज का नाम बदनाम होता है और उनके व्यवहार के कारण सांप्रदायिक सद्**भा**व को ठेंस पहुँचती हैं। वास्तव में इनकी संख्या नगण्य हैं लेकिन इनका बोलबाला ज्यादा है, इसलिए सामाजिक वातावरण दूषित होता है।

सुरैया सिख को भला आदमी समझती है , वह उसे शरीफ मानती है। उसका यह मानना एक अर्थ से उस पर विश्वास करना है। किसी के विश्वास को प्राप्त करना अपने आप में बड़ी बात होती है और वह महिला हो तो और महत्वपूर्ण है। परंतु वह अलीगढ़ जा रहा है और वह शरीफ है जो मुस्लिम बहुल प्रदेश है। सुरैया से रहा नहीं जाता आप वहाँ जा रहे हैं ,जहाँ जाना आपके लिए ठीक नहीं है। इस परिस्थिति के बावजूद वह एक बात करता है, अगर मुसलमान मारेगा तो सोच लूँगा घर के लोग जहाँ गए हैं वहाँ पहुँच गया और हिंदू मरेगा तो समझ लूँगा यही बाकी था। सिख का यह सोचना असामाजिक तत्वों के मुंह पर थप्पड़ है, परंतु वर्तमान समय में वे समाज में मौजुद है। उन्हें नकारा नहीं जाता है। सिख आशावादी है। उसका यह आशावाद कहानी लेखक अज्ञेय का आशावाद है। किसी भी बात की अंतिम अवस्था निश्चित होती है और अब इसप्रकार की सांप्रदायिक कट्टरता समाप्त होने की ओर है , यह बात मानकर सिख चल रहा है। लेखक यह विचार भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टि से देखना है। वास्तव में ऐसा नहीं हुआ है, हमारा समाज उन्हीं सांप्रदायिक बंधनों से मुक्त नहीं हुआ है।

हिंदू और सिख की बातों का सिलसिला आगे भी चलता है। हिंदू स्वयं को एक हद तक बुरा मानता है, परंतु मरने-मारने की बात से खुद को और हिंदुओं को अलग रखने की कोशिश करता है। तब सिख रोकते हुए कहता है कि अगर आपको मौका मिलता और आप खुद को सुरक्षित मानते तो सुरैया और उसके दो बच्चों के साथ क्या करते? अगर मैं भी आप का विरोध करता तो मुझे भी मार देते। इस तरह से सिख का सोचना गलत प्रतीत नहीं होता। यह सोच मनुष्य की प्रवृति की तरफ इंगित करती है। शायद हिंदू यात्री के मन में परिस्थिति के अनुरूप इसप्रकार के विचार आने

की संभावना थी। जिसे उसका अहसास दिलाना बहुत बड़ी बात है। जिसे लेखक ने बड़ी खूबी से किया है। झूठी हमदर्दी को पहचानने में सिख को देर नहीं लगती वह हिंदू यात्री को कड़ी बाते सुनाता है। "मुझसे आप हमदर्दी दिखाते हैं कि मैं आपका शरणार्थी हूँ। हमदर्दी बड़ी चीज है। मैं अपने को निहाल समझता अगर आप हमदर्दी देने के काबिल होते। लेकिन आप मेरा दर्द कैसे जान सकते हैं, जब उसी साँस में दिल्ली की बातें ऐसे बेदर्द ढंग से करते हैं?" यह कड़ा प्रहार सहना हिंदू के लिए कठिन था। लेखक का यह सोचना सही है कि हमदर्दी कौन दिखा सकता है, जो स्वयं दूसरे के दर्द को समझ सकता हो; पर हिंदू यात्री का दोगुलापन दिखाई देता है, मुसलमान मरे तो दर्द नहीं और हिंदू या सिख मरे तो हमदर्दी यह मनुष्यता का लक्षण नहीं है। सिख आगे कहता हैं – 'औरत की बेइज्जती औरत की बेइज्जती है, वह हिंदू या मुसलमान की नहीं, वह इनसान की माँ की बेइज्जती है, शेखूपुरे में हमारे साथ जो हुआ सो हुआ मगर मैं जानता हूँ कि उसका मैं बदला नहीं ले सकता।

मैं बदला दे सकता हूँ- और वह यही, कि मेरे साथ जो हुआ है वह और किसी के साथ न हो। इसीलिए दिल्ली और अलीगढ के बीच इधर और उधर लोगों को पहुँचाता हूँ मैं; मेरे दिन भी कटते हैं कुछ बदला भी चूका पाता हूँ'। सिख की यही सोच उसके मानवीय दृष्टिकोण को सामने लाती है। आगे वह कहता है कि 'मेरा मकसद तो इतना है कि जो मेरे परिवार के साथ घटित हुआ वह किसी अन्य मुस्लिम, हिंदू या सिख के परिवार के साथ न हो'।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सिख की यह मानवीय भावना सांप्रदायिक सद्**भाव** के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक भारतीय व्यक्ति के मन में यह भावना बनी रहेगी तो जाति और धर्म के आधार पर दंगे फसाद नहीं होंगे और न ही आम आदमी को उसके नतीजे भुगतने पड़ेंगे। लोगों के बीच बनी सांप्रदायिकता दीवार नष्ट होनी चाहिए, यही सही अर्थ में बदला है। इसकी शुरुआत मनुष्य को स्वयं से करनी चाहिए। अपनी सोच को सिख की तरह बदलना चाहिए। बदला लिया नहीं जा सकता बल्कि बदला दिया जा सकता है। अज्ञेय इसी पक्ष के समर्थक हैं और मद्रास से लेकर लाहोर तक के अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने साहित्य सृजन किया है। स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात की स्थितियों से वे काफी परिचित थे। खराब वातावरण में भी अच्छाई की सुगंध आती है और उसी के आधर पर इन्सानियत पनपती है। लेखक ने यही संदेश बदला कहानी के माध्यम से देने की कोशिश की है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

41.प्रदीप सौरभ के 'मुन्नी मोबाइल'उपन्यास में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

सारिका राजाराम कांबळे
शोधछात्रा, हिंदी विभाग
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय,
पुणे।

वर्तमान युग में सांप्रदायिकता की भयावहता को देखा जा सकता है। वर्तमान युग में सांप्रदायिकता एक भयानक समस्या के रूप में उभरती नजर आती है। अपने धर्म को श्रेष्ठ और अन्य धर्मों को निम्न स्तर का समझने की भावना व्यक्ति के मन में पनपती रहती है। जब यह भावना एक व्यक्ति के साथ–साथ अनेक व्यक्तियों के मन में एक साथ निर्माण होने लगती है, तब वह सांप्रदायिकता का रूप धारण करती है। स्वार्थी नेता तथा समाज के कुछ स्वार्थी लोग समाज में सांप्रदायिकता का बीज बोने का कार्य करते है। सांप्रदायिकता को तेजी से फैलाने में भी स्वार्थी नेताओं का योगदान नकारा नहीं जा सकता है। सत्ता को पाने एवं सत्ता को हमेशा के लिए बरकरार रखने की ईर्ष्या में धर्म का सहारा लेने वाले स्वार्थी नेता जाने–अनजाने में सांप्रदायिकता को फैलाते हैं।

भारत विभाजन के पश्चात सांप्रदायिकता लगभग समाप्त हो चुकी थी परंतु पिछले कई सालों में हुए सांप्रदायिकता दंगों ने दुबारा सोचने के लिए मजबूर किया है। सांप्रदायिकता यह देश की प्रमुख समस्याओं में से एक समस्या बन चुकी है। सांप्रदायिकता से भारत में कई बार जान तथा संपत्ति की हानि हो चुकी है। सामाजिक तनाव बढे है। भारत स्वतंत्रता के पश्चात हुए दंगे एवं राम जन्मभूमि, बाबरी मस्जिद, गोधरा हत्याकांड इसके ज्वलंत उदाहरण है। प्रदीप सौरभ ने गोधरा हत्याकांड से जुडी मानवीय संवेदना को यहॉ पर प्रस्तुत किया है।

'मुन्नी मोबाईल' उपन्यास में लेखक प्रदीप सौरभ ने गोधरा हत्याकांड के पश्चात् हुए सांप्रदायिक दंगे को यहॉ पर प्रस्तुत किया है। गोधरा हत्याकांड होने के बाद गोधरा देश के नक्शे में प्रमुख तौर पर उभर कर आ गया। इस संदर्भ में लेखक कहते है–''इस अग्निकांड से पहले गोधरा में ऐसा कुछ नही था कि उसे देश के लोग जानें। इसी गोधरा ने देश की राजनीति में तीव्र ध्रुवीकरण किया। वैसे ध्रुवीकरण की नींव तो 6 दिसंबर 1992 को ही पड गई थी। उस दिन बाबरी मस्जिद को भगवा ब्रिगेड ने ध्वस्त कर दिया था।''1 यहॉ पर लेखक ने गोधरा हत्याकांड के पश्चात् हुई राजनीति का जिक्र किया है।

हिंदू बिग्रेड के कार्यकताओं ने गोधरा हत्याकांड के विरोध में गुजरात बंद का आवाहन किया इसके बाद लोगों पर किए गए अत्याचारों का विवेचन किया है। गुजरात बंद के बाद हिंदू–मुस्लिम लोगों ने झगडे शुरू हो गए। दोनों एक– दूसरे की जान के दुश्मन बन चुके थे। महिलाऍ, बडे–बुढे, बच्चों अत्याचार का शिकार बन गए। कई लोगों को जिंदा जलाया गया। कई लोगों को दंगे की वजह से काम मिलना मुश्किल हो गया। कई परिवारों को भूखे–प्यासे रहना पडा। लोगों के अपने खुद के कारोबार बंद हो गए। प्रस्तुत उपन्यास के अंतर्गत लेखक ने गोधरा हत्याकांड के पश्चात् गुजरात में हुई भयानक स्थिति को यहॉ पर प्रस्तुत किया है। प्रदीप सौरभ ने गोधरा हत्याकांड की समस्या को मानव संवेदना साथ जोडा है तथा राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव का विवेचन किया है।

गोधरा हत्याकांड के बाद कई गुजरात में हुए दंगे के बावजूद भी कई लोगों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव दिखाई देता है। लोगों में दंगे के पश्चात काफी दहशत फैल चुकी थी। इस

संदर्भ में लेखक का कहना है—''गुजरात दंगों के दौरान कहीं भी इंसानियत के पक्ष में पहल नही हुई, ऐसा भी नहीं था। हिन्दू बिग्रेड के आंतक के बावजूद भी भय से बहुत सारे हिन्दूओं ने राहत में जुटी संस्थाओं और लोगों की मद्द की। सधन बस्तियों में साथ—साथ रहने वाले लोगों ने मुसलमानों पर हमला करने आये लोगों का खदेडा भी। तलवारों के आगे अपने सीने भिडा दिये। कई हिन्दूओं ने अपने घरों में मुसलमान साथियों को पनाह दे कर उनकी जिंदगी बचाई। जवान मुस्लिम लडकियों के अनाथ होने पर बहुत सारे हिन्दू मुस्लिम जवान सामने आये। उन्होंने उनके साथ शादी की पेशकश ही नही की, बल्कि निकाह भी किया।''2

यहॉ पर लेखक ने उपन्यास के अंतर्गत ऐसे कई उदाहरणों को प्रस्तुत किया है जिससे एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना का परिचय मिलता है। जैसे कि मुस्लिम लोगों को राहत शिविरों में रखा गया था ऐसे ही एक मुस्लिम पडोसी को राहत शिविर में जाना पडता है तो रमेश शर्मा नामक व्यक्ति मुसलमान बनकर उनके साथ राहत शिविर में जाकर रहने है। कई महिलाऍ भी राहत कार्य में अपना सहयोग दिया। महिलाओं ने दहशत के खिलाफ मोर्चा निकालती है। पीडित महिलाओं में आत्मविश्वास जगाने का प्रयास करती है। इस संदर्भ में लेखक कहते है—''असंगठित क्षेत्र की महिलाओं ने साथ रहो, साथ काम करो और पढो के नारे के बीच से यह रास्ता निकाला। एक लाख दिहाडीदार महिलाओं ने आतंक के साये में रहकर एक साथ रहने की मिसाल कायम की । इन महिलाओं में लिफाफा बनाने वाली, बीडी बनाने वाली बोझ ढाने वाली और घरों में काम करने वाली महिलाऍ शामिल हैं। अहमदाबाद की आर्थिक गतिविधियों में इनका बडा हिस्सा है। सेवा संस्था से जुडी इन महिलाओं में एक तिहाई मुस्लिम महिलाऍ है। दहशत में एक बार इनका विश्वास डिगा, लेकिन सामूहिकता ने उनमें नई रोशनी पैदा की।''3

रमेश भट्ट जैसे कई लोगों ने राहत शिविरो में बीडी बनाने, लिफाफा बनाने और कपडे सिलनेवाली महिलाओं को कच्चा माल उपलब्ध कराया। शुरू में उनके द्वारा बनाए गए माल को खरीदा गया। प्रतिदिन एक लाख बीडी उत्पादन होने लगा। यहॉ पर समाज के कुछ लोगों ने जिन लोगों का परिवार बिखर दिया था उसी समाज के कई लोगों ने उनकी जिंदगी संवारकर उनको प्रेरणा देने का कार्य किया। छात्रों को ट्यूशन दिलाए गए। इसप्रकार लोगों में आत्मविश्वास निर्माण करने लगे।

एक ओर लेखक ने गोधरा हत्याकांड के पश्चात हुए सांप्रदायिक दंगों के तहत उसकी भयावहता को दिखाया है तो एक ओर एकता एवं सद्भावना को भी व्यक्त किया है जिससे मानवता का परिचय मिलता है। एक ओर लोग एक—दूसरे की जान पर उतर आए तो दूसरी ओर जिंदगी संवारने का प्रयास करते हुए नजर आते है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. प्रदीप सौरभ, मुन्नी मोबाइल, पृष्ठ 21
2. वहीं, पृष्ठ 36
3. वहीं, पृष्ठ 36—37

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

42. हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा. डॉ. सुरेखा प्रे. मंत्री
श्रीमती नानकीबाई वाधवानी महा.
यवतमाल–445001

भारत एक विशाल देश है, जहाँ सदियों से विभिन्न धर्मों के लोग मिल–जुल कर रहते आ रहे है। सहिष्णुता, बहु–समाजवाद और मेल–मिलाप से रहने की समृध्द परम्पराओं ने देश की पहचान को कायम रखा है और सभ्यता ने तरक्की की है।संविधान में भारत को एक धर्म निरपेक्ष देश घोषित किया गया है और अल्प संख्याक समुदायों के संरक्षण के लिये कई प्रावधान है। राज्य प्रशासन किसी विशेष धर्म के आधार पर भेदभाव नही करता। सभी के लिये समान अवसरों के संबंध में संवैधानिक व्यवस्थाएँ है। कोई अपने आपको अलग महसूस ना करे, इसके लिये संविधान में सभी प्रकार के सकारात्मक उपायों के बावजूद भी बार–बार सांमप्रदायिक गडबडियाँ होती रहती है। सरकार ने देश में सांमप्रायिकता सद्भाव बनाये रखने के प्रति अक्सर अपनी प्रतिबध्दता व्यक्त की है और संविधिक, कानूनी, प्रशासनिक, आर्थिक और अन्य उपाय किये है।

तभी तो हिंदी कहानीकार सुदर्शन लिखते है–''ओस की बूंद से चिडियाँ भी नही भीगती किंतु मेंह से हाथी भी भीग जाता है। मेंह बहुत कुछ कर सकता है।'' शक्ति के लिये एकता आवश्यक है। बिखराव या अलगाव शक्ति को कम करते है तथा एकता उसे मजबूत करती है। संगठन ही सभी शक्तियाँ की जड है एकता के बल पर ही अनेक राष्ट्रों का निर्माण हुआ है। प्रत्येक वर्ग में एकता के बिना देश कदापि उन्नति नही कर सकता। भारत विभिन्न संस्कृतियों, धर्मो और संमप्रदायों का संगम सलि है। यहाँ सभी धर्मो और संप्रदायों को बराबर का दर्जा मिला है। हिंदू धर्म के अलावा जैन, बौध्द और सिक्ख धर्म का उद्भव हुआ है। अनेकता के बावजूद उनमें एकता है, यही कारण है कि सदियों से उनमें एकता के भाव परिलक्षित होते रहे है। शुरू से हमारा दृष्टिकोण उदारवादी है। हम सत्य और अहिंसा का आदर करते है। हमारे मूल्य गहराई से अपनी जडों से जुडे हुये जिन पर हमारे ऋषि–मुनियों और विचार कों ने बल दिया है। हमारे इन मूल्यों को सभी धर्म ग्रंथों में स्थान मिला है। चाहे कुरआन हो, बाइबल, गुरूग्रंथ साहिबा हो या गीता, हजरत मोहम्मद, ईसा मसीहा, गुरूनानक, बुध्द और महावीर सभी ने मानव भाव की एकता, सार्वभौमिकता और शांति की महायात्रा पर जोर दिया है। भारत के लोग चाहे किसी भी मजहब के हो अन्य धर्मो का आदर करना जानते है, क्योंकि सभी धर्मो का सार एक ही है। इसलिये हमारा राष्ट्र धर्मनिरपेक्ष है। जब देश आजाद हुआ था तो उस वक्त प्रबुध्द समझे जानेवाले कई लोगों ने यह घोषणा की थी कि विविधताओं के इस देश का बिखरना तय है। सीधे तौर पर देखे तो आज उनकी बात असत्य मालूम पडती है। पर अगर गहराई में जाकर समझा जाये तो यह समझने में देर नही लगती कि भले ही देश ना टूटा हो लेकिन धर्म, जाति के नाम पर समाज बटा जरूर है। सियासत दान समय–समय पर धर्म जाति के नाम पर लोगों को बांटकर राजनीति की रोटी सेकतें रहे।

यद्यपि भारत को स्वाधीन हुये एक लंबी अवधी हो चुकी है, समाजवाद की घोषणा बार–बार हो चुकी थी, फिर भी सच्चाई यह है कि गरीब ओर गरीब और अमीर ओर अमीर हाता जा रहा है। विभिन्न सरकारी योजनाओं एवं आदोलनों के बावजूद आम आदमी की रोटी, कपडा और मकान की अनिवार्य आवश्यकता भी पूरी नही हो पा रही है। भूख से मरा आदमी इस युग का सबसे बडा विज्ञापन है– ''भूख से मरा हुआ आदमी इस मौसम का

सबसे दिलचस्प विज्ञापन है

और शायद सबसे सटीक नारा।'' धूमिल

किसी भी सभ्य और लोकतांत्रिक राष्ट्र की आधारशिला यह है कि वह अपने नागरिकों में लिंग, धर्म, जाति, आर्थिक स्थिति आदि के आधार पर बिना किसी भेदभाव के सभी के साथ समान व्यवहार करे। वास्तव में राज्य द्वारा नागरिकों से समान व्यवहार की यह प्रक्रिया समाज में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उन तार्किक सामाजिक मूल्यों की स्थापना करती है, जो किसी भी राष्ट्र के जीवन और विकास की आधार भूत आवश्यकता होती है। परंतू जब समान व्यवहार की यह प्रक्रिया समाज के रूढीवादी विचारों, धार्मिक कट्टरता, व्यक्तिगत और राजनीतिक स्वार्थो से बाधित होती है, तो इसकी परिणति एक शोषणकारी व्यवस्था के सृजन के रूप में होती है। तब इस शोषण के लिये जिम्मेदार न सिर्फ स्वार्थपूर्ण धार्मिक एवं सामाजिक मूल्य होते है बल्कि राज्य भी इस शोषण का संरक्षक बन जाता है। जहॉ शोषित वर्ग की दयनीय स्थिति का चित्रण पूरी ईमानदारी और सहानुभूति के साथ किया है, वही उन मानसिक प्रवृत्तियों के उद्घाटन की भी कोशिश की है जो वर्तमान स्थिति को बनाये रखने में मददगार है। आम आदमी के लिये चिंतित है–

''जीवन के अभाव में जीवन का आविष्कार करता हूॅ
अनजाने में दुःख सुख और मृत्यु भी असे चिपक जाते है
जन्म से मृत्यु तक के लम्बे फासले को
मैं ही संकुचित कर जाता हूॅएक सांस की लम्बाई में।'' अभिमन्यु अनत

राष्ट्रीय एकता को अधिक दृढ बनाये रखने के लिये भेदभाव पैदा करनेवाले सभी कानूनों और नियमों को समाप्त किया जाए। सारे देश में एक ही कानून हो। आंतरजातीय विवाह को प्रोत्साहन दिया जाए। सरकारी नौकरियों में अधिक–से–अधिक दूसरे प्रांतों में स्थानांतरण हो ताकि समूचा देश सबका साझा बन सकें, सभी नजदीक से एक दूसरे का दुःख–दर्द जान सके। राष्ट्रीय एकता को प्रोत्साहन देनेवाले लोगों और कार्यो को आदर दिया जाए। कलाकार एवं साहित्यकारों को एकता वर्धक साहित्य लिखना चाहिये इस पुनित कार्य में समाचार पत्र, दूरदर्शन, चलचित्र बहुत कुछ कर सकते है।

हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव की प्रमुख आवश्यकता होती है। यही सामाजिक मानदंड सांप्रदायिक सद्भाव को फलने–फूलने का अवसर देते है। अनेकरूपता किसी राष्ट्र की जीवंतता, संपन्नता तथा समृध्दि का द्योतक है। साहित्य विभेदों का समुद्र है, यहॉ पर कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा बंगाल से कच्छ की खाडी तक फैली है, विभिन्न वर्णी सभ्यताएँ, सदियों अनेकता में एकता कसे साकार करती रही है। यहाँ परिधान की विविधता में इंद्रधनुषी रंग के दर्शन होते है। रूचि की विविधता तथा जलवायु की आवश्यकता के अनुसार खान–पान में विभिन्नता पर यह भिन्नताएॅ हमारी सांप्रदायिक एकता की पोषक रही है। इतिहास साक्षी है हमारे धर्म शास्त्र मानवता वादी मूल्यों पर आधारित है– ''असतो मॉ सदगमय, तमसो मॉ ज्योर्ति गमय'' की आहलादकारी स्वर लहरियॉ हमारी सामाजिक पृष्ठभूमि पर गूंजी है। महात्मा गांधी ने लिखा है–''मनुष्य की क्रियाशीलता ही उसका धर्म है। मेरा उद्देश्य धार्मिक है, किंतु मानवता से एकाकार हुये बिना मैं धर्म के पालन का मार्ग नही देखता।'' महाभारत में भी धर्म के अनुसार–''अद्रोहः सर्व भूतेषुकर्मणा मनसा गिरा, अनुग्रहश्च दानम च संता धर्म सनातन'' अर्थात मन, वचन और कर्म से सभी प्राणियों के प्रति दयादान सही सनातन धर्म है। सर्वपल्लि डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार– धर्म, ज्ञान, और विश्वास से जादा कर्म और आचरण में बसता है। सभी धर्म गुरूओं ने मानवता ये प्रेम व सर्व धर्म समभाव की चर्चा की है, उनका उद्देश्य सामाजिक सद्भाव का विकास ही था।

समाज के शाश्वत मूल्य तो अपरिवर्तित ही रहते है किंतु समय काल के अनुरूप युग धर्म बदलता रहता है। तुलसीदास कृत भगवान राम ने सभी सामाजिक मर्यादाओं का पालन किया इसलिये वे मर्यादा पुरूषोत्तम कहलाये किंतु उसी मर्यादा की स्थापना हेतु योगिराज श्रीकृष्ण ने तात्कालिक सारी वयवस्था को तोडा। गुरू गोविंद सिंह जी ने समय और काल के अनुरूप कंघा, कडा, केश, कच्छ, कृपान धारण किया। कहने का तात्पर्य यह है कि– इन सभी लोगों का उद्देश्य ऐसे मनुष्य के निर्माण का है, जो समाज के लिये उपयोगी बन सके एवं समाज में सांप्रदायिक सद्भाव रखने में सक्षम हो सके क्योंकि इसी आधार पर समाज व राष्ट्र अपना सर्वागीण विकास कर मानवता की प्रगति में योगदान कर सकते है।

''तुम खोजा करो स्वर्ग, गगन में जाकर
हम स्वर्ग इसी भूमि को लाकर देंगे।''

संदर्भ –

1 आधुनिक हिंदी काव्य में जीवन दर्शन–डॉ. महेंद्र पाल शर्मा पृ–800
2 आधुनिक हिंदी काव्य में जीवन दर्शन–डॉ. महेंद्र पाल शर्मा पृ–844

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

43. राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में कबीर एवं जायसी की भवनाएं

प्रकाश
एम.फिल शोधार्थी
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी हैदराबाद-500032

राष्ट्रीय एकता एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया एक भावना है जो किसी राष्ट्र अथवा देश के लोगों में भाईचारा अथवा राष्ट्र के प्रति प्रेम एवं अपनत्व का भाव प्रदर्शित करती है।राष्ट्रीय एकता राष्ट्र को सशक्त एवं संगठित बनाती है राष्ट्रीय एकता ही वह भावना है जो विभिन्न धर्मों, संप्रदाय, जाती, वेशभूषा, सभ्यता एवं संस्कृति के लोगों को एक सूत्र में पिरोने रखती हैं। अनेक विभिन्नताओं के उपरांत भी सभी परस्पर मेल जोल से रहते हैं

हमारा भारत देश राष्ट्रीय एकता की एक मिशाल है। जितनी विभिन्नताएं हमारे देश में उपलब्ध हैं उतनी शायद ही विश्व के किसी अन्य देश में देखने को मिले। यहां अनेक जातियां व संप्रदायों के लोग जिनके रहन सहन खान पान वेशभूषा पूर्णतया बीनन से एक साथ निवास करते हैं। सभी राष्ट्रीय एकता के एक सूत्र में पिरोए हुए हैं।

जब तक किसी राष्ट्र की एकता सशक्त है तबतक वह राष्ट्र भी सशक्त है। बाह्य शक्तियाँ इन परिस्थितियों में उसकी अखंडता व सार्वभौमिकता पर प्रभाव नहीं डाल पाती हैं परंतु जब-जब राष्ट्रीय एकता खंडित होती है तब-तब उसे अनेक कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। हम यदि अपने ही इतिहास के पन्नों को पलट कर देखें तो हम यही पाते हैं कि जब जब हमारी राष्ट्रीय एकता कमजोर पड़ी है तब-तब बाह्य शक्तियों ने उसका लाभ उठाया है और हमें उनके अधीन रहना पड़ा है।

इसके विपरीत हमारी राष्ट्रीय अवचेतना से ही हमें वर्षों की दासता से मुक्ति मिल सकती है। अतः किसी भी राष्ट्रीय एकता, अखंडता और सार्वभौमिकता बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय एकता का होना अनिवार्य है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए जो वर्षों तक दासत्व का शिकार रहा है वहां राष्ट्रीय एकता की संपूर्ण कड़ी का मजबूत होना अति आवश्यक है ताकि भविष्य में इसकी पुनरावृत्ति ना हो सके। देश में व्याप्त सांप्रदायिकता जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रीयता आदि सभी एकता के अवरोधक तत्व हैं।ये सभी अवरोध तत्व राष्ट्रीय एकता की कड़ी को कमजोर बनाते हैं।

हिंदू मुस्लिम एकता के हमारे देश में 3 बड़े नेता कबीर, अकबर और महात्मा गांधी हुए हैं। गांधी जी की विशेषता यह थी कि वे किसी भी धर्म को छोटा नहीं कहते थे। सभी धर्मों पर उनकी समान भक्ति थी और सभी धर्मों को समान समझने का ही वे उपदेश भी देते थे। अकबर की दृष्टि में कोई भी एक धर्म सर्वविध पूर्ण नहीं था। उनकी कोशिश थी कि सभी धर्मों की अच्छी बातें लेकर एक नया धर्म चलाया जाए जो सबको संतोष दे सके। लेकिन, कबीर अपने इन दोनों उत्तराधिकारियों से बिल्कुल भिन्न न रहे। उन्होंने यह नहीं कहा कि हिंदुत्व और इस्लाम दोनों के दोनों अच्छे धर्म है, अतएव हिंदुओं और मुसलमानों को आपस में मिलकर रहना चाहिए। उन्होंने बात की खुली घोषणा की कि हिंदुत्व और

इस्लाम दोनों के दोनों अधूरे धर्म है असली धर्म वही है जिस पर रहस्यवादी अरुढ़ होता है। अतएव उचित है कि हिंदू और मुसलमान इस शुक्ष्म आत्म धर्म के धरातल तक उठने की कोशिश करें जहां पहुंचने पर मंदिर और मस्जिद दोनों बेकार हो जाते हैं।

संसार के सभी राहास्यवादी मिजाज से कुछ-कुछ विद्रोही होते आए हैं। कबीरदास विद्रोह के अवतार थे। वे वर्णाश्रम धर्म और जात-पात का विरोध उन्होंने उसी निर्भीकता से किया जो निर्भीकता बुद्ध में दिखाई पड़ी थी, और इस्लाम के अनुष्ठानों की आलोचना उन्होंने उसी बहादुरी से की जिस बहादुरी के कारण पहले मनसूर और बाद को संत सरमद को शहीद होना पड़ा था। हिंदू मुस्लिम समस्या का समाधान उन्हें बहुत ठीक दिखाई पड़ा था। कबीर को गुजरे अब लग-भग 500 साल हो गए हैं, लेकिन आज भी उनकी प्रासंगिकता बनी हुई है, और आज भी हम यही सोचते हैं जब तक भारतीय समाज पूर्णरूपेण वेदांत को अपना आधार नहीं बनाता हिंदू मुस्लिम समस्या का भारत को कोई समाधान नहीं मिलेगा।कहते हैं अपने जीवन काल में कबीर को अनेक कष्ट सहने पड़े थे, अनेक यातनाएं झेलनी पड़ी थी, अनेक कक्षसुओ,पराभवों और अपमानों का सामना करना पड़ा था। उनके समर्थक और शत्रु दोनों ही धर्मों के लोग हुए क्योंकि दोनों ही धर्मों के भीतर ऐसे लोग थे जो आडंबरों को छोड़कर धर्म के सच्चे रूप पर आना चाहते थे, और दोनों ही धर्मों के भीतर ऐसे भी लोग थे जिनकी रोजी कबीर के आंदोलन से मारी जाती थी। लेकिन विरोधों के सामने कबीर ने कभी भी घुटने नहीं टेके। विरोधियों ने जितना ही उनका विरोध किया उतना ही उनका आत्मविश्वास बदता गया और इतने ही जोर से हिंदुओं और मुसलमानों को वे यह कह कर फटकारते गए कि तुम दोनों के धर्मों को मैं देख चुका हूँ। यह दोनों के दोनों धर्म अधूरे और अपूर्ण है। पूर्णता चाहते हो तो उस धरातल तक उठो जिस पर कबीर का निवास है।

कबीर नहीं जो यह मंत्र फूंका की हिंदुत्व और इस्लाम दोनों के दोनों अधूरे धर्म है तथा राम और रहीम को एक न मानना बिल्कुल मूर्खता की बात है। वह काल के श्रवणरंध्रो मे ऐसा बस गया कि उसकी गुन्ज हमे अनेक सदियों से सुनते आए हैं।

समकालीन कवियों का दृष्टिकोण है कबीर दास तथा उनकी परंपरा के संत कवि और मलिक मुहम्मद जायसी एवं उनकी परंपरा के प्रेममार्गी सूफी कवि हिंदू मुस्लिम समस्या को किस दृष्टि से देखते थे, यह बात हम देख चुके हैं। इन दोनों ही परंपराओं के कवि इस समस्या से पूर्ण रूप से अवगत थे और उसका समाधान वे दोनों धर्मों के लोगों को परस्पर समीप करना चाहते थे। एकता की जो राह संत कवियों को दिखाई पड़ी थी, वह यह थी कि हिंदू और मुसलमान अपने-अपने धर्म के बाहयाडंबरों को छोड़कर उनसे ऊपर उठे और उस परम धर्म को ग्रहण करें जहां से सभी धर्म उत्पन्न होते हैं जो सभी धर्मों में एक समान व्याप्त हैं। प्रेममार्गी सूफी कवियों ने अपनी अनुभूति को भारत की भाषा मे लीककर,माने यह संदेश दिया कि हम भारत के मुसलमान हैं, अतएव हमारी आत्मा की भाषा फारसी नहीं भारत की भाषा होगी। हम अपनी संस्कृति का अध्ययन इसी देश की भाषा में करेंगे और हम अपनी प्रेम की पीर उसी देश की जनता को सुनाएंगे।

2014 के बाद से 31 अक्टूबर को राष्ट्रीय एकता दिवस के बारे में जागरुकता बढ़ाने और महान व्यक्ति को याद करने के लिए राष्ट्रव्यापी मैराथन का आयोजन किया जाता है। इस दिवस के साथ देश की युवा पीढ़ी को राष्ट्रीय एकता का संदेश पहुंचता है जिससे वे आगे चलकर वह देश में राष्ट्रीय एकता का महत्व समझ सके। इस मौके पर देश के विभिन्न स्थानों में कई कार्यक्रमों का आयोजन होता है। दिल्ली के पटेल चौक पार्लियामेंट स्ट्रीट पर सरदार पटेल की प्रतिमा पर माला चढ़ाई जाती है। इसके अलावा सरकार द्वारा शपथ ग्रहण समारोह, मार्च फ़ास्ट भी की जाती है।

राष्ट्रीय एकता की स्लोगन:

1. हर एक शब्द भारी है, जब एकता में देश की हर कौम सारी है।
2. एकता ही देश का बल है, एकता में ही सुनहरा पल है।
3. जब तक रहेगी साठ-गांठ होता रहेगा देश का विकास।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

44. **प्रेमचंद की कहानियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव**

- डॉ तरन्नुम बानो

अस्टिस्टेंट प्रोफेसर

कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय

हिन्दी कहानी में प पर उकेरा है। हिन्दी के की आज़ादी की जंग को काफी व्यापक रू 1857 आरंभिक कहानिकारों ने अपनी विभिन्न कहानियों के माध्यम से स्वाधीनता के इस प्रथम संघर्ष के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है।

यह एक संयोग है कि हिन्दी कहानियों का जन्म राष्ट्रीय पुनर्जागरण के साथ हुआ और इसने प्रेमचंद जैसे महान कहानीकार को जन्म दिया। सन की अवधि में प्रकाशित प्रेमचंद की 1920- 1911 कहानियोें में राष्ट्रीयता का स्वर दिखाई देता है। । यहाँ से प्रेमचंद राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति के लिए उस तरीके का इस्तेमाल करने लगते हैं , जिसे अँग्रेजी में 'विकेरियान नेशनलिस्म' कहा जाता है। दमन और आतंक के सहारे चलने वाले औपनिवेशिक शासन में लेखकों के लिए अपनी राष्ट्रीय भावनाओ की अभिव्यक्ति के लिए यही रास्ता बचा रहता है।

'आहे बेकस' अथवा 'गरीब की हाय'[1911] ऊपर से एक परंपरागत नैतिक बोध की कहानी प्रतीत होती है पर उसमें तत्कालीन ग्रामीण रईस वर्ग के आर्थिक , नैतिक और चारित्रिक खोखलेपन का बेहद व्यंग्यपूर्ण अंकन हुआ है। इसके साथ ही यह कहानी अत्याचारी के

खिलाफ सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करती है जिसका उपयोग बाद में गांधी जी ने औपनिवेशिक शासन के विरोध में किया। 'राजा हरदोल'(1911) , 'आल्हा'(1912), 'कैफरे - कर्दार'(1912), 'बांका जमींदार'(1913) , 'अनाथ लड़की'(1914), 'शिकारी राजकुमार'(1914), 'जुगनू की चमक'(1916) आदि कहानियाँ प्रत्यक्ष राजपूतों, बुंदेलों , सिखों आदि की वीरता , बलिदान , स्वाभिमान, मानस में उन भावनाओं को जागृत करना चाहती है , जो देश को औपनिवेशिक गुलामी से मुक्त करने के लिए ज़रूरी था।

'सेवा मार्ग'खिदमत-राहे) ,1918) कहानी में एक मिथकीय कथा के माध्यम से 'सेवा मार्ग'- देश सेवा का महत्व प्रतिपादित किया गया है। एश्वर्य, सौन्दर्य और वैभव की तुलना में प्रेम को और प्रेम की तुलना में सेवामार्ग को श्रेष्ठ बताकर देश के प्रति लेखक की प्रतिबद्धता उजागर हुई है।ये कहानियाँ परोक्ष - रूप में प्रेमचंद की राष्ट्रीय चिंता को ही संकेतितकरती है।

देश प्रेम की परोक्ष अभिव्यक्ति वाली इन कहानियों के बीच 'वियोग और मिलाप'नामक (1917) कहानी में प्रेमचंद पहली बार समकालीन स्वाधीनता की लड़ाई का खुलकर चित्रण करते हैं। औपनिवेशिक शासन में किसी लेखक के लिए स्वराज का समर्थन करनेवाली कहानी लिखना राजद्रोह में शामिल था। इसके बावजूद उन्होने

'वियोग और मिलाप' जैसी कहानी लिखी जिसमें तिलक और एनी बेसेंट द्वारा शुरू किए गए 'होमरुल' या 'स्वदेशी' आंदोलन का खुला समर्थन पूर्ण रूप से चित्रण किया गया था। कहानी का केन्द्रीय पात्र

दयानाथ अपने पिता से कहता है अब तक मैं राजनैतिक कामों से दूर भागता रहा हूँ। किन्तु अब देश " - में जागृति फैल रही है, अकर्मण्यता का समय नहीं है। इस तरह तटस्थ बैठे रहना अपने देशवासियों पर घोर अत्याचार है।"

प्रेमचंद ने स्वाधीनता आंदोलन से जुड़े कल्पित प्रसंगो में ऐसे वैविध्य की सृष्टि की है कि उनमें नवीनता बनी रहती है। 'सुहाग की साड़ी' उन दिनों की कहानी है, जब सत्याग्रह आंदोलन के तहत विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और विलायती कपड़ों की होली जलाने का कार्यक्रम जारी था।

'चकमा' में असहयोग आंदोलन के उस कार्यक्रम का चित्रण है जिसमें विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के लिए व्यापारियों और दुकानदारों से शपथथे कि वे न तो विदेशी पत्र पर हस्ताक्षर कराये जाते - वस्तुओं का भंडार रखेंगे न बेचेंगे।

'सती' कहानी ऊपर से देखने पर एक ऐतिहासिक कथा प्रतीत होती है, पर यह भी मूल अर्थ में देश की आज़ादी से संबन्धित कहानी है। इसमें एक ऐसी बहादुर बुंदेल कन्या का चित्रण किया गया है जो वीरता,

त्याग और देश प्रेम की प्रतीक है । वह इसे ही अपने जीवन का चरम लक्ष्य मानती है और इसके लिए अपना सब कुछ,यहाँ तक की जीवन भी नष्ट कर डालती है।

प्रेमचंद पहले से ही ऐसी कहानियाँ लिखते आ रहे थे। जिनमें राष्ट्रीयता का बहुत गहरा बोध होता था। इस काल की अपनी कुछ कहानियों में भी वे अतीत को आधार बनाकर समकालीन औपनिवेशिक शासन के विरुध लड़ने की प्रेरणा देते हैं।

में प्रेमचंद ने स्वाधीनता आंदोलन से प्रेरित होकर नौ कहानियाँ लिखी थी। यह वही 31-1930 समय था जब गांधी जी का'नमक सत्याग्रह आंदोलन का प्रभाव था और अनेक लोगों के समान प्रेमचंद का हृदय भी आज़ादी के भावो को उदद्वेलित होकर जेल जाने के लिए मचल रहा था। वे जेल न जा सके थे, पर पत्नी शिवरानी देवी ने जेल जाकर मानो उन्ही की तमन्ना पूरी कर दी थी। प्रेमचंद की राष्ट्रीय भावना का स्त्रोत कोंग्रेसी आंदोलन नहीं, बल्कि जनता के बीच जगी राष्ट्रीय चेतना थी , जिससे स्वयं प्रेमचंद भी एकाकार थे। उसी राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में अद्भुत संवेदनात्मक शक्ति के साथ हुई है।

'समर यात्रा'(1930) सन तीस के आंदोलन पर आधारित एक और अच्छी कहानी है। इसमें भी स्वाधीनता आंदोलन के प्रति जनोत्साह का बहुत प्रभावी चित्रण किया गया है।

'पति और पत्नी' (1930) एक ऐसे दंपति की कहानी है, जिसमें पति सरकारी अफसर और सरकार का समर्थक तथा पत्नी राष्ट्रभक्त है। सत्याग्रह आंदोलन जारी है और विदेशी वस्त्रो की होली जलायी जा रही है। पर पत्नी चाह कर भी इस कार्यक्रम में हिस्सा नहीं ले सकती। पर अंततः वह पति की आज्ञा के विपरीत चलने का निश्चय करती है और कोंग्रेस के जलसे में भाग लेने के लिए चली जाती है।

'होली का उपहार' (1931) में एक नवविवाहिता लड़की आज़ादी की लड़ाई में न केवल निडर भाव से हिस्सा लेती है, बल्कि युवकों का नेतृत्व भी करती है, अपने नवयुवक पति को भी इस लड़ाई में हिस्सा

लेने को प्रेरित करती है और उसके गले में फूल - माला डाल कर जेल जाने के लिए विदा करती है। प्रेमचंद की कहानियाँ इस सत्य को बहुत ही कलात्मक ढंग से उजागर करती हैं कि आज़ादी की लड़ाई में स्त्रियाँ भी पीछे नहीं थीं।

प्रेमचंद की कहानियों में जहां राष्ट्रीयता का स्वर है वहीं सांप्रदायिक सद्भावना का भी स्वर दृष्टिगोचर होता है। में 1924

प्रकाशित 'मुक्ति धन' कहानी में प्रेमचंद औपनिवेशिक शासन में एक मुसलमान किसान की नियति का अंकन करते हैं, जो न तो 'मुसलमान' होता था न 'हिन्दू' वह केवल किसान होता था। इसलिए प्रेमचंद की कहानियों में हिन्दू और मुसलमान किसानो की अलग पहचान नहीं होती।

हिन्दू मुस्लिम सद्भाव के कहानीकार के रूप में प्रेमचंद बेमिसाल हैं। वे ऐसे हिन्दू और मुस्लिम - नमें असाधारण धार्मिक सहिष्णुता होती है।पात्रो का निर्माण करते हैं जि'मंदिर और मस्जिद'(1925) में चौधरी इतरअली ऐसे ही उच्चवर्गीय जागीरदार पात्र है वे न तो मुसलमानो द्वारा हिन्दू मंदिर पर हमले को बरदास्त करते हैं और न ही हिंदुओं द्वारा मस्जिद पर किए गए आक्रमण को । वे मानते हैं कि 'किसी के दीन को तौहीन करने से बड़ा और कोई गुनाह नहीं है।' इसका मूल्य उन्हें अपने दामाद और स्वामिभक्त सेवक की मृत्यु के रूप में चुकाना पड़ता है।

'हिंसा परमो धर्म' सांप्रदायिक दरिंदगी का पर्दाफाश और सद्भाव का उजागर करने वाली एक उल्लेखनीय कहानी है। इस कहानी का केन्द्रीय पात्र एक सीधा सादा मुसलमान है जो सेवाधर्म का पुजारी है। हिन्दू हो या मुसलमान, सबकी सेवा करना ही वह अपना एकमात्र कर्तव्य समझता है। उसके लिए हिन्दू और मुसलमान में कोई फर्क नहीं है । दूसरी ओर

हिन्दू और इस्लाम के पक्के अनुयायी है, जो हिंसा को ही अपना परम धर्म समझते है। अपने इस मानवीय समझ के लिए जामिद को बहुत तकलीफ़े झेलनी पड़ती है, पर वह अपना मानवीय धर्म नहीं छोड़ता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेमचंद जी ने अपने अधिकांश कहानियों में राष्ट्रीय एकता और धार्मिक सद्भावना का चित्रण किया है।

संदर्भ

1. हिन्दी कहानी का इतिहास - गोपाल राय - प्रथम संस्करण 2011 -
2. हिन्दी कथा साहित्य एक दृष्टि - सत्यकेतु सांस्कृत - प्रथम संस्करण 2013 -

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

45. राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव एक विचार

सुश्री शेरे सुप्रिया विजय
सी–404 बालाजी पॅरेडाईज
बेनकर वस्ती धायरी पुणे 41

भारतीयता केवल एक भौगोलिक परिवेश की छाप नहीं एक विशिष्ट अध्यात्मिक गुण है, जो भारतीय जन को सारे संसार से पृतक् करता है। भारतीयता मानवता का निचोड है । अगर किसी व्यक्ति से हम पूछे कि भारतीयता आखिर है क्या? तो कुछ पलों के लिए ही सही वह सोच में पड जाएगा। लेकिन किसी भी सांस्कृतिक परंपरा में, किसी भी जाति की व्यक्तिगत और समूहगत रचनात्मक प्रवृत्तियों के समन्वय से उत्पन्न गति से लाभ उठाने के लिए उसे नया जीवन देने के लिए, उससे अनुप्रणित होकर आगे बढने के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने आप–से यह प्रश्न पूछे, उसका उत्तर अपने में पाए, उससे जो भी गत्यात्मक प्रेरणा मिल सकती हो उसे आत्मसात करें। क्योंकि ऐतिहासिक परंपरा कोई पोटली बाँधकर रखी नहीं है जिसे उठाकर हम चल निकलें। वह रस है जिसे हम बूँद–बूँद अपने में संचय करते हैं–या नहीं करते तो कोरे रह जाते हैं।

'मलाला' जो महाज सत्रह साल की उम्र में ही एक विचार बनकर हमारे सामने आयी। 12 जुलाई, 1997 में पाकिस्तान के 'स्वात' घाटी में वह पैदा हुई। सन 2007 में ततालिबान ने 'स्वात' पर कब्जा कर लिया। पूरे इलाके में लडकियों की पढाई पर रोक लगादी गई, परंतू 'मलाला' छुपकर स्कूल जाती रही बाकी लडकियों को भी पढने को कहतीं । दो साल बाद 2009 में मलाला ने बी.बी.सी. के लिए ब्लॉग लिखना शुरू कर दिया। तालिबान के खौफ के साए में गुजरती जिंदगी मलाला के जरिए अब दुनिया को पता चलने लगी। गुस्साएँ आतंकियों ने मलाला और उनके पिता को मारने की धमकी दी, पर मलाला नहीं मानी तीन सालबाद 9 अक्टूबर 2012 को आतंकियों ने स्कूल जाते वक्त मलाला के सिर में गोली मार दी। मलाला अनेक गोलियों से आहत होकर अनेक शल्य क्रियाओं के बाद बचा ली गई और 2014 में मलाला यूसुफजई को शांति के लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया प्रतीकात्मक बात यह है कि वहशी ताकत की एक गोली मलाला के मस्तिष्क पर मारी गई है पुन सिद्ध होता है की गोलियों से 'विचार नहीं मरते' परंतु भयावह यह है कि 'गोली विचार भी बन जाती है और महात्मा गांधीजी इसी गोली बने विचार से मारे गए'। अच्छे–बुरे किसी भी प्रकार के विचार हों, वे कभी मरते नहीं।

इसप्रकार भारतीयता के मूल में जो भावना या भावनाएँ है वह मानवीय अस्तित्व की हैं। निसन्देह मानव एक है। किंतू जब हम विकासशील जीव–तत्व की बात करते हैं तब परिवर्तन के सिद्धांत को भी मान लेते हैं। चेतना स्वयं विकासशील है। संवेदना वह यंत्र है जिस के सहारे जीव–व्यष्टि अपने से इतर सब–कुछ से संबंध जोडती है– वह संबंध एक साथ ही एकता का भी है औ भिन्नता का भी, क्यौकि उसके सहारे जहाँ जीव–व्यष्टि अपने इतर जगत् को पहचानती है वहाँ उससे अपने को अलग भी करती है। इसी कारण हमारे देश की विविधता में भी हमें एकता दिखाई देती है।

हमारा साहित्य भी इसीप्रकार का है साहित्य की अनेक भाषाएँ है, अनेक विधाएँ है मगर इनके पिछे की भावना मात्र एक ही है– लोकमंगल की भावना और यहीं भावना हम में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव जागृत करती है । साहित्य बोध मानव की संवेदना–बोध से जुडा हुआ हैं । मानव प्राणी की संवेदना न केवल दूसरे जीवों से और जड परिस्थिति से प्रतिक्रिया करती है, बल्कि

अपनी प्रतिक्रियाओं का मूल्यांकन भी करती है । जीव अपने को परिस्थिति के अनुकूल बनाता है, मनुष्य परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाने का चेतन और अवचेतन–प्रयत्न करता है । ज्यों–ज्यों उसकी संवेदना विस्तार करती है, अर्थात ज्यों–ज्यों जगत् से उस के संबंध नए–नए क्षेत्रों में प्रवेश करते जाते हैं, त्यों–त्यों उसका विवेक विकसित होता जाता है और संवेदना के साथ एक अविवार्य नैतिक बोध भी जुड जाता है। अच्छा और बुरा, उँचा और नीचा, मंगलमय और अमंगल, समान–हितकारी और असामाजिक ऐसी अनेक कोटियों के विचार उसके कर्म को ही नहीं, उसकी संवेदना को भी नियंत्रित करने लगते हैं क्योंकि वह अपनी भावनाओं को भी बुद्धी और विवेक की कसौटी पर परखने लगता है ।

साहित्य सब से पहले राष्ट्रवादी अथवा राष्ट्रिय चेतना का साहित्य रहा । राष्ट्र की कल्पना सिंन्देह क्रमश विकसित होती रही। किसी थी राष्ट्र का आधार उसकी एकता एवं अखंडता में ही निहित होता हैं। भारत देश कई वर्षोतक गुलाम था इसका सबसे बडा कारण था आवाम के बीच एकता की कमी होना । इस एकता की कमी का सबसे बडा कारण उस समय में सुचना प्रसारण के साधनों का ना होना था । साथ ही विचारों में भिन्नता इसी कमी का फायदा उठाकर फूट डालों एवं राज करो की ब्रिटिश हुकूमत की नीति।

यथा–

मै. नहीं तू, तू नहीं मैं

कब तक चलेगा ये मतभेद
कैसे अनपढ है कहने वाले
जो देश को सांप्रदायिक सोच देते हैं
फूट डालो और राज करो
कैसे वो ये नारा भुला बैठे हैं

अंग्रेज हो या कोई हमने ही तो अवसर दिया
आपसी लडाई में हमने मातृभूमि को गँवा दिया
आज भी उसी सोच के गुलाम हैं हम
खुद ही अपने देश के शत्रु बन रहे हैं हम
फिर से कही मौका न दे बैठे
चलो सुलझाये आज साथ बैठकर सोचे

देश का विकास, शांति, समृद्धि एवं अखंडता एकता के कारण ही संभव हैं । कौमी लडाई देश की नींव को खोखला करती है । इस से न निजी लाभ होता हैं ना ही राष्ट्रिय हीत । अजा भी हम कहीं न कहीं एकता में कमी के कारण ही अन्य देशों से पीछे हैं । जातिवाद के दलदल में कँसकर हम देश की एकता को कमजोर कर रहें हैं।

प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा 31 अक्टूबर 2014 मे 'राष्ट्रीय एकता दिवस' का ऐलान लोह पुरुष वल्लभभाई पटेल की स्मृति में उनके जन्मदिन के अवसरपर किया गया । 31 अक्टूबर को राष्ट्रीय एकता दिवस के रूप में प्रति वर्ष मनाया जाता हैं। इस अवसरपर राष्ट्रव्यापी मैराथन का आयोजन किया जाता है । इस दिवस के साथ देश की युवा पीढी को राष्ट्रीय एकता का संदेश पहुँचता है, जिससे आगे चलकर वे देश में राष्ट्रीय एकता का महत्व समझ सकें । इस मौकेपर देश के विभिन्न स्थानों में कई कार्यक्रमों का आयोजन होता है। इस अवसर पर हम सब शिक्षक,

प्राध्यापक, साहित्यिक मतलब कहा जाता हैं कि जिनके हाथों में भविष्य को सँवारने की शक्ति होती है वे सब अगर आनेवाली पीढी को इस राष्ट्रीय एकात्मकता का महत्व समझाए उनको साहित्य के माध्यम से समझाएँ फिर वह चाहे साहित्यकी कोई भी विधा हो– कहानी साहित्य हो, कथा साहित्य हो, उपन्यास साहित्य हो, कविताएँ हो, गजले हों जैसे– अज्ञेय की शरणदाता कहानी बताएँ, रामवृक्ष वेनिपूरी का रेखाचित्र सूभान खाँ के बारें में बताएं, भीष्म साहनी जी के उपन्यास 'तमस' के बारें में बताएँ छात्रों की आयु के अनुसार ही उनकी समझ भी विकसित होती है और उसी से हमारे राष्ट्र का भविष्य। राष्ट्रीय एकता विकसित करने हेतू आनेवाली पिढी को हम शिक्षाके माध्यमसे विकसित कर सकते है और यह निकास हम साहित्य को नींव बनाकर करें तो निश्चितही आनेवाले भविष्य में हमें 'राष्ट्रीय एकता दिवस' मनाने की जरुरत नहीं रहेगी क्योंकि हर एक मनुष्य के मन में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव विकसित हुआ होगा तो उसे याद करने की जरूरत नहीं होगी जो आचार में होगा विचार में होगा । उसे सिर्फ एक दिन बनकर कॅलेंडर पर लिखने की जरुरत नहीं होगी ।

एकता ही देश का बल है, एकता में ही सुनहरा पल हैं।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

46. भारत दुर्दशा ’ नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव

अश्विनी महादेव जाधव,

हिंदी विभाग,

शिवाजी विश्वविदयालय कोल्हापुर ,

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में जो भी घटनाएँ घटित होती हैं उसी का चित्रण साहित्य में किया जाता है। उसी प्रकार साहित्य की अन्य विधाओं के समान नाटक यह विधा अधिक लोकप्रिय मानी जाती है। नाटककार समाज स्थिति का चित्रण अपने नाटकों में करता है। नाटक का विकास आधुनिक काल की देन है। हिंदी नाटक लिखने की परंपरा का सूत्रपात बाबू हरिश्चंद्र से मानना चाहिए क्योंकि इनसे पूर्व ,‘ नाटक ’ नाम से जो रचनाएँ हिंदी में उपलब्ध होती हैंउनमें नाट्यकला के , तत्वों का अभाव है।

आधुनिक काल में भारतेंदु जी के पिता गोपालचंद्र गिरधरदास ने ‘नहुष’ गणेश कवि ने (1867) ‘प्रद्युम्न विजय’ तथा शीतलाप्रसाद त्रिपाठी ने (1863) ‘जानकी मंगल’नाटकों की रचना की। (1868) इस नाटक लेखन परंपरा को भारतेंदुजी ने आगे बढाया। भारतेंदुजी ने नाटक के विषय में ही नवीनता लायी। उन्होंने अनुदित और मौलिक दोनों प्रक ार के नाटक के लिखे। उनके इसी योगदान के कारण नाटक के विकास काल को उनके नाम से संबोधित किया गया।

हिंदी साहित्य में आधुनिक काल का प्रारंभ भारतेंदु हरिश्चंद्र से माना जाता है। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में प्रसिध्द भारतेंदु जी ने देश की गरीबीपराधीनता , शासकों के अमानवीय शोषण के चित्रण को ही अपने साहित्य का लक्ष्य बनाया। भारतेंदु एक बहुमुखी नाटककार थे।

भारतेंदुजी के नाटकों में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सदभावना के दर्शन होते हैं। भारतेंदुजी का ‘ भारत दुर्दशा ’ यह नाटक देशप्रेम की भावना से ओतप्रोत है। ‘ भारत दुर्दशा ’ नाटक की रचना तत्कालीन स्थिती का चित्रण किया इ में हुई। इसमें भारतेदुं ने प्रतीकों के माध्यम सो भारत की 1875 है। वे भारतवासियों से भारत की दुर्दशा पर रोने और फिर दुर्दशा का अंत करने का प्रयास करने का अहवान करते हैं। वे ब्रिटिश राज और आपसी कलह को भारत दुर्दशा का एकमात्र कारण मानते है।

जब यह नाटक लिखा गया तब हमारा देश पराधीनता में था। लोगों में प्रेरणा एवं चेतना का निर्माण हो यह एकमात्र कारण था। इस नाटक में कुल छह अंक है। प्रथम अंक में भारत की दूरवस्था , अंग्रेजोंके अत्याचार एवं शोषण का वर्णनहुआ है। दूसरे अंक में भारत अपनी दुख:भरी गाथा को वर्णित करते हुए मूर्च्छित होता दिखाया गया है इसमें भारत नाम एक पात्र है। अंत में आशा निर्लज्जता के साथ आती है और भारत तो उठाकर भीतर ले जाती है।

नाटक के तीसरे अंक का नाम है भारत दुदैव जो अंग्रेंज का प्रतीक .है। यह भारत की दुर्दशा का कारण है। फूटत की दुर्दशा हो गयी है। अनावृष्टि आदि के कारण भार ,अतिवृष्टी ,दुर्भिक्ष ,भय ,लोभ , लिखे लोगों की -नाटक के चौथे अंक में भारत ती कुरीतियों का उल्लेख किया है। पाँचवे अंक में पढे कमेटी बनती है। यह कमेटी भारत तो दासता से मुक्त करने का प्रयास करती है और फिर अंग्रेजों द्वारा इसे बंद किया जाता है। छठे अंक में बारत अपने भाग्य को अचेत एवं मूर्च्छित अवस्था में देखकर उठाने की चेष्टा करता दिखाई पडता है। किंतु जब अपने भाग्य को नहीं जगा पाता तो निराश होकर अपनी छाती में कटार मार लेता हे।

इस नाटक की कथावस्तु राजनीतिक विषय वस्तु पर आधारित हे। इसमें एक और ब्रिटीश राज का चित्रण है तो दूसरी ओर भारतीयोंके आलस्यनिर्धनता का यथार्थ भी है। ,अशिक्षा ,

देश को अगर गुलामी से मुक्त करना है तो सभी देशवासियों ने एक होना चाहिए। देश की प्रगति में योगदान कर आलस्य को त्यागकर शिक्षित बने। अपनी चेतना को जागृत कर यह समझें कि अंग्रेज उनका किस प्रकार से शोषण कर रहे हैं। अंग्रेजों ने हमारे देश में डाकरेल की सुविधा की मगर , वह अपने स्वार्थ के लिए अपने व्यापार के लिए भारतेंदुजी ने यही सत्य अपने नाटक द्वारा भारतीयों के सामने रखा है। हमारी जनता एक तरफ गरीबी का सामना कर रही थी और फिर अंग्रेजों की गुलामगिरी भी सहनी पड रही थी। लोगों में अशिक्षा का प्रमाण अधिक था मगर जो शिक्षित थे उनकी आवाज को अंग्रेजों ने दबाया था। ऐसी स्थिति में जनता के मन में राष्ट्रीय एकता की भावना जगाना आवश्यक था और यही काम भारतेंदुजीने अपने लेखन के द्वारा किया।

वास्तविकता से कहा जा सकता है कि अंग्रेजों शासन काल में जहाँ शासन का विरोघ करने की स्वतंत्रता लेखक को नही थी ऐसा नाटक लिखतक भारतेंदुजी ने अपने मन में होनेवाले राष्ट्रप्रेम की प्रचिती दी हैं और राष्ट्रीय एकता एवं साप्रंदायिक सदभावना रखने की प्रेरणा दी हैं। ‘भारत दुर्दशा’ नाटक की रचना भारतेंदुजी ने राष्ट्रप्रेम से उद्दोलित होकर की है।उनके मन में अपने देशवासियों की दुर्गति को देखकर जो पीडा उत्पन्न हुई उसी से व्यथित होकर उन्होंने नाटक की रचना की।

भारतेंदु जी ने इस नाटक के माध्यम से राष्ट्रीय एकता को प्रतिपदित किया है साथ ही सांप्रदायिक सदभावना को दिखाया है। इस में देश सभी हिंदू मुस्लिम लोगों को अंग्रेजों विरूध्द खडे होने का वह अहवान करते है। वे अंग्रेजों के शोषण का विरोध करते हे। यह जो अंग्रेजों के शोषण का विरोध करते है। यह जो अंग्रेजों ने रेल डाक की सुविधा की है वह केवल अपने स्वार्थ के लिए ,सडक , कर रहे है यह जनमानस को अवगत कराना चाहते है।

इस प्रकार ‘भारत दुर्दशा’ नाटक में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सदभाव के उत्तम दर्शन होते है। भारतेंदु ने लोगों को एकसाथ मिलजुल अंग्रेंज शासन के विरूध्द खडे होने की प्रेरणा देते है। भारत - प्रोत है। उनका यह प्रयास पूर्णत सफल हुआ -और सांप्रदायिक सदभावना से ओत दुर्दशा नाटक देशप्रेम है।

निष्कर्षत हम कह सकते है कि भारतेंदु जी का ‘भारत दुर्दशा’ यह देशभक्ति की भावना से भरा हुआ यथार्थपरक नाटक है। इस नाटक में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सदभावना का चित्रण हुआ है। पराधीनता के युग में भी भारतेंदुजी ने ‘भारत दुर्दशा’ नाटक लिखकर अपने साहस का प्रमाण दिया है। जनता में प्रेरणा जगाकर लोंगों के एक करने का काम किया है।

संदर्भ –

1. ‘भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा’– डॉंरामविलास शर्मा।.
2. ‘नाटक का इतिहास’– अजय सिंह।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

47. कहानी में अभिव्यक्त साम्प्रदायिकता

बनजा तालदी,

पी.एच.डी शोधार्थी,

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू युनिवर्सीटि

गच्चीबौली, हैदराबाद

500032

संप्रदाय शब्द का कोशगत अर्थ है "परंपरा से चला हुआ ज्ञान, मत सिद्धांत, गुरु परंपरा से मिलने वाला उपदेश, मंत्र, किसी धर्म के अंतर्गत कोई विशिष्ट मत या सिद्धांत। उक्त प्रकार के मत व सिद्धांत को मानने वालों का वर्ग या समूह यथा शैव, वैष्णव आदि किसी विचार, विषय या सिद्धांत के संबंध में एक ही तरह के विचार या मत रखने वाले लोगों का वर्ग। किसी मत के अनुयायियों की मंडली, फिरका, मार्ग, पंथ, परिपाटी, रीति, चाल को संप्रदाय कहते हैं।"(हिंदी शब्द सागर – श्यामसुंदर दास) 'सांप्रदायिकता' 'संप्रदाय' से जुड़ी शब्द है जो एक विचाराधारा स्वरुप है। वर्तमान समय की स्थितिनुसार लोग अपने स्वार्थ प्रति ज्यादा ध्यान देने लगे हैं। लोगों का आपसी सौहार्द, प्रेम, स्नेह भावना का लोप हो रहा है। सांप्रदायिकता भले ही स्वतंत्र भारत का आगे बना हुआ हो परंतु वर्तमान समाज के लिए एक अभिशाप बना हुआ है। "सीधे-सीधे कहें तो सांप्रदायिकता का आधार ही धारणा है कि भारतीय समाज कई ऐसे संप्रदायों में बँटा हुआ है, जिनके हित न सिर्फ अलग हैं बल्कि एक-दूसरे के विरोधी भी हैं। सांप्रदायिकता के जन्म के पीछे का विश्वास यह भी है कि राजनीतिक और आर्थिक से लेकर सामाजिक और सांस्कृतिक इरादों के लिए लोगों को सिर्फ धर्म की रस्सी से ही बाँध कर आंका जा सकता है।"(सांप्रदायिकता एक प्रवेशिका, विपिन चंद्र, पृ-3)

इतिहासकार बिपिन चंद्र के अनुसार "सांप्रदायिकता का मतलब है कि इस बात पर विश्वास करना कि किसी खास धर्म को मानने वाले लोगों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हित भी समाज होते हैं। साम्प्रदायिकता में जो दूसरी धराणा निहित है वह यह है कि हिंदुओं, मुसलमानों, इसाईयों और सिक्खों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक हित विभिन्न दिशाओं में जाते हैं, उनमें कोई समानता नहीं है।"(आधुनिक भारत में सांप्रदायिकता-बिपिन चंद्र,पृ-1,2) भारत विभाजन के पश्चात् सांप्रदायिकता भारतीय समाज का अंग बनने के साथ-साथ भारतीय समाज को दूषित करने का प्रयत्न लगातार करता रहा है। चूँकि हिंदी साहित्य के कहानी विधा में इसका चित्रण काफी हद तक देखने को मिलता है। हिंदी कहानी में समय के साथ-साथ अपनी करवट बदली है। तथा समाज में आये हर समस्या का चुनौतिपूर्ण से सामना भी किया है। समकालीन जीवन की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिति था। यूँ कहें कि समकालीन जीवन के यथार्थ की भयावहता को हमारे सामने प्रस्तुत कर समकालीन समय की बदलाव की ओर इशारा करता है।

साहित्य समाज का संबंध पुराना है। साहित्य केवल समाज की अभिव्यक्ति नहीं करता बल्कि प्रभावित भी करता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री श्यामचरण दुबे के अनुसार "साहित्य समाज का दर्पण मात्रनहीं

होता। उसमें समाज की परंपरा, जीवन दृष्टि और दर्शन तथा समसामयिक यथार्थ और चिंताएँ तो अभिव्यक्ति पाती ही है, उसमें समाज की विकृतियाँ और विसंगतियों के चित्रण के साथ भविष्य का पूर्वाभास और दिशा संकेत भी होता है।" (परंपरा, इतिहासबोध और संस्कृति- श्यामचरण दूबे, पृ-155) अतः साहित्य समाज की प्रतिछवि है।

वर्तमान समाज में कई ऐसे समस्याएँ हैं जिसको साहित्यकार अपने साहित्य में उभार रहे हैं। उसी में से साम्प्रदायिकता एक है। साम्प्रदायिकता की समस्या बहुत ही बड़ी समस्या है, जिसके चलते देश आज़ादी के साथ-साथ विभाजन भी हुआ। लाखों लोग जिसमें हिंदू और मुसलमान दोनों भी शामिल थे, वह मौत के घाट उतारदिए गए। सांप्रदायिकता की सोच सीधा मानव की संवेदना पर चोट करती है, जिससे मानव अपना विवेक खो कर विवेकहीन बन जाता है। सांप्रदायिकता का लक्ष्य ही हमारी सांस्कृतिक एकता, मानवीय रिश्तों, भाईचारा को मिटाना होता है। हिंदी कथाकारों ने सांप्रदायिकता की समस्या के खतरों को पहचानकर अपनी कहानियों में साम्प्रदायिक सौहार्द फैलाने कि कोशिश किये हैं।

साम्प्रदायिकता को राजनीतिक लाभ के लिए भी इस्तमाल किया जाता है। जैसे बीर राजा की कहानी में "जब सरकार साम्प्रदायिक सद्भावना के नाम पर अल्पसंख्यकों को खुश करके मत बटोरने की नीति पर चलती है, तब बहु संख्यकों के मन में बीज बोती है कि उनके साथ अन्याय हो रहा है। ....अब तो उसके पीछे से अल्पसंख्यक मत खिसक गया है, अब वह ऐसी नीति खेल रही है कि बहु संख्यक उसके पीछे हो।"(काला नवंबर-सुरेंद्र तिवारी, पृ-64)

विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखी हुई कहानी 'अधुरी कहानी' हिंदुओं और मुसलमानों के बीच कटुता की वजह को चित्रण करता है। हिंदू और मुसलमान एक दूसरे से पूरे तरह से मिल-जुल नहीं पाए तो उसकी एक प्रमुख वजह हिंदुओं में छुआछूत की भावना थी। यह कहानी विभाजन पूर्व की पृष्ठभूमि पर लिखी गई है, जहाँ एक मुस्लिम पात्र कहता है कि "आप लोगों ने हमें सदा दुरदुराया। हमारी छाया से आपको परहेज रहा। माना हम जालिम थे। पर जालिम के पास भी दिल होता है। वह कभी न कभी पिघल सकता है। लेकिन परहेज सदा मौहबत की जड़ खोदता है। वह नफरत करना सिखाता है। आपने हमसे नफरत की और चाहा कि हम आपसे प्यार करें। यह कैसे हो सकता है।"(खंडित पूजा-विष्णु प्रभाकर, पृ-95) यह विभाजन पूर्व की स्थिति हमारे समक्ष है।

विभाजन की विभीषिका के शिकार बने लोगों का चित्रण मोहन राकेश की कहानी क्लेम में देखने को मिलती है। "पाकिस्तान से पंजाब में आकर बसे लोगों की पीड़ा अति निकटता से देख सकते हैं। मैं अगर मर-खप गया होता तो मेरे बच्चों को भी अब तक दो रोटियाँ नसीब हो जाती।"(मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ-मोहन राकेश, पृ-110) इसी तरह प्रस्तुत कहानी कहानी में संप्रदायगत विभिषीका पहचान कराकर उससे उबरने के लिए दिशा प्रदान किये हैं।

इसी तरह 'चौथा हादसा' कहानी में कथानायक दाढ़ी लीने से लोग मुसलमान समझ बैठते हैं और फिर उससे दोयम दर्जे का व्यवहार करते हैं। इस वजह से उसे पानी पिलाने से पूर्व धर्म पूछा जाता है और हिंदू बोलने पर पानी पिलाने को दिया जाता है। इस तरह बस में सफर के दौरान एक आदमी उसकी

सीट पर बैठ जाता है और उन्हें लक्ष्य करके मुसलमानों को गालियाँ देते हुए उन्हें गद्दार और पाकिस्तान का जासूस ठहराने लगता है। “अजी इन कटवों ने तो देश का सत्यानाश कर दिया है। साले चार-चार शादियाँ करते हैं और बीस-बीस बच्चे पैदा करते हैं, ताकि एक दिन हम हिंदू इनसे कम हो जाएँ और ये हम पर शासन कर सकें। और गोरमेंट भी इन्हें कुछ नहीं करती। इन सालों को तो निकाल बाहर करना चाहिए। साले भिष्ट।”(पार्टीशन-स्वयं प्रकाश, पृ-120) यह कहानी अल्पसंख्यक या मुस्लिम लोगों को संदेह की दृष्टि से देखने की मानसिकता का चित्रण करता है, जिसका मुख्य कारण साम्प्रदायिकता सद्भाव का अभाव है।

पुन्नी सिंह की कहानी ‘फरीद काका’ में हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता का चित्रण करने वाली कहानी है। इसमें मित्र स्वरुप किसी को अपना कर उसका द्वायित्व निभाने से अर्थात् साम्प्रदायिक सद्भाव रखना भी लोगों को कितना गलत दिखता है, उसका चित्रण हुआ है। इसमें मित्र के बीबी और उसके बेटे को आजीवन सहारा देता है परंतु साम्प्रदायिकतावादी हिंदू और मुस्लिम दोनों उसका विरोध करते हैं। साथ ही उनके भाई-बहन के रिश्ते को कलंकित करते हैं। फरीद जिस फैक्ट्री में काम करता था वहीं रोहित की माँ को भी काम पर लगा देता है,साथ ही दोनों में भाई-बहन का संबंध भी तय होगया था। जब फैक्ट्री के मालिक ने रोहित के माँ के साथ बुरा सूलूक किया तो दोनों संप्रदाय के लोग भड़क उठे। इस पर फरीद कहता है “सुलतान, इतना याद रखना कि कोई कारखानेदार पहले कारखानेदार है। उसके बाद हिंदू या मुसलमान है। हिंदू और मुसलमान सभी कारखानेदारों की कौम एक है। दरअसल इस शहर में सिर्फ दो ही कौम हैं - एक कारखानेदारों और दूसरी मजदूरों की। लेकिन अफसोस इस बात का है कि मजदूर फिरकों में बँटा हुआ है। और सही मायने में उसको कारखानेदारों ने ही फिरकों में बाँट रखा है।”(जंगल का कोढ़-पुन्नी सिंह,पृ-129) प्रस्तुत कहानी में सांप्रदायिकता के दंगों के चलते रोहित की माँ की जान चली जाती है।

वर्तमान समय में लोगों की मानसिकता में इतना भारी परिवर्तन हुआ है। सांप्रदायिकता के भारी चोट ने मनुष्य की मनुष्यता का लोप कर दिया है। जो लोग आपस में मिलकर स्वतंत्रता पूर्व रहते थे, वह लोग अब आपस में ही लड़ रहे हैं। साहित्यकार इस स्थिति की पहचान कर साम्प्रदायिकता सद्भाव को फिर से जगाने के लिए कोशिश कर रहे हैं।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

48. हिन्दी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

योगेश कुमार सिंह,
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय,
हैदराबाद-500007, तेलंगाना, भारत

सांप्रदायिकता समकालीन समय की सबसे गंभीर समस्या है। बदलते हुए समय के साथ इसने अपना रूप परिवर्तन किया है। आज के दौर में सांप्रदायिकता जिस रूप में हमारे समाज में उपस्थित है वह निश्चित ही आधुनिक घटना के फलस्वरूप विकसित हुई है, इसका विकास उपनिवेशी शासन के दौरान हुआ। इसने आज भी विकराल रूप धारण कर लिया है। सांप्रदायिकता का नाम लेते ही 'धर्म' को स्वत: उसके दूसरे पक्ष के रूप में देखा जाने लगता है। अब सवाल यह उठता है कि क्या 'धर्म' का सांप्रदायिकता से कुछ लेना-देना है? क्या 'धर्म' के कारण ही 'सांप्रदायिकता' का अस्तित्व है? वास्तव में 'धर्म' और 'सांप्रदायिकता' दो विभिन्न धाराएँ हैं, परन्तु सांप्रदायिकता अपने आप को विकसित करने के लिए धर्म का सहारा अवश्य लेती है। सांप्रदायिकता विभिन्न सम्प्रदायों में परस्पर वैमनस्य का सृजन करती है और इसके लिए वह कभी धर्म की तो कभी संस्कृति की दुहाई देती है। धर्म, संस्कृति और राष्ट्र तीनों अलग-अलग अवधारणाएँ हैं। भारत जैसे बहु सांस्कृतिक, बहुधार्मिक और बहुभाषिक देश में इन तीनों के घाल-मेल से दुविधा होती है, यहाँ शुरू से ही विभिन्न धर्मों के लोग निवास करते आए हैं। सांस्कृतिक बहुलता इसकी प्रमुख विशेषता रही है, संस्कृतियों के इस सहअस्तित्व के कारण इन संस्कृतियों में साहचर्य के साथ-साथ संघर्ष भी होते हैं। क्या इन संघर्षो को सांप्रदायिक माना जा सकता है, जिसकी पहचान आधुनिक काल में आकर हुई है? क्या इन सभ्यताओं अथवा संस्कृतियों के आपसी संघर्ष को सांप्रदायिक की संज्ञा देना उचित है? क्या मध्यकाल में आक्रांताओं द्वारा किये गए हमले जो आर्थिक स्वार्थों से प्रेरित होते थे और जो बाद में राजनीतिक स्वार्थ में तब्दील हो गए, उन्हें सांप्रदायिक प्रवृति की श्रेणी में रखा जा सकता है?

राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिकता की इस समस्या को हिन्दी साहित्य में समय-समय पर उठाया गया है। कविता, कहानी, उपन्यास नाटक आदि विधाओं में इस समस्या को विभिन्न दृष्टियों से परखने की कोशिश साहित्यकारों ने की है। कथा साहित्य में प्रेमचंद्र-पूर्व कथाकारों से लेकर अभी तक के कथाकार इस समस्या को अपनी रचनाओं में चित्रित करते आ रहे हैं। कमलेश्वर कृत 'कितने पाकिस्तान'(2000), दूधनाथ सिंह कृत 'आखिरी कलाम'(2003) अलग-अलग टेम्परामेंट की कृतियाँ है। परन्तु समस्या की जड़ों को पहचानने की कोशिश दोनों उपन्यासों में विभिन्न कोणों से की गई है। वहीं मोहनदास नैमिशराय कृत 'जख्म हमारे'(2005) में गुजरात दंगों की विभिषिका का वर्णन किया गया है। अन्य उपन्यासों में भीष्म साहनी कृत 'नीलू नीलिमा निलोफर' (2000), ज्योतिष जोशी कृत 'सोनवर्षा'(2000), द्रोणवीर कोहली कृत 'वाह कैम्प' (2000), तेजिंदर कृत 'काला पादरी' (2002) आदि उपन्यासों में सांप्रदायिकता की समस्या को उठाया गया है। वहीं विवेच्य दशक के हिन्दी कहानियों में भी इस समस्या को आधार बनाकर खूब कहानियां लिखी गईं हैं।

भूमंडलीकरण के दौर में सांप्रदायिकता के स्वरुप के प्रश्नों से उलझने के साथ-साथ इस दसक की हिन्दी कहानियों के विषय का विस्तार बहुसंख्यक सांप्रदायिकता, अल्पसंख्यकों की मनःस्थिति से लेकर विभाजन की त्रासदी तक है। पंकज मित्र की 'हुडुकलुल्लू', 'अफसाना प्रदुषण का', असगर वजाहत की कहानियां 'मैं हिन्दू हूँ', 'मेरे मौला', 'शाह आलम कैम्प की रूहें', 'जख्म', चन्दन पाण्डेय की 'ज़मीन अपनी तो थी', 'नकार', नीलाक्षी सिंह की 'परिंदों का आकार सा कुछ', स्वयं प्रकाश कृत 'पार्टीशन', शिवमूर्ति की कहानी ख्वाज़ा', 'वो मेरे पीर', वंदना राग की 'यूटोपिया', मनोज कुमार पाण्डेय की 'खाल', प्रियदर्शन की 'सुनियो घोड़ों की टापें', गीतांजलि श्री कृत 'बेलपत्र', भगवानदास कृत 'सौदा', अखिलेश कृत 'अँधेरा', उमाशंकर कृत 'अयोध्या बाबू सनक गए', मो. आरिफ का 'तार', 'मौसम' आदि कहानियों में सांप्रदायिकता की समस्या कथा के केंद्र बिंदु में उपस्थित है।

विपिन चंद्र ने सांप्रदायिकता को परिभाषित करते हुए अपनी पुस्तक में लिखा है कि "सीधे-सीधे कहें तो सांप्रदायिकता का आधार ही यह धारणा है कि भारतीय समाज कई ऐसे सम्प्रदायों में बँटा हुआ है, जिनके हित न सिर्फ अलग हैं बल्कि एक दूसरे के विरोधी भी हैं। सांप्रदायिकता के जन्म के पीछे का विश्वास यह भी है कि राजनीतिक और आर्थिक से लेकर सामाजिक और सांस्कृतिक इरादों के लिए लोगों के लिए सिर्फ धर्म की रस्सी से बांधकर मापा जा सकता है।" ('सांप्रदायिकता एक प्रवेशिका', पृष्ठ 3) विभिन्न धर्मों, वर्णों, जातियों – उपजातियों वाले समाज में दुःखद होने पर भी सांप्रदायिक दंगे कोई बड़ी अनहोनी नहीं है ।

हिन्दू-मुस्लिम दंगों को ब्रिटिश राज की विभाजन करके राज करने की नीति से जोड़कर देखा जाता है। धर्म राष्ट्रवाद का आधार नहीं हो सकता, यदपि विदेशी पराधीनता के विरूद्ध धर्म से विद्रोह की प्रेरणा मिल सकती है। धर्म को आधार बनाकर साम्राज्यवाद ने भारत का विभाजन करवा दिया और पाकिस्तान नामक एक अलग देश का निर्माण कराया, किन्तु उसका धार्मिक राष्ट्रवाद पाकिस्तान के विभिन्न और बांग्लादेश के निर्माण से सिर के बल गिर गया ।

1947 में जब भारत आज़ाद हुआ तो उसके उपरान्त सांप्रदायिक दंगे पनपे, सांप्रदायिक अँधेरा बढ़ने लगा लेकिन फिर भी मानवता शेष थी। मुस्लिम पड़ोसी अपने हिन्दू पड़ोसी की रक्षा कर रहा था, इसी तरह हिन्दू पड़ोसी मुस्लिम पड़ोसी की। 'तमस' के हरनाम सिंह अपने गाँव में अकेले सिख थे, लेकिन गाँव वाले उन्हें अंत तक सुरक्षा का आश्वासन देते रहे। लेकिन जब उन्होंने बाहर के बलबाइयों के कारण अपना गाँव छोड़ा तो उन्हें एक मुस्लिम परिवार ने शरण दी। इतना ही नहीं राजो अपनी जानपर खेलकर हरनाम सिंह और बंतो को गाँव से बाहर सुरक्षित छोड़कर आई। वास्तव में किसानों – मजदूरों और निम्न वर्ग के लोगों में सांप्रदायिक तनाव कम था, वर्गीय चेतना ज्यादा प्रभावी थी। ये लोग सांप्रदायिक दंगों में सांप्रदायिकता के शिकार हुए थे, किन्तु इनमें परस्पर विद्वेष स्थायी जड़ नहीं जमा सका।

राही मासूम रजा का 'आधा गाँव' सिया सैय्यद जमींदारों, राकियों-जुलाहों, और दलित हिन्दूओं के दो पट्टीयों के झगड़े, घृणा, स्वच्छंद योनाचार और देश-विभाजन के बाद आलमे-तन्हाई की कथा है। रचनाकार ने अपना अधिकांश पृष्ठ देश विभाजन से उत्पन्न मानसिकता पर चोट करने या अपनी व्यथा

सुनाने में खर्च किए हैं, वे बताते हैं कि देश में मुसलमान भी राष्ट्रवादी हैं। अपनी ज़मीन, मिट्टी और गंगा से उन्हें भी प्यार है। वे भी हर मुसीबत झेलकर अपनी पुश्तैनी ज़मीन से चिपके रहते हैं। आजादी के बाद जहाँ लोगों की ये आकांक्षाएँ थी कि वह अब खुद को सुरक्षित महसूस कर सकते हैं, लेकिन स्थिति बदलने का नाम नहीं ले रही थी। राही मासूम रजा अपने उपन्यास 'आधा गाँव' में इसी संशय की स्थिति को लिखते हैं "हम ऐसे मुल्क में रहते हैं जहाँ हमारी हैसियत दाल के नमक से ज्यादा नहीं है। एक बार अंग्रेजों का साया हटा तो ये हिन्दू हमें खा जायेंगे। इसीलिए हिन्दुस्तानी मुसलमानों को एक ऐसी जगह की जरुरत है जहाँ वो इज्जत से जी सकें।" (आधा गाँव, पृष्ठ 254)

हिन्दी कहानियों में भी सांप्रदायिक सदभाव का चित्रण मिलता है। अरुण प्रकाश की कहानी 'भैया एक्सप्रेस' इसी सांप्रदायिक सदभाव की कहानी है। रामदेव अपने भाई विशुनदेव की तलाश में पंजाब जाता है जो पंजाब में हुए सांप्रदायिक दंगो में मर चूका है। जैसे तैसे रामदेव पंजाब पहुँच जाता है, पर उसे अपने भाई के मरने की सुचना मिलती है। गाँव के सरपंच की मानवता रामदेव को संभालती है। स्वंय प्रकाश का 'पार्टीशन', मो.आरिफ का 'तार' , अखिलेश की कहानी 'चिठ्ठी', असगर वजाहत की कहानी 'शाह आलम कैम्प की रूहें', इसी धारणा पर लिखी गई कहानियाँ हैं। हिन्दू-मुसलमानों, सिख-मुसलमानों के मध्य मूलतः धर्म का ही अंतर था, नहीं तो रहन-सहन, खान-पान, बोली, भाषा सब कुछ तो समान थीं, फिर भी लोग एक-दूसरे के खून के प्यासे हो गए थें। सांप्रदायिक उन्माद भड़काना राजनीतिक स्वार्थ साधने का सबसे आसान तरीका है जिसकी गिरफ्त में आम जनता आसानी से आ जाती है। समाज में भाईचारे से रह रही भिन्न कौमों के रिश्ते वास्तव में जटिल और विरोधाभास पूर्ण होते हैं। ऊपर से सबकुछ ठीक-ठाक नज़र आने वाले इस सामाजिक परिदृश्य में कुछ निष्क्रिय विस्फोटक हमेशा मौजूद रहते हैं जो अनुकूल वातावरण मिलने पर अचानक सक्रिय हो जाते हैं और समाज के बड़े हिस्से को अपनी जद में ले लेते हैं।

सन्दर्भ -

- भीष्म साहनी –तमस- राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली – छठी आवृति – 2006
- राही मासूम रजा – आधा गाँव - राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
- विपिन चंद्रा – सांप्रदायिकता एक प्रवेशिका – नेशनल बुक ट्रस्ट – पृ. 3
- असगर अली इंजीनियर - भारत में सांप्रदायिकता – साहित्य उपक्रम
- मधुरेश – हिन्दी कहानी का विकास – सुमित प्रकाशन – संस्करण 2002
- पत्रिका बनास जन – भीष्म साहनी विशेषांक – जुलाई – 2015

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

49. हिंदी कविता में सांप्रदायिक सद्भाव

गीतांजली साहू,
पी.एच.डी शोधार्थी
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सीटि,
गच्चीबौली, हैदराबाद500032-

धर्म आधारित राज्य-राष्ट्र की माँग करना भारतीय समाज एवं राष्ट्र के विघटन का आवाहन है। धर्मों के उन्माद फैलाकर सत्ता हासिल करने की हर कोशिश साम्प्रदायिकता को बढ़ाती है। भारत के अनेक समस्याओं में से ‘सांप्रदायिकता’ सबसे बड़ी समस्या है। हिंदुस्तान वैभव कारणों से अपने आप ही विशिष्टता रखता है। आज भी दुनिया के उन ताकतवार देशों में सामिल हैं जो अनेक प्रकार की तकनीकों से संपन्न है। शिक्षा और विकास के स्तर पर आगे तो बढ़ ही रही है परंतु उसके रास्ते पर बाधक आतंकवाद, भ्रष्टाचार आदि बन रहे हैं। पर खुशी की बात भी यह है कि इतने सबके बाद भी हमारी एकता हम सब में विद्‌यमान है। साथ ही प्राचीन काल से ही देश की समाज सुधारकों ने अपने वैचारिकता को सांप्रदायिकता के खिलाफ में अस्त्र बनाया है।

दादू बार-बार आह्वान करते हुए कहते हैं कि

नीच माध्यम को नहीं।-ऊँच“
देखो राम सबन के माहीं
अलह राम छूटा भ्रम मोरा
हिंदु तुरक कछु नाहीं,
देखो दरसन तोरा”

सिर्फ हमारा खुद का ही नहीं, बल्कि हमारे देश का भविष्य भी हमारे हाथ में है यह समझाना जरुरी है। न हम हिंदू हैं, न मुसलमान, हम हिंदुस्तानी है यही बस हमारी मूल भाव होना जरुरी है। इसी भाव से देश के वीर जवानों हमारे पूरे देश भर के तरफ से हमें आज़ादी दिलाने के लिए शहीद हो रहे है न वह कोई हिंदु या न वह मुसलमान था, वह हमारी रक्षक है, जिसके कारण आज हम आज़ाद हैं। उन्हीं शहीदों के लिए लिखे गये वेद अख्तर साहब की कुछ पंक्तियों को देख सकते हैं

“बस इतना याद रहे.....एक साथी और भी था
जब अमन की बाँसुरी गुँजे गगन के तले,
जब दोस्ती का दिया इन सरहद पे जले,
जब भुल के दुश्मनी लग जाये कई गले,
जब सारे इंसानों का एक ही हो काफिला,
बस इतना याद रहे...एक साथी और भी था।
बस इतना याद रहे..एक साथी और भी था।”

पारस्परिक सद्भावना ही आदमी को आदमी जुड़ने की जरिया बन पाएगी। धर्म और संस्कृति का निर्माण मनुष्य ने अच्छा जीने और एकजुट होकर मिल बैठ कर जीने के लिए ही किया था परंतु सांप्रदायिक भाव ने हिंसा

भाव को उत्पन्न कर अब देश को तहस नहस कर रहा है। परंतु कवि वच्चन अपनी सोच में नकरात्मक को हटा कर सांप्रदायिक सद्भाव को जगाते हुए प्रेम की आलोक से उजागर कराने में प्रयत्नरत है। वह कहते हैं –

मंदिर मस्जिद भेद कराते, मेल कराती मधुशाला सांप्रदायिकता पर चोट करते हुए प्रेम प्रतीक- 'मधुशाला' को ही जोड़ने वाली शक्ति सिद्ध करते हैं। भले ही सांप्रदायिक दंगों के रुप में समाज में विषमता फैलती रही साथ ही साहित्यकारों और हमारे साहित्य ने अपने आवश्यकता और चुनौती को समझा उसे अपनी लेखनी के जरिए जाग्रत करते रहे। देश के विभाजन के समय जो कुछ वीभत्स घटा, कुकर्म हुआ, जन-सद्भाव-बर्बरता का रुप उजागर हुआ वह नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता है। स्नेह-सौहार्द ऐसी चीजें हैं, जो वह बीज की तरह देखनेसुनने में भले ही मामूली से शब्द लगे हैं-,ये मानव-जीवन की मानवीय मूल्य है। इसके बिना आदमी के जीवन की परिकल्पना नहीं की जा सकती। दलित कवि ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते हैं -

"मैंने भी देखे हैं यहाँ /हर रोज़ अलग-अलग चेहरे
रंग-रुप में अलग नहीं पहचानी जा सकती उनकी जाति/
बिना पूछे मैदान में होगा जब जलसा /आदमी से जुड़कर आदमी/
जुटेगी भीड़ तब कौन बता पाएगा भीड़ की जाति /
भेड़ को जाति पूछना वैसा ही है जैसे नदी के बहाव को रोकना /
समूद्र में जाने से।"

दलित साहित्य ही है जो मनुष्य-मनुष्य को एकता की बात करता है और जातीयता को ओरों-मेढ़ों को तोड़कर जातिविहीन समाज के निर्माण का सपना देखता है। समानता सहिष्णुता की भावना लिए प्रतिस्पर्धा की भावना ही बंधुत्व की भावना को जन्म देती है, जो मिल-जुलकर काम करने, रहने, एक-दूसरे के साथ सहिष्णुतापूर्वक जीने की प्रेराणा देती है और यह प्रेरणा एकता की जन्मदात्री होती है।

किसी विशेष धर्म पर आस्था रखने को लोगों का वर्ग 'संप्रदाय' कहलाता है। वास्तव में सभी धर्म और संप्रदायों का मूलतः एक ही धर्म होना चाहिए। सभी संबंध मानवता से है। हर धर्म मानव से मानव को जोड़ना सिखाता है। परंतु आज के व्यवस्था और राजंबीति के कारण धर्म इस भावना के विपरीत कार्य कर रहा है। कुछ लोग अपने निजी स्वार्थ सिद्ध के लिए अपने संप्रदाय को श्रेष्ठ बनाने के आतुर में, किसी सीमा तक जाकर दूसरों को हीन साबित कर, दूसरों पर अपनी सर्वश्रेष्ठता जाहिर कर, दूसरों को निचा दिखाना उनका मूल उद्येश्य बन गया है। कर्म और लेखन द्वारा कवियों ने निरंतर राष्ट्र और राष्ट्रीयता, धर्म और सांप्रदायिकता जैसी गंभीर और चुभती समस्याओं पर सवाल उठाते आए हैं। विभिन्न मूल समस्याओं पर विचार करते हुए उससे उत्पन्न करुण दशाओं का चित्रण भी मिला है। जैसे कबीर ने कहा है –

"हिंदु कहत राम हमारा, मुसलमान रहमाना।
आपस में हऊ लरै मरतु हैं, मरम कोई नहीं जाना।"

राष्ट्रीय एकता के विघटन के तत्वों में एक बड़ा कारण है 'सांप्रदायिकता'। सांप्रदायिकता की समस्या तब तक नहीं सुलझ सकती, जबतक कि धर्म के ठेकेदार उसे सुलझाना नहीं चाहते। दिनकर इसीतरह का कुछ समानता भाप से गढ़ी समाज का निर्माण करना चाहते हैं। वे कहते हैं -

शांति नहीं तब तक जब तक"
सुखभोग न नर का सम हो-,
नहीं किसी को बहुत अधिक हो,
नहीं किसी को कम हो।
वैषम्य घोर जब तक यह शेष रहेगा।
दर्बल का दुर्बल ही देश रहेगा।"

न्याय एवं समता जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित सृष्टि ही सांप्रदायिक जैसे बड़ी जहर को नाश हो सकता है। लोगों के बीच में प्यार का किरण फैला सकता है साथ ही जातिवाद, साम्राज्यवाद, सामंतवाद आदि का अंत भी अपने आप ही समाज से हो जाएगा। परंतु आज भी मनुष्य अपनी मनुष्यता का पहचान नहीं पाया वह आज भी अपनी हिंसा से ही प्रेम कहता है, उसका हृदय क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष से भरा हुआ है। संपूर्ण भारतवर्ष इन्हीं समस्याओं से सामना करते करते अपनी वजूद को खोकला करता जा रहा है। वास्तविकता का परिचय लोगों को उनके समस्याओं से ज्ञात हो रही है। समाज से सुधार के लिए इन्हीं लोगों को साम्प्रदायिकता को मूल समस्याओं खत्म करने के लिए समता, न्याय पर आधारित नये मनुष्य समाज का निर्माण करना होगा, जहाँ किसी भी प्रकार का शोषण नहीं होगा, धर्म से अनुप्राणित मनुष्य का एक नया, पवित्रइतिहास बनेगा,जिसमें आनंद उल्लास, संतोष जैसे तत्व सभी मनुष्यों के हृदय में भरे होंगे। मनुष्य एक- म के संबंध में बंध जाएँगे। दिनकर कहते हैंदूसरे के साथ परस्पर प्रे-

"साम्य को वह रश्मि स्निग्ध उदार
कब खिलेगी, कब खिलेगी, विश्व में भगवान।"

स्नेह और समानता की नींव पर ही नव विश्व का निर्माण होना संभव है। बाबू गुलाबराय ने साहित्य की परिभाषा इस प्रकार स्थिर की है -

र के प्रति मानसिक प्रक्रियासाहित्य संसा" अर्थात विचारों, भावों और संकल्पों की शाब्दिक अभिव्यक्ति है। और हमारे किसी न किसी प्रकार के हित का साधन करने के कारण संरक्षणीय हो जाती है। समाज में मानव समुहों द्वारा ही विशिष्ट उद्येश्यों को उसके लक्ष्य को पूरा किया जा सकता है। " पारस्परिक सहयोग का भाव विकसित करे तथा उसमें एकता, शांति और सौहार्द की भावना का विकास किया जाए तो भारत के संदर्भ में सांप्रदायिकता का खंडन किया जा सकता है। आज केवल भारत में ही नहीं अपितु सारे विश्व में साम्प्रदायिकता का जहरीला सौंप फुँफकार रहा है। हर जगह इसी कारण आतंकवाद ने जन्म लिया है। इससे कहीं हिंदुम-ुसलमान में तो कहीं सिक्खोंहिंदुओं या अन्य जातियों में - दंगे फसाद बढ़ते ही जा रहे हैं। वे अपनी संस्कृति को भूल चुके हैं, बस उन्हें याद है तो अपनी स्वार्थ। कृष्ण चंद्र के कविता में समाज के मुर्खतावश मनुषय के वास्तविक जीवन को दर्शाता है -

बिगड़ी हुई किजां हैं“, उजड़ा हुआ चमन
अपने घरों में खुश दें
मेरे शहर के लोग
भाषा विवाद, जाति, पांति, मजहब के नाम पर
पत्थर चला रहे हैं, मेरे शहर के लोग।”

सांप्रदायिकता का जहर को उतारना जरुरी है। अतः मनुष्य को मनुष्य से जुड़ना चाहिए उसके अस्तित्व को समझना चाहिए बस यही भाव पैदा करना चाहिए कि

मजहब नहीं सिखाता“,
आपस में बैर रखना
हिंदी हैं हम वतन है, हिंदोस्ताँ हमारा।”

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

50. हिंदी नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना

मिनाक्षी अशोक बनसोडे
नवजीवन सोसायटी,
आर. सी. मार्ग, चेंबूर,
मुंबई 400071

हिंदी नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना की व्याप्ति का अनुशीलन करने के पूर्व राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना का निर्धारण करना आवश्यक है। इस संदर्भ में सर्वप्रथम विचारणीय तत्त्व यह है की राष्ट्र की मूल परिकल्पना क्या है। और जनमानस में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना का उदय किस रूप में होता है? यह भी विचारणीय है कि इस भावना की व्यंजना साहित्य में और विशेषतः नाटक में किस प्रकार होती है।

किसी भी विचारशील देश की प्रगति मूलतः उसके जीवन दर्शन पर निर्भर करती है । इस दृष्टि से विश्व के प्रायः सभी समुन्नत देशों ने विश्वबंधुत्व अथवा सह–अस्तित्व की भावना समर्थन किया है।

राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना एक आंतरिक प्रवृत्ती है, एक ऐसी चेतना है जिसके प्रस्थान बिंदू में वैयक्तिकता और विस्तार मे विश्व विद्यमान है व्यक्ति से ही राष्ट्र का स्वरूप निर्धारित होता है। जब व्यक्ति राष्ट्र हित के लिए अपने स्वार्थो और संकुचित सीमाओं का उत्सर्ग करता है, तभी सच्ची राष्ट्रीयता जन्म होता है। शास्त्रीय शब्दावली में विचार किया जाए तो राष्ट्रीयता को देशविषयक रीति के अर्थ में ग्रहण किया जा सकता है ।

राष्ट्रीय एकता के लिए वस्तुमूलक, विचारमूलक, और भावमूलक तीनों ही आधार होने आवश्यक है। कुछ लेखकों के लिखा है।

राष्ट्री एक आत्मा या आध्यात्मिक सिध्दांत है। इस आत्मा या आध्यात्मिक सिध्दात का निर्माण दो वस्तुओं से होता है। इनमें से एक भूतकाल से सबंध रखती है, दुसरी वर्तमान से। एक तो प्राचीन काल के वैभव की सुखद स्मृति है। और दूसरी वर्तमान में समझौते की भावना, साथ रहने की इच्छा और समझौते की भावना, साथ रहने की इच्छा और मिलजुलकर अपने सामान्य वैभव को आगे बढाने की आकांक्षा

स्वाधीनता की चुनौती, शांतिप्रसाद वर्मा पृ. 21

उपयुर्क्त विवेचन के अनुसार इतना तो स्पष्ट है कि विद्वानो ने इस प्रश्न को गंभीरता से लिया है कि राष्ट्रीय एकता के स्वरूप–निर्धारण को पृष्ठभूमि में आंतरिक और बाहय रूप में कौन कौन से तत्व विद्यमान रहते है । केवल भौगोलिक एकता के आधारपर राष्ट्रीय एकता का स्वरूपांकन कठिण है । विभिन्न देशवासी यदि कारणवंश किसी देशविशेष में निवास कर रहें हो, तो भौगोलिक ऐक्य होने पर भी उनकी राष्ट्रीयता में आंतर हो सकता है । इसका ज्वलंत उदा. – स्वयं भारत है । अंग्रजो के शासन–काल में अधिकांश भारतीयों की राष्ट्रीभावना जहॉ उग्र और दुर्दयनीय थी, यद्यापि उनमें से कुछ के मन में भारत के लिए सहानुभूति भी विद्यमान की ।

अन्य राष्ट्रों के प्रति द्वेष और दुर्भाव रखते हुए केवल अपने राष्ट्र – कल्याण की चिन्ता अस्वस्थ राष्ट्रीयता को जन्म देती है । भाषा और जातीगत ऐक्य की बात भी राष्ट्रीय दृष्टि से कम महत्वपूर्ण नहीं है । भाषा जाति की एकता राष्ट्र–विशेष की चेतना का अधिक प्रबल और संगठित स्वरूप धारण कर लेना, इस दृष्टि से तो स्वाभाविक है कि इसमें राष्ट्रवादियों को परस्पर विचार विनिमय में विशेष सुविधा प्राप्त रहती है, वही इसके अपवाद स्वरूप की स्विजलैंड, भारत आदि कुरू

देशों के नाम गिनाए जा सकेत है। विभिन्न प्रातों और भाषाओं के रहते हुए भी सफल राष्ट्र है, क्योंकि विविधता का होना स्वयं में दोष नहीं है। राष्ट्रीय एकता के लिए राजनीतिक लक्ष्य को समानता का सिध्दांत भी महत्वपूर्ण है। यह निसंदेह एक आवश्यक तत्व है, किंतु प्रायः इसकी सफलता सामजिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है ।

उदा – यदि कोई राष्ट्र परतंत्र है तो उसका राजनितिक लक्ष्य निश्चित ही देश ही देश की स्वतंत्रता से जुड जाएगा, जबकि स्वतंत्र देश के नागरिकों के राजनितिक लक्ष्य का एक की केंद्र होना प्रायः कठिण होगा।

इस संदर्भ में विष्णू प्रभाकर लिखते है। – अनेक जातियाँ का होना, अनेक धर्म – मत होना अनेक भाषाऍ होना किसी की दृष्टि से दोष नहीं है। विविधता सौध्र्य की प्रतीक है। एक एक किसी एक का निर्माण करती है । सात रंग मिलकर इंद्रधनुष्य की रचना करते है । संगीत का आधार भी सात स्वर ही है । लेकिन यदि वे स्वर और वे रंग अपने अपने सौंदर्य को लेकर खडगहस्त हो उठ तो प्रकृति और वाणी का सौंदर्य के लिए नष्ट हो जाएगा वैसे ही, जैसे आज भारत की एकरूपता नष्ट हो गयी है । इस एकरूपता अथवा एकता के तिरोहित हो जाने का उपर्थ है देश का सर्वनाश मनुष्य का सर्वनाश, क्योंकि जिस देश में मनुष्य का मूल्य है वह अपने आप बडा हो जाता है । मनुष्य के सामने देश की सीमाऍ कोई अर्थ नहीं रखती। 'भावात्मक एकता' शीर्षक लेख, विष्णु प्रभाकर आजकल

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत में विविधता होते हुए भी राष्ट्रीय एकता दिखाई देती है । यही इस देश महत्वपूर्व बाब है ।

राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में कुछ नाटक देखे जा सकते है । जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद ने 'प्रताप प्रतिज्ञा' नाटक में भारतवासियों को एक सूत्र में बॅधने का संदेश दिया है । प्रताप मृत्यू के समय अपने सामन्त से केहते हैं – मैं चाहता कि इस पीडित भारत वसुंधरा पर कोई ऐसा भाई का लाल पैदा हो, जिसके हृदय–रक्त की अंतिम बूॅदे इसके स्वाधीनता यज्ञ–में पूर्वाहुति दे, इसे सदा के लिए स्वाधीन कर दे जिसके इंगित पर, बरसों के बिछडे हुए कोटि–कोटी भारतीय एक सुत्र में बॅध कर सर्वस्व बलिदान करने मातृमंदिर, की और दौड पडे ।'' प्रताप ने अंतिम समय तक भारतीय योध्दाओं को एकत्रित करने का प्रयास किया था । और स्वाधिनता के लिए युध्द किया था । मिलिन्दजी इस नाटक में एकता की भावना पर बल देना चाहते है ।

सेठ गोविंददास द्वारा लिखित 'हर्ष' नाटक में सम्राट हर्ष और उनकी बहिन राजश्री आर्यावर्त की एकता के लिए चिंतित है । यद्यापि उन्होंने शांति और अहिंसा के मार्ग से समस्य कार्य संपन्न कर लिए है । परंतू राजनितिक एकता बाकी है । राजश्री हर्ष से कहती है कि मैं दुःखी हूँ। हर्ष उनसे दुःख का कारण पूछते है, इस पर राजश्री कहती है – ''वही पुराना राष्ट्र की स्थापनावालो प्रश्न व्यथित कर रहा है।'' इस प्रकार इस नाटक के माध्यम से सेठजी राष्ट्रीय एकता चाहते है और बिखरे हुए सुत्रों को एकता में पिरोना अपना लक्ष्य समझते है।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने तत्कालीन समाज की ओर संकेत करके अपने नाटक ''राजसिंह'' में बताया है कि भारत में अनेक रियासतों के राजा–महाराजा संग्रहित नहीं थे। इसी को लक्ष्य करके उन्होंने अपने नाटक का सर्जन किया। औरंगजेब उपनगर के राजा उपसिंह की कन्या चाकमती से बलपूर्वक विवाह करना चाहता है परंतू राजा ऐसा मानने को तैयार नही है, इस पर उनके दीवान कहते है कि आपको ऐसा अवश्य करना चाहिए, क्योंकि इसमें लाभ है और तलवार की धार को उन्हीं

के लिए शाप बना दिया है। इस नाटक में राजपूतों की असंगठन की भावना को दिखाकर शास्त्रीजी यह बताना चाहते है की अंग्रेज फूॅट को पूरा लाभ उठा रहे है। और हमारा ऱ्हास हो रहा है । देश की सभी जातियों और धर्मो के व्यक्तियों को मिलकर स्वतंत्रता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

विभिन्न नाटकों में राष्ट्रीय एकता, चेतना के उपयुक्त आयामों का विस्तृत निरूपण हुआ है।

सांप्रदायिक सद्भावना के बारे में कहॉ जा सकता है कि कुछ विशेष परंपराओं और सिध्दातों के पूर्वाग्रहपूर्ण दृष्टिकोन रखनेवाले जन–समुदायों को संप्रदाय संज्ञा दो जाती है। राष्ट्रविषय में एक ही समय एकाधिक संप्रदाय विद्यमान रह सकते है।

अरविंद बाबुने अपने राष्ट्रीयता (जातीयता) संबधी लेखों में जातीयता और स्वदेश प्रेम के महत्व की विवेचना करते हुए बताया था कि जहॉ जातीयता राजसिक भाव है वहॉ स्वदेश प्रेम सात्विक है। जो पुरूष अपने अहं को देश के अहं में विलीन कर सकता है, वह एक आदर्श स्वदेश–प्रेमी है और जो व्यक्ति अपने अहं को कायम रखते हुए उसके द्वारा देश के 'अहं' को बढाना है वह जातीय भावापन्न है । राजनितिक स्वतंत्रता स्वराज्य का एक अंग है । स्वराज्य के दो रूप है। बाहय स्वाधीनता और आंतरिक स्वाधीनता है और जनतंत्र आंतरिक स्वाधीनता का चरम विकास है। आचार्य नरेंद्रदेव : युग और नेतृत्व मुकुटबिहारी लाल पृ. 52–53

मध्ययुग में भारत में शैव, शाक्त, वैष्णव प्रभृति अनेक धार्मिक संप्रदाय विद्यमान ये जिनमे कभी – कभी संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती थी । वस्तुत संम्रदाय जहॉ प्रारंभ से ही मतभेद और पूर्वाग्रह को लेकर पनपता है, वहॉ राष्ट्रवाद में उन्नति और सर्वकल्याण की भावना अंतर्हित रहती है। उससें अनुशासन, कर्तव्य–पालन, एकता आदि सुप्रवृतियों का योगदान रहता है।

सांप्रदायिक सद्भावना के स्वरूप में कुछ नाटक देखे जा सकते है। प्रेमी जी ने 'ध्यान का मान' नाटक में हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिक वैमनस्य को समापत कर दोनो मे एकता लाने का प्रयास किया है । इस नाटक में दुर्गादास सांप्रदायिक वैमनस्य को समाप्त करने के लिए संकुचित भावनाओं का परित्याग करना चाहते है कि, हमें पहले इन आवश्यक संकीर्ण और हानिप्रद सीमाओं को तोडना होगा – तब कहीं एक बलवान हिंदू समाज का निर्माण होगा। उससे पश्चात हिंदू और मुसलमान के बीच की सामाजिक दीवार तोडी जा सकेगी। स्वतंत्र भारत में यह सांप्रदायिकता राष्ट्रीय हितों को हानि पहुॅचा रही है और इसे समाप्त करना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है।

''उध्दार' नाटक में प्रेमी जी ने जाति, धर्म और वर्ग के झगडो को समाप्त करने की चेष्टा की है। मेवाड में जनता जन–जागृति की एकता के लिए सन्नध्द है । दुर्गा सैनिकों से अनुरोध करती है कि जिस शासन में जनता की आवाज नही सुनी जाती, उससे नियमों को भंग करना जनता का कर्तव्य हो जाता है। तुम्हे यही बात प्रत्येक मेवाडी को समझा देनी है। हमारा पहला मोर्चा जन–जागृती का है। शत्रू हमारे बीच जाति भेद, और वर्ग–भेद खडे करके हमे परस्पर लडा कर शक्ति–क्षीण करेगा और फिर अपना फौलादी पंजा इस देश पर दृढतापूर्वक फैलाएगा। स्वातंत्रता पूर्व–युग में इसी भेद–भावना के कारण भारत को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पडे और सदियों तक पराधीनतो की बेडियों में जकडा रहा । नाटककार का विचार है कि कही इस प्रकार को भूल पुनः न हो जाए इसलिए उन्होनें अपने नाटक के द्वारा एकता स्थापित करने का प्रयास किया है।

लक्ष्मीनारायण मिश्र ने 'वितरता की लहरे' नाटक में सारे देश को एक ध्वजा के नीचे एकत्रित होने का संदेश दिया है । विष्णुगुप्त पुरू से कहते है की जब सारा देश एक हो जाएगा, तभी हम यवनों की भारत से निकाल सकेंगे। उनके शब्द इस प्रकार है। 'यवन विद्यात से भारत तभी बचेगा जब इसके सभी अंग एक साथ होंगे। सारा देश एक ध्वजा और एक व्यवस्था के नीचे होगा । मिश्र

जी का मत है कि विदेशी शक्ति का मुकाबला तभी हो सकता है जब भारत की सभी शक्तियॉ एक हो जाएँ और एक झण्डे के नीचे एकत्रित होकर राष्ट्रीय भावना का परिचय दे।'

स्वातंत्र्योत्तर युग की स्वार्थ केंद्रो राजनिती, विसंगत सामाजिक परिवेश अमान्विय औद्योगिक यांत्रिक सभ्यता आर्थिक विषमता इन सबका असर परंपरागत जीवन मूल्यों तथा आदर्शो पर बुरीतरहसे देखा जा सकता है।

वर्तमान समय में विश्वस्तर परधर्म को लेकर संघर्ष छिड चुका सांप्रदायिक दंगे होने लगे है, भारत जैसे बहुधर्मीय देश की एकता के लिए संत कबीर के विचारों की आज जरूरत है । सहानी का कंबीरा खडा बाजार में (नाटक) मध्ययुग के सबसे विद्रोही संत कंबीर के व्यक्तीत्व से प्रस्तुत करता है। धार्मिक, सामाजिक, विषमता और अंधविश्वास से ग्रस्त समाज में कबीर ने अपनी वाणी से एक क्रांति पैदा कर दी थी, उन्होंने समाज में व्याप्त शोषण, आडम्बर, पाखंड, दंभ, ईर्ष्या प्रेम, कलह का डटकर विरोध किया। आज के इस विषाक्त वातावरण में जरूरत है कबीर के समन्वयवादी दृष्टि को अपनाकर जाति, धर्म से उपर उठकर मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने की। भारत को अशांति का एक कारण भारत–पाक विभाजन भी रहा है। विभाजन त्रासदी की सच्चाई को ''असगर वसाहत'' जी ने 'जिस लाहौर नई देखा....' में प्रस्तुत किया है। यह नाटक विभाजन की त्रासदी के अलावा एक स्तरपर मानवीय संबंधो की दास्तान भी है। जो हिंदू – मुस्लिमों के बीच समन्वय स्थापित करने की गहरी पडताल करता है। देश के लिए यह नाम आज के समय में बहुत महत्त्वपुर्ण है।

इस प्रकार नाटका में राष्ट्रीय एवता एवं सांप्रदायिक सद्भावना विविध पहलुओ साहित्यकारों ने उजागर किया है। इसलिए कहते है, की साहित्यकार समाज एक अंग होता है।

51. धूमिल के काव्य में सांप्रदायिक सद्भाव एवं राष्ट्रीय एकता.

डॉ. नाजिम शेख
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
श्री. विजयसिंह यादव कला एवं विज्ञान महाविद्यालय,
पेठ–वडगाव जि. कोल्हापुर.

धूमिल साठोत्तरी पीढी के उन कवियों में रहे जिनकी कविता सामाजिक यथार्थ और अपनी आंतरिक पीडा के लिए पहचानी जाती है। उनका समग्र काव्य लोककल्याणकारी भावना से परिपूर्ण है। स्वातंत्र्योत्तर भारत की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों को उनकी कविताओं में अभिव्यक्ति मिली है। मजदूर, किसान, दलित तथा नारी जीवन का यथार्थ चित्रण उनकी कविताओं में मिलता है। धूमिल की हर कविता पृथ्गजनों के प्रति मानवी संवेदना प्रकट करती है। प्रजातंत्र की विफलता, राजनेताओं की स्वार्थीवृत्ति और सत्तापिपासा, शोषण के विरूध्द संघर्ष की प्रेरणा जैसी बातों को उनकी कविताओं में अभिव्यक्त किया गया है। धार्मिक आडम्बर एवं विसंगति इस देश की सनातन समस्याओं में से एक है। प्राचीन काल से यहाँ धर्म के नाम पर कुकृत्य एवं अनाचार का बोल–बाला रहा है। धूमिल का यह मानना था कि धर्म के नाम पर जहालत और अंधविश्वास को बढावा मिलता है। इससे जनता में सांप्रदायिकता बढती है। धूमिल ने इन तथाकथित धर्म के सभी नियमों का, पध्दतियों का विरोध किया। धूमिल के सम्बन्ध में उनके मित्र राजशेखर जी ने लिखा है – ''साहस के सांचे में ढला हुआ धूमिल, अदमकद इस्पात था। बचपन का जिद्दी धूमिल, जात–पात, भूत–प्रेत और धार्मिक अंधविश्वासों में अपनी अनास्था के कारण, पिता की दृष्टि में बराबर 'नास्तिक' रहा।'' (कल सुनना मुझे–पृ. 11)

भारतीय समाज में धर्म का प्रभाव रहा है। धर्म की भ्रामक कल्पना से मानव विचारहीन हो गया। सांप्रदायिकता धर्म का सबसे घिनौना रूप है। धूमिल कहते हैं –

''वे खेतों में भूख और शहरों में
अफवाहों के पुलिन्दे फेंकते हैं
देश और धर्म और नैतिकता की
दुहाई देकर
कुछ लोगों की सुविधा
दूसरों की 'हाय' पर सेंकते हैं'' (संसद से सडक तक – पृ. 110)

भारतीय समाज में धर्म के नामपर जाति–पाँति में देश विखंडित हो रहा है। परिणाम हमारे सामने हैं, समाज में अंधविश्वास को बढावा मिल रहा है। सांप्रदायिकता एक जहर की तरह फैल रही है। धर्म के गलत प्रचार के कारण ही वर्तमान का मानव सही धर्म नहीं समझ रहा है। धूमिल कहते हैं

''भूत–कालीन क्रियाओं से
घिरे हुए लोग
समय की अर्थी उठाये चल रहे हैं।'' (कल सुनना मुझे – पृ. 8)

भारतीय समाज की यह पुराणी मान्यता रही है कि लोग अतीत की ओर देखते हैं वर्तमान की ओर नहीं। पूरा समाज निरर्थक अमानवीय रूढियों एवं निर्जीव अर्थहीन परम्पराओं के पीछे दौड रहा

है। धर्म के नामपर चलाए जा रहे बडे–बडे मठ, धार्मिक संस्थान, मंदिर और मस्जिदों के अनावश्यक वास्तु–शिल्प पर धूमिल ने करारा व्यंग्य किया है –

''मैंने अचरज से देखा कि दुनिया का
सबसे बडा बौध्द मठ
बारूद का सबसे बडा गोदाम है
अखबार के मटमैले हाशिये पे
लेटे हुए, एक तटस्थ और कोढी देवता का
शान्तिवाद, नाम है ...
यह मेरा देश है ... (संसद से सडक तक – पृ. 104)

बौध्द मठ धर्म का प्रतीक है, लेकिन आज धर्म के नामपर धार्मिक स्थलों में भी विनाशकारी शक्तियाँ छिपी हुई हैं। मानवता की दुहाई हर धर्म देता है लेकिन धर्म के ठेकेदारों ने धर्म को बदनाम कर उसका विकृत रूप समाज के सामने प्रस्तुत किया है। वर्तमान में धर्म के नामपर अमानवीय व्यवहार जगह–जगह हो रहे हैं। आजतक धर्म के नामपर ही पूरी दुनिया में बडे–बडे नरसंहार हुए हैं। धूमिल का यह मानना रहा कि धर्म के इन तथाकथित ठेकेदारों के कारण ही कोई भी धर्म बदनाम होता है। धूमिल ने धर्म के इन ठेकेदारों का डटकर विरोध किया –

''लेकिन मुझे लगा कि विशाल दलदल के किनारे
बहुत बडा अधमरा पशु पडा हुआ है
उसकी नाभी में एक सडा हुआ घाव है
जिससे लगातार भयानक बदबूदार मवाद
बह रहा है
उसमें जाति और धर्म और सम्प्रदाय के और
पेशा और पूंजी के असंख्य कीडे
बिलबिला रहे हैं।'' (संसद से सडक तक – पृ. 19)

जिस समाज में कोई चेतना शेष नहीं है उस समाज को कवि अधमरा पशु कहते हैं। इस समाज में जाति, धर्म, संप्रदाय, पेशा और पूंजि के किडे रेंग रहे हैं। आज के तथाकथित विकसित समाज में पूरे विश्व में रोज न जाने कितने लोग धर्म का शिकार हो रहे हैं। धूमिल ने धर्म के इस अमानवीय रूप का अपनी कविताओं के माध्यम से कडा विरोध किया –

''धर्म के लिए मरे हुए लोगों के नाम
बात सिर्फ इतनी है
स्नानघाट पर जाता हुआ हर रास्ता
देह की मण्डी से होकर गुजरता है।'' (संसद से सडक तक – पृ. 76)

वर्तमान युग में धर्म की असलियत को नकारा जा रहा है और धर्म के विकृत रूप को प्रस्तुत किया जा रहा है। सुविधा परस्त लोग अपने स्वार्थ के लिए यह सब करते हैं। राजनेताओं ने और धर्म के ठेकेदारों ने दो जातियों के बीच की खाई को हमेशा बरकरार रखा। सांप्रदायिकता एक ऐसा सामाजिक जुनून है, जिसकी जडें हमारी धर्मान्धता में छिपी रहती हैं जो पूरे परिवेश पर छा जाती हैं। धूमिल सांप्रदायिकता को जहर की तरह स्वीकारते हैं –

''फन फटकारता हुआ
एक दोमुंहा विषधर

रेंग रहा है
रोजी के नाम पर
रोटी के नाम पर
जगह जगह जहर
फेंक रहा है।'' (संसद से सडक तक – पृ. 94)

जहर की तरह सांप्रदायिकता का जुनून पूरे समाज में फैल रहा है। धर्म को कुछ लोगों ने अपनी रोजी रोटी का साधन बना लिया है। धूमिल ने धर्म बेचनेवालों के विरोध में कडा रोष प्रकट किया है। जबतक मनुष्य धर्म के सही रूप को नहीं पहचानता तबतक वह सांप्रदायिकता के इस वातावरण में जीने के लिए अभिशप्त है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि धूमिल ने अपनी कविताओं के माध्यम से विकृत धर्म का और सांप्रदायिकता का कडा विरोध किया है। उन्होंने समाज में प्रचलित रूढि एवं परम्पराओं पर, धर्म एवं जाती–पाति के भेदभाव पर, कुरितियों पर मर्मभेदी प्रहार किये हैं। उनकी कविताओं में असीम आत्मविश्वास है, वे प्रकाश के पुजारी हैं, आशावादी स्वर उनकी कविताओं में दिखाई देता है। वे अपनी कविताओं के माध्यम से वर्तमान विकृत धार्मिकता को बदलना चाहते हैं। वे खुद भी अपना जीवन धर्म और जाति के बन्धनों से मुक्त होकर जीते थे। उनके सम्बन्ध में उनके अनुज कन्हैयाजी लिखते हैं –''वे धर्म के ढोंग में विश्वास नहीं करते थे। चोटी तथा जनेऊ धारण करना वे पसंद नहीं करते थे। छुआछुत को वे नहीं मानते थे। मुसलमानों के घर का खाना खाने के लिए ईद के दिन घर पर खाना नहीं खाते थे। ईसाईयों के घर भी खाने के लिए वे नहीं हिचकते थे। चमार तथा ब्राहमण उनके लिए बराबर थे, बल्कि ईमानदार तथा मेहनतकश उनके लिए बेईमान तथा दूसरों की कमाई पर जीनेवाले ब्राहमण से कई लाख गुणा अच्छा था, उन्हें मानवतावाद अच्छा लगता था, वे देखने में एक साधारण आदमी जान पडते थे।'' (आलोचना फरवरी 1975 – पृ. 55) स्पष्ट है धूमिल ने समाज में बढ रही सांप्रदायिकता का कडा विरोध कर सांप्रदायिक सदभाव एवं राष्ट्रीय एकता को बढावा देने का महत्वपूर्ण कार्य किया। कविता के विषय सांप्रदायिक सदभाव की भावना, राष्ट्रीय एकता का महत्व और इसे अभिव्यक्त करने के लिए ईमानदार शब्द योजना यही वह कारण हैं कि धूमिल साठोत्तरी हिंदी कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर रहे।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

52. हिंदी संत साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव

प्रा. सौ. पल्लवी भुपेंद्र पाटील
हिंदी विभाग, पी.एन.पी कॉलेज वेष्वी, अलिबाग

''आधुनिक युग में विज्ञान का बहूत अधिक प्रचार और प्रसार हो चुका है। मानव चाँद पर पहूँच गया है और अन्य ग्रहों पर पहुँचने का प्रयास कर रहा है। प्रगतीवादियों के साहित्य ने तो ईष्वर के अस्तित्व को ही नकार दिया है।'' ऐसे समय में मध्यमकालीन चर्चा, ईष्वर भक्ति की चर्चा भला किसे अच्छी लगेगी। कौन पढेगा इनके साहित्य को? लेकिन वे लोग भूल जाते है। भारतीय सन्त साहित्य केवल जीव, जगत्, ब्रम्ह, माया तक ही सिमट कर नहीं रहा है, अपितु वे साढ़े पाँच सौ वर्ष पहले आज के समय में काम आने वाली बातें भी कहता रहा है।

भारतीय सन्त साहित्य वर्तमान समय में अधिक उपयोगी एवं प्रासंगिक है। इसका कारण यह है कि भारतीय परम्परा में महान संतों का आविर्भाव एक स्थायी महत्व रखता है। सन्त साहित्य का महत्व सिर्फ आध्यात्मिक ज्ञान की उपलब्धि तक ही सीमित नही है, प्रत्युत उसके प्रकाष में भौतिक जीवन में 'षुध्द आचरण, सामाजिक सन्तुलन, भावात्मक नियंत्रण, राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सद्भावना आदि के लिए भी अद्भुत प्रेरक षक्ति निहित है। इसकी पृष्ठभूमी अध्यात्मिक दर्षन पर आधारित है।

सभी भारतीय संतों ने एक स्वर में धर्म, सत्य, अहिंसा, अस्तेय, संतोष तथा दया पर अत्यधिक जोर दिया है। कबीर में धर्मापासना की उन समस्त पद्धतियों का विरोध है जो आदमी को आदमी से दूर रखती हो, जो धर्म और जाति के नाम पर एक–दुसरे को बाँटती हो और घृणा करना सिखाती हो। कबीर के यहाँ ब्राम्हण, मूर्तिपूजा, वेद, पुराण, जाति–पाँति आदि का विरोध सबल रूप में है। आगे चलकर कई संतों ने इस बात को स्वीकारा और उसका विरोध भी किया है। भारतीय सन्त मत का मानवीय रूप यह है कि यह मनुष्य से बड़ा किसी धर्म को नही मानता। इसलिए कबीर 'नाम कबीरा जाति जुलाहा' तो कहते हैं लेकिन अपना धर्म मुसलमान होने को कहीं प्रचारित नहीं करते बल्कि कहते है ''ना हिंदू ना मुसलमान'' । वे यह कहकर अपने मानव धर्म की स्थापना करते है जो इन सब धर्मो से उपर है। वर्णव्यवस्था को महत्व देने वाले ब्राम्हणवाद को चुनौती देने के लिए कबीर का मार्ग प्रषस्त था । फलतः कबीर ने अपने साहित्य में ब्राम्हणत्व का गर्व करने वाले ब्राम्हणों को खुली चुनौती दी तथा उन्हें खरी खोटी सुनाने में भी नहीं हिचकिचाए । उन्होंने कहा है –

''जो ब्राम्हण ब्राम्हणी जाया ।
ते आन बाट काहे नहीं आया ।''

कबीर साहित्य की प्रासंगिकता षीर्षक निबन्ध डॉ. 'षुकदेव सिंह लिखते हैं – '' हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिकता के खिलाफ आवाज उठाने वाले पहले सन्त, विचारक और कवि कबीर ही है। रूढ़ धार्मिक, षास्त्रों, पूजा–उपासना सम्बन्धी जड़ताओं। मंदिर, मस्जिद विषयक अंधआस्थाओं, जाति–वर्ण सम्बन्धी फर्को और तमाम तरह के भारतीय जीवन के अन्तर्विरोधों को उन्होंने निर्ममता के साथ अस्वीकार कर दिया था ।''

सन्त साहित्य द्वारा देष, समाज और व्यक्ति की भलाई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अवष्य होती है। इनके उपदेष प्रेरणादायक होते है और मार्गदर्षक का भी काम करते है। सन्त साहित्य के अन्तर्गत सूरदास, तुलसीदास, जायसी और कबीर है। इनके अतिरिक्त नानक, दादू, मीरा, सुन्दरदास, रैदास, मलूकदास, पलटूसाहब, भीखा साहब, दया साहब, सहजोबाई आदि की रचनाएँ आ

जाती है । भक्ति और नैतिकता की प्रधानता इन सबों की रचनाओं में पाई जाती है । सन्त नानक कहते हैं – ‘‘दीनदयाल सदा सुख भजन

तासों मन को लगाना

साधो यह जग भरम भुलाना।

रामनाम का सुमिरन छोड़ा

माया हाथ बिकाना,

नानक यह जग भरम भुलाना ।’’

सिक्ख सम्प्रदाय के माननीय गुरू सन्त नानक ने अपनी भक्तिपूर्ण रचनाओं द्वारा साम्प्रदायिकता मिटाने, देषभक्ति का प्रचार करने और आध्यात्मिक उत्थान हेतु अथक प्रयत्न किया है।

सन्त तुलसीदास ने भी एकता की भावना को मजबूत करते हुए कहा है–

‘‘ तुलसी इस संसार में भाँति–भाँति के लोग ।

सब से हिलमिल चलिए, नदी –नाव संयोग।’’

इसी तरह महाराष्ट्र के संत–संत ज्ञानेष्वर, संत एकनाथ, संत तुकाराम, संत रामदास, संत नामदेव, आदि ने भी दक्षिण भारत में भक्ति– भावना का प्रचार कर मानवता की सेवा की और जातिभेद, अंधविष्वासों का खंडन किया है । संन्त साहित्य ने हिन्दू समाज के दलित वर्ग में स्वाभिमान की भावना उत्पन्न की। अछूतोद्धार की भावना, हिन्दू–मुस्लिम ऐक्य, धार्मिक आडमबरों के प्रति उपेक्षा, भक्ति का लौकिक दृष्टिकोन आदि बातें संतों की ही देन मानी जा सकती है।

इस प्रकार निष्चित रूप से भारतीय सन्त साहित्य आज भी प्रासंगिक है। जिस साहित्य के माध्यम से संसार की असारता, मानव देह की दुर्लभता, मत मतान्तर के भेद में न उलझना, लोक जीवन में परिव्याप्त अंधविष्वासों, पाखंडों का खण्डन करते हुए तत्कालीन समाज को अज्ञान के अंधकार से मुक्ति दिलवाई है। उसे समय रहते संभलने की चेतावनी दी तथा मूल तत्व को सींचने की बात कहकर आपसी सद्भाव बनाने प्रेम से रहने, प्रत्येक जीव पर दया भाव दिखलाने, अपराधी को क्षमा कर देने, सन्तोष वृत्ति अपनाने की मानव मूल्य रूपी संजीवनी बूटी लोक मानस के लिए प्रस्तुत की ।

ज्ञानेष्वर महाराज ने तो पसायदान में विष्वकल्याण की मनोकामना की है। लोकहित, लोककल्याण एवं गरीबों का दु:ख दर्द दुर होने की कामना की है। भारतीय संस्कृति हमेंषा ‘विष्वकुटुम्बकम’ की प्रेरणा देती है। ऐसे ही ज्ञानेष्वर ने पसायदान में कहा है –

‘‘दुरितांचे तिमिर जाओ,

हे विष्व स्वधर्म सुर्य पाहो।’’

ज्ञानेष्वर ने विष्व को सर्वसुखी होने की कामना की। विष्व में षांती, सद्भावना, प्रेम और परस्पर मानव में दया रखने के लिए पसायदान के माध्यम से प्रार्थना की है।

अतः कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि तत्कालीन पषु– मानव को सही मनुष्य बनने का रास्ता दिखलाकर उसे सम्पूर्ण मानव बनाने का प्रयास किया जो आज भी उतना ही आवष्यक है जितना कि उस युग में था। अतः कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि भारतीय संत साहित्य जितना कारगर उसके युग में था, उतना आज के युग में भी हमें दिखाई देता है।

संदर्भ :– सांप्रदायिक सद्भाव की कहानियाँ – गिरिराज षरण

संत साहित्य की आधुनिक अवधारणाएँ – डॉ. सुनिल कुलकर्णी पृ. 131, अतुल प्रकाषन,

भक्तिकाव्य और वर्तमान समय – लेख डॉ. सूरज पालीवाल. पृ. 100

मराठी संत साहित्य की प्रासंगिकता – पृ.137

53. हिंदी उपन्यास और सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. दीपक रामा तुपे
सहायक प्राध्यापक,
दत्ताजीराव कदम आर्ट्स, साइन्स एंड
कॉमर्स, इचलकरंजी।

भारत देश आजाद हो गया, लेकिन अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति ने भारतीय एकसंघ समाज में सांप्रदायिकता के बीज बो दिए। देश विभाजन के कारण सांप्रदायिकता को बढ़ावा मिला। भारत देश में आज सांप्रदायिकता जटिल सामाजिक समस्या बन गई है। बीसवीं सदी के अंतिम दशक के उपन्यासकारों ने सांप्रदायिक भयावहता के साथ–साथ सांप्रदायिक सद्भाव को भी प्रस्तुत किया है। भारत में अनेक धर्म, जाति, वर्ग, वर्ण और भाषा दिखाई देते हैं। हर व्यक्ति अपनी जाति, धर्म, वर्ग, वर्ण का ही विचार करता हुआ नजर आता है। यही प्रवृत्ति आज समाज को तोड़कर अलग–अलग कर देती है। एक स्वथ्य समाज उसे कहा जाता है, जो मिल–जुलकर, शांतिपूर्ण रहें। सांप्रदायिकता को दूर करने के लिए हमारी संकीर्ण सोच को बढ़ाना होगा। अगर हमारी सोच विस्तृत और सकारात्मक हो गई तो 'वसुधैव कुटुंबकम्' और सार्वभौमिक विचार–प्रणाली विकसित कर सकेंगे। 'बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों में चित्रित सांप्रदायिकता' के अंतर्गत अमृतलाल मदान का 'सिंधुपुत्र', उषा प्रियंवद का 'वे वहाँ कब्द है', अब्दुल बिसमिल्लाह का 'मुखड़ा क्या देखे', गीतांजलि श्री का 'हमारा शहर उस बरस', राजीव कुमार का 'टुकड़े', प्रताप सहगल का 'अनहदनाद', ज्योतिष जोशी का 'सोनबरसा', कमलेश्वर का 'कितने पाकिस्तान' आदि उपन्यासकारों ने सांप्रदायिक भयावहता के साथ–साथ सांप्रदायिक सद्भाव को भी प्रस्तुत किया है।

कुछ लोग इन्सानीयत की हिफाजत करते हैं। इन्सानीयत के खातिर अपनी जिंदगी दाँव पर लगाते हैं। उसमें वे अपनी जान की भी परवाह नहीं करते, लेकिन इन्सानीयत की परत जिंदा रखते हैं। परिणामतः लोग उन्हें सलाम करते हैं। व्यक्ति चाहे हिंदू धर्म का हो या मुस्लिम धर्म का हो। इसी स्थिति का प्रमाण अमृतलाल मदान के 'सिंधुपुत्र' उपन्यास में मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास का नायक अमर के पिता नंदलाल सरकारी कर्मचारी है। भारत–पाकिस्तान विभाजन के बाद नंदलाल अपने परिवार समेत भारत आता है। भारत में पाँच साल रहने के बाद नंदलाल अपने परिवार के साथ दिल्ली जंक्शन पर लाहौर से आने वाली रेलगाड़ी का इंतजार करता है। लाहौर से आनेवाली रेलगाड़ी से ख्वाजा साहिब आनेवाले थे। जैसे ही ख्वाजा साहब रेलगाड़ी से उतरते हैं वैसे ही दो–चार लोग उनसे गले मिलते हैं। दो–चार लोग उनके हाथ–पाँव चुमने के लिए नीचे झुक जाते हैं। यह सारा मिलन का नजारा देखकर एक रेल्वे कर्मचारी नंदलाल से पूछता है कि आप हिंदू होकर मुसलमान मेहमान ख्वाजा साहिब का इतना आदर सत्कार किसलिए कर रहे हैं? प्रत्युत्तर में नंदलाल कहते हैं कि ख्वाजा साहिब एक मुसलमान है, किंतु हिंदुओं के फरिश्ता है। आगे नंदलाल उस रेल्वे कर्मचारी को संबोधित करता है कि "जब हमारे कस्बे की तरफ बलवाइयों की भीड़ बढ़ी तो इन ख्वाजा साहिब ने उन्हें रास्ते में रोक लिया। अपनी दोनों बाहे फैलाकर खड़े हो गए...इस तरह... और बोले कि खबरदार, एक भी हिंदू बच्चे का बाल भी बाँका हुआ तो...पहले मेरी लाश पर से गुजरना होगा।"[प] स्पष्ट है कि ख्वाजा साहिब सभी धर्मों को समान मानते हैं। ख्वाजा साहिब एक मुस्लिम होते हुए भी मानवता के मसीहा है। वे विभिन्न जाति–धर्मों से अधिक मानव धर्म को महत्वपूर्ण देते हैं।

हर व्यक्ति संकट की घड़ी में या मदद करते समय मानवता को प्रधानता देता है। वह यह

नहीं देखता की वह किस जाति तथा धर्म का है। उषा प्रियंवद कृत 'वे वहाँ कैद हैं' उपन्यास में इसी स्थिति का प्रमाण मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास का नायक चिन्मय हिंदुओं का नेता है। चिन्मय अपने मित्र अविनाश को शहर के हिंदुओं के घर एवं दुकानों पर त्रिशूल बाँटने की जानकारी देता है। तब अविनाश चिन्मय को हिंदू–मुस्लिम धर्म के लोगों के बीच भेदभाव न करने की बात समझाता है–"किसी अंधे को सड़क पार कराने से पहले क्या पूछोगे कि वह हिंदू है या मुसलमान? डाक्टर धर्म पूछकर दवा देगा? नीचे जो अपाहिज जीवन लेटा है वह किस धर्म का है?"[प] अविनाश का कहना है कि कोई भी धर्म श्रेष्ठ–कनिष्ठ नहीं होता। सभी धर्म समान होते हैं। व्यक्ति चाहे किसी भी धर्म का हो, उसे मनुष्य के रूप में अपनाना चाहिए।

देशविभाजन के पूर्व हिंदू–मुस्लिमों के लिए भारत देश एक परिवार जैसा था। देशविभाजन के बाद दोनों धर्म एक–दूसरे को भेड–बकरियों की तरह काटने को उतारु हो गए थे। तब हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरु सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने का संदेश देते हैं। इसका प्रमाण अब्दुल बिस्मिल्लाह लिखित 'मुखड़ा क्या देखे' उपन्यास में मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास का नायक अल्ली चुड़िहार है। जबलपुर में हिंदू–मुस्लिम लोगों के बीच दंगा हो जाता है। तब वही हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरु जी आए थे। पंडित जवाहरलाल नेहरु का भाषण सुनने के बाद हिंदुओं और मुसलमानों ने दंगा किया। अल्ली चुड़िहार का बेटा बुद्ध अपने पिता अल्ली चुड़िहार को पंडित नेहरू के भाषण का अवगत कराते हैं, "हिंदुओं से बोले–मुसलमानों का क्या है, वे तो बकरे–बकरियाँ हैं। तुम लोग जब चाहो उन्हें काटकर खा सकते हो। मगर यह न भूलो कि वे भी तुम्हारे ही घर के सदस्य है। क्या अपने ही घर के सदस्यों को मारने में तुम्हें दया नहीं आएगी? और हिंदुओं ने दंगा बंद कर दिया।"[प] नेहरु जी ने सांप्रदायिक नीति का विरोध कर मानवता की हिमायत की है। उन्होंने हिंदू–मुस्लिम एक–दूसरे को शत्रु मानने के अलावा परिवारिक सदस्य के समान व्यवहार करने का संकेत दिया है। हिंदू–मुस्लिम एकता की मिसाल परिवार, समाज और राष्ट्र में भाईचारे को बढ़ावा देती है।

हमारे यहाँ हिंदू–मुस्लिम संस्कृति का मिलाफ भाईचारे को बढ़ावा देता है। हिंदू–मुस्लिम संस्कृति एक–दूसरे के रंग में रंगी हुई है। इस स्थिति का प्रमाण गीतांजली श्री कृत 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास के पात्र हनीफ और शरद विश्वविद्यालय में अध्यापक की नौकरी करते हैं। हनीफ और शरद बचपन से ही लंगोटिया यार है। हनीफ अपनी पत्नी श्रुति को बताता है कि शरद और मैं (हनीफ) बचपन से दोस्त है। वे दोनों किसी धर्म को श्रेष्ठ–कनिष्ठ नहीं मानते। इसकी दुहाई देते हुए हनीफ श्रुति को कहता है, "यह आधा मुसलमान था, मेरे संग बचा आधा भी रँग गया। मैं आधा हिंदू था, इसके संग–सलामत आधा बदल गया। अब बूझो पहेली तो जान, हमम कौन मुसलमान है, कौन हिंदू?"[प] हनीफ हिंदू–मुस्लिम भेदभाव नहीं मानता बल्कि मानवतावादी विचारों का समर्थन करता है। यदि इन्सान धर्म से ऊपर उठ जाता है तो निश्चय ही सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देता है।

राजीव कुमार कृत 'टुकड़े' उपन्यास में मोहमदिया गाँव में हिंदू–मुस्लिम लोग बराबरी के अनुपात में रहते हैं। मोहमदिया गाँव के मुस्लिम लोगों में सबसे बुजुर्ग रशीद जैदी है। 18–19 साल के गौस मियाँ रशीद मियाँ के बेटे आरिफ की बड़ी फूफी के लड़के है, जो रशीद मियाँ के घर में ही रहते हैं। गौस मियाँ मुस्लिम लीग के कट्टर समर्थक है, जो हमेशा मो. अली जिन्ना के विचारों से प्रभावित है। जब गौस मियाँ लोगों को अलग पाकिस्तान के मुद्दों पर उकसाते हैं तभी गाँव की मस्जिद की रखवाली करनेवाले मौलवी साहब प्रत्युत्तर में गौस मियाँ और उनके साथ उपस्थित गाँव

वालों को संबोधित करते हैं, “चुप रहो नामुरादों, कौन से देश की बात कर रहे हो। इहा हमार बाप–दादा मरि गए। कब्र मा दफन है। उनका देश अब अलग करोगे। हम अंधा हुई और लकड़ी टेक–टेक कर पूरा गाँव घूमत हई, का अब हमारे जैसे अंधे के दूसरे जगह ले जाकर कहोगे कि ई देश तौहार। जिन भाई लोगों के साथ इतना उम्र गुजर गई, ऊ सब पराया होई गए।”[प] आज मौलवी साहब जैसे लोगों की समाज को सख्त जरूरत है जो सभी धर्मों के लोगों को एकसमान मानते हैं। आज हम हमारे राष्ट्र में सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने के लिए मौलवी साहब जैसे सार्वभौमिक विचारों के व्यक्तियों की नितांत आवश्यकता है।

प्रताप सहगल लिखित ‘अनहदनाद’ उपन्यास का नायक जगतनारायण का बेटा शिवा की दोस्ती शायर साहिल से हो जाती है। साहिल शिवा को देश–विभाजन की स्थिति को अवगत कराता है। इस दौरान हमारे परिवार वालों ने धर्म परिवर्तन कर हिंदू धर्म को स्वीकार किया। साहिल शिवा को बताता है कि पहले मेरा नाम जावेद था, जावेद से मैं जगदीश हो गया और अब्बा का नाम असलम से अविनाश कर दिया। अम्मा का नाम पाकीजा से दमयंती हो गया। बस, तब से हम हिंदू हो गए। शिवा साहिल को कहता है, “मेरे लिए तुम न जावेद हो, न जगदीश, सिर्फ साहिल हो। मेरे यार। एक अज़ीम शायर।”[प] शिवा किसी एक धर्म को महत्व नहीं देता बल्कि मानव धर्म को महत्व देता है।

कुछ लोग मानव–मानव के बीच दो वर्गों, पंथों, जातियों और धर्मों में बाँटते हैं, जिसके कारण इन्सान–इन्सान में दरारें पैदा हो गई है। लेकिन कुछ मानवता के हिमायती व्यक्ति हिंदू–मुस्लिम धर्म नहीं मानते और धार्मिक बँटवारा करने वाले को भी खुलेआम बताते हैं। इसका प्रमाण ज्योतिष जोशी लिखित ‘सोनबरसा’ उपन्यास में मिलता है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र बालेश्वर चौधरी हमेशा हिंदू–धर्म के हिमायती है। बालेश्वर चौधरी का बेटा शिवप्रताप पिता के बैरी शाहबाज खान की बेटी नादिरा से प्यार करता है। शिवप्रताप का मित्र रमेश शिवप्रताप को नादिरा के मुस्लिम होने की बात बताता है। तब प्रत्युत्तर में शिवप्रताप रमेश को संबोधित करते हैं, “मुझे ये हिंदू–मुसलमान आदि बात पसंद नहीं। ये इन्सान के अलग–अलग वर्ग है। इनमें परस्पर भेद को मैं पसंद नहीं करता।”[प] शिवप्रताप सभी धर्मों को समान रूप में मानता है। चाहे हिंदू हो या मुस्लिम। सोनबरसा गाँव के बालेश्वर चौधरी और शाहबाज खान दोनों के हिंदू–मुस्लिम धार्मिक विद्वेष के कारण गाँव के हिंदू–मुस्लिम लोगों में बनी हुई तनाव की स्थिति गाँव के ब्राह्मण कृष्णकांत मिश्र को खटकती है। कृष्णकांत मिश्र गाँव में घूम–घूमकर बताते हैं कि आपसी तनाव अच्छा नहीं है। मानवतावादी विचारों के कृष्णकांत मिश्र गाँव के लोगों को कहते हैं, “सभी धर्मों के भगवान अगर है तो वह एक ही हो सकते हैं। भगवान में श्रद्धा हो तो अपने भीतर उसे खोजना चाहिए। हत्या और खून–खराबे से भगवान खुश नहीं हो जाएँगे। उन्हें दुःख होगा कि हमारे ही बनाए गए मनुष्य आपस में लड़कर मर रहे हैं।”[प] स्पष्ट है कि कोई धर्म हिंसा करने की सीख नहीं देता, बल्कि मानवतावाद की हिमायत करता है। खून–खराबे से भगवान कभी खुश नहीं होते। शिवप्रताप और नादिरा के प्यार की जानकारी बालेश्वर चौधरी के घर मालूम होती है। बालेश्वर चौधरी अपने बेटे शिवप्रताप को नादिरा को भूलने की सलाह देते हैं। शिवप्रताप अपने पिता बालेश्वर चौधरी को कहता है, “नादिरा के मुसलमान होने और आपके दुश्मन की बेटी होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। वह मनुष्य है और हमने उसे पुरी तरह परख लिया है।”[प] स्पष्ट है कि शिवप्रताप धर्म भेद नहीं मानता। सांप्रदायिक सद्भाव के लिए वह प्रेम को ही सर्वश्रेष्ठ मानता है।

कमलेश्वर कृत ‘कितने पाकिस्तान’ उपन्यास में भारत–पाकिस्तान विभाजन के पूर्व पेशावर

छावनी में हिंदू–मुस्लिम सैनिक भाईचारे के साथ काम करते थे। देश विभाजन के बाद पेशावर छावनी में अपने हिंदू–मुस्लिम साथियों को विदा करते हुए कर्नल इदरीस कहते हैं, "मेरे साथी अफसरान और जवान दोस्तों! यह बँटवारा हमारे दिलों को नहीं बाँट सकता...दूसरी आलमी जंग में हमने साथ–साथ खून बहाया है। अपने शहीदों को हमने साथ–साथ सलाम किया है। फतह के परचम हमने साथ–साथ फहराए है...आप कहीं भी जाएँ, हमारा खून और शहादत का रिश्ता नहीं टूट सकता! क्योंकि हम भाई–भाई है और हमेशा रहँगे!"[५] कर्नल इदरीस देशविभाजन की त्रासदी से विभक्त हो रहे साथियों को एकता का संदेश देता है। साथियों के दिलों को तोड़नेवाले इस बँटवारे से हम बँट नहीं जाएँगे बल्कि भाई–भाई बनकर सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने का संदेश देते हैं।

बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासो में सांप्रदायिक सद्भाव की सशक्त पहल की है। सभी धर्मों में एकता स्थापित करने के लिए 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को अपनाना होगा। होली, दीपावली, दशहरा, दुर्गा पूजा, क्रिसमस, राक्षा बंधन, ईद और मुहर्रम जैसे भारतीय त्यौहार हिंदू–मुस्लिमों तथा अमीरों और गरीबों के साथ साझा रुप से मनाए जाएँ ताकि अलग–अलग धर्मों के बीच सांप्रदायिक सद्भाव बना रहें। कबीर, नानक, दादू, रैदास जैसे संतों के विचारों का प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए। जहाँ दंगा–फसाद और हिंसा की संभावनाएँ हैं वहाँ 'नागरिक एकता मंच' तथा शांति समितियों का गठन किया जाना चाहिए, ताकि भाईचारे की भावना को बढ़ावा मिल जाए। समाज में शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना जरुरी हो गया है। फलस्वरूप समाज में जागरुकता उत्पन्न हो सके और नैतिक शिक्षा की स्थापना हो जाए।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

54. 'हमारा शहर उस बरस' में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

सविता योहान मकासरे
शोधछात्रा हिंदी विभाग
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय
पुणे।

मनुष्य–मनुष्य के बीच भेद–भाव का सर्वाधिक विकृत रूप सम्प्रदाय भेद में देखा जा सकता है। कुछ दिन पूर्व तक लगता था कि भारत विभाजन के बाद की साम्प्रदायिकता का विष अब लगभग समाप्त हो गया किंतु हाल के वर्षों में हुए साम्प्रदायिक दंगों ने एक बार फिर सोचने–विचारने को मजबूर किया है। साम्प्रदायिकता आज देश की प्रमुखतम समस्याओं में से एक है। हिंदू और मुसलमान के आपसी मतभेद तथा वैमनस्य से स्वतंत्रता के तुरंत बाद के इतिहास के बहुत से पन्ने रक्तरंजित है। आजादी तो मिल गई लेकिन आजादी के साथ–साथ देश भारत और पाकिस्तान में विभाजित हो गया। विभाजन के समय सांप्रदायिक दंगों की जो आग भडक उठी थी उस आग ने न जाने कितने लोगों के प्राण लिये, कितने लोग बेघर हो गए और न जाने कितनी स्त्रिया बलात्कारित, अपमानित हुई। आज हमें आजादी मिल के 67 वर्षे हो गए है लेकिन आज भी हमारे देश में सांप्रदायिक दंगे होते है।

सांप्रदायिकता का संबंध धर्म के प्रति अंधभक्ति या कट्टरता से है। सांप्रदायिकता एक प्रकार की संकीर्ण धार्मिक दृष्टि है जो अपने दूसरे धर्म से बेहतर बताती है और दूसरे धर्मों के प्रति भेदभाव करती है। भारत में सांप्रदायिकता पूर्ण रूप से धार्मिक अधविश्वास और अंधभक्ति से संबंधित है। स्मिथ के अनुसार–''सांप्रदायिकता व्यक्ति अथवा समूह वह है जो अपने धर्मिक या भाषा–भाषी समूह को एक ऐसी पृथक राजनीतिक तथा सामाजिक इकाई के रूप में देखता है जिनके हित अन्य समूहों से पृथक होते हैं और जो अक्सर उनके विरोधी भी हो सकते है।''1

सांप्रदायिकता से भारत में समय–समय पर जान तथा संपत्ति की हानि हुई है। सामाजिक तनाव बढे हैं। 1947 के विभाजन तथा दंगों को देश आज तक भोग रहा है। इसके पश्चात् सन् 1984 के दंगे और अब राम जन्मभूमी बाबरी मस्जिद विवाद इसका ज्वलंत उदाहरण है। हमारे देश में धर्म लोगों की भावनाओं के साथ जुड गया है। इसलिए जब धर्म की बात आती है तो लोग आग बबूला हो जाते है। 67 वर्षे बीत जाने पर भी हम देश में स्थैर्य नहीं ला सके। गीतांजली श्री ने इस सांप्रदायिकता की समस्या को मानवीय संवेदना के साथ साहित्य से जोडा है तथा राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव लाने का प्रयास किया है।

गीतांजली श्री का 'हमारा शहर उस बरस' यह उपन्यास सांप्रदायिक दंगों पर आधारित है। इस उपन्यास में एक मठ, एक विश्वविद्यालय और एक परिवार को केंद्रीय विषय के रूप में प्रस्तुत किया है। हनीफ, शरद, श्रृति और दद्दू इस उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं। श्रृति हनीफ की पत्नी है और दद्दू शरद और श्रृति के पिता है। हनीफ और शरद विश्वविद्यालय के जाने माने प्रोफेसर है और श्रृति लेखिका है ये सभी बुद्धिजीवी वर्ग है। इसी बीच भारत देश के अनेक शहरों में सांप्रदायिक दंगे भडक उठते है। हनीफ और शरद का शहर भी इस सांप्रदायिकता की आग से नहीं बच पाता।

इस सांप्रदायिकता की आग से शहर झूलस रहा है। यह जो आग है पहले शहरों में थी अब घर तक पहुॅच चुकी है। शहर में अब कृर्यू लगा दिया है। भीड भरा शहर आज सुनसान पडा है। लोगों के दिल में दहशत बैठी है कि पता नहीं कहा कब क्या हो जाएगा। कब बम फटेगा कब लोग

दंगों पर उतर आएंगे। खबरें लगातार जारी है जो घटित घटनाओं का ब्यौरा दे रही है। लोग घरों से बाहर नहीं निकल रहे।

विश्वविद्यालय के बुद्धिजीवी लोग अपनी–अपनी तरफ से इस सांप्रदायिकता को रोकने का प्रयास करते है। शरद और हनीफ हर दिन अखबार में लेख लिखकर लोगों को जागृत करने का प्रयास करते है, कहीं सभा आयोजित करते है ताकि लोग इस सांप्रदायियक दंगों के और शिकार न बने। शरद सभा को संबोधित करते हुए कहता है–''मैं हिंदू हूँ। एक हिंदू होने के नाते मैं चुप नही रह सकता । मेरी विपुल संस्कृति, जो इस धर्म से जुडी है, मगर और स्रोतों से भी रची है,उसे झुझलाकर मेरा नाम तुम नहीं हडप सकते। तुम हिंदू नहीं हो। तुम अरसों–बरसों से जड पडे हिंदुत्व है ही नहीं। एक बिंदु पर अटकी कोई परंपरा हो ही नहीं सकती।

तुम अपनी गलती भी नहीं देख पा रहे। न मैं धर्म के खिलाफ हुँ, न आधुनिकीकरण के, न भारतीय सभ्यता के, न युनिफॉर्म कोड के, न यह सब परस्पर टकरानेवाले तत्त्व हैं वक्त और समाज के असर के साथ बदलने हुए और हमें मिलकर उन्हीं का सुघड सामंजस्य बनाना हैं।''2 शरद यह सब बातें लोगों से कह रहा था तभी भीड में से किसी ने पत्थर फेंका और शरद घायल हुआ सिर में से खून बहने लगा तो माईक हनीफ ने लिया और बोलने लगा–''सुनिए आप लोग हम बार –बार गलत शुरूआत कर रहें हैं। पीछे जाते हैं जुल्म खोजने। मैं चाहता हूँ शुरू यहॉ से करिए, अभी से, आज से खुबसुरती से।''

'मुसलमान हैं...हनीफ ...सभा में खुसरफुसर फैली। हॉ, मैं मुसलमान हूँ और मैं वह सब कह रहा हूँ जो शरद ने कहा। मैं सुधार की मॉग कर रहा हूँ, मुसलमानों में भी। सारे धर्मों के कट्टर तत्त्वों को बढने देने के खिलाफ बोल रहा हूँ। जिन हिंदुओं ने और जिन मुसलमानों ने मजहब को इतना घिनौना बना दिया है उन दोनों के खिलाफ बोल रहा हूँ।''3 लेकिन फिर किसी ने पत्थर फेंका और सभा तितर–बितर हो गई।

गीतांजली श्री ने इस उपन्यास में सांप्रदायिकता के कारणमीमांसा के विचार अनेक उदाहरणों के माध्यम से प्रस्तुत किए है साथ ही इस सांप्रदायिकता को रोकने के लिए अपने पात्रों के माध्यम से सांप्रदायिकता सद्भाव लाने का प्रयास किया है।

संदर्भग्रंथ :

1.समकालीन कहानी और उपेक्षित समाज डॉ. श्रीमती प्रेम सिंह डॉ. रिम्पी खिल्लन पृष्ठ, 56

2. हमारा शहर उस बरस गीतांजली श्री पृष्ठ, 239

3. भीष्म साहनी का कथासाहित्य सांप्रदायिक सद्भाव डॉ. पी.आर. वासुदेवन

4. संचेतना मार्च 1981

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

55. हिंदी कविता में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव

डॉ. शाहीन अब्दुल अजीज पटेल
शंकरराव जगताप आर्ट्स
ॲण्ड कॉमर्स कॉलेज वाघोली.

हिंदुस्तान के उत्तर से लेकर दक्षिण तक और पूर्व से लेकर पश्चिम तक अनेक धर्म एवं समुदायोंके लोग यहॉ सदियों से रहते चले आ रहे हैं। हिंदुस्तान की इस सरजमीं को अनेकों ने हथियाने का प्रयास किया। कई सल्तनतें आईं इसे गुलाम बनाया , राजसत्ता भोगी , इसे लूटा लेकिन अंत में हिदुस्तान से बेपनाह मुहब्बत करनेवालों के अथक परीश्रम से सन 1947 में इसे आजादी मिली। तब से लेकर आजतक इस सर जमीं पर अनेक वारदातें हुईं कत्तलेआम हुआ, इन्सानियत दागदार हुई। जब, जब भी ऐसा घिनौना कार्य हुआ हिंदी कवि की आत्मा रुदन करती नजर आई– इन्सानियत के इसी दागदार पहलू को मद्देनजर रखते हुए देवदस बिस्मिल लिखते हैं –

"आज दुनियॉ बन गई , इन्सानियत की कत्लगाह
शैतानियत का नाच होता , आज के इस दौर में "[1]

अगर हम इस हैवानियत की बारीबीसे तफतीश करेंगे, तो दो चीजें सामने आती हैं, एक तो य कि ऐसे घिनौने कार्य को अंजाम देनेवाले मास्टर माईंड बडे ठंडे दिमाग से इन सब की योजना बनाते हैं। फिर इस योजना को अमल में लाने के लिए साम्प्रदायिकता को अपना हथियार बनाते है। यह हथियार दुधारु है इसे आप अपने मतलब और सहुलत के हिसाब से काम में ला सकते हैं। अर्थात अपने संप्रदाय को खतरे में बताकर आप अपने लोगों की तवज्जों अपनी तरफ खींच सकते हो, और दूसरे आप अपने ही लोगोंके दिमाग में दुसरों के लिए नफरत बर्पा सकते हो। तस्वीर की दूसरा रुख है ऐसे व्यक्ति जो उपरोक्त घाघव्यक्तिों यों के झांसे में आसानी सें फंस जाते हैं। उनका शिकार बनते हैं। आजतक के मरने और मारनेवालों का इतिहास खंगाला जाय तो तथ्य यही सामने आता है कि मास्टर माईंड कभी शिकार नहीं बनते। वे शिकारी ही रहते हैं। हिदुस्तान की बडी से बडी और छोटी से छोटी वाददात का परीक्षण करने पर यही नतीजा सामने आता है कि बेगुनाह , अवाम ही शिकार बनती है। ऐसी वारदांते जब–जब भी इस सरजमीं पर हुई हैं तब–तब हिंदी कवि ने राष्ट्रीय एकता एंव सांप्रदायिक सदभाव बनाए रखने के लिए अपनी कलम चलाई है तिलक राजकपूर 'राही' लिखते हैं–

अगर कर पाये तो इतनी इनायत कीजिए साहब
दिलों में फूट की न अब शरारत कीजिए साहब। [2]

ऐसे घाघ व्यक्तियों से भी कवि इनायत की दरख्वास्त करता है। अर्थात कवि इल्तजा करते हूए भी क्रोधी या हिंसक नहीं हैं, हिंस्त्र व्यक्ति को भी वह प्रेमपूर्वक सांप्रदायिक सदभाव एंव राष्ट्रीय एकता का संदेश देता हैं।

आजादी से पहले हमें अपना गुलाम बनानेवाला व्यक्ति हमारा दुश्मन था, तो खुले रुप में हमें उसका सामाना करना था, जिसे हमने 1947 में कर दिखाया। आज तस्वीर बदल चुकी है। आज हमारी ही कौम के , हमरे ही समाज के मौकापरस्त , घाघ , राजनीतिक नेता , धर्म के ठेकेदार हम ही को आपस में लड़ाते हैं, और स्वंय को हमारा रहनुमा घोषित करते हैं। हमारे अपने ही जालसाज हमारे दुश्मन हैं। पाकिस्तान और चीन से युध्द करते हुए हमारे उतने सैनिक नहीं मारे गए जितने हमने आपस में लढते हुए सपनों की जानें गंवाई। बमविस्फोट , सांप्रदायिक दगें कर्फिव , इसीकी जिंदा मिसालें हैं।

यकीकन यह बर्बर इतिहास हमारा है लेकिन इस तस्वीर का दूसरा रुख भी मौजूद है। आज हमारे गावों और शहरों में ऐसे अनगित परिवार मौजूद हैं , जो सालों – साल एकदूसरे के पडोसी है और विभिन्न धर्मो से संबंधित हैं। जब भी किसी एक परिवार पर कोई आफत आती है तो दूसरा परिवार फौरन उसकी मदद के लिए बिला नागा चला जाता है। हमारी यही सांस्कृतिक धरोहर हमें दुनिया के सामने मिसाल के रुप में पेश करती है।

बनारस का बुनकर कभी मजहब, और संप्रदाय देखकर कपडा नहीं बुनता वह जो अखंडमानव जाति के लिए कपडा बुनता है। रक्तदान और देहदान करनेवाले व्यक्ति कभी संकिर्णता के शिकार नहीं होते तो उसके कार्य में मानव कल्याण यही भाव निहित होता है। मंदिरों के बाहर सामग्री बेचनेवाला मुसलमान हो या चुडी पहनानेवाला मनियार कासार जिसके हाथ में महिलाएं विश्वास के साथ अपना हाथ सौंपती हैं वह मुसलामन कभी उससे धृष्टता नहीं करता। हिंदू या अन्य जाती के लोहार , कुम्हार , चमार संप्रदाय नहीं देखते तो समग्र मानव उनकी दृष्टी में होता है। प्रत्येक छोटे से छोटे और बडे –से –बडे कार्य एंव व्यापार में मानव कल्याण यही भाव निहित होता है।

प्रत्येक धर्म ग्रंथ को उठाकर उसे समझा जाय तो मूल में एक ही भाव है, शांति, अहिंसा , समता , विश्वबंधुत्व , मानव कल्याण । इसीलिए तिलकराज कपूर लिखते हैं।

''बडी मुश्किल से , अम्नो–चैन की तस्वीर पाई है।
यही कायम रहे ऐसी वकालत कीजिए साहब
सभी मजहब सिखाते हैं शरण में गर कोई आए
तो अपनी जान से ज्यादा हिफाजत कीजिए साहब।''

निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि आजादी के पहले हमारा दुश्मन बाहरी था आज हमारे की बीच मौका परस्त इन्सान दुश्मन है। अनगिनत जाति, धर्मी , समुदायों के बीच आज भी राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता की अनगिनत मिसालें मौजूद हैं।

हिंदी कविता ने राष्ट्रीय एकता एवं सदभाव को बनाए रखने में अहम भुमिका निभाई है। प्रत्येक कवि की कलम ने हमेशा कौमी यकजहती का संदेश दिया है इसकी अनगिनत मिसालें साहित्य के दरबार में मौजूद हैं। प्रत्येक युग के कवि ने इस कर्तव्य का बेशुमार निर्वाह अपने मनोयोग से किया है। राजनीतिक ठेकेदार, धार्मिक ठेकेदार, अर्थात ठेकेदार जहॉ मौजूद हैं, वहॉ वे अपना उल्लू सीधा करने की फिराक में बेगुनाह , सामान्य मानव के जान , माल, इज्जत आबरु सबसे खेलते हैं।

घाघ व्यक्तियों की घिनौनी नीतियों से बचना हो तो हमें हमारे ज्ञानचक्षू खोलने होंगे नीर क्षीर विवेक बुध्दी का सहारा लेना होगा । विचार मंथन कर निर्णय लेने की क्षमता को वृध्दीगंत करना होगा। तभी हम विश्व बंधुत्व भाव स्थापित कर सकेंगे और तभी सहज मानव कल्याण संभव होगा।

संदर्भ

1. देवदास बिस्मिल्ल : टुकडे – टुकडे जिंदगी
2. तिलकराज कपूर : तिलकराज कपूर की गजले

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

56. मैथिलीशरण गुप्त जी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना एवं सामाजिक सद्भावना

प्रा. शिकलकर एस.जी.
हिंदी विभाग,
श्री शिवाजी महाविद्यालय,बार्शी.

साहित्य समाज की चेतना में साँस लेता है। उसमें विशाल मानव–जाति की आत्मा का स्पन्दन ध्वनित होता है। वह जीवन की व्याख्या करता है, इसीलिए वह पूर्णतः मानव केन्द्रित है। सामाजिक समस्याओं, विचारों तथा भावनाओं का जहाँ वह स्रष्टा होता है, वहाँ वह समाज का दर्पण कहलाता है। आज तक विभिन्न धर्मो, संस्कृतियों और सभ्यताओं का प्रधान उद्देश्य मानव–जीवन को सुन्दर आनन्दमय और एकता में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' बनाने का रहा है। विज्ञान ने मानव को भौतिक सुविधा प्रदान की है। राजनीति समाज को आर्थिक एकता के सूत्र में बध्द करने तथा उसकी सुरक्षा के हेतु प्रयत्नशील है। दर्शन अध्यात्मिक सिध्दान्तों की खोज और प्रसार द्वारा मानव को एकता का पाठ पढ़ाने का प्रयत्न करता आया है और कर रहा है। सामाजिक उन्नयन का यह काम बिना कवि की सहायता के पूर्ण नहीं हो सकता। क्योंकि कवि का सत्य हमारे जीवन का सत्य हैं, हमारे हृदय और भावनाओं का सत्य है, जिसके माध्यम से हम एक–दूसरे से मिले हुए हैं।"

हमारे सामाजिक जीवन की उन्नति, सुव्यवस्था, परिपूर्णता और देश की एकात्मता के लिए शान्ति और सहयोग की आवश्यकता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल वस्तुतः जागरण का सन्देश लेकर आया। भारतेन्दु युग में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने नवजागरण का बिगुल बजा दिया और भारतीय जनमानस में देशभक्ति, स्वतंत्रता, राष्ट्रीय एकात्मता, स्वदेशाभिमान की भावनाएँ जाग्रत होने लगी। भारतेन्दु युग में जहाँ इनका सूत्रपात हुआ, वहीं द्विवेदी युग में ये पल्लवित एवं विकसित हो गई।

राष्ट्रकवि त मैथिलीषरण गुप्त जी द्विवेदी युग के कवि हैं, अतः उनके काव्य में राष्ट्रीयता, समाज–सुधार की भावना, जन–जागरण की प्रवृत्ति एवं युगबोध विद्यमान है। उनकी कृति 'भारत–भारती' में भारत के अतीत गौरव के साथ–साथ वर्तमान दुर्दशा की ओर संकेत किया है। उसमें परतंत्रता की बेड़ियाँ तोडने का आवाहन है। इस काल में स्वातंत्र चेतना, मानवतावाद, सामाजिक समता एवं गांधीवाद का बोलबाला था। अतः गांधीवादी विचारधारा की सर्व प्रथम प्रतिध्वनि हमें गुप्त जी के काव्य में ही मिलती है। 'अनघ' उनका ऐसा ही काव्य है जिसमें अहिंसावादी सिध्दान्तों की अभिव्यक्ति हुई है। भारतवासियों के अहिंसापूर्ण आन्दोलनों एवं सत्याग्रह की शक्ति का उद्घोष करते हुए गुप्त जी ने तत्कालीन युग का चित्र अंकित किया है।

जब देश में राष्ट्रीय आंदोलन प्रबल हुआ था, तब 1921 में हिंदू और मुसलमान असहयोग आंदोलन में एक साथ हुए थे। उनके बीच अंग्रेजो ने विषमता के बीज बोये। हिंदू–मुस्लिम वैमनस्य बढ़ने लगा। दंगे होने लगे। इस विषमतापूर्ण वातावरण ने गुप्त जी को 'हिंदू' नामक ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दी । यह ग्रंथ 1927 में प्रकाशित हुआ। इसमें तत्कालीन समस्याओं का चित्रण किया गया। इसमें राष्ट्रीय एकता पर जोर दिया गया। देशवासियों के लिए मिलजुलकर रहने का संदेश था। इसमें विदेशी सत्ता का विरोध करने के लिए आव्हान किया गया था। मैथिलीशरण गुप्त जी कहते हैं–

"हम विभु के बालक चिरकाल
कहे पौतालिक विज्ञ विशाल।
अपनी क्रीडा,उसकी गोद,
भय न सोचयबल मोद विनोद।

कोई काफीरय कोई म्लेच्छ,
हो तो होता रहे यथेच्छ।
हिन्दू–मुसलमान की प्रीति
मेंटे मातृभूमि की भीति।

1926 में 'अनघ' का प्रकाशन हुआ। इसमें भगवान बुध्द ने बोधिसत्व के रूप में ग्राम्य संगठन और नेतृत्व का प्रदर्शन किया था। यह ग्रंथ आख्यान के ऊपर आधारित होने के बाद भी भारतीय समाज के गाँव–गाँव में आत्मविश्वास, लोकतंत्र और नेतृत्व की भावना प्रकट करने के लिए लिखी गयी थी। राष्ट्रीय आंदोलन में देशवासियों को अंग्रेजों का डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा निम्नलिखित काव्य पंक्तियों से गुप्त जी ने की है–

"विषम विश्व का कोना है,
मेरा जहाँ बिछौना है।
पर मै खो जाऊँ या जागूँ?
कैसे इसकी तन्द्रा त्यागूँ?
डट जाऊँ या हटकर भागूँ?"

'साकेत' को मैथिलीशरण गुप्त जी की सफलता का चरमबिंदु माना गया। यह गुप्त जी का प्रथम महाकाव्य 1932 में प्रकाशित हुआ। साकेत के प्रमुख पात्र राम और सीता नहीं, उर्मिला है। उनका साथ देने लक्ष्मण है, कैकयी है, जिनका बड़ा ही उज्वल पक्ष साकेत में प्रकट हुआ है । 'साकेत' के माध्यम से गुप्त जी ने नारी के प्रति करूणा की एक नयी दृष्टि प्रदान की। साकेत के सभी नारी पात्रों को गौरवशाली एवं स्वाभिमानी रूप में प्रकट किया है। साकेत में पारिवारिक एकता के साथ राष्ट्रीय एकात्मता का संदेश दिया हैं। 'साकेत' गुप्त जी की राष्ट्रीय कविताओं की शृंखला की ही एक कड़ी थी। साकेत के माध्यम से सामाजिक सद्भाव, देश की रक्षा, समन्वयता और राष्ट्रीय एकता का संदेश दिया। भरत राम से कहते हैं–

'तात', देश की रक्षा का ही
करता हूँ मैं उचित उपाय
पर वह मेरा देश नहीं जो
करे दूसरों पर अन्याय।
एक देश क्या, अखिल विश्व का
तात, चाहता हूँ मैं त्राण?
टूर हो ममता, विशमता मोह,
आज मेरा धर्म राजद्रोह।

वन गमन करते हुए राम के मार्ग में तमाम अध्योध्यावासी उसी तरह लेट गए जैसे गांधीजी के सत्याग्रह आन्दोलन में भारतीय करते थे। गांधीजी का सत्याग्रह आन्दोलन 'साकेत' में कुछ इस रूप में दिखाई देता है–

"जाओ यदि जा सको रौंद हमको यहां।
यों कह पथ मै लेट गए बहुजन वहां।।"

गुप्त जी के साहित्य में तत्कालीन समाज की दषा का निरूपण भी किया गया है। वे उॅच–नीच की भावना के विरोधी हैं। समाज के दलित वर्ग को प्रतिष्ठा प्रदान करते हुए वे उन्हें पवित्र गंगा का सहोदर स्वीकार करते हैं–

उत्पन्न हो तुम प्रभु पदों से जो सभी को ध्येय हैं ।
तुम हो सहोदर सुरसरी के चरित जिसके गेय हैं।।"

गुप्त जी ने समाज में नारी की महत्ता का प्रतिपादन किया। 'साकेत' रामकथा पर आधारित महाकाव्य है जिसमें उर्मिला का विरह और कैकयी का पश्चाताप दिखाकर राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक एवं सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों को जन–मानस के हृदय में प्रतिष्ठित किया गया। 'यशोधरा' गौतम बुध्द के गृहत्याग की घटना पर आधारित काव्य ग्रन्थ है जिसमें नारी की वेदना मुखरित हुई हैं–

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध और ऑखो में पानी।।"

'साकेत में नारी' के एक अन्य रूप 'वात्सल्यमयी माता' का चित्रण भी हुआ है। चित्रकुट में हुई सभा में कैकयी का पश्चाताप गुप्त जी की मौलिक कल्पना है। इसमें वात्सल्यमयी माता कैकयी के स्वच्छ हृदय की झांकी उपलब्ध होती है। राम कहते हैं–

सौ बार धन्य वह एक लाल की माई।
जिस जननी ने है जना भरत सा भाई।।
पागल सी प्रभु के साथ सभा चिल्लाई।
सौ बार धन्य वह एक लाल की माई।।

गुप्त जी ने युग के अनुरूप नारी को जन–सेविका एवं राष्ट्र–सेविका के रूप भी चित्रित किया है। यशोधरा जन–सेविका है, उर्मिला अयोध्यावासियों की सेवा में तत्पर है। सीता वनवासियों को अच्छे संस्कार दे रही है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में नारी के गौरव को प्रकाशित रखते हुए उसके जननी, भार्या, जन–सेविका के रूप के आकर्शक चित्र उतारे है। उनकी नारी भावना उदात्त है तथा वर्तमान नारी समाज के लिए प्रेरणादायक है।

वस्तुतः गुप्तजी मानवतावाद के समर्थक थे और निष्काम कर्म, विश्वबन्धुत्व, सामाजिक समता, राष्ट्रीय चेतना एवं हिन्दू मुस्लिम एकता पर विशेष बल देते थे। वे जड़ता और निश्क्रियता को समाप्त कर आत्म–गौरव की भावना जाग्रत करने में निश्चय ही आजीवन संलग्न रहे। उनकी कविता युग का स्वच्छ दर्पण हैं, जिसमें हमें स्वदेश प्रेम, राष्ट्रीय एकात्मता, सामाजिक युग–बोध और विश्वबन्धुत्व की भावनाओं के दर्शन होते हैं।

सच्चा प्रेम वही है जिसकी तृप्ति आत्मबलि पर हो निर्भर।
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है करो प्रेम पर प्राण निछावर।।
देश प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है अमल असीम त्याग से विलसित।
आत्मा के विकास से जिसमें मनुष्यता होती है विकसित।।

संदर्भ –

1. भारत–भारती – मैथिलीशरण गुप्त
2. अनघ – मैथिलीशरण गुप्त
3. हिंदू – मैथिलीशरण गुप्त
4. साकेत – मैथिलीशरण गुप्त
5. यशोधरा – मैथिलीशरण गुप्त
6. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में चेतना–जगदीश चतुर्वेदी

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

57. गुरुनानक के साहित्य में साम्प्रदायिक सद्भाव

श्रीदेवी बाबुराव बिरादार
हिंदी विभाग
के.टी.पी. महाविद्यालय,हाडोलती
ता.अहमदपूर जि.लातूर

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर अपने सामाजिक संस्कार विकसित करता है। एक विशेष जाति या समाज के लोग जब एक विशेश भूमि पर रहते हुए अपनी समान संस्कृति, समान हितों–अहितों, समान राज्य और समान सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, अनुशासन में बंध जाते है तो उसे राष्ट्रीयता कहा जाता है। धर्म, विश्वास, भाषा तथा आचार भिन्न–भिन्न हो सकते है परंतु राष्ट्रीयता का संबंध फिर भी उनमें एकसूत्रता निर्माण करना होता है। वर्तमान स्थिति में राष्ट्रीयता की भावना किसी–न–किसी कारण संकुचित होती नजर आ रही है। जिसमें जाति–पाँति, धर्म आज कल अपने अस्तित्व को लेकर लड–झगडते जाति–पाँति, धर्म, राष्ट्रीय एकता में सबसे महत्वपूर्ण बाधा है जिस कारणवश खून की नदियाँ बही है। सो आज भी वर्तमान स्थिति में भी देखने को मिलता है।

राष्ट्रीय भावना को प्रेरित करने का प्रयास संत परंपरा में भी अधिक मात्रा होता नजर आता है। जिसमें अनेकों संत तथा भक्तों का योगदान प्राप्त होता है। इसी संत परंपरा में गुरुनानक का नाम विशेष महत्व रखता है। इन्होंने कबीर की भाँति अपने धार्मिक उपदेशों से हिंदू तथा मुसलमानों में अभेद की स्थापना करने का प्रयास किया है। इनका विश्वास था कि ईश्वर एक ही है, अलिप्त है जिसकी प्राप्ति किसी जाति अथवा धर्म–विशेष के लिए निश्चित नहीं है। उन्होंने जात–पाँति के भेदभाव का निषेध कर एक सच्चे प्रेम के सिध्दांत पर अपनी लेखनी चलाई है। जो उनके द्वारा सृजित 'गुरु ग्रंथ साहिब' ग्रंथ में प्रस्फुटित है। उनकी अमृतमयी वाणी गुरुग्रंथ साहित्य में संग्रहीत है, जो मानवमात्र के लिए कल्याणकारी अचूक औषधी है जो जाति–पाँति के मूल को समाज से बाहर करती है और राष्ट्रीय एकता की स्थापना में महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय एकता की धर्म और जातिगत बाधा को दूर करते हुए राष्ट्रीय एकता को स्थापित करना गुरुनानक के साहित्य का मुख्य लक्ष्य है।

अभिमानरहित साधारण जीवन व्यतीत करनेवाले गुरुनानक जी ने फकीर बनकर समाज में व्याप्त जातीयता को नष्ट करने की कोशिश की है। गुरुनानक जी ने बाल्यकाल से ही सांसारिक वातावरण के प्रति अरुचि प्रकट की है। उन्हें जात–पाँत से अत्याधिक घृणा रही है। वे सदा ही उँच–नीच भाव से रहित थे। यह सारी बातें उनके जीवन में घटित घटनाओं से अधिक प्रस्तुत होती है। कहा जाता है कि जब वे सुलतानपुर में स्टोरकीपर थे, तो एक बार दो–तीन दिन के लिए कही जंगल में चल गए। जब वापस लौटे तो उनपर कुछ विचित्र मादकता छाई हुई थी। जब लोगों ने पुछ तो वे केवल इतना ही उत्तर देते, ''न कोई हिंदू न मुसलमान''[1] इससे जान पडता है कि वे तत्कालीन जनता में बढ रही क्षुद्र जातिविभेद की भावना तथा हिंदु–मुस्लिम विभिन्नता को कितनी गंभीरता से अनुभव करते थे और विश्वास रखते थे की जब तक धर्म तथा जाति के यह व्यर्थ संघर्ष नहीं मिटेंगे तब तक देश में सच्ची शांती एवं एकता स्थापित नहीं हो सकती थी। इसीलिए वे स्वयं इसका आदर्श बने और वे दोनों जातियों की वेशभुषा परिधान करते थे। टोपी पहनते थे मुसलमानों वाली और तिलक लगाते थे हिंदुओवाला। जब वे भ्रमण के लिए देश–देशांतरों में जाते तो एक ओर होता था वाला और दूसरी ओर होता था मरदाना। इन सबका समन्वय में उनका उद्देश्य था समस्त जातियों में तथा धर्मों में बंधुत्व की भावना स्थापित कर उन्हें मानवता के बंधन में बाँधे। उनके लंगर

में छोटा–बडा, हिंदू–मुस्लिम, सीख बिना किसी झिझक के भोजन किया करते थे। नीच से नीच तथा दीन से दीन मनुष्यों को भी आत्मरुप समझकर उसे अपनाया है। उनके इस उदारता भरे महान व्यक्तित्व का परिचय हमें उनकी पंक्तियों में मिलता है जैसे–

''नीचा अंदरि नीच जाति, नीची हू अति नीचु।

नानक तिन के संग साथि, बडियॉ सिउ क्या रीस!!''[2]

गुरुनानक जी ने जनता के ऱ्हदय की परख की है। उन्होंने जन–जन के मन में समता का तथा प्रेम का मोहन मंत्र से सदुपदेशोंद्वारा जनता को निहाल किया। हिंदू–मुस्लिम दोनों उनकी वाणी का रसास्वादन करते थे, दोनों उन्हें अपना मानते थे। एक ने गुरु तो दूसरे ने पीर नाम से उन्हें पुकारा है। वे देश–विदेश इसी एकता भरे संदेष को लेकर घुमते थे। कई तीर्थस्थानों तथा पश्चिमोत्तर देशों में पर्यटन करते हुए वह मक्का भी पहुँचे जहाँ पर विशाल बुद्धि तथा विचित्र विचारों द्वारा वहाँ की जनता को प्रभावित किया। व्यर्थ ही आडंबरों में पडे हिंदु–मुसलमानों को सत्य पथ का प्रदर्शन कराया। निर्गुण भक्ति, एकेश्वरवाद, आत्मा की शुध्दता तथा प्रेम को उन्होंने भक्ति का लक्ष्य बनाया। सभी को स्पष्ट रुप में वास्तविकता का बोध कराया की नाम से नहीं काम से परमेश्वर प्राप्ति होती है। गुरु की दृश्टि में तो सब समान ही थे। जाति–पाती, नाम–भेद तो मानव की अपनी रचना है, इसीलिए जाति–कुजाति के चक्कर में पडकर वे सत्य की पहचान करने का आदेश देते है–''जाति दे क्रिया हत्थि सच्चु परखिए।''[3] इस नाते तो सब एकही पिता की संतान है। झूठे नाम भेद में लडाई शोभा नहीं देती। वाहेगुरु की दृष्टि में कोई छोटा–बडा नहीं है। वह तो सबका साँझा है, उसका स्मरण किसी भी नाम से किया तो भी उसका द्वार सबके लिए हमेशा खुला है। जैसे– ''समना जियाँ का इकु दाता सौ मैं विसर न जाई।'' उन्होंने निश्चय ही मानवतावादी दृष्टिकोण से मानवता के नाते सबको अपना ही जाना है। उनके सामने धर्म तो वही है जो मानव के ह्रदय में सच्ची ज्योति उत्पन्न कर सबमें एकसूत्रता निर्माण करें।

वास्तव में वे प्रभु–भक्त थे, संत थे तथा साथही एक महान सुधारक थे। साधुवृत्ति तथा भगवद्–भक्ति नामाराधना में सदा विभोर रहने के कारण वे प्रभू की अखंड तथा अलौकिक ज्योति का आनंद लिया करते थे। उन्होंने जो उपदेश दिया वो उनकी शुध्द अंतरात्मा की आवाज थी। वे प्रेम की ज्योति की जगमगाहट प्राणी–प्राणी के ह्रदय में देखना चाहते थे। इसी प्रेम के प्रभाव में सबको लाकर वे समस्त देशवासियों में एकता तथा राष्ट्रीय ऐक्य स्थापित करना चाहते थे। ये संत ह्रदय हमेशा दु:खिताओं के साथ राजनैतिक अराजकता को भी भलीभाँति अनुभव करते था। वे सभी को प्रजाहित का उपदेश देते थे। हिंदू जाति तथा धर्म की रक्षा की। उन्होंने रुढिग्रस्त समाज को नवचेतना दी थी। धर्म तथा समाज की कुरीतियों को दूर कर, बाह्य आडंबरों में पडी जनता को उपदेश देकर सुज्ञानी बनाया। इसीलिए बहुत से इतिहासकारों ने इनकी उपमा जर्मन के मार्टिन ल्यूथर से की है। आज भी उनकी अमृतवाणी का पाठ हर मनुष्य कर जीवन को कृतकृत्य कर सकता है। उन्होंने अपने धार्मिक उपदेशों द्वारा जातियों के संघर्ष को मिटाया और ऱ्हदय में प्रेम का ईश्वरीय संदेश पहुँचाकर देश की एकता के लिए कार्य किया है। उनकी यह एकता का संदेश आज भी भारतीय संस्कृति का गौरव है।

संदर्भ

1) सी.एच. रामने– शार्ट स्टोरी ऑफ सिख, पृ.क्र.23

2) गुरुग्रंथसाहिब–महला पहला 4, पृ.क्र.15

3) गुरुग्रंथसाहिब–जयनिसारणु 5, पृ.क्र.05

58. संत रविदास के काव्य में सांप्रदायिक सद्‌भाव

प्रा.सीताबाई नामदेव पवार
कला, विज्ञान, वाणिज्य महाविद्यालय
इंदापूर

'संप्रदाय' की भाववाचक संज्ञा सांप्रदायिकता है। सांप्रदायिकता की शुरुवात ही भेदभाव से होती है। एक धर्म के लोगों को दूसरे धर्म के लोगों से श्रेष्ठ मानना सांप्रदायिक विचारधारा का लक्षण है। सांप्रदायिकता की विचारधारा विभिन्न धर्मों के लोगों को ही श्रेष्ठ व निम्न की श्रेणियों विभाजित नहीं करती बल्कि ईश्वर में तथा पूजा स्थलों में भी श्रेष्ठता–निम्नता की श्रेष्ठियों बनाया देती है। 1 संत रविदास जी के युग में सांप्रदायिक विषमता व्याप्त थी। तत्कालीन समाज का अभिजात वर्ग मनुष्य को धर्म, जात–पात और कर्मकांड में उलझाकर मानव समाज को बाँट देता है। ऐसे समय में रविदास ने रविदास ने सांप्रदायिक विष एवं रूढियो को दूर करने के लिए ईश्वर अल्लाह तेरे नाम जैसी बांगी दी। तत्कालीन विषमता में एकता लाने का प्रयास उन्होंने किया था। सामाजिक, सांस्कृतिक, एवं धार्मिक भेदभाव के कारण समाज में सांप्रदायिक सद्‌भाव भंग होकर असमानता का प्रादुर्भाव हुआ था। ऐसी स्थिति में संत रविदास ने सांप्रदायिक सद्‌भाव मानवीय मूल्य का प्रसार अपने काव्य के माध्यम से किया। उनके तत्कालीन समाज से लेकर आज तक जो असांप्रदायिकता और धर्मभेद के कारण सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक विकास खंडित हो रहा है। उसके संदर्भ में रविदास मध्ययुगीन काव्य में हिंदुओ के राम, कृष्ण, वेद, पुराण और मुसलमानों के राम करीम काव्य–कुराण को एक कर सांप्रदायिक सद्‌भाव एवं सर्वधर्मभाव की स्थापना की। इसके साथ हिंदु–मुस्लिम की एकता और बंधुता पर बल देते है। वे कहते हैं–

रैदास हमारा राम जी, सोई है रहमान।
काशी–काबा, जनि नहीं दोनों एक समान।। 2

संत रविदास ने न केवल राम और रहीम की एकता के बारे में बार–बार जिक्र किया, बल्कि हिंदू और मुसलमानों के सबसे पवित्र माने जानेवाले स्थलों के बारे में जिनकी इन धर्मों के माननेवालों की सर्वाधिक आस्था हैं, उनमें भी कोई अंतर नहीं किया। उनका मानना था कि काबा और काशी में कोई अंतर नहीं हैं। राम–रहीम, हिंन्दू–मुस्लिम दोनों में संत रविदास ने कभी भेद नहीं माना था। दोनों धर्मों की सांप्रदायिकता को दूर करने का प्रयास उन्होंने किया। उनके मतानुसार चाहे व्यक्ति मुसलमान हो या हिंन्दू दोनों में भेद न होकर एक ही ज्योत प्रकाशित होती है।

मुसलमान सो दोस्ती, हिंदुअन सो कर प्रीत।
रविदास जोति सभ राम की, सभ हैं अपने मीत। 3

धार्मिक सांप्रदायिक सद्‌भाव भारतीय समाज की विशेषता रही हैं। वह एक परंपरा हैं जिसे संत रविदास ने साहित्य के माध्यम से सामाजिक आंदोलन का प्रतीक माना हैं। उन्होंने जाति–पाँति की प्रथा कड़ा विरोध कर देश की एकता, अखंडता, संघटन एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव के लिए जाति रोग का अंत करना जरूरी माना। डॉ. मीरा गौतम के मतानुसार संत रविदास ने सभी धर्मो को समान समजा तथा एकता का उपदेश देकर देश में शांति रखने, पारस्पारिक व्देष मिटाने में काफी योगदान दिया। उनका उपदेश था कि ईश्वर एक हैं। भिन्न–भिन्न धर्म उसकी भिन्न–भिन्न संज्ञा देतें हैं। उन्होंने कहा कि मंदिर मस्जिद सभी एक है और उसके नाम पर परस्पर लढना गलत है। उक्त विश्लेषण से यह सिद्ध हो जाता हैं कि संत रविदास ने धर्म, जाति, वर्ण भेदभाव से समाज को मुक्त होने का संदेश अपनी वाणी के माध्यम से किया। सामंती जडता, जातिभेद और सांप्रदायिक घृणा के

बीच मानवता का उद्धार रविदास अपनी समदृष्टि और मानवी संवेदना युक्त वाणी के व्दारा करते हैं। उन्होंने हिंदू–तुर्क के नाम पर प्रचलित भेदभाव तीव्र विरोध किया। संप्रदाय और धर्म के नाम पर होने वाले अनर्थों को पाखंड का नाम दिया। उन्होंने सभी धर्मों को एक समान समझा। वे सामाजिक एकता के पुजारी और अखंडता के सच्चे प्रहरी थें। अतः भिन्न–भिन्न इकाईयों के रूप में देखने के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने हिंदू–मुस्लिम एकता का समर्थन किया। 4

एक माटी के सब भांडे, सबका एकौ सिरजन हारा।
रविदास ब्यापे एक घट भीतर, सभको एक घडे. कुम्हारा।। 5

अर्थात जिस प्रकार कुम्हार एक ही मिट्टी से अनेक बर्तन तयार करता हैं, उसी प्रकार यह संसार के सभी प्राणी एक मिट्टी, एक पंचतत्व के बने हैं। इन सभी की रचना करनेवाले एक ब्रम्हा हैं, जिसने सृष्टि की रचना की हैं। इस तरह संत रविदास ने मानव समाज ही एक जाति मानी हैं। उन्होंने सांप्रदाय में भेद करना व्यर्थं समझा हैं। समाज की एकता की सबसे बडी कसौटी है कि सभी संप्रदाय एक होकर रहे।6 मध्यकाल में विदेशी शासकों ने इस्लाम की संकीर्ण धार्मिकता एवं सामूहिक सांप्रदायिकता के माध्यम से जिन भारतीय धार्मिक मूल्यों को विशृंखलित कर दिया था, उनका समाज में एक बार फिर उन्नयन करनेवाले रविदास ही थे। उन्होंने कहा हैं कि हिंदू माना जाने वाला ब्राम्हण और मुसलमान माना जाने वाला मुल्ला सबको एक ही नजर से देखना चाहिए, उनमें कोई मुलभूत अंतर नहीं हैं। उनके मतानुसार–

जब सभ करि दोउ हाथ पग, दोउ नैन दोउ कान।
रविदास पृथक कैसे भये, हिंदू मुसलमान।। 7
रविदास कंगन अरू कनक मंहि जिमि अंतर कछु नाहिं।
तेसउ अंतर नहीं, हिंदु अन तुरकन मांहि।।8
रविदास सब इकनूर ते, ब्राम्हण मुल्ला शेख।
सबको करता एक हैं, सभ कू एक ही पेख।।9

संत रविदास ने अपने काव्य के माध्यम से तत्कालीन समाज में व्याप्त हिंदू मुस्लिम सामाजिक विषमता को मिटाने का प्रयास किया हैं। जिसके कारण मानव–मानव में मानवता का भाव, राष्ट्रीय एकता का भाव उत्पन्न होता हैं। इस विषम सांप्रदायिकता का विरोध रविदास ने अपने काव्य के व्दारा किया। वे सांप्रदायिक एकता के पक्षधर थे। वे सांप्रदायिकता समाज से समाप्त करना चाहते थे। उनकी दृष्टि और भावना प्रत्येक सांप्रदायिकता के प्रति अत्यंत विशद थी। उन्होंने समाज में सांप्रदायगत एकता लाने का प्रयास किया। इस प्रकार संत रविदास ने मानव समाज ही एक जाति मानी हैं, उन्हें संप्रदाय में विभक्त करना व्यर्थ समझा। समाज की एकता की सबसे बडी कसौटी हैं कि सभी संप्रदाय एक होकर रहें।

संदर्भ –

1 गुरू रविदास की धार्मिक एवं पौराणिक शब्दावली, डॉ. रमेश मेहरा, पृष्ठ 215.
2 रविदास दर्शन, दोहा 145.
3 वही, दोहा 147.
4 संत रविदास काव्य की प्रासंगिकता, डॉ. धर्मवीर लांगायन, पृष्ठ. 103
5 संत रविदास दर्शन, पृथ्वीसिंह आजाद, दोहा 49
6 संत रविदास और गुरू अमरदास का काव्य, डॉ. राजेंद्रसिंह पृष्ठ. 240
7 गुरू रविदास : एक परिचय, साखी–242
8 वही, साखी– 243.
9 वही, साखी– 244

59. 'शरणदाता' एवं 'आवां' में सांप्रदायिक सद्भाव

सुभाष मारुती कदम
हडपसर विद्यालय व ज्युनिअर
कॉलेज, पुणे–13

जिस देश में सांप्रदायिक सद्भाव होगा, उस देश की राष्ट्रीय एकता अखंडित रहेगी। भारत देश में अनेक जाति, धर्म, पंथ तथा संप्रदाय के लोग रहते हैं। उनमें अनेक प्रकार की भिन्नता पाई जाती है। जैसे– खान–पान, रहन–सहन, पूजा–अर्चा–प्रार्थना, रूढ़ि–परंपरा, विश्वास–श्रद्धा, भाषा आदि।

भारतवासियों में भले ही भिन्नता हो परंतु उन सबके सुख–दुख कम–जादा मात्रा में समान ही है। यहाँ भिन्नता में भी अभिन्नता पाई जाती है। सब लोगों की खुशी एक–दूसरे की खुशी से संबंधित है। एक–दूसरे से बैर, इर्ष्या करके किसी का भला नहीं हो सकता, यह समझ सब लोगों में है। सालों साल तक एक–दूसरे के पड़ोसी रहे किसी तत्कालीन कारण से एक–दूसरे खून के प्यासे बनते हैं। इसमें कभी आर्थिक, राजनीतिक या धार्मिक कारण मुख्यतः आते हैं। ऐसे परिवेश में सच्चे नेता, संत, समाज सुधारकों के साथ साहित्य ने राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने में विशेष कार्य किया है। वैसे भी साहित्य, में सु–हित, सम्मिलन और सत्यम्, शिवम्, सुंदरम् की भावना निहित रहती है।

भारतीयों ने आपस में समझदारी एवं एक–दूसरों की रूढ़ि–परंपरा–जनहित जानकर, बड़े संयम से, आदिर भाव से बर्ताव करना ही 'राष्ट्रीय एकता' है। उसी प्रकार अपने देश में रहनेवाले सभी धर्मों तथा संप्रदायों के लोगों का, उनके मत–मान्यताओं का आदर करना, उनके प्रति अच्छा भाव रखना, एक–दूसरे के तीज–त्योहारों में, सुख–दुख में शामिल होना आदि को सांप्रदायिक सद्भाव कह सकते हैं।

राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने में हिंदी साहित्य ने अहम् भूमिका निभाई है। आदिकालीन रासो साहित्य। भक्तिकाल में सूफी मत, संत कबीर, तुलसीदास। रीतिकाल में भूषणादि कवि। भारतेंदु काल में स्वयं बाबू भारतेंदु और उनकी मंडली। राष्ट्रीय काव्यधारा में मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, सुभद्राकुमारी चौहान आदि। हिंदी साहित्य की कहानी एवं उपन्यास विधाओं में कहानी एवं उपन्यास सम्राट प्रेमचंद जी, जयशंकर प्रसाद जी, वृंदावनलाल वर्मा, अज्ञेय, यशपाल, भीष्म सहानी, चित्रा मुद्गल आदि रचनाकारों ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

हिंदी गद्य साहित्य में अज्ञेय जी की 'शरणदाता' कहानी और चित्रा मुद्गल के 'आवां' उपन्यास में चित्रित सांप्रदायिक सद्भाव निम्नांकित है।

अज्ञेय जी की 'शरणदाता' कहानी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की कहानी है। स्वतंत्र भारत में सबसे पहले दो प्रमुख घटनाएँ घटी। प्रथम भारत–विभाजन और द्वितीय सांप्रदायिक दंगे। ये दोनों घटनाएँ एक–दूसरे के साथ पूरी तरह से जुड़ गयी है। सांप्रदायिक दंगों के कारण भारत–विभाजन और भारत–विभाजन के कारण सांप्रदायिक दंगे। 'शरणदाता' कहानी में सांप्रदायिक दंगों का ही चित्रण किया गया है। इसका घटना स्थल लाहौर है। यहाँ हिंसक कांड़ों के कारण सारा शहर विरान हो गया। जहाँ–तहाँ लाशें सड़ने लगी। घर लुट चुके थे और अब जल रहे थे। ''रातों को जहाँ–तहाँ लपटें उठने लगीं और भादों की उमस धुआँ खाकर और भी गलघोंटू हो गई....''[1] ऐसे खौफनाक माहौल में हिंदू देविंदरलाल लाहौर में जहाँ रहते थे वहाँ के आस–पास के हिंदू परिवार धीरे–धीरे

खिसक गए। देविंदरलाल भी अपना घर छोड़ना चाहते थे परंतु उन्हें उनके वकील मित्र रफीकुद्दीन रोक लेते हैं। वे कहते हैं, ''मैं तो इसे मेजारिटी का फर्ज मानता हूँ कि वह माइनारिटी की हिफाजत करे और उन्हें घर छोड़ छोड़कर भागने न दे। हम पड़ोसी की हिफाजत न कर सके तो मुल्क की हिफाजत क्या खाक करेंगे।''[2] वे देविंदरलाल को अपने घर में शरणार्थी बनाते हैं। लाहौर के मुसलमान रफीकुद्दीन पर दबाव डालने लगे। वे केवल शिकार चाहते थे। हमला करके नहीं मिलेगा तो झपटकर लेना चाहते थे। प्राप्त परिस्थितियों को देखकर रफीकुद्दीन चिंता में पड़ते हैं। देविंदरलाल वहाँ से चलना चाहते थे परंतु वे उन्हें रोकते हैं। बाद में विवश होकर अपने मित्र को दूसरे सजातिय मित्र शेख अताउल्लाह के गैराज में पहुँचाते हैं।

शेख सहाब का गैराज किसी तंग कोठरी–सा था। तुलना में किसी जेलखाने से बदतर। जहाँ न कोई सुननेवाला था न हीं कोई सुनानेवाला। बंद दरवाजा, अंधेरा, खुला आँगन, सिरपर आकाश का एक टूकड़ा। एक बार का भोजन, लोटाभर पानी और तनहाई सन्नाटा। बिल्कुल घुँटती हुई जिंदगी। ऐसे में एक बिलार उनका दोस्त बनता है। खाना, पीना, सोना, विचार करना, देश के दुर्भाग्य पर रोना देविंदरलाल का दिनभर का यही निरस कार्यक्रम था। खाली समय में वे शेख साहब के घरवालों की भिन्न–भिन्न आवाजें सुनते रहते थे।

एक दिन भोजन की थाली में उन्हें एक चिट्ठी मिलती है। जो खान साहब की बेटी जैबुन्निसा की थी। उसमें लिखा था, ''खाना कुत्ते को खिलाकर खाइएगा।'' मौत का पैगाम बना खाना देविंदरलाल बिलार को खिलाते हैं। बिलार की मौत होती है। देविंदरलाल सोचने लगते है, ''आजाद! भाईचारा! देश राष्ट्र...। एक ने कहा कि हम जोर करके रखेंगे और रक्षा करेंगे, पर घर से निकाल दिया। दूसरे ने आश्रय दिया और विष दिया। और साथ में चेतावनी कि विष दिया जा रहा है।''[3] वे गैराज की दीवार लाँघकर वहाँ से भाग जाते हैं।

पंजाब में डेढ़ महीने के बाद लाहौर से आई हुई एक चिट्ठी उन्हें मिलती है। उस जैबुन्निसा की चिट्ठी में लिखा था, ''आप बचकर चले गए, इसके लिए खुदा का लाख–लाख शुक्र हैं। अब्बा ने जो किया या करना चाहा उसके लिए मैं माफी माँगती हूँ। सिर्फ यह इल्तजा करती हूँ कि आपके मुल्क में कोई अल्पसंख्यांक मजलूम हो तो याद कर लीजिएगा। इसलिए नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए कि आप इन्सान हैं। खुदा हाफिज!''[4]

चित्रा मुद्गल के 'आवां' उपन्यास में मुसलमान सुहैल और हिंदू सुनंदा के प्रेम–संबंध के माध्यम से सांप्रदायिकता का मुद्दा उठाया है। सुहैल सुनंदा से प्रेम करता है। शादी भी करना चाहता है। सुहैल के पिता की शर्त है कि सुनंदा अपना नाम और धर्म बदले परंतु सुनंदा को यह मंजूर नहीं है। वह सुहैल के बच्ची की माता बनती है। अर्थात् कुँआरी माता। एक हिंदू लड़की को जबरदस्ती से मुसलमान बनाया जा रहा है, समाचारपत्रवालों ने इस खबर को नमक–मिर्च लगाकर प्रसिद्धि दी। स्थानिक नेता ने इसे सांप्रदायिकता का मुद्दा बनाया। जिससे सांप्रदायिक दंगे होने लगे। इस धार्मिक तथा सांप्रदायिक समस्या पर चित्रा मुद्गल ने एक अनोखा ऊपाय ढूँढ़ा है। वह सुनंदा के जरिए उपन्यास की नायिका नमिता से कहती है, ''उनसे कहिएगा, दीदी! कुँआरी माँ की जचकी का हक लड़ने से पहले वे सांप्रदायिक उन्माद को खत्म करने की लड़ाई लड़े, वरना सब बरबाद हो जाएगा। खोली–खोली के भीतर घुसकर हिंदू–मुसलमान औरतों को इतना जागरूक कर दें कि वे अपने घरों में उन्मादी मर्दों के हाथों से उनकी कटारें छीन लें। उनकी संदिग्ध गतिविधियों को चेतावनी दे दें कि अगर उन्होंने भड़का–भड़काई के माहौल में हिस्सा लिया तो ध्यान रखें–अपने घर–परिवार से हाथ धो बैठेंगे–बच्चों समेत वे आत्मदाह करेंगी।''[5]

संक्षेप में 'शरणदाता' कहानी में जैबुन्निसा और 'आवां' उपन्यास में सुनंदा के द्वारा रचनाकारों ने सांप्रदायिक सद्भाव को ही दर्शाया है।

संदर्भ

1. कथायात्रा राजेंद्र यादव पृ.73
2. वही पृ.71
3. वही पृ.81
4. वही पृ.82
5. आवां चित्रा मुद्गल पृ.112

60. हिंदी दलित काव्य में राष्ट्रीय एकता

सुनीता प्रधान,
पी.एचडी शोधार्थी.
हैदराबाद विश्वविद्यालय, गच्चीबौली
हैदराबाद500046-

आज़ादी के सत्तर वर्ष बाद भी कहीं न कहीं भारत की तस्वीर खंडित होने का खतरा, समाज के किसी न किसी अंग से होता रहता है। इसके कारणों की खोज एक लम्बी बहस का विषय है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता की परिभाषा भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में आज भी अस्पष्ट है और जब, किसी लोकतंत्र में राष्ट्र की न हो उस जनतंत्र के जनमानस में तो इससे खतरनाक बात और कुछ हो ही नहीं सकती।-

परिंदे चहचहाते हैं"
परिंदे जहाँ चाहते हैं उड़ जाते हैं
परिंदे घूमते हैं आकाश में उन्मुक्त
परिंदे गुनगुनाते हैं
परिंदे गीत गाते हैं
परिंदों में एकता है
परिंदे छोटेबड़े का मन में भाव नहीं लाते-
क्योंकि परिंदों में जाति नहीं होती
जाति का अहंकार नहीं होता।"

दलित कवि सीभारती की इस कविता में एकता का वही अर्थ बिंबित है .बी., जिसकी आज राष्ट्र की सख़्त जरुरत है। स्वाधीनता के सत्तर वर्ष बाद भी देश के समक्ष राष्ट्रीय एकता के लिए हिंदुत्ववादी शक्तियों द्वारा एक बहुत बड़ी चुनौति खड़ी कर दी गई है। ईसाई, मुस्लिम या दलित जनता आखिर है कौन? ये भारत की वही दलित, आदिवासी, शुद्र व पिछड़ी जनता है जो हिंदुत्ववादियों की वर्णव्यवस्था के -ने को मजबूत की जाती रही है और आज भी की जा रही है।तहत पशुवत् जीवन जी

हमारे समाज में राष्ट्रीय एकता की बात कई लोग कर रहे हैं। आखिर या राष्ट्रीय एकता किनके बीच हो? यदि हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई और इन्हीं की तरह अन्य धर्मवलंबियों को लेकर जैसा बहुरंगी, बहुलतावादी भारत बने तो कुछ बात समझ में आती है। भारतीय संस्कृति की रीढ़ मनुसंहिता मानी मनुस्मृति का विधान है। इस विधान के अनुसार व्यक्ति जाति से पहचाना जाता है, उसकी बुद्धि का कोई महत्व नहीं होता। इस विधान के तहत वैचारिक स्वतंत्रता नाम की कोई चीज़ नहीं है और मनुष्य अपने पूर्वजन्म के कर्मों एवं भाग्य के अनुसार इस जन्म में जीता है। इस व्यवस्था के तहत विभाजित जातियों के अलगरिवाज़ हैं-अलग रीति-, जिसमें आपसी मेल तो है ही नहीं बल्कि एक समाज दूसरे समाज के अनिष्ट पर फलताफूलता है। इसलिए भारतीय समाज जातीय और उपजातीय टुकड़ों में --रती ने इस स्थिति को व्यक्त किया हैविभक्त है। कंवल भा

धर्म के सिद्धांत“
बना नहीं सके धार्मिक
मनुष्य के आग्रह
नहीं बना सके मनुष्य
राष्ट्र की अवधारणाएँ
पैदा कर गई अलगाव
वर्ण और जाति की व्यवस्थाओं ने
न स्वतंत्रता को स्वीकार
न समता को
न बंधुता को”!

राष्ट्रीय एकता एवं देश की अखंडता से जुड़ा हुआ है। सामाजिक एकता का सीधा संबंध राष्ट्रीय एकता केतत्व आर्थिक और भौगोलिक स्तर पर जहाँ विभिन्न क्षेत्रों, राज्यों के संतुलित विकास का प्रयास हैं, जिनके तहत राज्यों और प्रांतों की सीमाओं का शांतिपूर्वक निर्धारण अथवा जनपदों की नदियों के जल का बंटवारा आदि होता है, वहीं राजनीतिक स्तर पर यह, अल्पसंख्यकों तथा कमज़ोर वर्गों की सुरक्षा के प्रयास के अर्थ में लिया जाता है। लेकिन सामाजिक स्तर पर राष्ट्रीय एकता के तत्व धर्म, संस्कृति और भाषा ही होते हैं। दलित साहित्य राष्ट्रीय एकता के इन तीन महत्वपूर्ण तत्वों मानी धर्म,संस्कृति और भाषा की विकृतियों के खिलाफ मुहिम चलाता है चूँकि ये विकृतियाँ एकता में अवरोधक हैं। ओमप्रकाश वालीकि जाति के अस्तित्व को नकार समूह मानी एकता में जाति का अंत देखते हुए उसकी शक्ति को यूँ रेखांकित करते हैं -

मैंने भी देखे हैं यहाँ“
हर रोज अलगअलग चेहरे-
रंगरुप में अलग-
नहीं पहचानी जा सकती उनकी जाति
बिना पूछे
मैदान में होगा जब जलसा
आदमी से जुड़कर आदमी
जुटेगी भीड़
तब कौन बता पाएगा भीड़ की जाति
भीड़ की जाति पूछना वैसा ही है
जैसे नदी के बहाव को रोकना
समुद्र में जाने से”!

यह दलित साहित्य ही है जो मनुष्यमनुष्य की एकता की बात करता है और जातीगत समाज - को तोड़कर जातिविहिन समाज के निर्माण का सपना देखता है।

इसके विपरीत समानता की प्रवृत्ति मनुष्य को समूह में जीना सिखाती है। वह मनुष्य के विकास में प्रवीणता, दक्षता या महारत को प्रोत्साहित करती है। समानता, सहिष्णुता की भावना लिए प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ावा देती है और खेल भावना में प्रतियोगिता को। समानता की भावना ही बंधुत्व की भावना को जन्म देती है जो मिलजुलकर काम करने-, रहने, एकदूसरे के साथ सहिष्णुतापूर्वक जीने की - प्रेरणा देती है और यह प्रेरणा एकता की जन्मदात्री होती है। सर्वप्रथम बुद्ध ने आर्य संस्कृति की विशिष्टतावादी और श्रेष्ठता पर आधारित संस्कृति को चुनौती दी थी और व्यापक स्तर पर उसे प्रभावित भी किया था और उस समय देश एकता के सूत्र में भी बंधा था लेकिन अपने वर्तमान स्वरुप में समानता, बंधुत्व और आज़ादी की चिंतनधारा फ्रांस की क्रांति की ऐतिहासिक देन है, जिसे आधुनिक काल की बुनियादी विचारधारा माना जाता है। मोहनदास नैमिशराय इस अभिजात श्रेष्ठता से ही मुक्ति के लिए छटपटाते हैं -

तुम ब्रह्मा“ के मुख से
और मैं टांगों से पैदा हुआ
मुझे मालूम नहीं
तुम श्रेष्ठ मैं पतित
इस भ्रम से
कब मुक्ति मिलेगी मुझे”!

स्वतंत्रता आंदोलन के क्रम में जिन मूल्यों का विकास हुआ वे आधुनिक मानवीय विवेक से उभरे हुए थे। उसके बाद इस देश में जो संविधान लागू हुआ उसमें मनुष्य की और मनुष्य की समता का आदर्श था। कुछ समय तक उसके अनुरुप समाज की और मनुष्य की समता का आदर्श था। लेकिन देखतेदेखते एक ऐसी सत्तालोलुप संस्कृति विकसित हुई कि जिन कारणों से राष्ट्र टूटता है-, उन्हीं को चुनावी मुद्दों के रुप में अपनाकर भावावेश का उन्माद पैदा किया जाने लगा।

दलित साहित्य उन सब अंधविश्वासों, विकृत परंपराओं, भाग्यवादी सोच तथा ईश्वरीय चमत्कार का भी विरोधी है जो भारतीय जनता को वैज्ञानिक मिजाज और आधुनिक युग की बुनियादी सोच, जो मानवीय विवेक पर आधारित है, से दूर रखे हुए हैं। इसी कारण भारत दूसरे देशों के मुकाबिल पिछड़ा हुआ है। मोहनदास नैमिशराय ने ईश्वर के अस्तित्व पर सवाल उठाए हैं –

ईश्वर की मौत“
उस पल होती है
जब मेरे भीतर उठता है सवाल
ईश्वर का जन्म
किस माँ की कोख से हुआ

ईश्वर का बाप कौन”!

कंवल भारती कर्मफल के खिलाफ विद्रोह करते हैं –

अब यह नहीं हो सकता“
कि तुम्हारे भाग्य एवं कर्म के जाल
हमें उलझाए रहे
पीढ़ि”पीढ़ि।-दर-

दलित साहित्य दलितों की अस्मिता का विकास करते हुए भारतीय संस्कृति द्वारा मानवेतर यानि पशुवत् बना दिए भारतीय जनता के एक बड़े हिस्से को मनुष्यता का दर्जा दिलवाकर उन पर हावी, तथाकथित उच्च या श्रेष्ठ हिस्से को एक पंक्ति में खड़ा करने को इच्छुक हैं। सीभारती दलितों .बी. की पीड़ा और आत्मासम्मान की इच्छा को व्यक्त करते हैं, जब वे कहते हैं –

तुम फैलाते रहे गंदगी“
और मैं करता रहा सफाई
चलाता रहा मैं अपनी झाड़ू
तुम फैलाते रहे घृणा
और मैं बाँटता रहा प्यार।”

विड़म्बना यही है कि हमारे देश की एकता और अखंडता कायम रखने के लिए देश का विकास जरुरी है। हमारे देश में श्रम को ही निकृष्ट माना जाता है और इस प्रकार हमारे देश में एक तरफ निकृष्ट कही जाने वाली मेहनतकश श्रमजीवी जमात जो बहुसंख्यक है, तैयार की गई तो दूसरी तरफ उसका दोहन करने वाला बिना श्रम किए गौरवान्वित होने वाला, एक अल्पसंख्यकवर्ग त-ैयार किया गया जो बहुसंख्यक उत्पादक शक्तियों पर लंबे अरसे से प्रभुत्व जमाता रहा है। हमारे धर्मशास्त्रों ने शास्त्रीय फतवे देकर इन समाजों को जड़ बनाकर उनकी गतिशीलता खत्म कर दी। दलित साहित्य इस शास्त्रीय विधान के विरुद्ध श्रम की महत्ता को कायम करने के लिए खड़ा है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के शब्दों में-

सतह से उठते हुए“
मैंने जाना कि
इस धरती पर किए जा रहे
श्रम में
जितना हिस्सा मेरा है
उतना हिस्सा
इस धरती के
हवा पानी और
इससे उत्पन्न होने वाले

उस अन्न और धन में भी है।”

भारतीय मज़दूर अपनी यूनियनों के माध्यम से एक नारा बुलंद करतारहा है -‘देश के मज़दूरों एक हो!’ वह कारखाना के मालिकों के खिलाफ एक साथ मिलकर लड़ता है, हड़ताल करता है, जेल जाता है, यहाँ तक कि गोली भी खाता है, लेकिन वही मज़दूर जब खाना खाने बैठता है तो अलगअम्बेडकर ने इसी विभाजन की मुखालफल की थी और .अलग बँट जाता है। डॉ- .हा था मनु की व्यवस्था ने श्रम का विभाजन नहीं बल्कि श्रमिकों का विभाजन किया है। डॉक अम्बेडकर की विचारधारा से प्रेरित यह साहित्य समानता के स्तर पर एकता के इन मुद्दों की वकालत करता है। डॉसिंह ने श्रम की महत्ता के प्रतीक लेकर समानता के सूत्र को पकड़ते .एन . – एक साथ चलने की बात निम्नलिखित पंक्तियों में इस प्रकार की है हुए

दुकान हमारी भी है“
और तुम्हारी भी
ये बात और है कि
हमारी दुकान पर बिकता है
जूता
और तुम्हारी दुकान पर
रामनामी
हमारे लिए जूते का महत्व वही है
जो तुम्हारे लिए है रामनामी का
आओं समानता का
तार पकड़े
एकता का सूत्र गढ़े
साथ बढ़े।”

दलित साहित्य का लेखक उन वर्गों की ओर भी इशारा करता है जो भारतीय जनता को धार्मिक फतवों के तहत उनकी मानसिक गुलामी का फायदा उठाते हुए दंगों में ढकेलता रहा है और उन्हें धर्म के आधार पर बांटता भी रहा है। दलित साहित्य ऐसे किसी साहित्य के धार्मिक बंटवारे का विरोध करता है जो देश की एकता नहीं बनने देता। दलित कवि कंवल भारती आहवान करता है राष्ट्रीय एकता की शक्तियों का समानता की शक्तियों का और जनता का –

‘रचो ऐसी पारमिताएँ की हम बन सकें एक राष्ट्र।’

दलित साहित्य के लेखक थे, ये सवाल करते हैं कि मनुष्यता के अधिकारों से वंचित व्यक्ति से राष्ट्रीय एकता की उम्मीद कैसे की जा सकती है? आज पूर्वांचल में सेना के बल पर ही देश की एकता व अखंडता बरकरार है, सामाजिक एकता के बल पर नहीं। दलित साहित्य इस मानवीय अस्मिता से वंचित जमात में मानवीय अस्मिता भरकर देश को भेदभाव मुक्त राष्ट्र बनाने के लिए प्रसिद्ध है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

61. हिंदी गज़लों में सांप्रदायिक सद्भाव की अनुगूँज

प्रा.विजय लोहार,
सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
मूलजी जेठा महाविद्यालय, जलगांव (महाराष्ट्र) ४२५ ००१

स्वाधीनतापूर्व भारत में राष्ट्रीय सद् भावना और एकता अपने चरम पर रही। इतिहास गवाह है, भारत उस समय राष्ट्र नहीं था। 'राष्ट्र' इस संकल्पना से रहित था। भारत प्रांतीय राजा-रजवाड़ों की सीमाओं में विभाजित टुकड़ों-टुकड़ों की पहचान वाला भूभाग था। कहीं रजपूत,कहीं मरहटे,कहीं निजाम, कहीं सिंधियां तो कहीं कोई और राजा राज्य कर रहा था । शनै-शनै अंग्रेजों के कब्जे में गया हुआ हिन्दुस्थान नवजागरण के बाद राष्ट्राभिमान एवं राष्ट्रीय चेतना से प्रज्वलित हो गया ।स्वाधीनता के राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान समय -समय पर देश के आला नेताओं ने निद्रिस्त जनता में राष्ट्रभक्ति की ज्योति जलाई, ज्योत से ज्योत जलती गई और देश के हिन्दू -मुसलमान कंधे-से-कन्धा मिलाकर गोरी ताकत के खिलाफ़ लड़ने लगे। अपना ही राज और अपना ही आसमान देखने की चाह रखने वाले सरफरोशी की तमन्ना दिल में लिए हँसते-हँसते फांसी पर लटके, किसी ने अपने आशियाँ को जलाया तो किसी ने अपने व्यक्तिगत जीवन को राष्ट्र के लिए समर्पित कर दिया। हर किसी के आँख में आज़ादी का सपना था और दिल में उसे हासिल करने का अतुलनीय ज़ज्बा था । हिंदी गज़लकार नीरज पाण्डेय लिखते हैं,-

" बिसमिल और अशफ़ाक से उदहारण,
साथ-साथ होते हैं कुर्बान मेरे देश में।।
जब भी जरुरत पड़ी है यहाँ तब-तब,
हुए एक हिन्दू -मुसलमान मेरे देश में।।" १

भारत स्वतन्त्र हुआ तो देश की एक आँख में ख़ुशी का आंसू था, तो दूसरी में बटवारे का। सांप्रदायिकता की आँधी ने अमनपरस्त महात्मा गांधी तक को मजबूर कर दिया था। हिन्दू-मुस्लिम सिख-इसाई-हम सब है भाई-भाई' कहने वाले धीरे-धीरे हम सभी एक से अनेक में तब्दील होने लगे । एक- दूसरे के सुख-दुःख ,शादी ब्याह, तीज-त्यौहारों में जी- जान से जुटने वाले पास आने से कतराने लगे ।समय-समय पर राष्ट्रीय सहजीवन की भावना को तार-तार किया जा रहा था । सांप्रदायिक कट्टरता, धर्मवादिता,जातिगत संकीर्णता और प्रादेशिक अस्मिता के कारण हमारी सुन्दर और विशेष मानी जाने वाली राष्ट्रीय सद् भावना को ठेस पहुंचाई गई। वास्तविक मानव और राष्ट्रधर्म का विस्मरण किया जाने लगा ।आजाद भारत की इस त्रासदी पर डॉ.मधु खराटे जी लिखते हैं,- " धर्म में नाम पर व्याप्त ढकोसले बाजी, धर्माचारों की स्वार्थी मनोवृत्ति धार्मिक स्थानों पर होने वाले अनाचार आदि सबने इस क्षेत्र में कई तरह की विसंगतियों को जन्म दिया ।इस क्षेत्र में सबसे बड़ी समस्या है धरम की आड़ में पनपने वाली सांप्रदायिकता... आज़ादी के बाद भी सांप्रदायिकता की आग

शांत नहीं हुई। स्वतन्त्र भारत में सांप्रदायिक दंगे समय-समय पर भिन्न-भिन्न स्थानों पर एवं भिन्न-भिन्न वर्गों के बीच होते रहें।कभी यह आग हिन्दू और मुसलमानों के बीच लगी तो कभी हिन्दुओं के विभिन्न वर्गों के बीच ।" २

किसी राष्ट्र की संस्कृति, उसकी समाज रचना, वहां की राजनीति, अर्थनीति, वहां के लोगों की सामूहिक जीवन पद्धति और पारस्पारिक सहसंबंधों पर अधिक निर्भर होती है। यदि इस व्यवस्था में कहीं गड़बड़ी निर्माण हो जाए तो राष्ट्र की प्रगति और सुरक्षा का अंदरूनी ढांचा चरमरा जाता हैं। इसीलिए किसी भी राष्ट्र की जनता में राष्ट्रीय सद् भावना और एकता की निर्मल भावना का पनपना बहुत ही आवश्यक होता है। स्वतन्त्र भारत में धर्म, जाति, प्रान्त, भाषा आदि के नाम पर होने वाली आगजनी, मारकाट, लूटमार तोड़फोड़ जैसे आम बात हो गई। कभी पंजाब जलता रहा, तो कभी कश्मीर। स्वतन्त्र खलीस्थान -बोडोलैंड की मांग पर हिंसा, आसाम, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र में चलाई जाने वाली लाल क्रांति में हिंसा, बाबरीकांड, गोधराकांड में हिंसा, मुंबई -मालेगांव -गुजरात की दंगों में हिंसा, कभी ओरिसा में इसाईयों पर हमले तो कभी बिहार के गांवों या महाराष्ट्र के खैरलांजी जैसे गांवों में दलितों को जिन्दा जलना इसके जैसी कई हिंसक सामने आया, जिसने भारत की सुख -शांति और सोहार्दपूर्ण राष्ट्रीय सहजीवन को लील लिया । वारदातें बार-बार मानव की बर्बरता सामने लती रही। भारत में अनेक बार कट्टरता और अविवेक हमारी इस दशा पर जी ने खूब लिखा है, "

" बाग़ फूलों से सितारों से गगन जलता रहा।।
बर्फ़ के मौसम में धरती का बदन जलता रहा।।
हम कहीं हिदू, कहीं मुसलमान बने बैठे रहे,
धर्म के नाम पर सारा वतन जलता रहा।।" ३

आज़ादी के पहले विदेशी गोरी ताकतों के खिलाफ़ संघर्ष जारी रहा तो बाद के राष्ट्रीय जीवन में अपनों-अपनों के दरम्यान संघर्ष नज़र आता है । देश की आबोहवा ही विषाक्त बनती रही। बस्तियां, गाँव, शहर दंगों के परवान चढ़ते रहे।आज़ादी के बाद देश का तीव्र गति से विकास होगा इस सपने को धीरे-धीरे टूटता हुआ पाया गया।जिसकी अनुगूँज हिंदी ग़ज़ल में अनेक ग़ज़लकारों ने अपनी ग़ज़लों में सुनाई।आम लोग लुटते रहे, धर्म के नाम पर, प्रान्त-भाषा के नाम पर टूटते रहे। नफरत की आग न कम हुई न अलगाव की तीव्रता । हिंदी ग़ज़लकारों ने इस आग की दाहकता को अपनी ग़ज़लों में प्रस्तुत किया, आम जनता को अलगाव की तीव्रता का अहसास दिलाया ।वैसे तो, यहाँ पर सांप्रदायिक एवं अलगाववादी लोगों ने भारत की आम जनता को बरगलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। कुछ विशिष्ट ताकतें दूरियां पाटने की बजाय दूरियां बढ़ाते रहें और अपनी रोटियाँ सेंकते रहे, हिंदी गज़लों में इसकी दस्तक यों मिलती है, :-

" नफरतों की आग में यूँ बस्तियां रख दी गई।
घास पर जलती हुई ज्यूँ तीलियाँ रख दी गई।
मदिरों से मस्जिदों का सफ़र कुछ भी न था,

बस हमारे ही दिलों में दूरियां रख दी गई ।। ४

स्वार्थपरक और अवसरवादी राजनीति ने हर प्रकार से संकीर्ण मनोवृत्ति के संघर्ष को और हवा देने का दुष्कर्म किया ।उनके कारण हमारे देश में कई बार हैवानियत का नंगा नाच होता रहा ।सीधे-सादे व्यक्तियों के सांप्रदायिक,जातीय या प्रांतीय एहसासात को छेड़कर उसमें उन्माद निर्माण किया जाता रहा ।जिसका व्यंग्य की भाषा में ग़ज़लों के द्वारा कुठाराघात किया गया।

डॉ.गोपाल कृष्ण शर्मा लिखते हैं, " धर्मान्धता तथा जातिगत संकीर्णता की जिस तीव्र गति से आँधी चली उससे राष्ट्रीय एकता और अखंडता को काफ़ी धक्का लगा।सांप्रदायिक दंगे और कर्फ्यू के दिनों में जिस शैतानियत और हैवानियत का तांडव हुआ है, ग़ज़लकारों की दृष्टि में वह एक सत्तासीन राजनीति का दुष्परिणाम था,जिसका उन्होंने खुलकर विरोध किया ।" ५ हिंदी गज़लकार को कहना पड़ा,-

" खुदापरस्त से हुआ है खुदपरस्त यूँ ।।
खुद भाई का गला भी काटता आदमी।।
कहते हैं कि मजहब सिखाए प्यार यहाँ,
पे दंगों में खूब खून बहाता आदमी।।" ६

हिंदी ग़ज़लों में सकारात्मक सोच प्रस्तुत की गई है। बहुत से, हिंदी ग़ज़लकारों ने एकता की भावना को तोड़ने वाली शक्तियों पर खूब लेखनी चलाई है। हिंदी ग़ज़ल में मानवीय धर्म की पैरवी की गई है। इंसानियत ही परमोच्च धर्म माना गया है। 'अनेकता में एकता', यह जो पूरे विश्व में भारत की वास्तविक पहचान है, उसे बरक़रार रखने के लिए भी भरसक प्रयास किए गए हैं। बुद्ध,कबीर, भीमराव,फुले, महात्मा गांधी जैसे महापुरुषों ने दी हुई सीख को अपनाने की गुहार लगाई है। भारतीय जनशक्ति को विभाजित कर, हमारी लोकतान्त्रिक व्यवस्था तथा राष्ट्रीय एकता की गरिमा में सेंध लगाने वालों को बार- बार ललकारा है। हिंदी ग़ज़लों में जिस प्रकार राष्ट्र प्रेम की जाज्वल्य भावना विद्यमान है, वैसे ही राष्ट्र को अलगाव की भट्टी में झोंकने वालों के विरुद्ध व्यंग्य की ज्वालाएं भी मौजूद है। दिनेश दधिची अलगाववादियों से सीधा सवाल ही पूछते हैं कि, हमारी एकता में दरारें बढ़ाकर हमें नफ़रत का जहर मत पिलाइए, क्योंकि हम हिंसा के नहीं अहिंसा के साधक और अमन के कायल है, -

" बन्दे हैं हम रहीम के, है भक्त राम के,
'राम' और 'रहीम' को लड़ा रहे हो तुम ।।
मिलजुल के हम रहे हैं,मिलजुल के रहेंगे,
नफ़रत का जहर क्यों पिला रहे है तुम।।
हम अमन के हामी है,रहने दो अमन से,
हिंसा का पाठ क्यों पढ़ा रहे हो तुम ।।" ७

हिंदी ग़ज़लकारों ने ग़ज़लों के माध्यम से अपनी जनधर्मिता का बखूबी निर्वाह किया है। वस्तुतः सांप्रदायिक सद् भाव और राष्ट्रीय एकता हमारी राष्ट्रीय अस्मिता की सच्ची पहचान है। विविधता में एकता देश की उन्नति का मार्ग ही प्रशस्त करती है। इसके लिए देश के विभिन्न समुदाय को लोगों के बीच पारस्परिक प्रेमभाव और सद् भाव बना रहे, यह भी बहुत आवश्यक है। समाज की सभी इकाईयों के बीच द्वेष भावना मिटाने के लिए हिंदी गज़लकार प्रयत्नशील दिखाई देते हैं। इसीलिए हिंदी ग़ज़ल में सहिष्णुता, मानव प्रेम, परोपकार, अहिंसा ,बंधुता तथा उदारता जैसे मानवीय जीवन मूल्यों को बड़े पैमाने पर अभिव्यक्त किया गया है। राष्ट्रीय जीवन को खुशहाल देखने की कामना प्रकट की गई है। राष्ट्रीय एकता की भावना का एक उदहारण आलोक श्रीवास्तव की ग़ज़ल में देखा जा सकता है, -

"वो दौर दिखा इसमें इन्सान की खुशबू हो।।
इन्सान की सांसों में ईमान की खुशबू हो।।
पाकीज़ा अजानों में मीरा के भजन गूंजे,
नौ दिन के उपासों में रमजान की खुशबू हो।।
मस्जिद की फिजाओं में महकार चन्दन की,
मंदिर की हवा में लोभान की खुशबू हो ।।" ८

हिंदी गज़लकार यह चाहता है कि, एक मानवतापूरक धर्म की स्थापना हो, जिसमें इंसानियत को महत्त्व दिया जाए, समाज की उर्वरा भूमि में प्रेम और सद् भाव का बीजवपन हो, आपसी सहयोग की भावना हर किसी के मन में हो, हर भारतवासी किसी भी संप्रदाय, जाति या धर्म का हो, वह राष्ट्र और मानवता को अपना आराध्य माने। जब हम हिंदी है और हिंदोस्ता ही हमारा वतन है, तो झगड़े क्यों ? जब खून सबका एक है, जब देश सबका एक है तो यह अलग कहानी क्यों ? गज़लकार शंखधर अपनी एक ग़ज़ल में कहते हैं,

"हम न हिन्दू न सिख मुसलमान है।।
दोस्तों कुछ नहीं हम तो इंसान है।।
मंदिरों-मस्जिदों से हमें क्या गरज,
दिल की बस्ती के हम मेहमान है ।।" ९

अन्ततोगत्वा स्पष्ट है कि, हिंदी ग़ज़ल मानवीय सरोकारों से युक्त है। राष्ट्रीय एकता और सद् भाव को प्रस्तुत करते समय ग़ज़लकारों ने अपनी राष्ट्रीय अस्मिता को व्यक्त किया है। मानव जीवन को समस्त भेदों से निजात दिलाने की प्रमाणिक कोशिश हिंदी ग़ज़लों में परिलक्षित होती है। हिंदी ग़ज़लकारों ने राष्ट्रीय सहजीवन को तहस-नहस करने वाली स्वार्थपरक शक्तियों पर अपनी ग़ज़लों द्वारा जोरदार कुठाराघात किया है। आपसी मेलजोल बढ़े, किसी में द्वेष की भावना न हो राष्ट्रीय एकता बनी रहे, इसीलिए मानवीय स्वस्थ जीवनमूल्यों को ग़ज़लों में स्थान दिया है। उन्होंने पारस्परिक सद् भाव की भावना को अधिक बल देने हेतु आशावादी तथा सकारात्मक सोच को व्यक्त किया है।

संदर्भ सूची :

१) गज़लें ही गज़लें, संपा.शेरजंग गर्ग, पृ.४०

२) साठोत्तरी हिंदी ग़ज़ल, डॉ.मधु खराटे, पृ.१८१-१८२

३) हिंदी ग़ज़ल :उद् भव और विकास, डॉ.रोहिताश्व अस्थाना,पृ.२२५

४) ग़ज़लः सौन्दर्य मीमांसा, डॉ.अब्दुर्हीम शेख,पृ.२२०

५) हिंदी ग़ज़ल : सन्दर्भ और सार्थकता,
संपा.डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ एवं डॉ.बदामसिंह रावत, पृ.६२

६) टुकड़े-टुकड़े जिंदगी, देवदास 'बिस्मिल', पृ.२८

७) हिंदी ग़ज़ल : सन्दर्भ और सार्थकता,
संपा.डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ एवं डॉ.बदामसिंह रावत, पृ.६३

८) दुष्यंतोत्तर हिंदी ग़ज़ल, डॉ.मधु खराटे, पृ.९७

९) निर्झर (ग़ज़ल विशेषांक),संपा.अवधेश सक्सेना,पृ.६७

62. 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ' नाटक में सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ.एमेकर एन.जी.
हिन्दी विभागप्रमुख
श्री हावगीस्वामी महाविद्यालय,उदगीर जि.लातूर

'एक निश्चित भूमि पर रहनेवाले लोगों की भावनिक एकता को राष्ट्रीय एकात्मता कहा जाता है।' यह भावनिक एकता ही किसी भी राष्ट्र की महान शक्ति होती है। राष्ट्र की उन्नति भी इसी भावनिक एकता से ही संभव होती है। भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय एकता यह जातीय तथा प्रांतीय एकता से प्रभावित है। भारत में राष्ट्र की अपेक्षा जातीय और प्रांतीय भावना प्रबल है। राष्ट्रीय एकता में यह अवरोध के रुप में भी देखे जा सकते है। इसी अवरोध को दूर करने का प्रयास अनेक महापुरुषों ने अनेक आंदोलने के माध्यम से तथा साहित्यकारों ने साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से किया है। यह कार्य आज भी जारी है।

भारत में राष्ट्रीय एकता की स्थापना में भारतीय साहित्य का अपना विशेष योगदान है। स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात भी साहित्य ने भारतीयों को एकसूत्र में बाँधकर रखने का सफल प्रयास किया है। राष्ट्रीय एकता में आनेवाले अनेक गतिरोधों को नकारते हुए राष्ट्रीय एकता और सद्भाव की स्थापना की है। इसी प्रकार असगर वजाहत का चर्चित नाटक है 'जिस लाहौर नही देख्या ओ जम्याइ नइ'। इस नाटक के माध्यम से असगर वजाहत ने भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भाव का संदेश देने का प्रयास किया है। इतना ही नहीं यह नाटक देश–विदेशों की सिमाओं को तोडकर इन्सानियत की स्थापना करता है, साम्प्रदायिक सहिष्णुता का संदेश देता है। ''इस देश में आज जिस चीज की सबसे ज्यादा जरुरत है वह है सहिष्णुता। जिसका अभाव हमारी नैतिक और सामाजिक बुनियादों को खोखला कर रहा है। इस संदर्भ में .... प्रस्तुत नाटक 'जिस लाहौर नइ देख्या...' बहुत प्रासंगिक था।''[1]

प्रस्तुत नाटक भारत–पाकिस्तान विभाजन के समय के विस्थापित लोगों की कथा है। यह कथा लाहौर शहर की है। सिकंदर मिर्झा का परिवार भारत के लखनौ से लाहौर आकर बसा है। बाईस कमरों की रतन की हवेली उसे दी गई है। उसमें रतन की माँ पहले से रहती है, जो दंगों में बच गई थी। उसके बेटे रतन का कोई पता नहीं है। नाटक में पहलवान नामक मुस्लीम लीगी नेता रतन की अम्मा को घर से निकाल देना चाहता है। वह अपने स्वार्थ के लिए रतन की अम्मा को मारना चाहता है। ऐसे में मौलवी साहब को वह अपने पक्ष में करना चाहता है। मौलवी साहब उसे कुराण के अनेक संदर्भ देकर रतन की माँ की रक्षा करने को कहते है। उसके हिंदू धर्म का सम्मान करने को कहते है। इतना ही नहीं मौलवी साहब रतन की माँ के देहान्त के बाद 'राम नाम सत है' कहकर पूरे सम्मान के साथ रतन की माँ का अंतीम संस्कार करते है। इसी से परेशान होकर पहलवान मौलवी की हत्या कर देता है। इस पूरे कथानक में नाटक धार्मिक कट्टरता को छोडकर धार्मिक सद्भाव का संदेश देता है जो आज राष्ट्रीय एकता की स्थापना और साम्प्रदायिक सद्भाव का सशक्त उदाहरण है।

प्रस्तुत नाटक मातृभूमि की श्रेष्ठता धर्म से भी अधिक होती है इस बात का संदेश देता है। रतन की माँ हिंदू चरित्र है। वह लाहौर में रहती है। सिकंदर मिर्झा और उनका परिवार लखनौ से पाकिस्तान गये है जो मुस्लिम चरित्र हैं। रतन की माँ को दुनिया में सबसे श्रेष्ठ भूमी लाहौर की लगती है तो सिकंदर मिर्झा को लखनौ ही सर्वश्रेष्ठ लगता है। इतना ही नहीं तो रतन की माँ कहती है–''बेटी लाहौर तो बड्डा दूजा शहर ते साड्डे हिंदुस्तान विच है ही नहीं... मसल मशहूर है

कि जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ ही नइ।''[2] सिकंदर मिर्झा अपने लखनौ की सर्वश्रेष्ठता की बात करते हैं। अर्थात् मातृभूमि धर्म से श्रेष्ठ होने का नाटक का संदेश लेखक का मूल संदेश है।

धर्मगत विद्वेष के वर्तमान माहौल में साम्प्रदायिक सद्भाव आज की आवश्यकता बन गई है। ऐसे माहौल में यह नाटक मौलिक संदेश देता है। पहलवान जब रतन की माँ के पाकिस्तान में रहने का विरोध करता है तो मौलवी साहब उन्हें धर्म का सही संदेश समझाते है– ''भई हदीस शरीफ हैं कि तुम दूसरों के खुदाओं को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारे खुदा को बुरा न कहें, तुम दूसरों के मजहब को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारे मजहब को बुरा न कहें।''[3]

''मंदिरों को बनने न देना... या मंदिरों को तोडना इस्लाम नहीं है पुत्तर।''[4] इससे बेहतर धार्मिक सद्भावना का संदेश दूसरा नहीं हो सकता है। धार्मिक सद्भावना को व्यक्त करते हुए मौलवी साहब कहते है, ''पुत्तर इस्लाम खुदगर्जी नहीं सिखाता। इस्लाम दूसरे के मजहब और जज्बात का एहतेराम करना सिखाता है। अगर तुम सच्चे मुसलमान हो तो ये करके दिखाओ?''[5]

मौलवी साहब इस नाटक के धर्म के सच्चे स्वरुप के प्रहरी बनकर आए है। वह हर बार धर्म के सच्चे स्वरुप को व्यक्त करते है, ''लडना ही है तो अपने नृस से लडो.... वही सबसे बडा जिहाद सी... खुदगर्जी, लालच, आरामो–असाइश से लडो... बेसहारा ने बुड्डी औरत नाल लडना इस्लाम नहीं है।''[6] मौलवी का यह संदेश आज सभी धर्मों के लिए सच्चा संदेश है। यह संदेश ही आज राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भावना की निर्मिती में आवश्यक है। मौलवी साहब इस नाटक में राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भाव के सच्चे दूत बनकर आए है। उनका चरित्र राष्ट्रीय एकता का चरित्र है।

प्रस्तुत नाटक में पहलवान और उनके चेलों को छोडकर सभी पात्र साम्प्रदायिक सद्भावना का संदेश देते है। नाटक भले ही लाहौर शहर का हो लेकिन वह आज राष्ट्रीय एकता के साथ–साथ वैश्वीक सद्भाव को स्थापित करता है। पाठक इस बात से अवगत हो जाता है कि पहलवान जैसा नेता ही आज राष्ट्रीय एकता और धार्मिक सद्भावना के प्रमुख शत्रू है। आम जनता तो एकता के साथ रहना चाहती है। पहलवान जैसे नेता धर्म का प्रयोग अपने स्वार्थ के लिए मनचाहा करना चाहते है। नाटक का अंत मौलवी के अन्त से होता है। यहाँ वर्तमान देश की वास्तविकता का परिचय मिलता है।

सारांश रुप में यह नाटक राष्ट्रीय एकता का संदेश देता हुआ साम्प्रदायिक सद्भावना की स्थापना करता है। आम जनता के मन में जो इन्सानियत की बात है उसकी स्थापना प्रस्तुत नाटक करता है–''धार्मिक सहिष्णुता और सहअस्तित्व को आदमियत की पहली शर्त स्वीकार करते है।''[6] सभी मनुष्य की यह भावना ही नाटक की सफलता और धार्मिक सद्भावना का परिचायक है।

संदर्भ

1) समाचार पत्र, डॉन, कराची, जुलाई 1991
2) जिस लाहौर नही देख्या ओ जम्याई नई–असगर वजाहत, पृ.सं.33
3) वही, पृ.60
4) वही, पृ.60
5) वही, पृ.75–76
6) वही, पृ.62
7) जिस लाहौर नही देख्या ओ जम्याई नई–असगर वजाहत, तीन शब्द (भूमिका)

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

63. 'मलबे का मालिक' कहानी में सांप्रदायिकता की समस्या

विजय सदामते
शोध–छात्र
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

सांप्रदायिक सद्भाव वह है जो धर्म, संस्कृति, भाषा, क्षेत्र तथा जाति से परे होकर राष्ट्रीय एकात्मता के मुद्दे पर सब लोग इक्कठ्ठा होते हैं। सांप्रदायिक सद्भाव का अर्थ है विभिन्न धर्मियों में एक दूसरे के प्रति होनेवाला बंधु–भाव या आस्था।राष्ट्रीय एकता का मतलब है– राष्ट्र के सब घटकों में भिन्न–भिन्न विचारों और विभिन्न धारणाओं के होने के बावजूद आपसी प्रेम, एकता और भाईचारा जिसमें मानसिक, बौद्धिक, वैचारिक और भावनात्मक संन्निकटता की आवश्यक है।

सांप्रदायिकता से संबंधित क्रमशः स्मिथ और श्रीकृष्णदत्त भट्ट की परिभाषाओं पर दृष्टिपात करेंगे– **स्मिथ के मत से –**''एक सांप्रदायिक व्यक्ति अथवा समूह वह हैं जो अपने धार्मिक या भाषा–भाषी समूह को एक ऐसी पृथक राजनीतिक तथा सामाजिक ईकाई मे रूप में देखता है जिसके हित अन्य समूहों से पृथक होते हैं और जो अक्सर उनके विरोधी भी हो सकते है।''

श्रीकृष्णदत्त भट्ट के अनुसार– ''संप्रदायवाद का अर्थ है, मेरा संप्रदाय, मेरा पंथ, मेरा मत ही सबसे अच्छा है। उसी का महत्व सर्वोपरि होना चाहिए। मेरे संप्रदाय की ही तूती बोलनी चाहिए। उसी की सत्ता मानी जानी चाहिए। अन्य संप्रदाय हेय हैं। उन्हें या तो पूर्णतः समाप्त कर दिया जाना चाहिए या यदि वे रहें भी तो मातहत होकर रहें मेरे आदर्शों का सतत पालन करें। मेरी मर्जी पर आश्रित रहे...अपने धार्मिक संप्रदाय के भिन्न अन्य संप्रदाय अथवा संप्रदायों के प्रति उदासीनता, उपेक्ष, दया दृष्टि, घृणा, विरोध, और आक्रमण की भावना सांप्रदायिकता है, जिसका आधार वह वास्तविक या काल्पनिक भय था आशंका है कि उक्त संप्रदाय हमारे अपने संप्रदाय और संस्कृति को नष्ट कर देने या हमें जान–माल की क्षति पहुँचाने के लिए कटिबद्ध है।''

उपर्युक्त दो परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि दो या अधिक परस्पर भिन्न धर्म, विशिष्ट समाज, वंश, जाति या पंथ निहाय आचार विचार प्रणालियाँ, भिन्न संस्कृतियाँ आदि सामान्यतः प्रत्येक संप्रदाय का प्रायः दुराग्रह होता है कि उनका ही संप्रदाय अन्य संप्रदायों से श्रेष्ठ है और यह धारणा बनाते समय अन्य मतवाद या संप्रदायों के प्रति हेठी या द्वेष की भावना होती है। भारत में अनेक प्रकार के संप्रदाय, धर्म तथा आचार–विचार प्रणालियाँ है। ऐसी स्थिति में विभिन्न संप्रदायों में परस्पर तनाव, संघर्ष, द्वेष, मत्सर की भावना जाने अनजाने पनपती रहती है, जिसके कारण यदाकदा दो भिन्न जातियों, दो भिन्न धर्मियों या विभिन्न प्रांतियों, विभिन्न भाषियों, विभिन्न मतप्रणालियों में हिंसाचार तथा दंगाफसाद होता है और समाज के अमन चयन को क्षति पहुँचती है। आगे चलकर यह रोष तथा वैमनस्य इतना बढ़ जाता है कि राष्ट्रीय एकता को खतरा पहुँचता है।

राष्ट्रीय एकता होती है इंद्रधनुष जैसी, जिसमें अलग–अलग सात रंग होते है किंतु अलग–अलग सात रंग जब सम्मिलित होते हैं, तो उनका आकाश में एक सुंदर इंद्रधनुष तैयार होता है। उसी प्रकार भारतीय आकाश में विविध जाति, धर्म, पंथ, भाषा, प्रांत, वेशभूषा के लोगों का संम्मिलन या स्नेह मिलन होता है तब राष्ट्रीय एकता का एक सतरंगा इंद्रधनुष्य इस देश के क्षितिज पर निखर उठता है और इस राष्ट्रीय ऐक्य के दर्शन 1962 के चीन–भारत युद्ध, 1971 के भारत–पाकिस्तान युद्ध तथा कुछ वर्ष पहले कारगील युद्ध में हुए।

साहित्यकार प्रतिबद्ध कलाकर होता है। वह अपने साहित्य में सामाजिक जीवन में घटित दृष्टांतों के द्वारा सांप्रदायिकता के दृष्परिणामों को शब्दबद्ध करने के साथ–साथ सांप्रदायिक

सद्भाव तथा राष्ट्रीय ऐक्य के महत्व को प्रकाशित करता है। उदाहरण स्वरूप मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक' सांप्रदायिक समस्या पर आधारित कहानी है। प्रस्तुत कहानी में संप्रदायवाद के तहत हुए देश–विभाजन की समस्या की भीषणता का चित्रण हुआ है। कहानी में धर्मांध मनुष्य के क्रूरतम आचरण, विभाजन के पश्चात की मानसिकता और नैतिक मूल्यों का विघटन बड़ी मार्मिकता से चित्रित हुआ है।

प्रस्तुत कहानी का घटनास्थल अमृतसर है, जहाँ लाहौर से मुसलमानों की एक टोली हॉकी का मैच देखने आई थी, जिसमें गनी मियाँ भी थे, जो साढे सात वर्ष बाद अमृतसर आये थे। वस्तुतः गनी मियाँ सांप्रदायिक सद्भाव के प्रतीक चरित्र है। ''हॉकी का मैच देखने का तो बहाना था, उन्हें ज्यादा चाव उन घरों और बाजारों को फिर से देखने का का था जो साढ़े सात–साल पहले उनके लिए पराये हो गये थे। हर सड़क पर मुसलमानों की कोई–ना–कोई टोली घूमती नजर आ जाती थी। उनकी आँखें इस आग्रह के साथ वहाँ की हरचीज को देख रही थी; जैसे वह शहर साधारण शहर न होकर एक अच्छा खासा आकर्षण केंद्र हो।'' अमृतसर देखने की जितनी उत्सुकता लाहोर से आए मुसलमानों की भी उतनी ही उत्सुकता अमृतसर में बसे लोगों को लाहौर जानने की थी। इससे यह स्पष्ट है कि हिंदुस्तान के विभाजन ने केवल दो देशों की राजनीतिक सीमाएँ अलग कर नहीं दी, बल्कि उनके दिलों को अलग न कर सकी।

प्रस्तुत कहानी का के केंद्र है– बाजार बांसा। यहाँ विभाजन के पहले ज्यादातर निचले तबके मुसलमान और हिंदू रहते थे। सबसे ज्यादा विभाजन की त्रासदी को इन्हीं निचले तबके ने सहा था। देश विभाजन के बाद अब्दुल गनी मियाँ अमृतसर में अपने बेटे चिरागदीन, बेटियाँ किश्वर और सुलताना तथा पत्नी जुबेदा को छोड़कर लाहौर चले गये थे। उसी दरम्यान जातीय एवं धार्मिक दंगों का पूरे भारत वर्ष में विनाश का तांडव नृत्य सर्वत्र होता है। हिंदू परिवार का रक्खे पहलवान गनी मियाँ के बेटे चिराग को खाने की थाली से उठाकर रास्ते पर लाकर उसकी हत्या कर देता है। उसे मारते वक्त रक्खे पहलवान उससे कहता है ''चीखता क्यों है भैण के... तुझे मैं पाकिस्तान दे रहा हूँ, ले पाकिस्तान!'' वास्तव में गनी मियाँ का घर हथियाने के लालच से उसके परिवार की हत्या कर दी जाती है। मलबे को देखकर गनी मियाँ का नाराज होना और मनोरी की टिप्पणी करना कि– ''तुम्हारा मकान उन्हीं दिनों जल गया था।'' वस्तुतः इस बात की ओर संकेत करता है कि अमृतसर के मुहल्ले और वहाँ के लोगों के बारे में गनी मियाँ ने जो गलतफहमियाँ पाल रखी भी वह सब झूठी थी। बहुत पहले ही वह भाईचारा, सद्भाव, प्रेम, करूणा खत्म हो चुकी थी। सात साल बाद भी मियाँ द्वारा रक्खे पहलवान को देखकर गले मिलना ओर गनी का इस मिट्टी को छोड़कर जाने का मन न करना ये सांप्रदायिक सद्भाव के दयोतक है। गनी मिया रक्खे पहलवान को कहता है–

''सब मे भाई–भाई की–सी मुहब्बत थी। अगर वह चाहता, तो तुमसे किसी के घर में नहीं छिप सकता था? उसमें इतना भी समझदारी नहीं थी?'' आगे वह कहता है– ''चिराग कहता था कि रक्खे के रहते मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड सकता मगर जब जान पर बनी आयी तो रखे के रोके भी न रुकी।'' विश्वास की यह आस्था रक्खे पहलवान को भीतर तक हिला देती है। रक्खे पहलवान का इन्सानीयत का हैवानीयत में बदलना सांप्रदायिक दुराभाव का प्रतीक है।

वास्तव में 'मलबा' विभाजन के दौरान फैले उन्माद और वहशीपन का परिणाम है। यह मलबां सामाजिक संबंधों, रिश्तो–नाते, मानवीयता, विश्वास, भाईचारे के बिखराव तथा टूटन का है। विभाजन के बाद सात साल में कई नई इमारते बनी परंतु मलबे का ढेर वैसा का वैसा मौजूद है। यह इस

बात का दयोतक है कि विभाजन के दौरान फैले वैमनस्य, त्रासदी, अविश्वास, मानवीय संबंधों का बिखराव आज भी लोगों के दिलो–दिमाग में मौजूद है।

इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में सांप्रदायिक अर्थात मजहब के नाम पर देश विभाजन की समस्या और धर्मांधता के कारण इंसान के शैतान में तब्दिल होने का परामर्श प्रस्तुत किया गया है। रक्खे पहलवान जहाँ हीनताबोध से ग्रसित सांप्रदायिकता का प्रतिनिधि चरित्र है तो दूसरी ओर अब्दुल गनी मियाँ जाति–धर्म के परे जाकर इन्सानीयत, सांप्रदायिक सद्‌भाव का प्रतीक चरित्र है।

आज मनुष्य यद्‌यपि उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के युग में साँस ले रहा है तथापि उसके दिलों दिमाग में वही मध्ययुगीन संकीर्ण मानसिकता अवरुद्‌ध पाई जाती है। कृष्ण ने कहा था– ''यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत! अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानम सृज्याहम।'' अर्थात कृष्ण ने आश्वस्ति देते हुए कहा था कि भविष्य में जब भी इस देश तथा धर्म को ग्लानि तथा संकट पहुँचेगा तब तब मैं इस देश में एक विशिष्ट अवतार धारण करूँगा और सचमुच आधुनिक युग में कृष्ण के रूप में यहाँ महात्मा गांधी ने अवतार लिया था, किंतु इस देश की यह विडम्बना है कि उसी महामानव महात्मा गांधी को संकुचित जाति–धर्म का शिकार होना पड़ा। इन्सानीयत का खून हुआ। इस प्रकार राष्ट्रीय ऐक्य अगर स्थापित करना है तो भिन्न–भिन्न जाति, धर्म, पंथ, वंश, प्रांत, भाषा आदि में परस्पर भाईचारा, सद्‌भाव, विश्वास, आस्था, सौहाद्रता होनी चाहिए अन्यथा ''सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्ता हमारा'' यह गीत–पंक्ति आज क्या मायने रख सकती है।

संदर्भ

1. श्रीकृष्ण भट्‌ट – सामाजिक विघटन और भारत
2. सरला दुबे – भारतीय समाज एवं संस्कृति
3. मोहन राकेश – 'मलबे का मकान' (कहानी)

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

64. अभ्यासक्रम की कहानियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. सविता सिंह
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
अण्णासाहेब मगर महाविद्यालय, हडपसर
पुणे 28.

एक विशेष समुदाय के लोगों के लिए इस विश्वास पर आधारित अवधारणा ही सांप्रदायिकता है। किसी खास धर्म को माननेवाले लोगों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक हित भी समान होते हैं। यह वही धारणा है जो भारत में हिंदू, मुसलमान, ईसाईयों और सिखों को अलग–अलग समुदाय मानती है, जिनका निर्माण एक दूसरे से अलग–अलग और बिल्कुल स्वतंत्र रूप से हुआ है। सांप्रदायिकता के कई पहलू हैं – एक यह है कि सांप्रदायिकता संभ्रान्त लोगों की राजनीति है। भारत एक खोज में नेहरू जी ने कहा है ''सांप्रदायिक झगड़ों का धर्म से कोई संबंध नहीं, हालांकि धर्म इन मुद्दों का बहाना बन जाता है।'' प्रत्येक धार्मिक व्यक्ति सांप्रदायिक नहीं होता मगर प्रत्येक सांप्रदायिक व्यक्ति धर्म का चोला अवश्य पहनता है। अभ्यासक्रम में जब भी हम कुछ पढ़ाते है तो उसमें राष्ट्रीय एकता से संबंधित भावों का होना इसलिए भी आवश्यक होता है क्योंकि उसके माध्यम से विद्यार्थीयों में राष्ट्र प्रेम जाग्रत किया जा सके और समूह में एक साथ राष्ट्रीय एकता का संचालन किया जाए।

पाठों में इक्के–दुक्के ही राष्ट्रीय एकता की बात दिखायी पडती है। गद्य वैभव और गद्य परिमल की सभी कहानियों को छानबीन करने पर केवल तीन कहानियाँ राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना से जुडी हुई प्राप्त हुई। पहली कहानी पंच परमेश्वर, दूसरी सुभान खाँ और तीसरी पानी और पुल।

पंच परमेश्वर कहानी में अलगू चौधरी और जुम्मन शेख की मित्रता सांप्रदायिक सद्भावना की ही परिचायक है। प्रेमचंद जैसे कहानीकार इसीलिए कथा सम्राट कहलाए क्योंकि वे केवल मनोरंजन के लिए कहानी नहीं लिखते थे। वो तो राष्ट्रीय एकता, सांप्रदायिक सद्भावना एवं समकालीन समस्याओं को विषय बनाकर समाज को चेतना प्रदान करते थे। ठीक इसी तरह रामवृक्ष बेनीपुरी जी हैं जिन्होंने सुभान खाँ रेखाचित्र लिखकर राष्ट्रीय एकता को तो स्थापित किया है। साथ ही मस्जिद बनाने के उपरांत कुर्बानी का जब प्रश्न आया तो इतने सुंदर तरीके से लेखक ने सांप्रदायिक सद्भावना की बात की है जो कि इस प्रकार है – सभी लोग कुर्बानी देने की बात कर रहे थे ऐसे में सुभान खाँ ने कहा ''मैं हज से आया हूँ, कुरान मैंने पढ़ी है। गाय की कुर्बानी लाजिमी नहीं है और यदि तुम्हें कुर्बानी करनी ही है तो पहले मेरी करो तभी गाय की हो सकेगी।''

पानी और पुल कहानी भी महीपसिंह जी द्वारा लिखित है। इसमें पुल प्रतीक है राष्ट्रीय एकता का और वह मानवीय मिलन का सेतु है। सांप्रदायिक सद्भाव का जीता जागता नमूना है। इसमें पंजाब विभाजन घोषित होने पर लोगों में जो दुश्मनी का भाव जागा था वही पुल के बन जाने पर प्रेम भाव में बदल जाता है।

इसी अभ्यासक्रम में लगी एक कविता है मनुष्यता जिसे अलीक जी ने रची है। यदि सच में हम सब राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव को अपने जीवन में लाना चाहते हैं तो इस कविता को अवश्य पढना चाहिए।

''जिस तरह नदियों की कोई जात नहीं होती,
न ही पर्वतों, पहाड़ियों की कोई बिरादरी,

न ही वनों–जंगलों वनस्पतियों का कोई संप्रदाय,
न ही आकाश धरती समुद्रों का कोई धर्म–विधर्म।
जिस तरह धूप, हवाएँ जलधाराएँ गंध उष्माएँ,
किसी भी आकार, प्रकार रेशम धागे में
नहीं बँधती, बस उसी तरह
जीवन की करूणा, आत्मीयता
और मनुष्यता . . .
बगैर किसी भेदभाव
रंग चाव, तेवर ताव
रसास्वादनों के
सबके लिए
सृष्टि समष्टि समागत
समर्पित है।''

मुझे पूरा यकीन है कि जो मनुष्यता को समझ गया होगा उसका सद्भाव राष्ट्रप्रेम से अपने आप जुड जाएगा। यूँ तो साहित्य जगत समय–समय पर राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव को कविता, कहानी,उपन्यास, नाटक जीवनी और अन्य विधाओं के माध्यम से प्रकट करता ही है, जरूरत इस बात की है कि हमस ब भी अपने खोल से निकलकर उसे देखें, समझे और अपनाए।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

65.नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में सांप्रदायिक सहिष्णुता

डॉ. शेख मोहम्मद शाकिर
हिंदी विभागाध्यक्ष,
पूना कॉलेज, कॅम्प, पुणे 411001.

प्रत्येक संस्कृति की यह विशेषता रहती है कि वह अन्य संस्कृति एवम् धर्म का आदर–सत्कार करती है। यह बात और है कि स्वार्थ प्राप्ति के लिए कुछ व्यक्ति विभिन्न संप्रदायों में दूरियाँ बढा देते हैं, किन्तु फिर भी हमें भारत में सांप्रदायिक सहिष्णुता के उदाहरण दृष्टिगत होते हैं। नासिरा शर्मा हिंदी साहित्य की मूर्धन्य कथाकार है। उनके उपन्यासों एवं कहानियों में सांप्रदायिक सद्भावना की अभिव्यक्ति दिखाई देती है।

'ज़िन्दा मुहावरे'' उपन्यास का नायक निज़ाम बँटवारे के समय पाकिस्तान चला जाता है। वहाँ उसे न केवल अपने माता–पिता, भाई–बहन, भाभी, भतीजे की याद सताती है, बल्कि सुन्दर काकी, मँगरू काका और बचपन के साथी ब्रजलाल की याद में भी वह तड़पता है। चालीस वर्ष बाद अपने घर लौटता है, ब्रजलाल से मिलकर उसकी आँखे भर आती है।

'ठीकरे की मँगनी'' उपन्यास की महरुख़ का डॉ. विमल लछमिनिया, पीटर तथा गनपत काका से ऐसा अंतःसंबंध जुड़ जाता है, कि वे उन्हें अपने परिवार का एक हिस्सा मानती है। 'अक्षयवट'' उपन्यास में सांप्रदायिक सहिष्णुता दृष्टिगोचर होती है। ''विजयदशमी का पर्व पूरे भारत में मनाया जाता है, मगर जो एकता इलाहाबाद में नज़र आती है, वह कहीं और नहीं। इसी एकता को तोड़ने और हिंदू–मुसलमान को दो धर्मों के खाँचों में बाँटने की अंग्रेजों ने बडी कोशिश की थी। उनकी नीति कुछ वर्षों तक दशहरा बन्द करवाने में सफल ज़रूर हुई, मगर शहर की सांस्कृतिक एकता को तोड़ नहीं पायी।''[1] इसी सांस्कृतिक एकता को मजबूती से जोडे रखने का कार्य ज़हीर, रमेश, शमशेर, सलमान, जगन्नाथ (जुगनू), मुरली, बसन्ता, सतीश मजूमदार जैसे युवा करते हैं। ज़हीर का रमेश की बहन से राखी बंधवाना उनकी धार्मिक सहिष्णुता का उदाहरण है।

'सरहद के इस पार'' कहानी का रेहान मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ है। रेहान हिन्दू–मुसलमान फ़साद के समय स्वयं हिंदूओं को भला–बुरा कहता था, लेकिन जब कुछ मुसलमान युवक एक हिंदू लड़की का विनयभंग कर रहे होते, रेहान के भीतर का मानव जागृत हो जाता है, और वह 'रामखिलावन'' की उस लड़की को उन दरिंदो के चंगूल से बचाकर उसके घर तक छोड आता है।

'आमोख्ता'' कहानी में पंजाब में चल रहे आतंकवाद के कारण वीरजी का परिवार तबाह हो जाता है। उन्हें बचपन की घटना स्मरण हो आती है, जब वे पड़ौस के सरदार भ्रा जी के घर जाते रहते। वे कहते है – ''भ्रा जी से प्रभवित पहली बार मैंने बड़ी श्रध्दा से ठीक उन्हीं के अंदाज़ में गुरू साहब के चित्र के आगे माथा टेका था और गुरुबानी के शब्दों का जाप मन–ही–मन दोहराया था। सरदार का रूप धरे बिना मैं सिखी पर ईमान लाया था। अब मंदिर और गुरूद्वारा दोनों ही मेरे लिए पवित्र–पावन बन चुके थे। ...... मैं बाबा फरीद और वारिस शाह में ऐसा डूबा कि कबीर की राह पर निकल पड़ा। मेरे लिए आपसी भेदभाव मिट गया था। मेरा एक ही धर्म था, कि सब इनसान हैं, सब हिंदुस्तानी है।''[2]

‘इब्ने मरियम” कहानी के रामधन और ताहिर बटुएवाले की मित्रता भी सांप्रदायिक एकता प्रदर्शित करती है। ‘असली बात” कहानी की तंबोलन का पुत्र ज्वर में तड़पता है। वह उसे लेकर सूफ़ी बाबा की दरगाह पर जाती है। वहाँ वह सांप्रदायिक एकता को अनुभव करती है।

दरगाह पर “टीलेवाले मंदिर के महंत आए थे। मज़ार से छुली अगरबत्तियों का पैकेट ले गए हैं और नवरात्र के नौ दिन तक मज़ार पर कुरानखानी करवाने के लिए ये पैसे भी दे गए है। ...... बचपन से वह आते रहे हैं। .... पीर–औलिया इनसानों में फ़र्क नहीं करते। यह दर सबके लिए खुला है .... अमीर–गरीब, हिंदू–मुसलमान, छोटा–बडा।”[3] ‘पाँचवाँ बेटा” कहानी की अमतुल सुलाखी को इमामबाडे की छत पर चढा देख कर क्रोधित होती है, जबकि सुलाखी इमामबाडे को वर्षा के पानी से बचाने के लिए उस पर तिरपाल डालता है। अन्त में अमतुल उसे अपना बेटा मान लेती है।

‘इनसानी नस्ल” कहानी में सांप्रदायिक सहिष्णुता दृष्टिगोचर होती है। जिसमें मिश्राजी एक मुस्लिम बालक को गोद लेते है, उसके विवाह तक की सभी रस्में पूरी करते है। “जावेद, नवाब और दिलशाद तीन भाई हैं, जिसमें से दिलशाद को मिश्राजी ने गोद लिया है। उसका रहना–सहना सब वहीं था।”[4] इस प्रकार नासिरा जी के कथा साहित्य में यत्र–तत्र सांप्रदायिक सद्भावना के दर्शन होते हैं।

संदर्भ

1. अक्षयवट – नासिरा शर्मा – पृष्ठ क्र. 18
2 इब्ने मरियम – नासिरा शर्मा – पृष्ठ क्र. 15
3. इनसानी नस्ल – नासिरा शर्मा – पृष्ठ क्र. 18
4. वही – पृष्ठ क्र. 124

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

६६. हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव

डॉ. हिमालया सुनील सकट
हिंदी विभागाध्यक्ष
मामासाहेब मोहोळ महाविद्यालय
पौड रोड, पुणे-३८

सांप्रदायिकता समाज और राजनीति में जहर घोलने का काम करती है। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में जातियता एवं साम्प्रदायिकता की वर्तमानता उसके विरोध के रूप में सामाजिक मूल्यों के विघटन, संघर्ष एवं नवनिर्मिती का अंकन किया है। और प्रयास किया है कि उन रचनाओं द्वारा ऐसे पक्ष को मान्यता दी है, जिनमें सम्प्रदायों की निजी विशिष्टता बनी रही है और भारतीयता की विशिष्टता को चित्रित किया है। कोई भी रचनाकार अपनी रचना में उसके अथक चिंतन का प्रभाव व्य्रत करता है। उसके जीवन दर्शन के मध्य नैतिक आदर्शो को वह दृष्टि से ओझल न करते हुए सामाजिक और राजनीति को महत्वपूर्ण स्थान देता है। साहित्यकार मानव जीवन की व्याख्या करता है। और साथ ही नए नैतिक आदर्शो की स्थापना करके समाज की नैतिक चेतना को उद्बुद् भी करता है।

संभवतः प्रेमचंद ऐसे लेखक थे जिन्होने सद्भावना से भरी रचना की है। सद्गती, ईदगाह इसके उत्कृष्ट उदाहरण है। भीष्म साहनी का उपन्यास 'तमस्' देश विभाजन की त्रासदी को दर्शाने वाला विशाल एवं संवेदनाओं को भी विचलित कर देनेवाला उपन्यास है। मोहन राकेश ने इसी विचार प्रवाह को अपनी कहानी 'मलबे का मालिक' कहानी में दर्शाया है। अनूमन विभाजन की त्रासदी को लेकर हिनी सिनेमा 'गदर-एक प्रेमकथा', तथा 'वीरझारा' एक उदा. कायम करने की क्षमता को लेकर दर्शाया गया है। और सम्प्रति उपन्यास एवं कहानियों की सूची तो साम्प्रदायिकता तथा विभाजन की लंबी दास्तान का ब्यौरा ही कहलाएगी ।

कमलेश्वर जी का १९९९ में प्रकाशित 'कितने पाकिस्तान' जिसके २००३ तक दस संस्करण प्रकाशित करने क बावजूद आज भी उसकी माँग कायम है। २००१ में इसका अनुवाद पद्माकर जोशी ने मराठी में अनुवाद-प्रतिभा प्रकाशन पुणे से किया । २००३ में इसका उर्दू में भी अनुवाद प्रकाशित हुआ है। तात्पर्य यह है कि ४२८ पृष्ठ के इस वृहतकाय उपन्यास जिसे लिखने के लिए कमलेश्वरजी को नौ वर्ष लग गए। लेखक के कठोर परिश्रम का यह प्रमाण है। इसमें इतने देशों की संस्कृति का राजनीति का इतिहास आत्मसात कर सबको एक लडी में पिरोना आसान काम नही है। यह सत्ता के खेल का एक दस्तावेज है। इसमें मनुष्य की उत्पत्ति से लेकर आज तक की मनुष्य की यात्रा को चित्रित किया है। इसमे समस्या है बँटने की, टूटने की, एक दूसरे से अलग होने की । मनुष्य को मनुष्य से तोडने का काम धर्म के नाम पर राजनीति करनेवाले लोग करते है और आज भी कर रहे है। भगवतीचरण वर्मा का 'सामर्थ्य और सीमा' उपन्यास एक रियासत से संबंधित राजपरिवार को केंद्र में रखकर लिखा गया राजनीतिक परिवेश का ब्यौरा है। - ''हमारा देश हमारा नहीं रह गया, हमारी प्रजा अब हमारी नहीं रह गई। वे मनुष्यता छोड चुके है, वे बदनीयत है, चरित्रहीनता की हद हो गई है। जान-माल, इज्जत-ईमान

सभी खतरे में है । '' भगवतीचरण वर्मा । आजादी के बाद देश की बदलती हुई राजनीतिक स्थिति, जमींदारी उन्मुलन से हुऐ नए अनुभवों को लेखक ने सँजोकर देश की नाशोन्मुखी स्थिति, औद्योगिक विकास की योजनाएँ, मिनिस्टरो की योजनासंबंधी अज्ञानता, बढती हुई राजनीतिक दलबंदियों, पूंजीवादियों का प्रभाव, जमींदारी उन्मूलन की निराशाजनक स्थितियों को समेटने का प्रयास किया है।

'सीधी-सच्ची बातें' उपन्यास भी राजनीतिक चेतना का विकृत रूप, सामाजिक विकृति और व्यतिकी कुंठा को प्रकट करता है । उपन्यास का नायक जमील अहमद, जीवनभर मार्क्सवाद का समर्थक और मजहब तथा पूँजीवाद का विरोधी रहा है। ''यह इत्तिफाक की बात है कि एक मुसलमान खानदान में मै पैदा हुआ हूँ और मुझे इस्लामी संस्कृति में पलना पडा है । लेकिन मैं आज तुमसे साफ-साफ कहता हूँ कि मैं कम्युनिस्ट हूँ, मैं खुदा पर यकीन नहीं करता। '' भगवतीचरण वर्मा।

आधुनिक नए उभरते कहानीकारों ने बीसवी सदी के अंतिम दशक में अयोध्या, मुंबई के बमकांड से उभरे साम्प्रदायिक दंगो से आक्रात लोगों की पीडा तथा राजनीतिक तथा आर्थिक स्वार्थो के लिए मौत के मुँह में धकेल दी जानेवाली निर्दोष जनता के दुर्भाग्य की दास्तान को प्रस्तुत किया है। कुछ कहानियाँ दृष्टव्य है - सुधा अरोडा की '<u>काला शुक्रवार</u>' १२ मार्च १९९३ को बंबई में हुए बम विस्फोट के आतंक से इन्सान और इन्सान के बीच आयी आस्था का ब्यौरा है । मजहब, असुरक्षा, अल्पसंख्याक का होना इ. बातें लेखिका को डराती है। वह याद करती है दादाजी की सन १९४७ के लाहौर दंगे की बातें, हिंसा का तांडव हजारो वर्षो से इन्सान देखता आ रहा है। किंतु कहानी की मीराज दूसरे साथियों के साथ हिंदुजा अस्पताल में खून देती है । लेखिका के नुसार कोई भी इन्सान बुरा नहीं होता, कोई दरिंदे है जो उनसे ये सब करवाते है ।

कमलेश ब्क्षी का '<u>दंगा-दंगा खेले</u>' कहानी में चारो ओर दंगे हो रहे है । शहर धूँ-धूँ जल रहा है। ऐसे में बंबई की इमारत में बच्चे दंगा-दंगा खेलते है। वे्या जाने धर्म का अर्थ्या है, एक दूसरे को मारना ्या होता है ।्यों रंग, धन, वर्ण दीवार बन जाते है आदमी-आदमी के बीच । लूटमार-खून देखकर दंगा-दंगा खेल बच्चों के जेहन में प्र्का हो गया है ।

संजीव निगम की 'खंरोच' कहानी का त्रिभुवन साम्प्रदायिक दंगे का शिकार हो गया है । सोसायटी में कुछ मुसलमान परिवार भी है । आक्रोश के बढते रेहाना बच्चों के साथ भाई अबरार के घर जा रही है । हिंदू-मुसलमानों के पारिवारिक सदस्य एक दूसरे के बारे में जो असुरक्षिततता महसूस करते है। आपस में चर्चा करते है, इस राजनीतिक दाँव-पेंच से बेखबर है । बरसों से गाँव छोडकर बंबई में बसे लोगों को साम्प्रदायिक दंगो ने विस्थापित कर दिया है । साजिद रशीद की कहानी 'पनाह' में मजीद के मोहल्ले में हमला होने की आशंका है । तो मजीद और नूरेश उनके दोस्त हेमंत को पनाह देते है । ''पूरा शहर ही जुनून की जद में है, कहाँ जाए।''

विभारानी की कहानी 'लौटेगी सबीहा' की सबीहा को बंबई से प्यार और आकर्षण है । सारा परिवार एक कमरे में खुशी से रह रहा है। दंगों की वजह से ट्रॅसी और ऑटो में निकलने पर रास्ते में ही

परिवार के लोगों ने नाम बदलकर महिलाओं ने बिंदी लगा लेते हैं। सबीहा ने जाते हुए भी उम्मीद रखती है कि बंबई पर लगा बदनुमा दाग धुलेगा और सबीहा कभी तो लौटेगी।

अलका अग्रवाल सिगतिया की 'नदी अभी सूखी नही' कहानी इंदिरा गांधी की हत्या के बाद से उभरे बाबरी मस्जिद की विभीषिका का वर्णन है । ''तुम लोग कभी हिंदू बनते हो, कभी मुसलमान, कभी सिख, पर हर बार तुम्हारा शिकार मासूम औरत ही होती है ।'' माधुरी छेडा की कहानी 'हालात' में वल्लभभाई पटेल का रियासतों का विलीनीकरण, हैद्राबाद के निजाम की सेना द्वार औरंगाबाद जिले के कस्बों में घूमकर आतंक मचाने की दास्तान है । सलाम-बिन-रजाक की 'आँधी का चिराग' कहानी के रिजवान हाशमी के तूफान का ब्यौरा है। दंगो में अरशद का कत्ल हो गया है। सीने में एक तूफान-सा है कि हर बार साम्प्रदायिक दंगे इस देश के राजनीतिक दंगों से आम आदमी के जीवन में तूफान लाते है ।

जितेंद्र भाटिया की 'कुल-जमा-हासिल' कहानी में बरसों पहले एक किशोर वयीन लडके के दादा बंबई से दंगो के डर के मारे भागते हुए किसी हादसे का शिकार हुए थे। किसी ने रफिक चाचा की दुकान में आग लगा दी थी। चाचा दाढी मुंडवाने पर मजबूर हो गए थे। खंडवा स्टेशन से प्राप्त बाबुजी की लाश और कुल-जमा-हासिल के बाद भी पुत्र की नजर में दंगो की खौफनाक तस्वीर कैद होकर रह गयी।

डॉ.प्रमिला वर्मा की 'दोहराने के खिलाफ' कहानी में उज्ज्वला देवी ने पंजाब की सोलह बरस की पुत्री और भाभियों, बच्चियों की दंगाईयों से बचाने के लिए कुर्बानी दी थी- ''कोई भी दंगा फसाद हो, औरते ही निशाना बनायी जाती है । सबसे बडा कहर औरतों पर टूटता है। औरतो के साथ चलनेवाले बीभत्स कांड से सारी मानवीय सभ्यता का सिर शर्म से नीचा हो जाता है।''

संतोष श्रीवास्तव की ''तूफान गुजर जाने के बाद'' कहानी की दुर्गा भी बँटवारे के शिकार से भडकी हुई है । वह नारी स्वतंत्रता की पक्षधर है। विभाजन के खिलाफ होने के बाद भी अपने ही घर में विभाजन की लकीर को खींचना नहीं चाहती । सूरज प्रकाश की 'दंगे' कहानी में दंगा-राहत कोष से दो लाख प्राप्त होने के लिए धर्म और विविध उपायों का, दुकानों का अदला बदल करना बच्ची का नामकरण एकता रखने की दास्तां है । धीरेन्द्र अस्थाना की 'विचित्र देश की प्रेमकथा' एक व्यंगात्मक कहानी है। देश, व्यक्ति, राजनीतिक दाँवपेच की शिकार माथुर की कहानी के माध्यम से हिंदु-मुस्लिम प्यार का विरोध, इंदिरा गांधी की हत्या, साम्प्रदायिक दंगे, चुनाव यह सभी भारत में संभव हो सकता है । अरविंद की कहानी 'हिंदुस्तान/पाकिस्तान' कॅप्टन सिद्धीकी की दर्दभरी दास्तां है । जो भारतीय सेना द्वारा ढाका से कलकत्ता लाया गया । हिंदुस्तान से उसे बेहद लगाव है । लेकिन हिंदुस्तानी हो या पाकिस्तानी हम सब सारी व्यवस्था के एक हिस्से के अलावा कुछ नहीं, शतरंज के खेल में एक प्यादा-अपने मुल्क के हुमरानों के इशारे पर नाचने के अलावा और कर ही,या सकते है? लेकिन यादो पर कोई हुम नहीं चला सकता।

भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया है' कहानी में विभाजन और विस्थापितों की दर्द भरी कसक है गाली गलौज का सहारा लेकर देश के सत्ताधीशों पर करारा व्यंग कसा है। लेखक ने न केवल रेल की यात्रा तय की है बल्कि हिंदु-मुसलमानो के झगडे में देश का आम इन्सान किस कदर डरा और असुरक्षित

है इनकी जीवन यात्रा एक गाँव से दूसरे गॉव पहुँचने से पहले ही खत्म हो जाने का डर है, ये कब किसकी चाकू छूरी के हमले का निशाना बन जाएंगे इसकी कोई शाश्वती नहीं ले सकता।

महीप सिंह की 'पानी और फूल' कहानी युगीन चेतना से परिपूर्ण है । लेखक ने देशविभाजन की घटना से डरी हुई भयभीत जनता की मानसिकता का वर्णन किया है, वे कहते है, पंजाब में जो आगजनी फैली थी उसे देखकर बडे-बडे सुरमाओं का भी दिल दहल गया होगा। कहानी की माँ अपने छुटे हुए पारिवारिक भूतकाल को फिर एक बार याद कर और समय से समझौता कर अब हमेशा के लिए उस पार जा रही है । परंतु जिस नदी के इस पार उसका सुहाना भूतकाल छूट रहा है, नदी के ऊपर बंधे हुए पूल ने जैसे नदी के दो छोर जोड रखे है उसी प्रकार भूतकालीन जीवन की यादो की लडियाँ भी पुल के कारण जुडी रहेगी, ऐसा प्रतीत होता है । जैसे पुल राष्ट्रीय एकात्मता एवं मनोमिलन का वह सेतु सिद्ध हुआ है, जिसमें राष्ट्रीय एकात्मता पनपती है ।

मजहब के नामपर, धर्म के नामपर कभी अपनो को अपनों से बिछुडना ना पडे, इसी उदात्त मूल्य/सद्भाव को जगाना कहानीकार का उद्देश्य है। अंततः कह सकते है कि राष्ट्रीय एकात्मता बनाए रखने के लिए नए पीढी के छात्रो के अंदर संस्कारों की नींव डालनी होगी।,यों कि भूतकालीन भारत की सूरत बडी ही घिनौनी नजर आती है जिसमें स्वतंत्रता के बाद जिस

संदर्भ :

१. शेषयात्रा - उषा प्रियंवदा

२. अन्तर्वंशी - उषा प्रियंवदा

३. भया कबीर उदास - उषा प्रियंवदा

४. निराला के साहित्य में समासमायिक बोध - डॉ. माधुरी पांडेय

५. आलोचना के आधुनिकतावाद और नई समीक्षा - डॉ. शिवकरण सिंह पृ.१२३

६. ऐन एन्ट्रोड्शन टू द स्टडी ऑफ लिटरेचर - डब्ल्यू.एच.हडसन पृ.३१

७. आधुनिक परिवेश और नवलेखन - डॉ. शिवप्रसाद सिंह पृ.९५

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

67. संत साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. बाबा शेख
सहायक प्रोफेसर,हिंदी विभाग
पूना कॉलेज कॅम्प पुणे.01

विविधता में एकता भारतीय भारतीय संस्कृति का आदर्श है। परब्रह्म परमात्मा अनादि है,अनंत है,निर्गुण है,निराकार है। सगुण देवी– देवता उसी निर्गुण परमात्मा के विभिन्न रूप है। इसी एक ही परमपिता की संतान है मानव।उसी परब्रम परमात्मा की उपासना निर्गुण एवं सगुण दो पद्धतियों में की जाती रही है। अनेक धर्मावलंबियोंने अपनी आस्था एवं विश्वास के अनुसार उसकी उपासना की है। बडे बडे संत महात्माओं ने ऋषीमुनियों एवं धर्म संस्थापकों ने उसी परब्रम परमात्मा को अपने अपने ढंग से व्याख्यायित किया है। और उसकी झलक विभिन्न महापुरूषों, संतों, तथा महात्माओं में देखी जाती हैं। मूलतत्व तो एक ही है। इसी भावनाओं को भारतीय समाज ने स्वीकारा है। भारतीय संस्कृति में सबसे सर्वोपरि मानवता धर्म है। और सभी संत,ऋषिमुनी, सूफी संतों ने इस श्रृंखला को आगे बढाते हुए राष्ट्रीय एकता को बरकरार रखने का प्रयास किया है।

जब हम राष्ट्र की बात करते है तो हमारा तात्पर्य समुचे राष्ट्रवासियों से होता है। धर्म से नही। धर्म अनेक हो सकते हैं। राष्ट्र या राष्ट्रवाद अनेक नही। स्वतंत्रता संग्राम के लिए जिन भारतियों के नाम महत्वपूर्ण माने जाते हैं। जिनमें सभी धर्म के लोग है। मौलाना अबुल कलाम अझाद, सीमांत गांधी कहलानेवाले खान अब्दुल गफार खान मुसलमान थे। दादाभाई नैरोजी जो भारतीय राष्ट्रीय कॉग्रेस के भीष्म पितामह माने जाते है। वे एक पारसी सज्जन थे। इसी तरह अन्य धर्म के नेताओंने भी राष्ट्रीय एकता के लिए कार्य किया है।

हमें भारत की विशाल संस्कृति के दर्शन दिखाई देते है। अगर गहराई से विचार करने पर यह स्पस्ट दिखाई देता है कि भारतीय एकात्मता का प्रेरणास्त्रोत भारत की आदर्श अभिनव एवं कल्याणकारी उदात्त संस्कृति है। जो संत प्रणीत है। कोई राजा या सम्राट प्रणित नही। आचार्य विनोबा ने कहा है कि–''जीवन में तीन चीजें महत्वपूर्ण होती है। प्रकृति, विकृति और संस्कृति। भूख लगने पर खाना प्रकृति है। जरूरत से ज्यादा खा लेना विकृति है। भूख लगने पर भी व्दार पर आए भूखे अतिथियों को अपना भोजन खिला देना संस्कृति है।''1 (साहित्यलोक–डॉ.हीरालाल जायसवाल,प्रष्ठ–35) यह उदात संस्कृति ही भारतीय एकता की रीढ है। जिस पर हमारा समुचा राष्ट्र टिका हुआ हैं।

हमारी राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक एकता के प्रतिक हमारे प्राचीन धर्मग्रंथ है। जैसे– ''कुरआन, रामायण, महाभारत, बायबल, पुराण, नीतिशास्त्र, दर्शन आदि। है। जिनमें संपूर्ण मानव जाति के उत्थान और मानवता के आदर्शो की शिक्षा दी गई है।''2 (साहित्यलोक–डॉ. हीरालाल जायसवाल, पृष्ठ–35) ये ग्रंथ हमारे आचरण ग्रंथ है। इन ग्रंथो में राष्ट्रीय एकता एवं मानव कल्याण के प्रेरणा का संदेश मिलता है। और ये सभी ग्रंथ मानव को राष्टीय एकता में बांधकर रखने की शिक्षा देते है। राष्ट्रीय एकता बरकरार रखने में संत साहित्य का महत्वपुर्ण योगदान रहा है। राष्ट्रीय एकता के लिए हिदी के संत कवियोंने जैसे– कबीर, सूरदास,

तुलसीदास, नामदेव, तुकाराम ने सभी देश का भ्रमण करके देश की संस्कृति की पहचाान की है। और देश की विविध संस्कृतियों को एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया है।

धर्म, संस्कृति, भाषा, परंपरा, आचार विचार की विविधताओं को संत कवियों ने अपने जनमाानस में रखने का प्रयास किया हैं। हिंदी के संत साहित्य में संतों ने मानवीय मूल्य को लेकर, उसकी विशेषताओं को लेकर, तथा भारतीय संस्कृति और मानवीय कल्याण की बात की है। हम अगर तुलसी दास का उदाहरण लेते हैं, भक्तिकाव्य में तुलसीदास की रामायण संपूर्ण देश में प्रचलित है। जैसे–आदर्श राजा, आदर्श भाई, आदर्श पिता, आदर्श पत्नी, तथा रामराज्य की कल्पना आज भी उस मूल्य की आवश्यकता महेसूस हो रही है। इस कारण वह आज भी जनमानस में प्रचलित दिखाई देती है। उसी तरह नामदेव दक्षिण से उत्तर गए। आज भी हम देखते है कि गुंरूग्रथसाहब में अनेक पद नामदेव के हैं। गुरूव्दारा में गुंरूनानक देव के साथ नामदेव भी विराजमान है। उसी तरह संत कबीर की सधुक्कडी भाषा में सभी भाषा के शब्द है। समाज सुधारक संत कबीर ने संपूर्ण देश का भ्रमण किया। देश में व्याप्त जाति, धर्म, भाषा, एवं सामाजिक रूढियों तथा संकुचित भावनाओं का खुलकर विरोध किया है। और समाज में राष्ट्रीय एकता का बीज बोने का प्रयास किया। इसी तरह संत साहित्य में राष्ट्रीय एकता के दर्शन दिखाई देते है।

कबीर, सूर, जायसी ने सर्वधर्म समभाव के विचारों का प्रंचार प्रसार किया। जिस भी धर्म के नेता, मुल्ला, मौलवी तथा पुरोहित– पंडित ने समाज में आडंबर फैलाया या दो समाज में झगडे लगाकर अपना उल्लू सिधा किया। ऐसे लोगों का उन्होंने तीव्र विरोध किया। तब किसी को ना घबराते हुए, जहॉ उन्हे बुराई दिखाई दी, वहॉ हिंदु और मुस्लिम दोनों को भी फटकारा। सभी संत–काव्य ने उच–नीच,छुआछूत, का विरोध किया है। कबीर इसके बारे में कहते है–   ''तू बामण–बामणी जाया।

आन भाट क्यों नही आया।''3   (कबीर ग्रंथावली–श्यामसुंदरदास–पृष्ठ–597)

इसी तरह उच्च–नीच के भेदभाव को मिटाकर देश में राष्ट्रीय एकता तथा सांप्रदायिक सद्भाव बनाए रखने का प्रयास किया है।इसी तरह वर्तमान स्थिति को देखकर, देश की दुर्दशा देखकर ऐसा लगता है कि देश खंडित होता जा रहा है। किंतु देश में भाषा– भाषी– के आपसे स्नेह,प्रेम तथा बंधुत्व भावना के कारण यह सब संभव होता है। इसे बढावा मिलने हेतु या राष्ट्रीय एकता बनाए रखने के लिए हम निम्नलिखित कार्य कर सकते है।

हिंदी प्रदेश की भाषा दवारा अहिंदी भाषा– भाषी क्षेत्र में भाषा, विचार, साहित्य आदि विचारों का आदान–प्रदान करना चाहिए। भारत के विभिन्न भाषओं के साहित्य का अनुवाद और परस्पर एक दूसरे प्रातों में उसके प्रचार–प्रसार की व्यवस्था करनी चाहिए। इसी तरह कला, साहित्य, संगीत, के आयोजन हर प्रांत या राज्य में करना चाहिए। पुस्तक प्रदर्शनी, य,संगीत के कार्यक्रम, नाटकों का मंचन आदि के आयोजन करना चाहिए। इसी तरह राष्टीय हित एवं राष्ट्र प्रेम जगानेवाले कार्यक्रमों का आयोजन करना। राष्ट्रभाषा का सम्मान तथा मानवीय मूल्यों कों महत्व आदि। सभी गतिविधियॉ करते रहेंगे तो हमारे देशवासियों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सदभाव अर्थात भाईचारे को बढावा मिलेगा।

68.भीष्म साहनी का ' तमस' उपन्यासः सांप्रदायिकता का ज्वलंत दस्तावेज

डॉ. गीता यादव
सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग
एस.एम.आर.के.,बी.के.,ए.के.
महिला महाविद्यालय
नाशिक

हिंदी साहित्य की विरासत बडी लंबी है। हिंदी में संत साहित्य की परंपरा से ही सांप्रदायिक सदभावों पर जोर दिया जा रहा है। क्योंकि देशकाल वातावरण और परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी थी। पहले मुगलों का आक्रमण, फिर अंग्रेजी व शासन, फ्रेंच, डच, पुर्तगाल सभी ने देश का शोषण किया। समय – समय पर यथासंभव जितना हो सके उतना इस सोने की चिडिया के पंख रौंदने की कोशिश की गयी। जनता की त्राहि–त्राहि के बीच रचनाकार का सहदय मन हिंडोले लेने गया। वह अपनी अनुभूति को अपनी रचनाओं में उतारने लगा।

आज के भौतिकवादी युग में सामान्य व्यक्ति मानसिक तनाओं से ग्रस्त होता चला जा रहा है। आज भी संपूर्ण दुनिया आतंक के माहौल में जी रही है फिर चाहे वह पठानकोट की घटना हो या फ्रांस में आतंकवादी हमला। संप्रदाय से ही सांप्रादायिक शब्द बना है अर्थात मार्ग, पंथ, रीति, गुरू मंत्र आदि। किंतु आज सांप्रदायिकता की भावना बडे पैमाने पर लोगों में घर कर चुकी है। भारत में ही नहीं तो दुनिया में आज का माहौल बहुत ही अशांत बना हुआ है। व्यक्ति – व्यक्ति के बीच प्रेम आदर जैसे भाव लुप्त होते नजर आ रहे हैं। श्रेष्ठ और कनिष्ठ आदि बातों को लेकर संघर्ष होता है। जाति वर्ण संप्रदाय के नाम पर आपसी संघर्ष मानव जाति को नष्ट कर रहा है, प्रत्येक मनुष्य का शुध्द, निर्मल, प्रेम, सद्भाव से पूर्ण होना चाहिए ।

कबीर ने भी कहा है कि 'हरिजन ऐसा चाहिए, हरी ही जैसा होय'। यदि ऐसा होता है तो समस्त दुनियाँ में सब एक से हो जायेंगे। किसी के मन में एक –दूसरे के प्रति ईर्ष्या, द्वेष का भाव नहीं रहेगा। लेकिन वस्तुस्थितियाँ इससे अलग हैं। आज सभी ओर आपसी बैर, शत्रुता, दुर्व्यवहार, दुर्भाव आदि की भावना फैली हुई है। अनेक रचनाकारों ने इसे अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है।

यशपाल, भीष्म साहनी, कमलेश्वर, अमृता प्रितम आदि की कृतियों में 'झूठा – सच', 'तमस', 'कितने पाकिस्तान' 'पिंजर' जैसे उपन्यासों द्वारा सांप्रादायिक सहृदयता न होने से अथवा मन में विद्वेश लेकर चलने से मानव जाति की हुई अमर्यादित हानि, संहार, दुख का पता चलता है। आज धर्म के नाम पर जगह – जगह संघर्ष हो रहे हैं। सभी अपने – अपने अहं को लेकर चल रहे है। सभी अपने – अपने अहं को लेकर चल रहे है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो एक दिन पृथ्वी पर रहनेवाली समस्त मानव जाति का संहार हो जायेगा। यहाँ पर भीष्म साहनी के तमस उपन्यास पर संक्षिप्त प्रकाश डालना चाहूँगी। 'तमस' भीष्म साहनी का बहुचर्चित उपन्यास, तथा हिंदी साहित्य की अमूल्य निधी है। जो साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित हो चुका है। इस पर धारावाहिक और फिल्म भी बन चुके हैं।

तमस की पृष्ठभूमि पंजाब का परिवेश है जिसमें देश विभाजन के समय की स्थितियों का वर्णन किया गया है। इस उपन्यास की कथावस्तु में मात्र पाँच दिनों की घटनाओं का समावेश है किंतु कथा में जो प्रसंग, संदर्भ और निष्कर्ष सामने आते है, वे बीसवी शताब्दी के हिंदुस्तान की संपूर्ण छवि प्रस्तुत करते हैं। यों संपूर्ण कथावस्तु दो खंडों में विभाजित है। पहले खंड में कुल तेरह प्रकरण है, तो दूसरा खंड गांव पर केंद्रित है। 'तमस' उपन्यास का रचनात्मक संगठन कलात्मक संधान की

दृष्टि से प्रशंसनीय है। इसके संवाद प्रभावपूर्ण तथा नाटकीय तत्वों से भरपूर हैं। इसमें हिंदी, उर्दू, पंजाबी एवं अंग्रेजी निश्चित रूप में है। भाषायी अनुशासन कथ्य के प्रभाव को गहरता है। साथ ही कथ्य के अनुरूप वर्णनात्मक, मनोविश्लेषणात्मक एवं विशेषणात्मक शैली का प्रयोग सर्जक के शिल्प कौशल्य को उजागर करता है।

आजादी के तुरंत पहले सांपादायिकता का सहारा लेकर पाशविकता का जो नंगा नाच नचाया गया था, उसका अंतरंग चित्रण इस उपन्यास के माध्यम से भीष्म साहनी ने इस उपन्यास में किया है। देखा जाये तो यह मात्र पाँच दिनों की कहानी है किंतु लेखक ने इसे बखूबी से चित्रित किया है। सांप्रदायिकता के प्रत्येक पहलू के तार – तार को उद्घाटित किया है। कथाबध्दता तो इतनी प्रभावपूर्ण है कि पाठक सारा उपन्यास एक सांस में ही पढकर दम ले ऐसा प्रतीत होता है।

भारत में सांप्रदायिकता की समस्या एक युग पुरानी समस्या है और इसके दानवी पंजों से अभी तक इस देश की मुक्ति नहीं हुई है। आजादी से पहले विदेशी शासकों ने यहाँ की जमीन पर अपने पाँव मजबूत करने के लिए इस समस्या को हथकंडा बनाया था और आजादी के बाद हमारे देश के कुछ राजनैतिक दल इसका घृणित उपयोग कर रहे थे और इस सारी प्रक्रिया में जो तबाही हुई है उसका शिकार बनते रहे हैं वे निर्दोष और गरीब लोग जो न हिंदू हैं, मुसलमान बल्कि सिर्फ इन्सान हैं और भारतीय नागरिक। भीष्म साहनी ने आजादी से पहले हुए सांप्रदायिक दंगों को आधार बनाकर इस समस्या का सूक्ष्म विश्लेषण किया है और उन मनोवृत्तियों को उघाडकर सामने रखा है जो अपनी विकृतियों का परिणाम जनसाधारण को भोगने के लिए विवश करती है।

'तमस' उपन्यास के नत्थू के सुअर मारने के प्रसंग में भीष्म साहनी ने एक जनसामान्य इंसान की मजबूरियों का चित्रण करते हुए लिखा है। 'नत्थू बदहवास हो रहा था। दो बज चुके थे और जो काम पिछली शाम से अब तक नहीं हो पाया वह अब पौ फटने से पहले कैसे हो पाएगा। किसी वक्त भी जमादार का छकडा आ सकता है और जो काम न हुआ तो मुरादअली का क्या भरोसा, दोस्त से दुश्मन बन जाए, खालें दिलवाना बन्द कर दे, कोठरी में से उठवा दे, किसी से पिटवा दे, परेशान करे। नत्थू के हाथ – पैर फूलने लगे। वह मन ही मन जानता था कि सूअर को पिछले पाँव से पकडने पर सुअर काट खाएगा, या उछलेगा और हाथ छुडा लेगा'।

एक सीधे साधे इंसान के मन में इस प्रकार की दुष्प्रवृत्तियों का बीजारोपण कराने वाले जनसमूह को ही देशनिकाल कराना होगा। आज यदि विश्व में शांति लानी है तो सांप्रदायिकता का त्याग करना ही होगा। धर्म के नाम पर जो दुकानें चलाई जा रही हैं उनका बहिष्कार करना होगा। धर्म के नाम पर जो विभाजन है, उस विष के प्रति सतत जागृत रहना होगा। ये विभाजन, भेद व बटवारे हमें सांप्रदायिक न बना पायें, इसके लिए नए–नए उपाय खोजने होंगे। धर्म के नाम पर बने हुए संगठनों को हम समाप्त कर सकें या न कर सके, लेकिन इतना तो किया ही जा सकता है कि किसी भी संगठन को यह अधिकार न दिया जाए कि वह धनबल, छलबल, या बाहुबल से अपनी मान्यतायें दूसरे पर थोप सके। ये संगठन मानव प्रजा के विकास में बाधक न बनने पायें तथा श्रध्दा, विश्वास व आस्था के अधिकार के नाम पर बुध्दि और विवके के आरोग्य में बाधक न बनने पायें कम से कम इतनी व्यवस्था तो आज क्या मानव कर ही सकता है।

संदर्भ : 1. तमसः भीष्म साहनी, राजकमल प्रकाशन, चौथी आवृत्ति सन् 2014 पृष्ठ 12

2- धर्म और सांप्रदायिकता, नरेंद्र मोहन,प्रभात प्रकाशन, संरकरण सन् 2006,पृष्ठ 103

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

69. 'जिस लाहौर नई देख्या देख्या जन्म्याई नई' नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. कांचन कृष्णा घाडगे
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, आसुर्ले पोर्ले
कोल्हापुर 416229.

नाटक केवल मनोरंजन का ही नहीं तो अपने समाज में चल रहे ज्वलंत समस्याओं को दिखाने का अत्यंत सशक्त माध्यम है, जिससे देश की एकता और अखंडता को अबाध रखा जा सकता है। हबीब तनवीर के नाटकों में आज के ज्वलंत प्रश्नों के साथ लोकधर्मी चेतना मौजूद है। शोषण और उत्पीड़न की समस्याओं के साथ—साथ समकालीन यथार्थ किसी न किसी रूप में साफ परिलक्षित होता है। जिसका परिचायक है उनके द्वारा लिखित पुस्तक की मंचियता में हबीब तनवीर ने अपने कौशल से दर्शकों के सामने सन 1947 में हुए भारत के विभाजन की त्रासदी को अभिव्यक्ति देने का भरसक प्रयास किया है।

धर्म के सकारात्मक तत्वों को समन्वित करने का अत्यंत प्रशंसनीय कार्य उन्होंने इस नाटक के माध्यम से किया है। सांप्रदायिक सौहार्द मूल्यों की प्रतिष्ठापना की हैं। प्रस्तुत नाटक पंद्रह दृश्यों में विभाजित है। प्रमुख पात्रों में है सिकंदर मिर्जा, हमीद बेगम, जावेद, रतन की माँ आदि। सांप्रदायिक सौहार्द के प्रतीक मौलवी और माई है। उन्होंने नाटक को सहज और सफल बनाने के लिए दृश्यों के बीच बीच में गजलों का उपयोग त्रासदी की मार्मिकता को अभिव्यक्ति देने के लिए किया है, जो दर्शकों के दिलो दिमाग को छूता है।

प्रस्तुत नाटक का कथ्य है भारत पाकिस्तान विभाजन के बाद बेघर लोगों को कस्टोडियन ऑफिस से घरों का इंतजाम करना। उसमें खाली हवेलियाँ, घरों का समावेश था। सिकंदर मिर्जा भी इसी त्रासदी का व्यक्ति है, जिसे लखनऊ से बेघर होने के बाद लाहौर में उन्हे सरकार की ओर से बाईस कमरों की हवेली बचाव राहत के तौर पर मिलती है। इस बिगडे हुए वातावरण और विभाजन की त्रासदी को व्यक्त करने के लिए बडे सटीक शब्दों में प्रथम दृश्य के अंत में वर्णन किया गया है — ''और नतीजे में हिन्दोस्ताँ बँट गया

ये जमीं बँट गयी आसमाँ बँट गया

तर्जे तहरीर, तर्जे बयाँ बँट गया

शाखे गुल बँट गयी, आश्याँ बँट गया

हमने देखा था जो ख्वाबही और था

अब जो देखा तो पंजाब ही और था।''1

सिकंदर मिर्जा को जो हवेली मिली थी, वह थी रतन की माँ जो घर में अकेली रहती थी।इस दंगे फसाद के दौरान अपनी गाडी के लिए किसी हिंदू ड्राइवर की तलाश में वह घर से बाहर चला

गया और फिर घर वापस नहीं आया। सिकंदर मिर्जा उसके दुख पर अफसोस व्यक्त करता है। रतन की माँ और सिकंदर मिर्जा के बीच के संवाद है वह कही मानवता से परिपूर्ण है तो कहीं इन्सान का अपने अस्तित्व को टिकाने का प्रयास।

सांप्रदायिक सौहार्दता के प्रतीक है माई और मौलवी। माई भावलोक से यथार्थ के धरातल पर आती है और अपने व्यवहार से सभी के बीच प्रेम बाटती है। उसके प्रति सभी के मन में आत्मीयता का भाव बढ जाता है। नाटककार ने माई के माध्यम से मानवीय मूल्य कभी पराजीत नहीं होते बल्कि स्नेहपूर्ण व्यवहार से मानवीय संबंधों की उष्मा परवान पर चढती है और सभी जाति धर्मों के लोगों को एकता की डोर में बाँधे रखती है इसे साबित किया है।

सांप्रदायिक सौहार्दता के प्रतीक मौलवी और शायर के संवाद भी मार्मिक है। पहलवान जब बदले की आग में जलता है तब मौलवी उसे समझाता है ''पुत्तर जुल्म को जुल्म में से खत्म होंदा है . . . जानवर तक प्यारनाल पालतू बन जांदा है. . . तुसी इंसान ते जुलम करके खुदा नू की मुँह दिखाओगे, इस्लाम जुल्म हे खिलाफ है. . . जो जुल्म करदे ने ओ मुसलमान नहीं है. . . समझे इरशाद कि तुम जमीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।''2

रतन की माँ जब कहती है कि मैं दिल्ली जाना चाहती हूँ तभी सभी उसे रोकते है। तांगेवाला कहता है ''तुम हमारी माँ हो, मत कहो कि तुम हमारी माँ नहीं रहना चाहती।''3 शायर नासिर कहता है ''माँ जी नंगा आदमी सिर्फ नंगा होता है न हिंदू होता है न मुसलमान होता है।''4 समूचे नाटक में भावनाओं की सघनता के साथ राष्ट्रीय एकात्मता और सर्वधर्म समभाव की भावना स्पष्ट होती है। हबीब तनवीर ने नासिर काजमी के चरित्र को मानवीय संवेदना से भरा एक ऐसा व्यक्तित्व दिखाया है जो स्वयं मुसलमान होते हुए भी दूसरे मजहबों का सम्मान करता है।

माई के देहांत के बाद सबसे बड़ी समस्या खड़ी हो गयी थी उसके अंतिम संस्कार की। वह हिंदू थी, उसको अंतिम संस्कार करने के लिए यहाँ शमशान नहीं था। नासिर, सिकंदर मिर्जा और मौलवी इस समस्या का उपाय ढूँढते है, पहलवान द्वारा विरोध करने पर मौलाना रोष में आकर जो बात कहते है वह उनके मन में जागी सच्ची मानवीयता की प्रतीक है, साथ ही जाति धर्म माननेवाले के उपर करारा तमाचा है। वह कहते है ''देखिए वो मर चुकी है। उसकी मयत के साथ आप लोग जो सुलूक चाहे कर सकते है– उसे चाहे दफन दीजिए चाहे टुकडे टुकडे कर डालिए, चाहे गर्के आबे कर दीजिए. . . इसका उस पर कोई असर नहीं पडेगा. . . उसके इमान पर कोई आँच नहीं आएगी. . . लेकिन आप उसके साथ क्या करते है, इससे आपके ईमान पर जरूर फर्क पड़ सकता है। मुर्दा चाहे किसी भी मजहब का हो, उसका एहतेराम फर्ज है.. . और हम जब किसी का एहतेराम करते है तो उसके यकीन और उसके मजहब को ठेस तो नहीं पहुँचाते।''5 अनेक वैचारिक मतभेदों और धर्म के नाम पर बहस के बाद पूरे रिवाज के साथ रतन की माँ का अंतिम संस्कार रावी नदी के किनारे करने का फैसला किया गया। हिंदू धर्म के मुताबिक सारी सामग्री इकट्ठी करके आखिर में रतन की अरथी सब उठाते है।

मौलाना साहब के धर्म के प्रति उदात्त विचारों के प्रतिफल के रूप में माई का अंतिम संस्कार रीति रिवाज और हिंदू संस्कारानुसार किया जा रहा था। इन विचारों के खिलाफ जो बगावत करने

और उसके अपमान के गलत विचारों से मौलाना पर जानलेवा हमला करते है। नमाज पढते समय ही कुछ अज्ञात लोगों द्वारा उन पर हमला कर चाकू से वार करके उनका मुँह दबाकर जान लेते है।

नाटक का परिवेश हबीब साहब का जाना बूझा परिवेश था। इसलिए नाटक का अंतिम दृश्य भी उन्होंने अत्यंत प्रभावशाली बनाया। जहा उन्होंने मंच पर सांप्रदायिक सौहार्दता और राष्ट्रीय एकता के रूप में माई और मौलवी की अर्थी को एक साथ दिखाया। नाट्य साहित्य के इतिहास में हबीब तनवीर द्वारा निर्देशित यह दृश्य राष्ट्रप्रेम और एकता की एक मिसाल बन गया था।

संदर्भ – 1.जिस लाहौर नई देख्या वो जन्म्याई नई – अजगर वजाहत, पृ.11

2. वही, पृ.43

3. वही,पृ.66

4. वही, पृ.66

5. वही, पृ.76

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

70. हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

डॉ. सुनीता यादव
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, (हिन्दी)
श्रीरामकृष्ण स्नातकोत्तर महाविद्यालय.
कुरारा, हमीरपुर (उ.प्र.)

आओ खोज निकालें यंत्र, जिससे रहे न हम परतंत्र।
फूंकें कान–कान में मंत्र, बन जाये स्वाधीन स्वतंत्र।।

समय साक्षी है कि जो साहित्य लोकजीवन से रू–ब–रू होकर अपने समय और समाज को महत और वरेण्य देता है, वही कालजयी बनता है, जिस साहित्य में मेहनत, मजदूरी करने वालों की आत्मा की पुकार हो, उनके संघर्ष की संकल्प शक्ति हो, उनके एकता का तूर्पनाद हो तथा शोषकों के हृदय को चीरनेवाला तीर हो वही साहित्य लोक जीवन से जुड़ सकता है।

ऊंचे कुल का जनमिया करनी ऊंच न होय।
सुबरन कलस सुधा भरा सादै निंदा सोय।

वास्तव में भक्त कवियों ने चाहे व्यक्तिगत साधन का क्षेत्र हो या सामाजिक यथार्थ का, सर्वत्र लोक बिम्बों तथा लोक कथाओं का प्रयोग किया जो मानव के आदिम संस्कारों को न केवल स्पर्ष करता है, बल्कि उनके भावों को झनझना देता है।

अथर्ववेद में लिखा है, *रासन्ते चारूँ शब्द कुर्यते जनः यस्मिन प्रदेश विशेषे तद्राष्ट्रम्।*

अर्थात किसी प्रदेष के लोग एक विशिष्ट भाषा द्वारा जहां विचार विनिमय करते हैं, यह स्वयं विशेष्य राष्ट्र कहलाता है। किसी राष्ट्र का निर्माण मिट्टी, पत्थर, जंगल तथा पहाड़ से नहीं अपितु वीरों के शौर्य वीरांगनाओं के सतीत्व तथा शहीदों के उस रक्त से होता है जिसकी लालिमा उस भूभाग को नया क्षितिज प्रदान करती है। राष्ट्रीयता मानव जाति की मूलभूत चेतना है। अपना अधिक प्रिय होना स्वाभाविक है। अपनी पृष्ठभूमि से अनुराग अपने देशवासियों से प्यार तथा अपनी परम्पराओं से लगाव शाश्वत सत्य है। राष्ट्रीयता की पराकाष्ठा तब होती है जब अपने राष्ट्र पर कोई बली आक्रमण करके उसकी स्वतंत्रता के अपहरण की चेष्टा करता है। अपनी मातृभूमि को आंखें उठाकर देखे, राष्ट्रवासियों के लिए इससे बड़ी पीड़ा और कोई नहीं हो सकती है।

समय साक्षी है, कि आदिकाल से लेकर आज तक जब–जब राष्ट्रीय चेतना को ग्रसित करने हेतु राष्ट्रद्रोहियों का दशानन अस्तित्ववान हुआ है, तब–तब समस्त सुखों की तिलांजलि देकर किसी राघव को अपना पराक्रम दिखाना पड़ा है, मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', प्रसाद तथा रामधारी सिंह दिनकर आदि की कृतियों ने अपनी ओजस्वी वाणी से समाज को आन्दोलित कर दिया था। स्वर्णिम इतिहास के गान में सुभद्राकुमारी चौहान कवयित्री ने अतीत के नरवीरों एवं रणधीरों का आदर्श प्रस्तुत करके वर्तमान बल पौरुष को प्रेरित और प्रोत्साहित किया।

अपने ही देश के कण–कण को हाहाकार करते तथा उजड़े हुए वर्तमान को देखकर उनका मन विक्षुब्ध हो उठता है, क्योंकि उनका तो सपना था रामराज्य का जो उन्हें दूर–दूर तक कहीं दिखाई नहीं देता।

झांसी की रानी कविता किस मियमान में संजीवनी शक्ति का संचरण नहीं करती? तथा कौन सा ऐसा भारतीय है जिसे स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते रहने की प्रेरणा नहीं देती?

जाओ रानी याद रखेंगे हर कृतज्ञ भारतवासी
यह तेरा बलिदान जगायेगा स्वतंत्रता अविनाशी

होवे चुप इतिहास लगे सच्चाई को चाहे फांसी
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलों से चाहे झांसी
तेरा स्मारक तू ही होगी, तू खुद अमिट निशानी थी
बुंदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

हर व्यक्ति के ह्रदय में मातृभक्ति के प्रति अटूट प्रेम समाया रहता है। उनकी यही श्रद्धा फलीभूत होकर देश को देवत्य की पवित्रता की प्रतिमा के रूप में साकार कर देती है, राष्ट्रकवि श्याम नारायण पाण्डेय इसी श्रद्धा से जन्मभूमि को प्रशस्ति गई है, और सम्पूर्ण देश में स्वदेश की पवित्रता उदात्त भावना जगाई है। कवि शिवाजी महाकाव्य में भारत के एक प्रदेश महाराष्ट्र की भूमि का गुनगान इस तरह किया है :

आगे महाराष्ट्र है
रुका
विनीत भाव से बढ़ो
कर्मशील सूरमा
शिवा की कर्मभूमि है
संत तुकाराम की
समर्थ रामदास की
अकाम ज्ञानदेव नामदेव
एकनाथ की
पवित्र धर्मभूमि है
झुको
नमस्कार करो [1]

सच्चा साहित्यकार वर्तमान में यथार्थ से आंखें कैसे मूंद सकता था? उन्होंने भारतीय दुर्दशा का चित्र करुण नयनों से प्रत्यक्ष देखा। उसने अपनी कविता के अतीत शैल शृंगों से उतारकर यथार्थ के धरातल पर लाने का प्रयास किया। महाराणा भारत की स्वतंत्रता का प्रेरक और मार्गदर्शक है :

स्वतंत्रता के लिए मरो
राणा ने पाठ पढ़ाया था
इसी वेदिका पर वीरों ने
अपना शीश चढ़ाया था
तुम भी तो उनके वंशज हो
काम करो कुछ काम करो
स्वतंत्रता की बलि वेदी है
झुककर इसे प्रणाम करो। [2]

अतीत गौरवगान में तथा वर्तमान की व्यथा में एक सुनहरे भविश्य की मौन कल्पना बोलती प्रतीत होती है। उनके सपनों का भविष्य अतीत के उन राष्ट्रीय सांस्कृतिक आदर्शों पर खड़ी है जिनके द्वारा युगों–युगों तक भारत ने विश्व को भक्ति और मानवता का संदेश दिया था। साहित्यकारों ने अतीत की महान आत्माओं से भारतीय राष्ट्रीय चेतना को बल दिया है :

विष बीज न मैं बोने दूंगा

अरि को न कभी सोने दूंगा
पर दूध कलंकित माता का
मैं कभी नहीं होने दूंगा। [3]

कवि को विश्वास था कि व्यक्तिगत और साम्प्रदायिक भेदभाव भूलकर एक होकर सब भारतीय धर्म एवं जाति के झंडे के नीचे आयें तो देश का उद्धार होगा, राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, स्वतंत्रता की लालसा, भारतीयों में राष्ट्रीय प्रेम, साम्प्रदायिकता का विरोध, राष्ट्रीय उद्बोधन आदि राष्ट्रीय तत्व भर दिये।

आज हम राष्ट्रीय एकतात्मकता की बात करते हैं, आज सारे देश में साम्प्रदायिक तथा अलगाववादी प्रवृत्ति सिर उठा रही हैं। ऐसी स्थितियों में सारे भारतीयों को साहसी, विनयी, विवेकी, स्वाभिमानी, बलिदानी, सदाचारी, मानवतावादी बनाने के लिए साहित्यकारों ने अतीत के महापुरुषों का आदर्श उनके सामने रखा और उन आदर्शों का गुणगान किया :

मस्तक ऊंचा हुआ तुम्हारा कभी जाति गौरव से।
अगर नहीं, तो वह तुम्हारा तुच्छ अधम है, शव से। [4]

सशक्त समाज के नवनिर्माण के लिए जरूरी है कि साम्प्रदायिकता का भूत धकेलकर बाहर कर दिया जाये। कोई भी राष्ट्र केवल अतीत के गौरव पर प्रतिष्ठा नहीं पा सकता। उसे वर्तमान की कसौटी पर भी खरा उतरना होगा। यदि हम भारत को सुखी, सम्पन्न, गौरवमय बनाना है, तो साम्प्रदायिकता को हटाना ही पड़ेगा। साम्प्रदायिकता कैंसर की तरह बीमार है, जिस देश को यह बीमारी लगेगी उसका अंत निश्चित है। अतः हमें उस बीमारी को जड़ से उखाड़ना होगा।

साम्प्रदायिकता एक ऐसी सामाजिक तिरस्कार की भावना है, जिससे भारतीय समाज में सदियों से अपमानित तिरस्कृत, शोषित, पददलित जनता को हिन्दू संस्कृति से अलग कर विदेशी सभ्यता के जाल में फंसा दिया है। अंग्रेजों को हमारे बीच फूट डालो और शासन करो नीति अपनाकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया। बावजूद इन सबके भारत की आन–बान और शान के लिए लोककवि सदैव प्रयत्नशील रहे हैं। इनकी राष्ट्रीयता ने सम्पूर्ण देश में प्रेम का भाव समाविष्ट करने में सफल रही है। न केवल पुरुष अपितु यहां की महिलाओं भी युद्धभूमि में डटकर मुकाबला कर भारत की सम्प्रभुता को सुरक्षित, संरक्षित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. राष्ट्रकवि श्याम नारायण पाण्डेय, लेखक डॉ. राजेन्द्र शाह, पृष्ठ–143
2. राष्ट्रकवि श्याम नारायण पाण्डेय, लेखक डॉ. राजेन्द्र शाह, हल्दीघाटी, पृष्ठ–19
3. राष्ट्रकवि श्याम नारायण पाण्डेय, लेखक डॉ. राजेन्द्र शाह, शिवाजी, पृष्ठ–312
4. रामनरेश त्रिपाठी, आधुनिक कवि, पृष्ठ–58

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

71. 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्‌भाव

सहा.प्रा.मधुकर लक्ष्मण डोंगरे
मु.डाकघर–गेंगांव,
तहसिल–शहापूर

हिन्दी साहित्य में जयशंकर प्रसाद जी का नाम आदर एवं सम्मान के साथ लिया जाता है। प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार है। उपन्यासकार और कवि होने के साथ–साथ वह एक उच्चकोटी के नाटककार रहे है। प्रसादजी ने अपने नाटको माध्यम से भारत का अतीत गौरव एवं सुवर्ण इतिहास रेखांकित करने का प्रयास किया है। इसलिए उनके नाटक हिन्दी साहित्य में मिल के पत्थर सिध्द हुये हैं। भारत के स्वर्णिम अतीत को अपने नाटकों की कथावस्तु बनाकर उन्होंने एक ओर तो भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों को महत्व दिया तो दूसरी ओर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आधार ग्रहण करतें हुए अतीत के पट पर वर्तमान का चित्र अंकित किया, जिसमें राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक चेतना उभरकर आयी है।

ध्रुव स्वामिनी नाटक के पहले अंक में दिखाया गया है कि, रामगुप्त को सूचना मिली हैं कि शकों ने उसका शिबिर घेर लिया है। उसमें यह सन्धि–संदेश हैं कि, अगर रामगुप्त अपनें राज्य को युध्द–तांडव से बचाना चाहता है, तो वह हमें उपहार स्वरूप उसकी पत्नी ध्रुवस्वामिनी को हमे दे। निर्लज्ज, स्वार्थी एवं पराक्रमहीन रामगुप्त ध्रुवस्वामिनी समवेत चन्द्रगुप्त का विनाश करना चाहता है। अतः वह ध्रुवस्वामिनी को शकों को उपहार में देने के लिए तैयार होता हैं। जयशंकर प्रसाद जी ध्रुवस्वामिनी नाटक में 'ध्रुवस्वामिनी' के माध्यम से द्वारा एक ऐसी स्त्री–पात्र का निर्माण किया है, जिससे भारतीय संस्कृति के उच्च नैतिक गुण एवं राष्ट्र प्रेम कुट–कुटकर भरा है। वह वीर है, साहसी है, इसी निर्णय पर वह रामगुप्त को कहती है, ''यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा, नारी का गौरव नहीं बचा सकते, तो मुझे बेच भी नहीं सकते हो।''[1] इससे अपनें देश की स्त्री का गौरव एवं सम्मान उँचे संस्कार प्रगट होते हैं।

प्रसाद अपने नाटकों के माध्यम से यह प्रस्तुत करना चाहते है कि, भारत की भूमि वीरता से परिपूर्ण हैं। उसमें केवल वीर–पुरूषों का चित्रण नहीं बल्कि अपने देश में वीर–साहसी स्त्रियों का चित्रण किया हैं, जिनमें कायरता के जगह पराक्रमता, ओजस्विता औदार्य एवं प्रखर राष्ट्राभिमान विद्यमान है । कायर, निर्लज्ज आलसी एवं गुलामी का आदती रामगुप्त का ध्रुवस्वामिनी निषेध करती है, प्रसाद जी के शब्दों में, ''निर्लज्ज! मद्यप!! क्लीव!!! ओह, तो मेरा कोई रक्षक नहीं, नहीं, में अपनी रक्षा स्वंय करूँगी। मैं उपहार में देने की वस्तु, शीतलमणि नहीं हूँ। मुझमें रक्त की तरल लालिमा है। मेरा हृदय उष्ण है और उसमें आत्मसम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मैं ही करूँगी ।''2

ध्रुवस्वामिनी अपने अपमान के कारण आत्महत्या करना चाहती हैं, लेकिन चंद्रगुप्त उसकी रक्षा करता है। चंद्रगुप्त अपने राष्ट्र रक्षा एवं नारी सम्मान के लिए स्वयं ध्रुवस्वामिनी का वेश धारण करके सामन्तकुमारों के साथ शकराज के शिबिर में जाने के लिए तैयार हो जाता है। ध्रुवस्वामिनी भी चन्द्रगुप्त के साथ शिबिर में जाती हैं।

शकराज महादेवी ध्रुवस्वामिनी को अपने शिबिर में पाकर बहुत खुश होता है। इस खुशी में वह एक महोत्सव रखता हैं। महादेवी ध्रुवस्वामिनी शकराज से एकान्त में मिलना चाहती है। नाटक का एक स्त्री पात्र कोमा शकराज को बार–बार नारी जाति का अपमान करने से रोकती है, लेकिन शकराज उसके ठुकरा देता है। कोमा के प्रतिपालक आचार्य मिहिरदेव भी शकराज को राजनीति से हाथ न धो बैठने की सलाह देते है, स्वयं आचार्य मिहिरदेव के शब्दों में' ''राजनीति? राजनीति ही मनुष्यों के लिए सब कुछ नहीं है। राजनीति के पीछे नीति से भी हाथ न धो बैठो, जिसका विश्व मानव के साथ व्यापक सम्बध है। राजनीति की साधारण छलनाओं से सफलता प्राप्त करके क्षण भर के लिए तुम अपने को चतुर समझने की भूल कर सकते हो, परन्तु इस भीषण संसार में एक प्रेम करनेवाले हदय को खो देना, सबसे बडी हानि है शकराज! दो प्यार करनेवाले हदयों के बीच स्वर्गीय ज्योति का निवास है।''[3] आचार्य मिहिरदेव के वाक्य में साम्प्रदायिक सद्भाव भरा है। अंत में चद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी द्वंद का नाटक करते है और उसी बहाने चन्द्रगुप्त अपनी कटार निकाल लेता है। ध्रुवस्वामिनी तूर्यनाद करती है और चन्द्रगुप्त द्वंद युध्द में शकराज को अंत कर देता है। इसके बाद रामगुप्त बैखला हो उठता है। वह क्रोध में आकर सामन्त कुमारों के साथ चन्द्रगुप्त को भी बंदी बना लेता है। पारिवारिक मर्यादा का ध्यान रखते हुए चन्द्रगुप्त ध्रुवस्वामिनी से प्रेरित होकर भी रामगुप्त का विरोध नहीं करता । बडे धैर्य एवं साहस के साथ महादेवी का पद और रामगुप्त की पत्नी होना इन दोनों को अस्वीकार कर देती है। पुरोहित अपने धर्मशास्त्र के अनुसार ध्रुवस्वामिनी पर रामगुप्त का नैतिक अधिक नकारता है, स्वयं जयशंकर प्रसाद के शब्दों में, ''विवाह की विधी ने देवी ध्रुवस्वामिनी और रामगुप्त को एक भ्रान्तिपूर्ण बन्धन में बांध दिया है। धर्म का उद्देश इस तरह पददलित नहीं किया जा सकता। माता और पिता के प्रमाण के कारण से धर्म–विवाह केवल परस्पर द्वेष से टूट नहीं सकते, परन्तु यह सम्बन्ध उस प्रमाणों से भी विहीन है। और भी यह रामगुप्त मृत और प्रव्रजित तो नहीं, पर गौरव से नष्ट, आचरण से पतित और कर्मों से राजकिल्विषी क्लीव हैं । ऐसी अवस्था में रामगुप्त का ध्रुवस्वामिनी पर कोई अधिकार नहीं।''[4]

उपयुर्क्त संवादो से ध्रुवस्वामिनी नाटक में राष्ट्ररक्षा, राष्ट्रहित के साथ–साथ साम्प्रदायिक सद्भाव भी जागृत होता हैं। जो राष्ट्रधर्म के अनुकूल है। राष्ट्र कल्याण को ध्यान में रखते हुए पुरोहित रामगुप्त की धमकी से डरता नहीं है । वह मंत्री परिषद में अपना धर्मकार्य निर्भिक होकर करता है, तथा निर्लज्ज, आलसी विलासी रामगुप्त को कहता है, ''ब्राह्मण केवल धर्म से भयभीत है। अन्य किसी भी शक्ति को वह तुच्छ समझता है। तुम्हारे बधिक मुझे धार्मिक सत्य कहने से रोक नहीं सकते।''[5]

अंत में चन्द्रगुप्त के सामन्तकुमार चन्द्रगुप्त की रक्षा करते हुए रामगुप्त पर प्रहार करते हैं । जिससे उसे मृत्यू प्राप्त होती है। ध्रुवस्वामिनी नाटकपर विचार करते डॉ.गिरिश रस्तोगी का कहना है कि, प्रसाद उच्च मानवीय मूल्यों के नाटककार है। जीवन को अर्थवान बनाकर उन्होंने मानवीय मूल्यों और सांस्कृतिक जागरण के साथ अपनी भावना की अभिव्यक्ति की।

जीवन का भयंकर यथार्थ, गृह–कलह, स्वार्थ–साधना, मूल्यभ्रष्टता और अपूर्ण मानवता के बीच से प्रसाद के नाटक शाश्वत सत्य का उद्‌घाटन करते है।

ध्रुवस्वामिनी नाटक केवल इतिहास की घटनाओं का संकलन नही है, बल्कि उसमें कल्पना का योगदान, आधुनिकता का प्रयोग और उस युग की परिस्थितियों के बीच नारी अस्मिता का सवाल बहुत प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है। यह नाटक सामाजिक, राजनैतिक और व्यक्तिगत प्रश्नों तथा संघर्षो से जुडा हुआ नाटक है।

अतः संक्षेप में हम कह सकते हैं, कि, यह नाटक पशुता के विरूध्द मानवीय संवेदना का नाटक है। पुरूष समाज और उसके द्वारा बनाए सिध्दान्त को चुनौती देता हुआ यह नाटक केवल नारी समस्या का समाधान नही प्रस्तुत करता अपितु जनता का विद्रोह और अन्त में लोकतंत्र की चेतना का विकास प्रस्तुत करता है और यही प्रसादजी का ध्रुवस्वामिनी नाटक का उद्देश्य भी है।

उक्त विवेचन के आधार पर यह निष्कर्षतः कहा जा सकता कि ध्रुवस्वामिनी नाटक में जयशंकर प्रसादजी ने सांस्कृतिक मूल्यों के साथ–साथ राष्ट्रीयता को भी अभिव्यक्त किया है। निश्चित रूप से यह नाटक परतंत्र भारत के नवयुवकों एवं नवयुवतियों के लिए प्रेरणादायी रहा होगा।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

72. हिंदी बाल उपन्यास में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भाव

डा. माया जाधव
पुणे

किसी भी राष्ट्र का कोई स्थूल स्वरूपाकार नहीं होता। वह मात्र एक भाववाचक संज्ञा है। अंतः सूत्रोंसा एक ऐसी भावना है कि जो किसी व्यक्ति यासमाज को कि, स्वरूपों का समन्वय है। एक समझ -चेतन वस्तु के साथ जोडे और बांधे रख सकती ह-उसकी हर जड, विशिष्ट भूभाग ै।इस दृष्टि से किसी विशिष्ट स्वरूपाकारवाले भूभाग को देश कहा जाता है। उस देश का हर अच्छी परंपरा बात और वस्तु को अपना समझना उसके लिए सर्वस्व त्याग की भावना से परिचालित रहना ही वास्तव में राष्ट्रीयता है।

आज के तत्वचिंतक मनीषियों का कहना है कि भारत के प्राच-ीन युग में राष्ट्रीयता की भावना या तो थी नहीं यदि किसी रूप में थी भी तो वह धर्मया जातिगत एकता पर आधारित थी। भारत में आधुनिक राष्ट्रीय चेतना का बीजआ।इस विप्लव का रूप विप्लव के रूप में अंकुरित हु-के जन 1857 प्रकृति राष्ट्रीय थी-चाहे जैसा रहा हो किंतु इसकी अंत क्योंकि इसमें भागलेनेवाले नायकोंसैनिकों हिंदुओ , जिससे विदेशी अंग्रेजो ,और मुसलमानों में उद्देश भिन्नता होते हुए भी संगठित होने के लिए बाध्य किया व प्रतिक्रिया हमें साहित्य में नहीं मिलती जिसे देखकर को देश से बाहर निकाला जा सके।इस जन विप्ल अनुमान होता है कि सामाज्यवादी सरकार ने इस विप्लव को सैनिक विद्रोह कहकर निंदनीय ठहराया। भारतेंदु की राष्ट्रीय भावना बहुत ही व्यापक है।उन्होंने सभी धर्म संप्रदाय वर्ग भाषा के प्रति प्रेम प्रदर्शित करते हुए स्वदेशी भाषावस्त्र और स्वराज्य की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया।प ,रंतु भारतेंदु युग की तुलना में द्विवेदी युग की राष्ट्रीय कविता अतीत से वर्तमान

कल्पना से यथार्थ निराशा से आशा उपदेश से कर्म और आत्महीनता से आत्म गौरव की ओर अग्रसर दिखाई देती है।श्रीधर पाठकमाखनलाल ,मैथिलीशरण गुप्त,गोपालशरण सिंह ,रामनरेश त्रिपाठी , चर्तुवेदी सुभद्रकुमारी चौहानआदि रचनाकारोंने अपना रचनओं मे देशभक्ती की भावना को ,निराला , व्यक्त किया।इस प्रकार पूर्व स्वातंत्र्योत्तर कालखंड से हमें रचनाओं में राष्ट्रीय एकात्मता की भावना देती है। दिखाई

इसी बात को महत्वपूर् मानते हुए भारतेंदुकाल से बाल साहित्य की रचना का प्रारंभ दिखाई देता है।अतः बाल साहित्य की विधा बाल उपन्यास में भी हमें धीरेधीरे यह परंपरा पनपती हुई दिखाई देती -ए संस्कार चिरंतनकाल तक बालमन पर किए ग ,है।बालक देश का भविष्य होते है ईस बात को मानते हुए इसलिए बाल साहित्य की विधा ब ,असरदार होते है ालउपन्यास में राष्ट्रीय एकता महत्वपूर्ण मानी जाती है। इस बात को ध्यान में लेते हुए राधेश्याम प्रगल्भ जी की किताब के बारे में सोचा जा सकता है। प्रस्तुत किताब में समाविष्ट बाल उपन्यास “एक था छोटा सिपाही” तथा “शाही हकीम”राष्ट्रीय एकता , और संप्रदायिकता के सशक्त उदाहरण है। दोनों उपन्यासों के माध्यम से बालकों के मन में राष्ट्रीयता की भावना निर्माण करने में सफलता मिली हुई दिखाई देती है।

एकथा छोटा सिपहीकिया है। उपन्यास का उपन्यास को मध्य प्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत , नायक लद्दाखवासी पंद्रह वर्षीय बालक सूरजा नामकबालक है। सूरजा फौज में बडा अफसर बनना चाहता है।इसलिए वह सैनिक द्याराम से दोस्ती करता है। दोनों का दोस्ता गहरी हो जाती है। द्याराम उसे सिपाही के कर्तव्य बताता है और ट्रेनिंग देता है। सिपाही द्याराम ने यह भी समझाया था कि ,"जो लोग अपने देश पर बलिदान होते हैं ,उन्हें स्वर्ग में भगवान के आसन मिलता है"।यह सुनकर सुरजा बडा खुश हो जाता है और निश्चय करता है मैं-सिपाहा होकर अपने देशपर बलिदान हो जाऊंगा। स्वर्ग में भगवान के बराबर आसन पाऊंगा।

कुछ दिनों के बाद सूरजा को पता चलता है कि उसका उसका दोस्त द्याराम का चिनीओं द्वारा अपहरण हो गया है।सूरजा उसकी खोज में निकलता है।वह अपने देश के लिए हंसते हंसते प्राणोत्सर्ग करता है। सूरजा किसी युद्ध में नहीं जाताबंदूक चलाना नहीं जानता लेकिन फिर भी शत्रु का , नुकसान वह करता है।शायद फौज भी नहीं कर पाती।वह दुश्म जितना हो सकेन के गोला बारूद के भंडार नष्ट कर देता है और शत्रु के आक्रमण को विफल कर अपने देश को तबाही से बचा लेता है।

सूरजा की बहन कोनी द्वारा उसका मनोबल ऊंचा करना सिपाही के परिजनों की था देशभक्ति और सच्ची मित्रता के महत्व को रेखांकित करतभूमिका की ओर इंगित करता है ता है। एक छोटा नौजवान अपने देश के प्रति एकात्मता तथा प्राणों की बाजी लगाने में किस प्रकार जुट जाता है इसका सशक्त उदाहरण अर्थात यह उपन्यास है।

यिकत्वतापर उसी प्रकार शाही हकीम उपन्यास आदर्शोमुख एतिहासिक और सांप्रदा आधारित बहुत ही सुंदर उपन्यास प्रगल्भजी नेलिखा है।जिसमें तथ्यों को बिना तोडेमरोडे जबरन धर्म - परिवर्तन यद्ध और हिंसा के विरोध में स्वर उर्जस्वित किया गया है।समस्या हैः जानवर भी गिरोह बांधकर सात -र न जाने क्यों इंसान सातफि ,दूसरे जानवरों पर चढाई कर उनका मजहब बदलने नहीं जाते समंदर पार करके इस नापाक इरादे से आता है ?

उपन्यास का नायक सलाउद्दीन युद्ध की मनोवृत्ती पर प्रश्नचिन्ह लगाता है तथा शाही हकाम बनकर दुश्मन का ईलाज करता है। इस प्रकार उपन्यास में उच्च मानवीय गुणों को बदलनेप्रतिपादित कर शत्रु का ह्द्य

में सफल होता है। उपन्यास में अतात के फलक पर वर्तमान चित्रीत है और यद्यपि कखानक चौदहवी सदी का है और घटनास्थल जेरूसलम है तथापि भारतिय दृष्टिकोन की पुष्टि करता है।पापी से नहीं पाप से घृणा करो। शत्रु के भी काम आओपन्यास की सांप्रदायिकता।दुश्मन को भी स्नेह से जीतो। यही है उ ,

इस प्रकार दोनों उपन्यास बाल मन पर अपनी अमिट छाप छोड देते हैं। एक तरफ राष्ट्रीय एकात्मता और दूसरी ओर सांप्रदायिकता का भाव बहुत ही असरदार है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

73. सतगुरू राम सिंह जी के मानव मूल्य और सांप्रदायिक सद्भावना

डॉ॰ हरदीप कौर
(हिन्दी विभाग)
श्री गुरूनानक देव खालसा कॉलेज
दिल्ली–110005

मूल्य शब्द मूल+यत्[1] से बना है, जिसका अभिप्राय है, किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, दाम, अथवा बाजार भाव आदि। मानक हिन्दी कोश में मूल्य का अर्थ इस प्रकार है – ''मुद्रा के रूप में उतना धन जो कोई चीज क्रय करने के लिए उसके बदले में किसी को देना पड़ता है, वह दर या भाव जिस पर कोई चीज बिकती हो। अर्थशास्त्र के अनुसार वह किसी वस्तु की माँग और होने वाली पूर्ति की मात्रा आधार पर स्थित होता है, वह गुण या तत्त्व जिसके आधार पर किसी का महत्त्व या मान होता है।''2 वर्तमान युग की आवश्यकताएँ अनेक एवं विविध प्रकार की हैं। हमारी सबसे बड़ी आवश्यकता है – जीवन सम्बन्धी मूल्यों के प्रति भावात्मक दृष्टिकोण का होना इसलिए मूल्यों का अनुसंधान वहीं तक महत्त्वपूर्ण है, जहाँ तक वह हमें जीवन के तथ्यों को अवगत कराता है। वस्तु भी वही मूल्यवान समझी जाती है जो मनुष्य के विकास में योग दे 'वही वस्तु अंतिम रूप से तथा स्वलक्ष्य दृष्टि से मूल्यवान है, जो कि व्यक्तियों को विकास अथवा आत्मविकास की ओर ले जाती है।''[3]

– डॉ॰ नगेन्द्र, ''मूल्य'' को साहित्य से बाहर का शब्द समझते हैं। उनके अनुसार – ''मापदण्ड और मूल्य आदि शब्द साहित्य के शब्द नहीं है। पाश्चात्य आलोचनाशास्त्र में भी इनका समावेश अर्थशास्त्र अथवा वाणिज्यशास्त्र से किया गया है।[4] डॉ॰ धर्मवीर भारती ने लिखा है कि – ''मानवीय मूल्य विराट मानव जीवन की अगणित शिराओं में संचारित होते रहते हैं जहाँ भी यह रक्त प्रवाह रूका वहीं अंग पक्षाघात से आहत होकर सूख जाता है। बेकाम हो जाता है।[5] डॉ॰ जगदीश गुप्त ने लिखा है कि – ''मूल्य एक धारणा है जिसका निर्धारण मनुष्य की चेतना करती है।''[6] गोविंदचन्द्र पांडे अपने ग्रंथ 'मूल्य–मीमांसा' में मूल्य के संदर्भ में कहते हैं – ''जिस विषय को खोज का विषय होने पर विवेक का समर्थन प्राप्त होता है, वही मूल्य है।''[7]

अतः यह कहा जा सकता है कि जो वस्तु व्यक्ति के मन को शांति दे, उसकी प्रेरणा बने और अपने आप में सार्थक महत्त्व रखती हो, वह मूल्यवान है, यानि किसी वस्तु की केन्द्रीय गुणवत्ता और मानव–जीवन के लिए उसकी उपयोगिता ही मूल्य है। अगर हम सतगुरू राम सिंह जी की बात करें तो इनमें प्रेम, दया, करूणा, श्रद्धा, सेवा, कल्याण, शांति और सांत्वना और भक्ति जैसे मूल्यों की प्रधानता है। भारत के लोकनायक के रूप में सतगुरू जी की सार्थकता आधुनिक युग में उतनी ही है जितनी के उनके युग में रही होगी। भारतीय समाज आज भी शोषण अत्याचार, भोग विलास, गउ हत्या, उॅच–नीच, छूआ–छूत, जाति पाति के भेद भाव और अनेक प्रकार की कुरीतियों से जूझ रहा है । अतः आज के संदर्भ में भी सतगुरू जी के प्रवचन अपना विषेश महत्व रखते हैं।

सतगुरू जी ने सर्वत्र मानव मूल्यों की स्थापना पर जोर दिया। यह मूल्य सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और नारी संबंधी मानवीय मूल्यों के रूप में दिखाई देते हैं।

सामाजिक मूल्य – सामाजिक मूल्यों का सम्बंध सामाजिक जीवन से होता है ये मूल्य आम तौर पर काल और परिस्थितियों में परिवर्तित होते रहते है। सतगुरू राम सिंह जी ने जिन सामाजिक मूल्यों का प्रतिपादन किया है वह सम्पूर्ण जनता–जनार्दन के मानस का परिष्कार करने वाले है। उनका दृढ़ विश्वास है कोई भी समाज अथवा राष्ट्र आचार के बल पर ही जी सकता है।

''सामाजिक जीवन से कुरीतियों को दूर करने का निर्णय किया और ये तय किया गया कि विवाह कोई समझौता नहीं आनन्द का, प्रसन्नता का प्रतीक है। अतः इसे आडम्बर मुक्त कर, परिवार धातक रीतियों को तोड़ सीधे–सादे ढंग की परम्परा का श्रीगणेष दिया गया।''[8] '' ...3 जून, 1863 का दिन निश्चित किया गया। सतगरू रामसिंह जी बैसाखी के मेले के बाद जिला फिरोजपुर से प्रचार कार्य करते हुए खोटे गाँव पहुँचे। इस नई विवाह रीति को देखने के लिये आस–पास के क्षेत्रों के नामधारी भी काफी संख्या में खोटे गाँव पहुँच गये। सतगुरू रामसिंह जी ने अपनी उपस्थिति में सुबह–सवेरे हवन करके अग्नि की परिक्रमा करवा के 6 विवाह करवाए। इनमें से एक विवाह अन्तर्जातीय हुआ। गाँव व अन्य गाँव से आये लोग नई सीधी–सादी परम्परा देख कर बहुत चकित हुये। सतगुरू जी ने इस नई विवाह रीति को आनन्द मर्यादा का नाम दिया। न किसी पक्ष से दहेज दिया न दूसरे पक्ष ने दहेज लिया। न माँस–मदिरा का सेवन हुआ, न नृत्य संगीत का आयोजन किया गया।[9]

राजनीतिक मूल्य – सतगुरू जी ने प्रत्यक्ष रूप से देश की राजनीति में भाग लिया। सरकारी डाकखानों का इस्तेमाल न करके अपनी गुप्त डाक प्रबन्ध सेवा शुरू की। विदेशी चीजों का बहिष्कार किया और स्वदेशी का प्रचार किया। ''असहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत सतगुरू राम सिंह जी का यह भी आदेश था कि विदेशी कपड़ा न पहना जाए और अपने देश का ही बना हुआ कपड़ा प्रयोग में लाया जाये।''[10] ''1857 के विद्रोह के पश्चात् देखने पर पता चलता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में सतगुरू राम सिंह जी पंजाब ही नहीं भारत वर्ष के अकेले ऐसे व्यक्तित्व थे जिससे जनता को कोई खास उम्मीद हो सकती थी। 1857 के क्रूरतम अत्याचारों के पश्चात् तुरन्त ही सतगुरू जी ने अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध जनता को संगठित किया। वास्तव में देखा जाये तो नामधारी अन्दोलन जनता का आन्दोलन था। ये किसानों का मेहनतकशों का आन्दोलन था तथा ये लोग अपने अधिकार पाने के लिये लड़े थे। क्रांति जनता के बीच से पैदा होती है, चाहे वह फ्रांस की हो या रूस की। सतगरू राम सिंह जी जनता के बीच पैदा हुए, वह जनता के नेता थे।''[11] वास्तव में सतगुरू जी के राजनीतिक विचार एक राजनीतिक व्यक्ति के विचार ही हैं, साथ ही यह विचार जीवन को आर–पार तात्त्विक दृष्टि से देखने वाले दार्षनिक सन्त के भी विचार है। इनकी अनेक वातें ऐसी है जो आज भी हमारे लिये उपादेय है।

नारी सम्बन्धी मानवीय मूल्य– सतगुरू जी के विचारों से नारी सम्बंधी उन मूल्यों के दर्शन सहज ही हो जाते है जो आधुनिक काल में आकर नारी मुक्ति का स्वर बुलन्द करते है। इन्होंने नारी के उत्थान के लिये अनेक प्रयास किये जिसमें से विधवा विवाह, बाल–विवाह निषेध, बिना दहेज के विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, स्त्रियों की शिक्षा और नारी को पुरुष के बराबर समान अधिकार आदि है। साथ ही, इन्होंने समाज में नारी के महत्त्व को स्वीकार करते हुए उसे जड़ पदार्थ समझे जाने की भी निन्दा की है।

धार्मिक मूल्य – सतगुरू का यह विश्वास रहा है कि वर्णानुकूल धर्माचरण से स्वर्गपवर्ग की प्राप्ति हो सकती है और उसके उल्लंधन करने और परधर्म–प्रिय होने से घोर यातना और नरक की प्रप्ति हो सकती है। ''बड़े–बड़े सिक्ख धरानों के सदस्यों ने अपने रहने खाने के ढ़ंग ही नहीं बदले, धर्मिक आचार व्यवहार भी बदल लिए। ऐसे में गुरू गोबिन्द सिंह जी ये बात 'रहनी रहे सोई सिख मेरा और रहत प्यारी मो को सिख प्यारा नहीं' अब कही देखने को नहीं मिलती थी। गुरू गोबिन्द सिंह जी ने रहत मर्यादा अर्थात् सिक्खों में नियमावली पर विशेष ध्यान दिया व कड़ाई से इसका पालन किया तथा सिक्खों से भी करवाया। वास्तव में देखा जाए तो सिक्ख धर्म मूलतः नियम प्रधान है इसमें गुरू साहेबान ने दार्शनिक चिन्तन को अधिक महत्त्व न देकर आचरण को विशेष महत्व

दिया।''[12] गुरूजी का मानना है कि धर्म सम्प्रदाय, आडम्बरों और अहंकार और संकीर्णता की सीमाओं से घिरे हुए अन्धविश्वास का नाम नहीं है, वह तो सेवा, परोपकार, त्याग और सत्य की राह पर चलने का नाम है। ''सतगुरू राम सिंह जी की ये दृढ़ अवधारणा थी कि कोई भी राष्ट्र राजनीतिक रूप से पराधीनता में बँधा रहकर आत्मिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक उन्नति नहीं कर सकता। सतगुरू जी ने सामाजिक समानता के लिए भी विभिन्न कदम उठाए। गाँवों में रहने वालों के लिए गाँव में अमृत तैयार कर वहीं छकाने की रीति को पुनजीर्वित कर धार्मिक क्षेत्र में उन्नति तथा वृद्धि के लिए बहुत बड़ा कार्य क्षेत्र तैयार किया। भ्रमों व अन्धविश्वासों में फँसी जनता के लिए सतगुरू राम सिंह जी ने आलोकित प्रकाश स्तम्भ का कार्य किया।''[13] अतः सतगुरू जी का मानना है कि धर्म मानव जीवन को नियमानुकूल कूल चलाने वाला तत्व है। धर्म का अर्थ कल्याण है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सतगुरू राम सिंह जी के मानव–मूल्य आज भी अपना विषेष महत्त्व रखते हैं। इनके अन्दर सामाजिक मूल्य, राजनैतिक, धार्मिक और नारी सम्बंधी मानवीय मूल्य आदि सभी मूल्य मानव कल्याण के लिए समानान्तर चलते दिखाई देते है। वे मानव–मूल्यों, मानवहितों और मानव–अधिकारों की रक्षा करते दिखाई देते है उनके मानवतावादी मूल्यों की उपयोगिता और महत्त्वपूर्णता पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता।

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1. संस्कृत हिन्दी कोश – आष्टे वामन शिवराम, पृष्ठ – 812
2. द ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी – वीं रिहबर, 1970
3. फंडामेंटल्स ऑफ एथिक्स – अर्बन, पृष्ठ – 18
4. विचार और विश्लेषण – डा० नग्रेन्द्र, पृष्ठ – 1
5. मानव – मूल्य और साहित्य – डा० धर्मवीर भारती, पृष्ठ – 134
6. नयी कविताएँ: स्वरूप और समस्यायें – डा० जगदीश चन्द्र गुप्त, पृष्ठ–35
7. मूल्य – मीमांसा – डा० गोविन्द चन्द्र पाण्ड़े, पृष्ठ – 31
8. युगनायक सतगुरू राम सिंह जी – सुरजीत सिंह जोबन, पृष्ठ – 76
9. फारेन पोलिटिकल (ए) – मार्च – 1867
10. युग नायक सतगुरू राम सिंह जी – सुरजीत सिंह जोबन, पृष्ठ – 114
11. युग नायक सतगुरू राम सिंह जी – सुरजीत सिंह जोबन, पृष्ठ – 135
12. युग नायक सतगुरू राम सिंह जी – सुरजीत सिंह जोबन, पृष्ठ – 91
13. युग नायक सतगुरू राम सिंह जी – सुरजीत सिंह जोबन, पृष्ठ – 96

74. आज की हिन्दी कविता में सांप्रदायिक सदभाव

डॉ. वर्षाराणी निवृत्तीराव सहदेव,

सहाय्यक प्राध्यापक,

श्री विजयसिंह यादव कला व विज्ञान महाविद्यालय,

पेठ–वडगाव, ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापूर

विश्व में भारत की पहचान सांस्कृतिक विभिन्नता वाले देश की है, जहाँ विभिन्न जातियों, धर्मों, संप्रदायों के लोग सद्भावना के साथ रहते है। लेकिन वर्तमान समय में देश को भयानक समस्याओं का सामना करना पड रहा है। आज आवश्यकता है कि, सच्चे दिल से लोगों के बीच प्रेम सद्भाव की भावना बढे। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का सम्मान करें। संवेदनाओं का पोषण हो, सकारात्मक सोच एवं कार्योंद्वारा नये युग की स्थापना हो। हमारे हिंदी के कवियों ने इस जिम्मेदारी को बखूबी निभाया है। सांस्कृतिक मूल्यों के समन्वयक राष्ट्रीय आपदाओं के निवारक, शाश्वत, सत्य, तटस्थ रचनामूल्यों के सर्जन कवियों का स्वर मंद किंतु प्रखर सुनाई देता है। जिनकी सर्जनाएँ साहित्य से होड रखते हुए राष्ट्रीय मूल्यों की संयोजना में सतत क्रियाशील है। ऐसे कवियों में रामदास मिश्र, नंद्किशोर आचार्य, विनोदकुमार शुक्ल, रामजी सेठ, लीलाधर जूगडी, मंगलेश डबराल, अनामिका, चंद्रकांत देवताले, अशोक वाजपेयी, विष्णू खरे विशेष उल्लेखनीय है। मंगलेश डबराल भूमंडलीकरण कविता में युद्ध से बचने का संदेश देते है।

> “कोई हमें लगातार युद्ध के मैदान की तरफ़ ले जा रहा है
> और कह रहा है धीरे-धीरे जब तुम, बहुत कम मनुष्य रह जाओगे
> तो इस खेल के अंत में मिलेगा एक बडा-सा पुरस्कार।”[१]

21 वीं सदी की हिन्दी कविता में परिवेश की प्रस्तुती अपनी समग्रता में हो रही है। अपने चारों ओर जो भी घटनाएं कवि देख रहा है, उन्हीं को बडी शिद्दत के साथ उठाकर कविता लिखी जा रही है।और यह होना बेहद जरुरी है क्योंकि आज हम देखते हैं, 21 वीं सदी में नए प्रश्न हमारे सामने हैं। भूमंडलीकरण के प्रभाव और बाजारवाद में मनुष्य केवल उपभोक्ता बन चुका है। ऐसे में कवि जो कुछ देख रहा है उसी को अपनी कविता में वाणी दे रहा है।

आज हम देखते हैं टैक्नोलॉजी के विकास ने एक ओर संपूर्ण समाज को संचार माध्यम और मनोरंजन-कंपनियों की दुनिया में बदल दिया है, तो दूसरी तरफ आम आदमी के सामने रोजी-रोटी, कपडा-मकान की समस्या आज भी प्राथमिक है। शोषन, दमन और अत्याचार के उदाहरण चारों तरफ है। गुजरात से लेकर इराक तक की घटनाएं इसी 21 वीं सदी की शुरुआत है। ऐसे समय में हिन्दी कविता इस परिवेश से कैसे अछूती रह पाती?

21 वीं सदी में मनुष्य ने बहुत विकास कर लिया किंतु कुछ कमियॉ भी रही। हम पर्यावरण को नहीं बचा पा रहे इसलिए कविने प्रदूषण के प्रति सावधान किया है। इस सदी में कुछ प्रकोप भी हुए। पानी के प्रकोप में ‘सुनामी’ हो या 26 जुलै 2006 की धुऑधार बारीश हो। कविने इसे अपनी कविता का विषय बनाया। सांप्रदायिक दंगे, किसानों की जिंदगी का कटुसच, मृत्यु से डर की जिंदगी, महानगर की जिंदगी, देश की आर्थिक स्थिति, नैतिक पतन आदि

समग्र परिवेश 21 वीं सदी की हिन्दी कविता के मूल में है। प्रस्तुत आलेख में इन्ही विषयों को खोजने की कोशिश की गई है।

21 सदी में भारतीय समुदाय की धर्मनिरपेक्षता की परंपरा पर लगातार हमले हो रहे हैं। सांप्रदायिकता समाप्त होनी चाहिए थी, जो बढती चली गई। धर्मांधता और जातिवादी मानसिकता ने देश में विद्वेश का माहौल खडा किया। ‘विविधता में एकता’ यह नारा देनेवाले देश में स्थितियॉ कुछ ऐसी है-

‘‘खून और माटी के कीचड में धंस गया शहर
मनुष्य होने के मतलब जर्जर किले सा ढह गया
तालाब में लाशें
कुए में लाशें
इस बीच कोई पूछ बैठता है
ठीक-ठाक बताइएगा
ज्यादा कौन मरा- हिदुं या मुसलमान?’’[२]

21 वीं सदी के कवि की राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय चिंताएं बढती जा रही है। सारी की सारी राजनीतिक पार्टियों की विश्वसनीयता समाप्त हो रही है। इस सदी के कवि ने सूखे-अकाल से पीडित, भूख बीमारी से लडते मरते मगरु बुधवा की चर्चा की है। इलाज के लिए राशन कार्ड गिरवी रखनेवाले समरु पहाडिया की बात की है। चूहे पकाकर खा रहे झारखंड के संतोलो की बात की है। सुधी कवियित्री निर्मला पुतुल के शब्दों में -

‘‘मैं बात करना चाहती हूॅ
दिजला मेला देखकर वापस लौट रही
मेलचो मुर्म के साथ हुई सामूहिक बलात्कार की
उत्तर प्रदेश के एक जनपद में पॉच हजार में
बिकी सत्रह वर्षीय सोनामुनी होसदा की
बात करना चाहती हुॅ मैं’’[३]

एक छोटीसी कविता देखिए, जिसमें कवि नीलाभ सिर्फ मनमोहनसिंह ही नहीं, बुश और उनकी दोगली नीतियों का विरोध करते है -

‘‘साधो, मनमोहन की सत्ता,
खेले अपना पत्ता
छटनी करे मजूरों की और खुद लेती है भत्ता
अम्बानी घर लक्ष्मी नाचे कृषक मर अलबत्ता
सेठ विदेशी देसी राजा लूटें लत्ता-लत्ता
कहते कवि नीलाभ बदल दो ऐसी जुल्मी सत्ता ।’’[४]

वर्तमान समय में मानव-मानव के बीच की दूरियां बढ रही है। जाति, धर्म, लिंग, प्रांत, भाषा आदि के आधारपर झगडे पनप रहे है। कवि अरुण कमल मानव के बीच की दूरियॉ मिटाने की कोशिश ’एक पुराना गान’

कविता के माध्यम से कर रहे है। आज भी कवि निराश नही है। जनता को जागने का संदेश देता है। आपसी मतभेदों से कुछ हासिल नहीं होगा। सभी की हालत समान है। इसलिए चुप मत बैठो -

‘‘धर्मों जातियों बोलियों में बटे लोगो
देखा कि सबके कपडे फटे है
सब बेकार बेहाल है
बहुत हुआ अवसाद और गोधुलि का गायन
अब कंठ खोल गाने का दिन है
अब धूप में देह तपाने का दिन है
उठो बांधों हाथ में हाथ
और घेर लो धरती ।’’५

आज समय, समाज, स्थितियाँ, आदर्श, मूल्य सब बदल रहे है। हर कहीं दिखावटीपन तथा स्वार्थ नजर आ रहा है। भीतर से चाहे जितने भी टूटे हो, बाहर से हर व्यक्ति संवरा लगता है। इस सदी में सद्भाव की अपेक्षा बैरभाव अधिक फैल रहा है। प्रेम में भी नकलीपन और धोकाधडी आ रही है।

शायर अजीज आजाद की नजर में मनुष्य जितना स्वार्थी तो जानवर भी नही है -

‘‘मेरे जैसा भी खूँखार कोई जानवर होगा
मुझे जो प्यार करता है उसी को काट खाता हूँ
मेरा मजहब तो मतलब है मस्जिद और मंदिर क्या
मेरा मतलब निकलते ही खुदा को भूल जाता हूँ ।’’६

21 वी सदी में आतंकवाद ने अपना भयानक रुप धारण कर लिया है। आतंकवाद के प्रति आक्रोश प्रकट करनेवाली कविताएं भी लिखी जा रही है। इस धरती को आतंकवाद ने नरक बनाकर छोड दिया है। मनुष्य ने अपनी सारी मनुष्यता छोड दी है उसुल तोड दिए हैं। मुंबई हो या कश्मीर कैसे मासूम, बेगुनाह रोजमर्रा के कामों में व्यस्त एक धमाके से अस्तव्यस्त हो गये यही बात ’समय बदलेगा’ कविता में डॉ.सरस्वती माथूर उठाती है-

‘‘और फिर सब खामोश हो जाता है
मानो युग बदल गया हो
एक पिता नहीं रहा। एक पति खो गया
भाई की सूनी कलाई पर। कभी न खत्म होनेवाला इन्तजार था
नयी सुबह आयी तो थी
पर पुरानी श्याम के साथ।७

इसप्रकार आज की हिन्दी कविता में सांस्कृतिक सद्भाव की अभिव्यक्ति अपनी समग्रता में हो रही है।

संदर्भ:-

१. १५६ वां समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई-अगस्त २०११ई.

२. मल्लिका बेगम- वेद प्रकाश वाजपेयी हंस मार्च २००३

३. आपके शहर में आपके बीच रहते आपके लिए- निर्मला पुतुल हंस मई २००५

४. दीपशिखा से जरिए -नीलभ पृ.८४

५. एक पुराना गान- अरुण कमल हंस फ़रवरी २००५ पृ.५०

६. गजल- अजीज आजाद हंस मार्च २००६ पृ८६

७. समय बदलेगा- डा सरस्वती माथुर मधुमती जुन- जुलाई २०१० पृ. ७५

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

75. व्दिवेदी कृत उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना

डॉ. सुनीता नारायणराव कावळे
सहा.प्राध्यापीका तथा विभागाध्यक्ष
अनुसया नगर, प्लॉट नं. 7,
शासकीय आय.टी. आय के पास
चालीसगांव जि. जळगांव

आचार्य हजारी प्रसाद व्दिवेदीजी का उपन्यास साहित्य बहुत अधिक विस्तृत नहीं हैं किंतु संख्यात्मक वृध्दि पर ध्यान देने की अपेक्षा लेखक ने गुणात्मक अभिवृध्दि पर ध्यान दिया है। इसलिए तीस वर्षों के बडे अंतराल में आचार्य व्दिवेदीजी ने मात्र चार उपन्यास लिखे है, किंतु उपन्यासकार के रुप में व्दिवेदीजी की ख्याति किसी भी प्रतिष्ठित उपन्यासकार को मात देने के लिए काफी है। व्दिवेदी जी का उपन्यास साहित्य चेतना से आपूरित है। उन्होंने अपने साहित्य से भारतवर्ष में राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने हेतु संपूर्ण प्रयास किया है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रुचि और प्रवृत्ति के अनुसार देश की सेवा का पूरा अधिकार है। व्दिवेदी जी को देश के महापुरुष में प. मदनमोहन मालवीय जी ने देश में जागृति पैदा करने हेतु संस्कृति के प्रचार–प्रसार का कार्य सौंपा था। आजीवन व्दिवेदी जी ने अपनी प्रतिज्ञा को याद रखा और अपने संपूर्ण साहित्य को भारतीय संस्कृति का दर्पण बना दिया है। उनके संपूर्ण साहित्य में कोई भी व्यक्ति संस्कृति और मानवता के प्रति उनकी आस्था देखकर यदि उन्हें भारतीय संस्कृति का आख्याता कहे तो आश्चर्य क्या है। जैसा कि डॉ. राजेंद्र दीक्षित ने अपने शोधग्रंथ आचार्य हजारीप्रसाद व्दिवेदी जी और उनका साहित्य में लिखा है कि अब हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि, ''आचार्य हजारीप्रसाद व्दिवेदी भारतीय संस्कृति के महान आख्याता है।'' (स. हजारीप्रसाद व्दिवेदी जी और उनका साहित्य – डॉ. राजेंद्र दिक्षित – पृ. 220)

आचार्य व्दिवेदीजी के उपन्यास –

1. बाणभटट की आत्मकथा
2. चारु चंद्रलेख
3. पुनर्नवा
4. अनामदास का पोथा

इन चारों उपन्यासों में राष्ट्रीय चिंतन की सरिता प्रवाहमान रही है। परंतु यहा हम उनके सिर्फ एक उपन्यास की चर्चा करेगे।

अनामदास का पोथा में राष्ट्रीय चेतना :

प्रस्तुत उपन्यास में भारतीय इतिहास के उपनिषद काल का वर्णन किया है। इसका लेखनकाल 1975–76 का है। भारतवर्ष में प्राजातंत्र है। फिर भी शासनतंत्र में व्यवस्था को उचित रुप से चलाने हेतु जो व्यक्ति नियुक्त किया जाता है, वह उचित प्रकार से ध्यान न दे अथवा अपनी स्वार्थ सिध्दि को प्रमुखता दे तो सामान्य जनता को व्याकुल एवं पीडित रहना पडता है। विव्दानों को इस बात का ध्यान चाहिये वे न केवल अपने कर्तव्य का पालन करे, बल्कि राजा को उसका कर्तव्य याद दिलाये व सामान्य जनता को त्याग एवं सेवा के लिए प्रेरित करे। यही उपन्यास की मूल वस्तु है।

उपनिषद कालीन परिवेश भारतीय अतीत के गौरव को पुनजीर्वित करने में सक्षम हुआ है। भारतीय इतिहास के गौरव को याद रखना और निरंतर याद दिलाना व्दिवेदीजे को अत्यंत प्रिय था। इतिहास का रस निचोडकर पीनेवाले के लिए कुछ भी असंभव नहीं रहता। अनामदास का पोथा में उपिनषद काल का वर्णन किया गया है। उसकी झांकी हमें भारतीय अतीत के प्रति उन्मुख करती है। उपनिषदकाल का यह चित्रण न केवल भारतीय इतिहास के गौरव को स्मरण करता है बल्कि भारत में हमेशा सें विव्दत्ता को महत्व रहा है इस बात की पुष्टि भी करता है।

प्रस्तुत उपन्यास का ध्येय भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों, त्यांग, संयम, परदुःखकातरता, सेवा आदि का पुर्नस्थापन करना ही है, जिससे भारतीय राष्ट्र को विश्व में अपना स्थान ग्रहण करने का, अपनी सत्ता को प्रदर्शित करने का मौका मिल सकें। त्याग से व्यक्ति न केवल अपना लाभ करता है, अपितु उसे दूसरों से पाने का अधिकार भी मिल जाता है। रैक्व स्वयं त्याग करके लोगों की सेवा का व्रती बनकर जनसेवा का कार्य करना चाहता है। भगवती ऋतंबरा ने जाबाला को बतलाया है कि, ''अब वह गाडी पर साग–पात लादकर गांव के दीन–दुखियों की सेवा करना चाहता है। कहता है, सच्चा आत्मज्ञान यही है।'' (स. अनामदास का पोथा–पृ 390)

इसप्रकार यहॉ सेवा का महत्व बतलाया गया है। सच्चे मन से लोक सेवा करने से व्यक्ति अत्यंत उदार बनता है तथा सेवा को धर्म मान लेने पर परम अनुग्रह प्राप्त करता है। यही सेवा–भाव अत्यंत विस्तृत रुप से व्यक्ति को देवता बना देता है। रैक्व को सेवाभाव सिखाने तथा देश की हालत बताने के लिये माता ऋतंबरा ने उसे सभी ओर घूम–घूमकर समाज की सच्ची तस्वीर बताई है। लेखक ने इसका वर्णन करते हुए लिखा हैं की – ''रैक्व नें माताजी के साथ गॉव गॉव घूमकर वहॉ की दशा देखी, वे एक–एक चीज में रुचि दिखाते थे। हल क्यों चलाया जाता हैं, अन्न कैसे उत्पन्न होता है, सिंचाई कैसे की जाती है, बैल क्या खाते है, गाय कैसे पाली जाती है। सभी बातों में वे जानकारी प्राप्त करने में उत्सुकता दिखाते। बीमार बच्चे, रोगग्रस्त स्त्रियॉ, कंकाल शेष पुरुष, उनकी जिज्ञासा वृत्ति को उकसाते क्यों ऐसा होता है, दवा कहॉ मिलती है, आदि वे माताजी से पूछते। माताजी उन्हे सब समझाती।'' (सं. वही – पृ. 371)

यहाँ पर आचार्य द्विवेदी ने समाज के दुःख दर्द की तस्वीर खींचते हुए बतलाया है कि व्यक्ति के मन की संवेदना दूसरों को अत्यंत शांति प्रदान करती है। समाज में व्यक्ति यदि ज्यादा कुछ न दे सके तो केवल सहानुभूती भी लोगों में आशा का संचार करती है, जिससे व्यक्ति और समाज में जीवनशक्ति बढ जाती है। यही मानवीय संवेदनाएॅ किसी भी राष्ट्र के लिए अमृत का कार्य करती है, जिनसे व्यक्ति के मन में समाज के प्रति अपनत्व का भाव पैदा होता है और समाज तथा राष्ट्र के लिए व्यक्ति आत्म बलिदान के लिए तैयार होता हैं।

जिस देश की परंपरा ही ऐसी हो कि व्यक्ति किसी भी कार्य के आरंभ और अंत में ऐसी प्रार्थना करे जो प्रजा के कल्याण की शुभकामनाएँ मन में जगाती हो उस देश में राष्ट्रीय भावना की कमी नहीं हो सकती। यही भावनाएँ व्यक्ति को अपने धर्म पर बलिदान होने की उर्जा प्रदान करती हैं। स्वंयं द्विवेदी जी ने माना है कि भारतवर्ष का आधारभूत ढॉचा ही खिसक पडेगा। भारत में व्यक्ति को सामाजिक चेतना से आप्लावित कर राष्ट्रीयता का पाठ सिखाया जा सकता है। धर्म की रुढियों को समाप्त करके व्यक्ति को सच्चे धर्म से परिचित कराया जा सकता है। दरअसल यह कहना हि कि भारतवर्ष में धर्म और कर्तव्य एक ही है अथवा धर्म ही कर्तव्य की प्रेरणा देता है अनुचित नहीं होगा। धर्म द्वारा शिक्षा देने और कर्तव्य की पथ का उदाहरण माता माता ऋतंभरा रैक्व को बतलाते हूए कहती है कि– ''बेटा तुम निश्चित रुप से बुदिमान हो, तपस्या और ब्रम्हचर्य का पालन कर चुके

हो, स्वयं परीक्षित सत्य पर आस्था रखते हो और सबसे बढकर तुम मेरे पुत्र हों। तुम्हे पूर्ण रुप से शास्त्रज्ञ बनना है, उसके बाद सभी बातों की शात्रीय विधि से परीक्षा करने के बाद तुम्हारे अंतर्यामी वैश्वानर जैसा कहे वैसा ही करो। यह कभी मत भूलना कि ऐसा तप वास्तविक तप नहीं है जिसमें समस्त प्राणियों के सुख दुख से अलग रहकर केवल अपने आप की मुक्ति का सपना देखा जाता हैं। (सं. – वही –पृ. 421)

यहाँ मानवीय संवेदनाओं को जागृत कर निखिल विश्व के प्रति भाव जगाना ही मूल भावना है जिससे व्यक्ति सेवा धर्म को जानकर स्वयं को अपने कर्तव्य से जोडता है और स्वयं का कर्तव्य निर्धारित करता हैं। अतः वह सामान्य जनता के प्रति आकर्षित होता है एंव राष्ट्रसेवा की और प्रवृत्त होता है।

अंततः यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि, आचार्य द्विवेदी के उपन्यास साहित्य में राष्ट्रीय चेतना अत्यंत गहनतम रुप में अभिव्यक्त हुई है, जिसके द्वारा आचार्य द्विवेदी जी ने राष्ट्र निर्माण के कार्य में अथवा राष्ट्र के निर्माण यज्ञ में अपनी समिधा अर्पण कर, अपना योगदान दिया है। यह आचार्य की राष्ट्रीय चेतना का ही प्रमाण है, कि वे विभिन्न भावनाओं के उत्कर्ष द्वारा समाज में एकता और अखंडता की भावना निर्माण कर एक राष्ट्र निर्माण करने और उसे सुरक्षित बनाये रखने की ओर अग्रेसर है तथा दूसरों को इस कार्य के प्रति प्रेरित भी करते है।

संदर्भ –

1. अनामदास का पोथा – आचार्य हजारीप्रसाद व्दिवेदी
2. आचार्य हजारीप्रसाद व्दिवेदी के साहित्य में सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना – डॉ. श्यामप्रकाश पांडे
3. राष्ट्रीय एकता – रामस्वरुप कौशल
4. राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता – रामधारी सिंह दिनकर
5. हजारीप्रसाद के उपन्यास – डॉ. के. मोहनन पिल्ले

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

76. अमृता प्रीतम तथा भीष्म साहनी के उपन्यासों में साम्प्रदायिक सद्भाव

अमृता सिंह
शोध छात्रा
हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय, (श्रीनगर कश्मीर)

स्वातंत्र्य आंदोलन की शक्ति को बढ़ते देखकर अंग्रेज़ों ने भारतीयों के मध्य 'धर्म संकट' खड़ा कर दिया। हिन्दू-मुसलमानों के बीच धर्म के आधार पर भेद करके उन्होंने अपनी कूट-नीति का परिचय दिया और दो जातियों को आपस में लड़ाकर उनकी एकता तथा शक्ति को पथ-भ्रष्ट तथा क्षीण कर दिया। स्वाधीनता के साथ देश-विभाजन का संकट खड़ा हुआ और इससे जो आग भड़क उठी उसमें मानवता झुलस कर रह गई। देश-विभाजन के साथ हिन्दू-मुसलमानों के बीच घृणा, पशुता एवं अमानवीयता का आदान- प्रदान तथा प्रदर्शन हुआ, वो हमारे राष्ट्र के इतिहास पर बहुत बड़ा कलंक है। अंग्रेज़ों की भेद नीति का परिणाम यह हुआ कि बढ़ते धार्मिक भेद एवं झगड़ों ने साम्प्रदायिकता का रुप ले लिया।

विभाजन की इस त्रासदी को स्वतः भोगने वाले अमृता प्रीतम तथा भीष्म साहनी अपने उपन्यासों में इस त्रासद सत्य का वर्णन करने से अछूते नहीं रहे। 'पिंजर' उपन्यास द्वारा अमृता ने इस त्रासद सत्य को वाणी देने का सफल प्रयास किया है कि 1947 के उपद्रव में साम्प्रदायिक वैमनस्य के समक्ष साम्प्रदायिक सद्भाव और राष्टीय एकता बहुत पीछे छूट चुके थे। यह साम्प्रादयिक भेद-भाव इस हद तक लोगों के मन में घर कर गया, मानव के भीतर मानवता के स्थान पर केवल पशुता और बर्बता ही शेष रह गई। इसी अमानवीयता का प्रदर्शन 'पूरो' के गांव में रहने वाले मुसलमानों ने किया, जब उन्होंने गांव में ही रहने वाले हिन्दुओं के घरों पर ज़बरदस्ती कब्ज़ा कर लिया और गांव में बनी एक हवेली के भीतर शरणागत हिन्दुओं को ज़िन्दा जला डालने का प्रयास किया था। 'एक दिन उन्होंने न जाने किस तरह हवेली के दरवाज़ों और खिड़कियों पर तेल डाला और तेल से भीगे हुए दरवाज़ों और खिड़कियों में आग भी लगा दी।'[1] इस वातावरण के कारण न केवल 'पूरो' के गांव बल्कि आस-पास के गांव के लोग भी धीरे-धीरे अपने गांवों से पलायन करने लगते हैं।

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में ऐसी घटनाओं का हृदयविदारक चित्रण किया है। विभाजन के समय हो रही मार-काट तथा दंगे-फसाद का ही परिणाम था कि लोगों का विश्वास चुकने लगा था और वह अपना घर-बार ही नहीं अपितु देश से भी पलायन कर रहे थे। 'कुंतो' उपन्यास के बेअंतसिंह का लालाजी से यह कहना –'आप सोलहों आने सही कहते हो लालसजी, पर अब मन नहीं मानता। अब दंगे थम गए हैं कुछ चैन है पर दंगे फिर भी भड़क सकते हैं ? अगर फिर भड़के तो ? यही सोच-सोचकर गृहस्थियों का मन डोल-डोल जाता है।'[2] इस कथन से उनके मन में बसे भय का परिचय मिलता है। 'तमस' उपन्यास साम्प्रदायिक समस्या तथा साम्प्रदायिकता की नारकीय अग्नि में लोग किस प्रकार झुलस रहे हैं इसका यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। उपन्यास के अधिकांश पात्र साम्प्रदायिक विद्वेष के चलते साम्प्रदायवाद को बढ़ावा देते हैं। लोगों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुंचाते हुए कुछ सामाजिक व राजनैतिक तत्व अत्यधिक कट्टरता तथा परस्पर सन्देह की भावना के कारण निर्दोष जनता को एक-दूसरे के खून का प्यासा बना देते हैं। बालक रणवीर, वानप्रस्थी जी जो कि धर्म रक्षक कहलाते हैं के भड़काउ भाषण तथा अपने गुरु देवव्रत द्वारा

पढ़ाए गए घृणा के पाठ के कारण एक निर्दोष, निर्बल मुस्लिम इत्रफरोश की हत्या कर देता है। इसी प्रकार मुस्लिम लीग के एक कार्यकर्ता का अलगाव भरी भाषा में कहना – 'आप चाहें जो कहें, कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है और मुस्लिम लीग मुसलमानों की। कांग्रेस मूसलमानों की रहनुमाई नहीं कर सकती।'[3] परम्परागत अधिकारों के आधार पर आम मुस्लिम जनता को भड़काता है।

यद्यपि विभाजन तथा साम्प्रदायिकता के दिनों में जब हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे के खून के प्यासे बने हुए थे; मैत्री, प्रेम जैसे मूल्यों का ह्रास हो रहा था वहीं अंतः स्रोत नदी की भांति बहनेवाली एक करुण धारा के भी दर्शन होते रहे अथार्त् उस त्रासद और भीषण वातावरण में भी कुछ ऐसे लोग थे जिनमें सद्‌भावना के भाव विद्यमान थे। अमृता प्रीतम तथा भीष्म साहनी के उपन्यासों में कुछ ऐसे चरित्रों का भी चित्रण है, जिन्हें देखकर यह विश्वास हो जाता है कि मानवता पूर्ण रुप से विलुप्त नहीं हुई है। अमृता के 'पिंजर' उपन्यास का 'रशीद', 'कैली' उपन्यास का 'बख्शा', 'डॉक्टर देव' उपन्यास के डॉक्टर देव तथा भीष्म के 'तमस' उपन्यास की 'राजो' तथा 'करीमखान' इसका जीवंत उदाहरण हैं। देश-विभाजन के समय 'रशीद' के गांव के लोग उसके सगे-सम्बन्धी तक जब उपद्रव करने वालों का हिस्सा बने हुए थे, तो केवल वह ही एक-मात्र ऐसा व्यक्ति था जो इन सब से दुःखी था और अवसर मिलने पर ओरों की सहायता करता है। डॉक्टर देव एक ऐसे व्यक्ति हैं जो साम्प्रदायिक वातावरण में स्वयं की चिंता न करते हुए उस मुहल्ले में रहने वालों की रक्षा करने पहुंच जाते हैं जहां उनका बेटा 'मनु' कुछ कट्टरपंथियों के भुलावे में आकर आक्रमण करने गया था। 'बख्शा' एक ऐसे पुरुष का नेतृत्व करता है जो धर्म-निरपेक्ष रह कर मान-मर्यादा की रक्षा हेतु अपने प्राणों की चिंता तक नहीं करता और कैम्पों तथा काफिलों से जबरन उठाकर लाई गई हिन्दू तथा मुस्लिम स्त्रियों को सुरक्षित अपने-अपने स्थान तक पहुंचाता है।

साम्प्रदायिक वातावरण में जहां बरसों पुराने सम्बन्धों की उष्मा समाप्त हो चुकी थी। घृणा और नफरत के कारण अपने देश में अपने ही लोगों के बीच व्यक्ति निरीह और बेगाना बनकर रह गया था, वहीं 'करीमखान' अपनी मित्रता का फर्ज़ निभाते हुए 'हरनाम सिंह' और 'बन्तो' को बलवाइयों द्वारा आक्रमण की सूचना देते हुए – 'देर नहीं कर हरनाम सिंह, हालत चंगी नहीं, बाहरों बलवाइयां दे आण दा डर है।'[4] उनके प्राणों की रक्षा करने का प्रयास करता है। वहीं 'राजो' मुसलमान होते हुए भी उस साम्प्रदायिक वातावरण में बेघर हुए इस वृद्ध सिक्ख दम्पति को अपरे घर में शरण दे, मानवता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है।

भीष्म साहनी ने 'तमस' उपन्यास में जहां एक ओर कट्टरपंथियों, रूढ़िवादियों की विचारधारा के माध्यम से साम्प्रदायिक भेद-भाव व वैमनस्य को बढ़ते दिखाया है, वहीं कम्युनिस्ट विचारधारा वाले पात्रों का भी उल्लेख किया है जो अपने ढंग से शान्ति और एकता बनाए रखने के लिए प्रयत्नशील हैं। अतः कहा जा सकता है कि अमृता प्रीतम और भीष्म साहनी ने दोनों पक्षों वरन् साम्प्रदायिक भेद-भाव तथा साम्प्रदायिक सद्‌भाव को बड़े ही सशक्त ढंग से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अमृता प्रीतम, पिंजर, पृ.88
2. भीष्म साहनी, कुंतो, पृ.329
3. भीष्म साहनी, तमस, पृ.36
4. वही, पृ.19

77. हिंदी कहानी एवं उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भाव

प्रा. महेश रामचंद्र बनकर

साहित्य जगत में अनेक प्रकार है। उसमें लेखक विषयानुरूप उसी विधा में रखता है। कहानी उपन्यास का छोटा रूप, एक अंग होता है बल्कि उपन्यास कहानी का विस्तृत बड़ा रूप होता है।

देश के बड़प्पन के लिए न एक व्यक्ति, संगठन, दल काम करता बल्कि सभी जाति, धर्म, संप्रदाय के अच्छे काम से होता है। इसलिए हमें हिंदी साहित्य के आदिकाल से आज तक के साहित्य में राष्ट्रीयता के मूल्य तथा सांप्रदायिक सद्भाव दिखाई देता है।

डॉ. दामोदर खड़से की 'भूमिगत' कहानी में पारिवारिक मतभेद एवं उस पिताजी ने देश के लिए किया हुआ काम इसका प्रखर रूप दिखाई देता है। ... ''कभी–कभी तो उसकी इस चतुराई पर स्वयं आंदोलन कारी विस्मय करते, पर वह कभी खुद के लिए भूमिगत नहीं हुआ, देश के लिए हुआ। नयी योजना लागू करता और भूमिगत हो जाता, दूसरी योजना के लिए...।''[1]

इस प्रकार समाज के सभी लोगों का कई न कई उपयोग होता ही है। देश में आदिवासी लोगों का राष्ट्रीय एकता एव सांप्रदायिक सद्भाव को दृढमूल करने में सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। इसलिए वनवासी आदिवासी जन–जीवन सुंदर व्यक्तित्व को खंडित और शक्तिहीन बनाना। वनवासी लोगों से इसप्रकार से दूर रहना सबसे बड़ा पाप/पातक होगा, इसलिए उनका उल्लेख आवश्यक है। आदिवासियों में उनका एक दल भी होता है। वह हमेशा उन्हीं दलों में रहकर अपना जीवनयापन एवं सभी घटनाएँ करता है।

साम्प्रदायिकता का उद्देश्य अपना धर्म, जात, भाशा दल को विकसित करना होता है। और कोई धर्म दूसरे धर्म का द्वेश, तिरस्कार नहीं करता। सभी धर्मो का मूलतत्व मानवता रहा है। इसलिए कितने पाकिस्तान उपन्यास में सलमा' कहती है' इस्लाम की नजर से पाकिस्तान का बनना ही गुनाह है... क्योंकि इस्लाम नफरत नहीं सिखाता, पर पाकिस्तान की बुनियाद नफरत पर रखी गई है... इस्लाम जैसा मजहब किसी मुल्क की सरहदों में कैसे कैद किया जा सकता है। कोई मजहब कैद नहीं किया जा सकता।''[2]

इसलिए साम्प्रदायिक विद्वेश का कारण किसी धर्म, जात, संगठन न होकर नफरत होती है। और इसी नफरत को दूर करना ही महत्वपूर्ण काम होगा। देश में समाज सुधारक एवं राजनीतिक लोग थे। इन लोगों का इस अनपढ़ लोगों को सुधारने के लिए बहुत समय गुजरता था क्योंकि अनपढ़, अशिक्षित लोग बहुत थे।

रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानंद ने 'रामकृष्ण मिशन के द्वारा जाति, संप्रदाय, छुआछुत का विरोध किया। ''विवेकानंद ने हीनता की भावना से ग्रस्त देश को यह अनुभव कराया कि इस देश की संस्कृति अब भी अपनी श्रेष्ठता में अद्वितीय है। अध्यात्मिक स्तर पर मनुष्य की क्षमता, एकता बंधुत्व और स्वतंत्रता की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट कराया।[3]

इस प्रकार आर्यसमाज, थियोसॉफिकल सोसायटी, प्रार्थना समाज आदि, कई संगठनों का देश की एकता एवं समन्वय रखने के लिए बहुत उपयोग हुआ।

हिंदी लेखको में सभी लेखक एवं कवि के साहित्य में राष्ट्रीय एकता एंव सांप्रदायिक सद्भाव दिखाई देता है। प्रेमचंद के 'गोदान' उपन्यास कृषक होरी को केंद्र में रखकर पूरे भारतीय किसान लोगों के जीवन के बारे में यथार्थ चित्रण करता है। उसका उद्देश केवल उन लोगों का अच्छा संगठण बनें, क्योंकि किसान लोग दिनरात मेहनत करते है तो उनका फल उन्हें मिलना ही चाहिए।

आंचलिक कहानी एवं उपन्यासों में किसी विशिष्ट अंचल को लेकर पर्व, उत्सव, परंपरा, गीत, संघर्श, जीवनमूल्य प्रकृति का रंग आदि का वर्णन किया जाता है। जो देश में ऐसे अनेक भाग/प्रदेश होते है। लेकिन उसमें सांमजस्य नहीं होता, उसमें सांमजस्य प्रस्थापित करना। हिंदी की कितनी कहानी एवं उपन्यास की संख्या है, जो इस कोटी में फिट बैठती है।

डॉ. दामोदर खड़से की चुभता हुआ घोसंला, लहरों के बीच, मुहानेपर, आखिर वह एक नदी थी, भूमिगत आदि कहानियों में सभी तत्व विदयमान है।

प्रभाकर द्विवेदी, गोविंद मिश्र, शांतिनाथ देसाई, प्रियवंद, राजेंद्र अवस्थी, कमलेश्वर, हिमांशु जोशी, मोहन राकेश भगवतीचरण वर्मा, अमरकांत, मार्कण्डेय, दूधनाथ सिंह, गिरिराज किशोर, विष्णु प्रभाकर, महीप सिंह, मृदुला गर्ग, सुषम बेदी, रजनी पाथरे, 'राजदान', वंदना सक्सेना, इंदिरा शबनम, सूर्यबाला, चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, दीप्ति खंडेलवाल, मृणाल पांडे, शशिप्रभा शास्त्री, उषा यादव, क्षमा गोस्वामी, अर्चना वर्मा, नासिरा शर्मा आदि नए लेखक, कवि है जिसने ऐक्य एवं संप्रदाय के बारे में बहुर कुछ मद्द की है। ये बात नए लेखक, कवियों की है। लेकिन पुराने जमाने से हिंदी साहित्य संसार में काम करनेवाले लोगों की यह चाहत होती है और उसी के मुताबिक यहीं लोग इस प्रकार का कार्य करते है।

इस तरह से देखा जाए तो हिंदी साहित्य में कई कहानी एवं उपन्यास है कि जिनके माध्यम से देश की संस्कृति अखंडता, एकता लाने के लिए बहुत उपन्यास एवं कहानी का मार्ग, लेखनी का मार्ग अपनाया हुआ है।

मैत्रेयी पुष्पा कृत 'अल्मा कबूतरी' आदिवासी कबूतरा समाज की हालत को व्यक्त करनेवाला उपन्यास है। कबूतरा समाज के पुरुष चोरी, डकैत के कारण जेल में रहते है तो नारियाँ शराब की भट्टीयों या हमारे बिस्तरों पर ... इसी अपरिचित जनजाति को लेकर मैत्रेयी जी हमें यह बताना चाहती है कि ऐसे पहाड़ी, जंगली, नदी के तर पर रहनेवाले वनवासी लोगों के प्रति हमारी दृष्टि साफ सुथरी एवं उसे मद्द ही करना चाहिए। इन लोगों के दुःख को सामने रखकर उन लोगों को हमारे सामने लाना तथा उसे अनेक प्रकार की मद्द करना ही आवश्यक समझते है।

सारांशतः हिंदी साहित्य संसार में अनेक कवियो लेखकों के कहानी, उपन्यास में राष्ट्रीय एकता एवं संप्रदाय के मूल्य देखने मिलते है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. दामोदर खड़से पृ.26.
2. कमलेश्वर—कितने पाकिस्तान
3. पट्टाभि सीतारमैया—गांधी और गांधीवाद, पृ. 26.

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

78. राष्ट्रीय एकता के संबंध में गुलाब राय के विचार

डॉ के पद्मा रानी.
सहायक आचार्य -, हिंदी विभाग
शासकीय महाविद्यालय, गार्ला
जिला मेहबूबाबाद-, तेलंगाना 507210

किसी भी देश का सर्वांगीण विकास उस देश के नागरिकों की संगठित शक्ति पर निर्भर होता है। विश्व का इतिहास इसका साक्षी है। जब कभी किसी भी देश में राष्ट्रीय एकता की कमी रही , उस देश में विदेशी आक्रमण हुए और समुन्नत विकास में अनेक बाधाएँ आती रहीं। इस कारण राष्ट्रीयता की भावना को अक्षुण्ण रखना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होता है। समाज की भिन्न मानसिकता वाले परिवेश में जब ऐक्य भाव नहीं पनपता , समाज की नींव सुदृढ़ नहीं होती । फिर भारत जैसे सामाजिक सांस्कृतिक - भिन्नता वाले देश में भी ऐक्य भाव से ही उन्नति एवं समृद्धि संपन्न होती है। भारत अपने स्वभाव से ही 'अनेकता में एकता ' वाला देश है। जो कि विश्व के लिए सदा आदर्शमय रहा है। इसका वर्णन करना सदा से ही साहित्यकारों का प्रिय विषय रहा है।

साहित्य अपने समाज की ऐसी ही विशेषताओं से पनपता है।साहित्यकार की संचेतना तभी सार्थक होती है जब समाज की अपेक्षाएँ और सम्यक व्यवस्था साहित्य में प्रत्यक्ष होती हैं। इस कारण भारत साहित्य में राष्ट्रीय भावना को जागृत करने की चाहत सदा से रही है।डॉ नगेंद्र के अनुसार ." भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए सांस्कृतिक एकता का आधार अनिवार्य है और सांस्कृतिक एकता का सबसे दृढ़ एवं स्थायी आधार है ।साहित्य-"(1) गुलाब राय इसी अधार को और अधिक बल देने के लिए सृजनरत रहे ।

निबंधकार गुलाब राय के विचार राष्ट्रीय एकता के भाव को परिपुष्ट करते हैं। ये उदार एवं समन्वयात्मक दृष्टिकोण के निबंधकार माने जाते हैं ।विषय की गंभीरता एवं हास्य - व्यंग्य का सुंदर समन्वय गुलाब राय के निबंधों की विशेषता है। गुलाब राय ने काव्यशास्त्र ,कला ,विज्ञान , मनोविज्ञान , संस्कृति , संस्कार, हास्य - व्यंग्य आदि अनेक विषयों पर निबंध लिखे हैं। इनमें से राष्ट्रीय भावना को उजागर करने वाले निबंध अत्यंत प्रासंगिक एवं विचारोत्तेजक हैं।इन निबंधों में गुलाब राय सच्चे देश भक्त एवं सजग साहित्यकार के रूप में प्रस्तुत होते हैं ।ऐसा इस कारण कहा जा सकता है क्योंकि भारत जैसे वैविध्यमय संस्कृति वाले देशमें राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता निरंतर रही है।जिसे ऊर्वरित करने का काम भारतेंदु युग से सक्रिय है । जिसकी विशेषता यह है कि वह राष्ट्रीयता को व्यापक फ़लक देती है। " हिंदी की राष्ट्रीयसांस्कृतिक कविता की प्रमुख विशेषता यह है कि उसका स्वर - । निरंतर भारतीय रहा है।उसमें प्रादेशिक अथवा सांप्रदायिकता भावना को प्रोत्साहन कभी नहीं मिला"(2) इस एकता की आवश्यकता स्वतंत्र भारत के लिए भी अनिवार्य रूप से रही । जिसकी आपूर्ति साहित्यकारों ने अपनी - अपनी शैली में की । गुलाब राय के निबंधों में व्यक्त इस भावना का उल्लेख प्रस्तुत है।

गुलाब राय के अनुसार राष्ट्रीयता का अर्थ इस प्रकार है पूर्ण और :अपने राज्य को स्वत " अविभाज्य इकाई मानकर उसके हिताहित से तादात्म्य करने तथा उसके प्रति गर्व की भावना रखने को राष्ट्रीयता कहते हैं।इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि राष्ट्रीय एकता में वैयक्तिक स्वातंत्र ,परिवार ,जाति ,बिरादरि, प्रांत,भाषा,राजनीतिक विचार , धर्म या संप्रदाय को तिलांजलि दे दी जाय । "(3) जब राष्ट्रीयता जागृत होती है तो सारा देश अपना लगता है।इसमें स्वयं की कोई हानि नहीं होती। इस स्थिति में राष्ट्रीय एकता की भावना की श्रीवृद्धि होती है। गुलाब राय मानते हैं कि राष्ट्र व्यक्ति, दल और संप्रदाय से भी बड़ा है।व्यक्ति यदि राष्ट्र से अपने हित एवं सुरक्षा की अपेक्षा करता है तो राष्ट्र की सुख शांति एवं - समृद्धि की वृद्धि में व्यक्ति को भी अपना योगदान अनिवार्य रूप से देना होगा।शिक्षा के माध्यम से ।भारत जैसे विभिन्न जाति एवं धर्म के इतने बड़े व्यक्ति में राष्ट्र के प्रति प्रेम जगाना अत्यंत आवश्यक है राष्ट्रीय भावना को पुष " समूह में्ट बनाए रखने के लिए राष्ट्र का भी यह कर्तव्य हो जाता है कि बिना किसी संप्रदाय या दल के भेदभाव के सबको यह अनुभव करने का अवसर दिया जाए कि राष्ट्र - उनका है ।" भी नागरिकइस स्थिति में स (4) 'अवरोधक मनोवृत्ति को छोड़कर विचारों के आदान प्रदान में उदारता से काम 'लेने की इच्छा रखेंगे ।

गुलाबराय ने राष्ट्रीय एकता में जातिवाद को बाधक माना है। भारत में वर्ण व्यवस्था सामाजिक कार्यों में निपुणता एवं पारस्परिक सहयोग के लिए बनाई गई थी ।परंतु जब वह ऊँच नीच के - आधार पर लोगों के मध्य घृणा और बैर बढ़ाने लग गई तो वह घातक सिद्ध हुई ।जिसके कारण समस्त राष्ट्र को अपना मानने वाली राष्ट्रीयता की भावना संकुचित हो गई। स्वतराष्ट्रीय एकता खतरे में पड़ : या जा सकता ।परंतु इसमें सुधार करते हुएगई। भारत में जाति व्यवथा को निर्मूल नहीं कि,हीनता एवं अपमान जनक अंश निकाले जा सकते हैं। जाति व्यवस्था के आधार पर होने वाले अन्याय एवं अत्याचार को समाप्त किया जा सकता है।एक दूसरे के प्रति न्याय एवं समन्वय की भावना को जगाने का प्रयत्न किया जा सकता है। क दृष्टि से भी सहयोग और सहाकारिताव्यावहारि ", सामाजिक समानता के बिना नहीं हो सकती है।(5)" सामाजिक समानता राष्ट्रीय एकता को पुष्ट करने का सशक्त साधन है।

गुलाब राय के अनुसार राष्ट्रीयता की भावना होगी तो देश के नागरिक आपसी भेद को अनदेखा कर सकते हैं । भारत देश में भेदों की कमी नहीं है । अनेक प्राकृतिक भेद ,धर्म,परंपरा,जाति आदि कई भेद पाए जाते हैं।बिना भेद के जन समूह का मिलकर जीवनयापन करना दुष्कर है ।नदियों के प्रवाह से बनीं विभाजन रेखाएँ ,उत्तर - द्क्षिण प्रांत,हिंदु - मुसलमान धर्म आदि भेद संगठित इकाई को क्षति पहुँचाते हैं । देश को इकाई में बाँटकर राज्य करने की राजनीतिक भावना ने देश की संगठन शक्ति को शिथिल कर दिया है। पहले कभी सार्वभौम राज्य की स्थापना करने की इच्छा से अश्वमेघवाजपेय - । यज्ञ किए जाते रहे हैं।जो कि राष्ट्रीय एकता की स्थापना के लिए सहायक होती थीं

यह तो राजनीति की बात हुई । मनुष्य इससे भी ज्यादा अपनी संस्कृति - धर्म से जुड़ा हुआ और प्रभावित भी है।जो कि कभी बैर एवं द्वेष नहीं सिखाता । फिर भारतीय इसे क्यों नहीं देख पाते ।है जो उनके अविरोध का हमारे भारतीय धर्मों में भेद होते हुए भी उनमें सांस्कृतिक एकता"

परिचायक है।वही त्याग और तप एवं मध्यम मार्ग संयममयी भावना हिंदू ,बौद्ध , जैन, सिक्ख संप्रदायों में समान रूप से वर्तमान है ।"भारतीय एकता के कई उदाहरण हैं । ईसाइयों की क्षमा और (6) -गाथा गाते हैं ।सूफी कवियों ने हिंदु देवी दया की भावना बौद्ध धर्म में भी है। मुसलमान गायक कृष्ण की देवताओं को अपने प्रेम का आधारबनाया।बहुत सारी एकताएँ मिलती हैं ।परंतु उसे अनदेखा कर दिया जाता है।

भारत देश में धर्म का पालन करने पर विशेष बल दिया जाता है। हिंदुओं के लिए हिंदु, मुसलमानों के लिए इस्लाम ,ईसाई के लिए ईसाई धर्म का पालन, अन्य कर्तव्यों से भी श्रेष्ठ माना जाता है।इसके सामने मैत्री ,का भाव अन्य धर्मों का आदर ,संयम,उदार भाव आदि के कोई मायने नहीं रह जाते।तभी सांप्रदायिकता का दंश आरंभ होता है। जो भारत जैसे विभिन्न धर्मों वाले देश के लिए अत्यंत हानिकारक सिद्ध होता है। संकुचित मन वाले इस भेद को ज्यादा मान्यता देते हैं। इस स्थिति में गुलाबराय का मानना है कि धर्मों का आपसी समन्वय और लेन - देन से ही धर्म एवं जीवन में विकास की संभावना रहती है।प्राचीन काल से ही भारतीय धर्म एवं साहित्य ने राष्ट्रीय एकता को फलने - फूलने का अवसर दिया है।गुलाबराय के अनुसार जो धर्म ईश्वर की संतान स "े मेल नहीं सिखाता , वह ईश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकता ।इन धर्मों में वैविध्य होने के कारण भारतवासियों के जीवन और विचारधारा में संपन्न्ता आई है और उनकी कला समृद्ध हुई है। उस समृद्धि का श्रेय हिंदु मुसलमान दोनों को है - ।"(7) हिंदु मुसलमान की एकता की शक्ति- के बारे में साहित्यकारों की यही आस्था साहित्य में राष्ट्रीय एकता को दर्शाने में काम आती है।

धार्मिक भाव की वास्तविकता बताते हुए गुलाब राय कहते हैं कि हम आदर का " र चाहते हैंव्यवहा, हम उदारता चहते हैं ,हम अपने जीवन में सरसता चाहते हैं , हम अपने में प्रेम और दया की स्निग्धता और आर्द्रता देखने के उत्सुक हैं यही धार्मिक भाव है । (8)"उत्तर दक्षिण -, पूर्व - पश्चिम आपस में अपनी -अपनी मान्यताओं का आदान -प्रदान करते आए हैं ।प्राचीन काल से यह प्रथा रही है। धर्म क्षेत्र में मान्यताएँ अलग हों सकती हैं। लेकिन परस्पर आदान - प्रदान से समस्याएँ उठने की संभावना कम रहती है।

गुलाबराय ने राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्रीयता के विकास में आने वाले बाधक तत्वों का भी उल्लेख किया है ।पहले तो यही कि नागरिक स्वयं को एक ही इकाई मान लेता है।वे भूल जाते हैं कि वे राष्ट्र नामक इकाई के एक अंग है ।राष्ट्र हित में ही उसका हित है।उसे राष्ट्र की उत्पादन क्षमता घटाने वाला कोई कार्य नहीं करना चाहिए ।जैसे भ्रष्टाचार , आलस्य ,बेईमानी ,चोर बाज़ारी, किसी को उसके अधिकरों से वंचित रखना आदि।व्यक्ति स्वयं को किसी एक ही धर्म ,संप्रदाय,प्रांत भाषा आदि से जुड़ा हुआ ना माने। धर्म की संकुचित भावना ने ही भारत विभाजन कर दिया था ।अपनी भाषा,धर्म,संप्रदाय से स्वाभाविक रूप से प्रेम होता है। परंतु जब राष्ट्र रहेगा तभी धर्म - संप्रदाय आदि का अस्तित्व है। " संप्रदाय, प्रांत, भाषा , बिरादरी आदि के बंधन दृढ़ अवश्य हैं किंतु इतने नहीं कि उनके पीछे राष्ट्र का

हित बलिदान करना पड़े ।''- इन सबका कार्य व्यक्ति (9) व्यक्ति में साम्य तथा सद्भावना स्थापित करना है। इन बाधक तत्वों को दूर करते हुए राष्ट्र की एकता में वृद्धि करना अनिवार्य है।

इस प्रकार राष्ट्रीय एकता भारतीय जनमानस का सहज गुण है । जो ना तो विदेश से उधृत है ना ही जबरन थोपी गई है। बस भारतीयों में इसे किसी धुंधले से परदे के पीछे से देख न सकने की विवशता में हैं। परंतु भारतीयों को अपने साथी देश वासियों को अपना मानना ही भारतीयता है।तभी भारतीय'वसुधैव कुटुंबकम'की भावना सार्थक होगी ।वैज्ञानिक - तकनीकी विकास चरम कोटि का होने पर भी नागरिकों के मिल जुल कर रहने पर ही देश की सुख समृद्धि बनी रहेगी।नागरिकों का परस्पर द्वेष पालना देश के लिए किसी रोग से कम नहीं है।गुलाबराय इसके लिए प्रार्थना करते हैं कि ' ईश्वर हमको सन्मति दे कि हम इन राष्ट्र रोगों से अपने आपको बचाए रखें और पारस्परिक सद्भावना सहयोग से राष्ट्र को उन्नत करें । '

संदर्भ- ग्रंथ सूची

.1गद्य रत्नावली - सं- .सभा.प्र .भा .द - पृ14 सं.
.2हिंदी साहित्य का इतिहास - संन.डॉ.गेंद्र पृ789 सं.
.3गुलाब वल्लरी - सं- बालकृष्णा राव . पृ 73 सं.
.4गुलाब वल्लरी - सं- बालकृष्णा राव . पृ77सं.
.5वही
.6गुलाब वल्लरी - सं- बालकृष्णा राव . पृ85.सं.
.7गुलाब वल्लरी - सं- राव बालकृष्णा . पृ87 सं.
.8गुलाब वल्लरी - सं- बालकृष्णा राव . पृ95 सं.
.9गुलाब वल्लरी - सं- बालकृष्णा राव . पृ 80 सं.

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

79. समकालीन कहानी में राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना

पाटील भाईदास रघुनाथ
फ्लॅट नं. 301, मधुबन अपार्टमेंट,
श्रीराम नगर, लौजी, खोपोली,
ता. खालापूर ,जि. रायगड.

विश्व में भारत ने विविधता में एकता के कारण अपनी विशेष एक पहचान बनाई है। भिन्नता या विविधता अखंडता में बाधा होती है । किंतु भारत इस राष्ट्रने संसार के समक्ष एक आदर्श रखा है जो विविधता होने के बावजूद भी अखंड संघ राज्य भारत हजारों वर्षो से राष्ट्रीय एकात्मता और सांप्रदायिक सद्भावना के कारण एकात्म राष्ट्र है। यहाँ जो विविधता है वह केवल जाति–धर्म की ही नही अपितु जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा, प्रांत, वेशभूषा, आहार, उत्सव, रहन–सहन, त्योहार, आदि इतनी सारी विशेषता होने पर भी संपूर्ण भारत एक है यह हमने दुनिया को दिखाया है । भारत की यह जो राष्ट्रीय एकता है और सांप्रदायिक सद्भावना है इसका संरक्षण संवर्धन करने का काम या लोगों की इस भावना को जोडने का काम भारतीय सांस्कृतिने ही किया है ।

इससे पहले हमे राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना शब्दों के अर्थ को समझना जरूरी है । 'संप्रदाय' शब्द की और ध्यान दे तो इस की आम साधारण प्रचलित व्याख्या 'विशेष धार्मिक मत' के रूप में की जाती है । लेकिन बृहत हिंदी कोश से हमे संप्रदाय शब्द के अन्य अर्थ भी मिलते है यानी गुरू परंपरा से प्राप्त मंत्र, सिध्दांत आदि तथा 'परंपरागत विश्वास या प्रथा, इसी प्रकार 'मत' को परिभाषित किया जाता है. विचार, सिध्दांत के रूम मे 'धर्म मत' और पंथ के रूप में। सद्भाव को हम परिभाषित करेंगे 'नेकमिजकाजी' 'सज्जनता', 'दयालुता', के अर्थ में यानी किसी दूसरे व्यक्ति या समुदाय के प्रति अच्छी भावना रखना सिमीत अर्थ में हम 'संप्रदाय शब्द को हम किसी विचार, सिध्दांत परंपरागत विश्वास या प्रथा पर आधारित विशेष धार्मिक मत के रूप में परिभाषित कर लेते है। और हम सद्भाव की बात करते है तो विभिन्न संप्रदायों के आपस में संपर्क की बात उसमें निहित है ।

भारत में भारत की विविध कलाएँ तथा भारतीय संस्कृति निर्माण में लोगों द्वारा दिया गया मानवतावादी दृष्टिकोन और योगदान । वैसे ही संपूर्ण भारतीयों को जोडनेवाली एक महत्वपूर्ण बात है वह भाषा। जो विविध जाति, धर्म और प्रांत के लोगो को आपस में जोडने का काम करती है। एक हृदय को दूसरे हृदय से जोडने का काम करती है। एक दूसरों के विचारों को आपस में लेन–देन का माध्यम बनती है इसी कारण मनुष्य या समूह एक संघ रह पाता है। यही काम भारत में संस्कृत, प्राकृत के बाद हिंदी ने किया जिसने संपूर्ण भारतीयों को आपस में जोडने का काम किया। भाषा समाज के विचारों का आदान प्रदान का माध्यम होती है। यही काम हिंदी भाषा मे निर्मित साहित्य ने किया। चाहे वह उपन्यास, कहानी, नाटक, काव्य, निबंध आदि भी। हिंदी जगत के साहित्यकारों ने तत्कालिन समाज को दृष्टि मे रखते हुए साहित्य निर्माण किया क्योंकि साहित्य समाज की उपज होती है जिसमें समाज का चित्र प्रतिबिंबित होता है। समकालीन हिंदी साहित्य में भी यही चित्र प्रतिबिंबित होता है। ब्रिटिश शासन काल से लेकर स्वातंत्र्योत्तर काल में अनेक विविध साहित्य विधाओं का विकास हुआ उसमें भारतीयो की राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना का ही दर्शन होता है।

समकालीन हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधानों में राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भावना का दर्शन हमे होता है । हिंदी कहानी तथा उपन्यासो के माध्यम से रचनाकारों ने हमारी

राष्ट्रीय एकात्मता को बढावा दिया है। ग्रामीण साहित्य हो या नगरीय चित्रण उसके माध्यम से भारतीय समाज की एकात्म भावना हमे दिखाई देती है । प्राचीन काल से ही भारत साहिष्णु राष्ट्र रहा है । इसी कारण भारतीय संस्कृती में अनेक संस्कृतियों का मेल दिखता है। बाहर देश से आए हुए कितने लोग या धर्म जातियाँ आज भारतीय संस्कृतिका हिस्सा बन गए है। यह केवल भारतीय समाज की साम्प्रदायिक सद्भावना के कारण संभव हुआ है । अंग्रेजो के पूर्व भारत में अनेक बाहरी राष्ट्रों के आक्रमण हुए अनेक धर्म बाहरी लोग भारत में आए औरे इसी सद्भावना के कारण भारतीय संस्कृति में घुलमिल गए। भारतीय संस्कृति में इस विविधता के कारण और अधिक एकात्मभाव दृढ हुआ, प्रेम बढा और आपसी भाईचारा के साथ जीवनथापन हो रहा है।

भारतीय समाज के संदर्भ में ऐसा माना जाता है कि नगरीय समाज की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में अधिक भेदभाव, अंधविश्वास है। यह स्वीकार भी किया जा सकता है। किंतु ऐसा होते हुए भी भारतीय ग्रामीण समाज में अर्थात कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के गाँवो में सभी जाति धर्म के लोग बडे प्रेमसे, भाईचारे के साथ अपना जीवनयापन कर रहे है। समय – समय पर राजनीतिक स्वार्थ के लिए सामाजिक वातावरण दूषित किया जाता है। यह बात अलग है किंतु भारत का आम आदमी या सामन्य जनता जिस प्रेम भाव से रहते आ रहे है, यह सचमुच हमारे देश के लिए भारतीय संस्कृति के लिए गर्व कि बात है। इसी वास्तविक चित्र को लेकर हमारे ग्रामीण भारत का चित्रण हम हिंदी साहित्य की अनेक कहानियाँ और उपन्यासें में देख सकते है।

हमारी राष्ट्रीय एकता और सद्भावना का उदाहरण हम 'व्यथित हद्यजी' की कहानी 'रज्जब चाचा' इस कहानी को पढकर हम समज सकते है। इस कानी में रज्जब चाचा राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना के प्रतीक बन गए है। सात–आठ गाँवो के बीच में रज्जब चाचा ही ऐसे है जो सिलाई का काम करते है। रज्जब चाचा का घर अपने गाँव में मजहब का अकेला घर है। पूरा गाँव हिंदूओ का है, पर रज्जब चाचा कभी ऐसा अनुभव नही करते कि वे गाँव मे अकेले है। वे पूरे गाँव को अपना कुनबा और पूरे गाँव के धर्म को अपना मजहब मानते है। पूरे गाँव में अगर किसी का भी कोई झगडा, विवाद खडा होता है। रज्जब चाचा पहले बुलाए जाते है। रज्जब चाचा जो कुछ निर्णय कर देते है उसे निर्णय को पूरा गाँव स्वीकार कर लेता है। और अगर उनके निर्णय को जो कोई मान्य नहीं करता है उसके विरोध में पूरा गाँव खडा हो जाता है। रज्जब चाचा केवल अपनेही गाँव के प्रतिष्ठीत या नेक व्यक्ति नही है वो तो गाँव और आस–पास के सात–आठ गाँवो में रज्जब चाचा का बडा सम्मान किया जाता है। रज्जब चाचा की बडी प्रतिष्ठा है। वे जहाँ कही भी पहुँच जाते है, तो लोग बडे प्रेम से उनका आदर–सम्मान करते है। जब–जब गाँव में होली–दिवाली और दशहरे पर दूर–दूर के घरों से उनके पास पकवान पहुँचते है। वे स्वयं भी ईद, बकरीद के अवसर पर गाँवभर में लोगो के घर सेवइयाँ और मिठाइयाँ भेजा करते है।

'रज्जब चाचा' कहानी मे रज्जब चाचा का परिवार और गाँव का बाकी मजहब यही कही भी उनके संबंधो के आड नही आता है। गाँव में रज्जब चाचा का एक मात्र घर होते हुए भी गाँव का भाईचारा इतना दृढ है कि उन्हे कभी पराए या उनसे अलग होने की भावना भी महसूस नही होती। यह है हमारे भारतीय समाज की सच्चाई आपसी भाईचारा, प्रेम और राष्ट्रीय एकता और सांप्रदायिक सद्भावना का प्रतीक है । सात आठ गाँवो के बीच दूल्हे का जोडा–जामा बनाने में रज्जब चाचाने बडी ख्याति अर्जित की है। विवाह शादियों के दिनों में रज्जब चाचा को बडे प्रेम से बुलाते है । अगर वे स्वयं जोडा–जामा पहनाने के लिए न जाएँ, तो उनके प्रेमी बुरा मानते है। रज्जब चाचा के हाथो से शादी में जोडा–जामा पहनाना बडे सौभाग्य की बात समझी जाती है। गाँव के ठाकुर

सूरजभान के लडके की शादी में चाचा स्वयं अपने हाथों से जोडा–जामा पहनाने गए। तब रज्जब चाचा द्वारा पहनाए गए दूल्हे को देखकर ठाकूर साहब बहुत खुश हो गए। दूल्हे ने रज्जब चाचा के पैर छूकर आशीर्वाद माँगा तब चाचाने आशीर्वाद देते हुए कहा ठाकूर साहब खुदा की मेहर हुई तो तुम्हारा बेटा सचमूच इंद्र ही होगा। पुरी हृदय भावनासे रज्जब चाचाने माताप्रसाद को आशीर्वाद दिया। वही माता प्रसाद रज्जब चाचा के बुढापे के दिनो में मंत्री होने के बावजूद, भी रास्ते से अकेले जा रहे रज्जब चाचा को देखकर अपनी लाल दीया की गाडी से उतरकर रज्जब चाचा के पैर छुते हुए उनके द्वारा दिए गए आशीर्वाद की याद दिलाते है। इतना प्यार और कहाँ मिल सकता है। और जब रज्जब चाचा मंत्री माता प्रसाद को अपनी पोती के विवाह की बात बताते है तो मंत्री महोदय उस शादी के दिन अचानक शादी पोहोंच जाते है यह देखकर पुरा गाव अश्चर्य चकीत होत गया। अपने राज्य के शिक्षामंत्री एक साधारण परिवार की शादी में उपस्थित रहे थे। अचानक आए हुए मेहमान शिक्षामंत्रीने रज्जब चाचा के चरणस्पर्श किए तब रज्जब चाचाने माताप्रसाद को अपने सीने से लगा लिया और उनका हृदय और मन भर आया उनकी आँख सजल हो गई। उनकी आँखो से आनंद और प्रसन्नता की बुँदे टपककर गिरने लगी। उन्होने मंत्री को अपने आँसुओं से भिगो दिया।

कहानी पढने पर निश्चीत ही पाठक कहीनी की घटनाओ में अपने देश की राष्ट्रीय एकता व साप्रदायिक सद्भावना का दर्शन होता है। ये एक प्रकार का पूर्णरूप से मानवतावादी दृष्टिकोन है। कहानी में रज्जब चाचा द्वारा व्यक्त किया गया विचार ही अगर हम देखते है कि उनका कहना है ''हिंदु, मुसलमान, सिख, ईसाई तो धरती की देन है'' खुदा तो केवल इंसान पैदा करता है।'' यह वाक्य उनके विचारों का तत्वज्ञान का द्योतक है। समकालीन कहानियों में व्यक्त राष्ट्रीय एकता व सद्भावना का प्रतिनिधिक उदाहरण हमे इस कहानी में दृष्टिगोचर होता है। जिस प्रकार से हमारी राष्ट्रीय एकात्मता का दर्शन हमारे देश की संस्कृति विविध कला, शिल्प, संगित, साहित्य, आदि में होता है और इन सभी का अपनी राष्ट्रीय एकात्मता व सांप्रदायिक सद्भावना को बढावा देने में बहुत बडा योगदान रहा है। और यही योगदान हिंदी साहित्य की समकालीन कहानियों का भी है। उनमें व्यक्त राष्ट्रीय एकता व सद्भावना का भी है। क्योंकि यही चित्रण समाज के लिए अनुकरणीय और प्रेरणादायी साबित होता है। राष्ट्रीय एकता का मतलब ही होता है, राष्ट्र के सब घटकोंमें भिन्न विचारों और विभिन्न आस्थाओं के होते हुए भी आपसी प्रेम, एकता और भाईचारे का बना रहना । राष्ट्रीय एकता में केवल शारीरिक समीपता ही महत्वपूर्ण नही होती बल्की उसमे मानसिक, बौध्दीक, वैचारिक और भावात्मक निकटता की समानता आवश्यक है । हमारा देश विभिन्न संस्कृतियोंका देश है जो समूचे विश्व मे अपनी एक अलग पहचान रखता है। भिन्न–भिन्न संस्कृति और भाषाएँ होते हुए भी हम सभी एक सूत्र में बंधे हुए है तथा राष्ट्र की एकता व अखंडता सुरक्षा और संवर्धन के लिए सदैव तत्पर रहते है। यही हमारी सच्ची एकाता और सद्भावना है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍

80.'शहर में कर्फ्यू' उपन्यास में राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिक सद्भाव

डॉ. पिरू आर. गवळी
स. व. प. कला व विज्ञान महाविद्यालय, ऐनपूर
ता. रावेर, जि. जलगाँव

'शहर में कर्फ्यू' उपन्यास की कथा बिल्कुल समीचीन एवं नवीन हैं। इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता के नाम पर सामाजिक, जातिगत एवं धार्मिक अलगाववादी प्रवृत्तियों का यथार्थ चित्रण किया गया है। जिसमें उपन्यासकार ने विविध क्षेत्र–स्तरीय अनुभवों की गहराई तक जाने का पर्याप्त प्रयास किया है। उपन्यासकार ने इलाहाबाद के एक शहर की कर्फ्यूग्रस्त स्थिति के माध्यम से संपूर्ण भारतवर्ष की भावनाओं का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण किया है। विभूतिनारायण राय का मानना यह है कि भारत में साम्प्रदायिक दंगों को लेकर दो मत हैं। हिन्दू और मुसलमान अपने–अपने पूर्वाग्रह के अनुसार ही कार्य करते है। हिन्दू दंगों के संबंध में यह मानकर चलता है कि दंगे मुसलमान शुरू करते हैं। दंगों में अधिक संख्या में हिंदू मारे जाते है। हिन्दू इसलिए मारे जाते है कि मुसलमान स्वभाव से क्रूर हिंसक और धर्मोन्मादी होते है। इसके एकदम विपरीत हिन्दू धर्मभीरू उदार और सहिष्णु स्वभाववाले होते है। दंगे कौन शुरू करता है, पर दंगों में मरता कौन है इस पर सरकारी और गैरसरकारी आँकडे इतने विपुल प्रमाण पर उपलब्ध है कि –''बिना किसी संशय के निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है। उपलब्ध आँकडों के अनुसार स्वतंत्रता के बाद दंगों में मरनेवालों में 70 प्रतिशत से भी अधिक मुसलमान हैं। राँची–हटिया (1967), अहमदाबाद (1969), भिवंडी (1970), जलगाँव (1970) और मुंबई (1992–93) या रामजन्मभूमि बाबरी मस्जिद विवाद के सिलसिले में हुए दंगों में तो यह संख्या 90 प्रतिशत के भी ऊपर चली गई है। यही स्थिति संपत्ति के मामलों में भी है। दंगों में न सिर्फ मुसलमान अधिक मारे गए बल्कि संपत्ति का अधिक नुकसान भी हुआ। दंगों में नुकसान उठाने के बावजूद जब राज्य मशीनरी की कार्यवाही झेलने की बारी आई तब वहाँ भी मुसलमान जबरदस्त घाटे की स्थिति में दिखाई देता है। दंगों में पुलिस का कहर भी उन्हीं पर टूटता है। उन दंगों में भी जिनमें मुसलमान 70–80 प्रतिशत से अधिक मरे थे पुलिस ने जिन लोगों को गिरफ्तार किया उनमें 70–80 प्रतिशत से अधिक मुसलमान थे, उन्हीं के घरों की तलाशियाँ ली गई। उन्हीं की औरते बेइज्जत हुई और उन्हीं के मोहल्लों में सख्ती के साथ कर्फ्यू लगाया गया।''[6]

उपन्यास की कथा नौ भागों में विभाजित है। जिसमें इलाहाबाद में चुनाव का वातावरण है। चुनाव के पहले ही राजनीतिक दाँवपेंच के आधार पर साम्प्रदायिक दंगों का माहौल निर्माण किया गया है। साथ ही सामान्य जनता में दंगों का प्रभाव व उनकी असहनीय पीड़ा को उपन्यासकार ने स्वानुभूतिपूर्ण हू–ब–हू चित्रित किया है। कर्फ्यू के समय घायल मुस्लिम युवक को यथोचित –''बड़े मियाँ, हम जख्मी के भले के लिए कह रहे हैं। तुम इसको हमारे हवाले कर दो। हम उसे अस्पताल तक अपनी गाड़ी में पहुँचा देंगे। दवा–दारू वक्त से हो गई तो बच सकता है। नहीं तो अब पता नहीं कितने दिनों तक कर्फ्यू लगा रहे और हो सकता है इलाज न होने से हालत और खराब हो जाए। ''आप मालिक है हुजूर पर पूरा घर खुला है। देख सकते हैं। अंदर कोई नहीं है।''[7] पुलिस घायल युवक का घर खोजने में कामयाब होती है। लेकिन बहुत देर हो जाती है। कर्फ्यू का वास्तविक प्रभाव केवल मुस्लिम परिवारों पर ही अधिक दिखाई देता है। हिन्दू आबादी में जन–जीवन सामान्य रूप से चलता रहता है।

उपन्यास की मूल कथा एक निर्धन परिवार की आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक विडम्बनाओं में छटपटाती है। एक नारी की व्यथा–कथा है। जो इस शहर के लिए बिल्कुल अनजान है। सईदा की मासूम बच्ची दवाई के अभाव कारण मर जाती है। 'शहर में कर्फ्यू' के कारण उसकी कफन–दफन की विधी में कई प्रकार रूकावटें एवं बाधाएँ आती है। इसी के कारण सईदा के पति, सास और ससुर को दंडित किया जाता है। कर्फ्यू के दौरान पास बनवाने में कई प्रकार से दिक्कते आती है। तलाशियों के दौरान रात्रि के समय में पुलिस भी अत्याचार एवं जुल्म–सितम करती हैं। पुलिस ये सारे काम नेताओं और हिन्दू आबादी के युवक जासूसों के इशारों पर करती है। कर्फ्यू के ऐसे खौफनाक माहौल में भी पुलिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। बेवजह, बेमुरव्वत, मार–पीट, गाली–गलौज करके मुस्लिमों के घरों से किमती सामान, गहने लूट कर ले जाती है। इन सारी यातनाओं को सहन करके मुसलमानों को गुजरना पड़ता है।

उपन्यास में चित्रित कर्फ्यू में एक अज्ञात युवती की स्वप्निल अभिलाषा का विनाश एवं उस पर अज्ञात युवकों द्वारा किए गए बेहद शर्मनाक बलात्कार का मार्मिक चित्रण व्यक्त किया है – ''लड़की चुप हो गई। इसके बाद जिस अनुभव से होकर वह गुजरी वह निहायत और खौफनाक था। जितनी दे रवह होश में रही उसे ऐसा लगता रहा जैसे गर्म सलाखे उसके बदन में चुभोई जा रही है। फटी–फटी आँखों से वह अपने ऊपर झुके मर्द को देखती रही और अपने अनुभव संसार में कुछ ऐसे अनुभव जोड़ती रही जो शेष जीवन उसके साथ दुःस्वप्नों की तरह रहनेवाले थे।......जिस तरह जिबह किए जानेवाले जानवर के मुँह से गों–गों की आवाज निकलती है कुछ–कुछ उसी तरह की आवाज लड़की के मुँह से निकल रही थी। दर्द की लहर थी जो पाँव से उठकर उसके पूरे बदन को झिझोडती चली जा रही थी। वह बुरी तरह छटपटा रही थी और कई बार उठ बैठने की कोशिश में चारपाई के पाटों से टकराकर चोटिल हो चुकी थी। उसकी यातना तभी खत्म हुई ज बवह बेहोश हो गई।''[8] लेखक अपनी आंतरिक पीड़ा को व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि –''कर्फ्यू किसी भी जाति या धर्म की लड़की को जीवन के सबसे कोमल अनुभव से वंचित कर सकता है और उसे जानवरों के स्तर पर उतार अनुभूति की ऐसी खौफनाक सुरंग में ढकेल सकता है। जहाँ एक बार प्रवेश करने के बाद पूरा जीवन दुःस्वप्नों की भूल–भूलैया में तब्दील हो जाए।''[9]

उपन्यासकार ने कर्फ्यू के और पहलू का भी व्यक्त किया है। जिसमें राजनीतिज्ञ समाजसेवी, पत्रकार, व्यापारी और पुलिस प्रत्येक निजी स्वार्थो के लिए लालायित है। सामान्य जनता की संवेदना कहीं नजर नहीं आती। पत्रकारों कहना यह है कि –''प्रेस कोलोनी का क्या हुआ ? दंगे की वजह से लेट तो हो गया, लेकिन दंगा खत्म होते ही एलाटमेंट हो जाना चाहिए।''[10] यहाँ नेता षडयंत्रकारी के रूप में उभरा है। इसका प्रमाण पुलिस अधिकारी की धीमी वार्तालाप से मिलता है – ''साला यहाँ शांति का उपदेश दे रहा है। अपनी गली में जाकर छुरे बाँटेगा इन्हीं सालों को बन्द कर दो तो दंगा अपने आप रूक जाएगा।''[11]

विभूतिनारायण राय अपने एक वीडियो इंटरव्यू में प्रस्तुत उपन्यास के संबंध में कहा कि मेरी दिलचस्पी साम्प्रदायिकता की समस्या में अपने छात्र जीवन से थी। मैं भारतीय समाज को जब भी समझने की कोशिश करता तो यही पर जाकर अटक जाता था। क्योंकि बहुत संश्लिष्ट और जटिल जमीन है। दो बाद में जब में पुलिस में आया तो जो कुछ मैंने पढ़ा था सोचता था, जो मेरा फॉरम्युलेशन क्या, वो और दृढ हुआ। मेरा विश्वास इसमें बढ़ा कि ''भारतीय राज्य अल्पसंख्यको के साथ जिस तरह का व्यवहार करना चाहिए। उस तरह का बहुत सारे मौके पर नहीं करता है। सन

अस्सी में इलाहाबाद में मैंने अपने नौकरी शुरू की थी, मेरी तैनाती वहाँ हुई एस. पी. सिटी के रूप में, तो एक दंगे देखने का मुझे मौका मिला जिसके बैक ग्राउंड पर यह उपन्यास शहर में कर्फ्यू लिखा।''[12]

उपन्यासकार ने इलाहाबाद जैसे महानगर की कर्फ्यूग्रस्त आवाम की उचित–अनुचित का मर्मस्पर्शी आवाम की उचित–अनुचित आचरण का मर्मस्पर्शी वर्णन उपन्यास में किया है। यह शहर प्रत्येक जाति–धर्म के लोगों का निवास स्थान है। इस शहर में कर्फ्यू के माध्यम से लेखक ने किसी अन्य शहर गाँव, बस्ती की कर्फ्यूग्रस्त स्थिति का वर्णन कराया है। साथ ही साथ उपन्यासकार ने दोनों धर्म–समाज की स्वानुभूतियाँ को भी चित्रित कर एक मिसाल कायम की है। एक पुलिस अधिकारी के नाते कर्फ्यू के चश्मदीद गवाह भी है। इसलिए उपन्यासकार धनी–निर्धन, राजनेता, जनता, हिन्दू–मुस्लिम परिवारों एवं समाज व मनुष्यों की कर्फ्यू में दुर्दशा का वास्तविक रोमांचकारी मार्मिक चित्रण कर पाया हूँ। इसमें रामकृष्ण जायसवाल व हाजी बदरूद्दिन अमीर वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है। सईदा सैफुन्निसा निम्न, मध्यमवर्गीय परिवारों से है। इसी प्रकार हिन्दू समाज में भी आर्थिक विपन्नता का चित्रण दिखाई देता है। गली, मोहल्ले में कुछ युवक शरारत करते दिखाई देते हैं मगर बुजुर्गों के डाँटने पर चुप हो जाते है। उपन्यासकार ने यहाँ भारतीय संस्कृति की महानता व समन्वयवादी भावना को उजागर किया है – ''हाजी जी ने किस तरह मोहल्ले के गरीब हिन्दुओं के लिए लंगर खोल रहा है। उनके आदमियों को आसानी से कर्फ्यू–पास नहीं मिल पा रहे है इसलिए वे चाहकर भी सभी तक मदद नहीं पहुँचा पा रहे हैं। हाजी ने भी जायसवाल के द्वारा अपने पड़ोसी मुसलमानों को अपने घर में पनाह देने की बात अफसरों को सुनाई। अंदर से इस बीच चाय बनकर आ गई।.......तकल्लुफ कैसा साहब, मैं शर्मिंदा हूँ कि ऐसे मौके पर आप तशरीफ लाए है कि कुछ खातिर नहीं कर पा रहा हूँ।''[13]

निष्कर्ष : उपन्यास आधुनिक मानव जीवन की कलात्मक अभिव्यंजना है। वह केवल कोरे कागज की तरह संवेदनाशुन्य कथ्य की प्लेट नहीं है। उपन्यास में मानव जीवन की हीन–महान मानवीय–अमानवीय भावनाओं को व्यक्त किया गया है। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण अंकित किया गया है। इस उपन्यास में मुस्लिम समाज के प्रतिबिम्ब देखने प्रयास किया गया है। क्योंकि भारतीय समाज पहले भारतीय है। बाद में हिन्दू या मुस्लिम। एक पुलिस अधिकारी के रूप में विभूतिनारायण राय की सूक्ष्म दृष्टि ने कर्फ्यू के दौरान हिन्दू–मुस्लिम समाज की यातनाओं को आत्मसात किया है।

संदर्भ :–

1. शहर में कर्फ्यू है – लेखक मत (इंटरनेट), पृ. 01
2. शहर में कर्फ्यू है (उपन्यास) (इंटरनेट) – विभुतिनारायण राय, अध्याय 1, पृ. 6
3. पूर्ववत् – पृ. 4
4. हिंदी उपन्यासों में मुस्लिम समाज : आलोचनात्मक अनुशीलन –डॉ. सिराजके वहोरा, पृ. 160
5. पूर्ववत् – पृ. 160
6. पूर्ववत् – पृ. 160
7. पूर्ववत् – पृ. 160
8. http://bhadas4media.com/interview/9776-2011, पृ. ०३
9. शहर में कर्फ्यू है – विभूतिनारायण राय, पृ. ५

❍ ❍ ❍ ❍ ❍